BAHN301CCT

आधुनिक हिंदी कविता

बी. ए.

(तृतीय सेमेस्टर के लिए)

दूरस्थ शिक्षा निदेशालय

मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी

हैदराबाद-32, तेलंगाना, भारत

© Maulana Azad National Urdu University, Hyderabad

Course : Adhunik Hindi Kavita

ISBN: 978-93-95203-02-9

First Edition : 2022

प्रकाशक	:	रजिस्ट्रार, मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी, हैदराबाद
संस्करण	:	2022
प्रतियाँ	:	500
डिजाइनिंग एंड सेटिंग	:	डॉ. एल. अनिल, दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू, हैदराबाद
आवरण	:	डॉ. मो. अकमल ख़ान, दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू, हैदराबाद
मुद्रक	:	अरिहंत ऑफसेट, नई दिल्ली

Copy Editor

Dr. Aftab Alam Baig

B.A. Hindi

Adhunik Hindi Kavita

3rd Semester

On behalf of the Registrar, Published by:

Directorate of Distance Education

Maulana Azad National Urdu University

Gachibowli, Hyderabad-500032 (TS), India

Director: dir.dde@manuu.edu.in *Publication:* ddepublication@manuu.edu.in

Phone number: 040-23008314 Website: manuu.edu.in

© All rights reserved. No part of this publication may be reproduced or transmitted in any form or by any means, electronically or mechanically, including photocopying, recording or any information storage or retrieval system, without prior permission in writing from the publisher (registrar@manuu.edu.in)

संपादक

डॉ. आफताब आलम बेग
सहायक कुल सचिव,
दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू

Editor

Dr. Aftab Alam Baig
Assistant Registrar
DDE, MANUU

संपादक-मंडल

(Editorial Board)

प्रो. ऋषभदेव शर्मा
पूर्व अध्यक्ष, उच्च शिक्षा और शोध संस्थान
दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, हैदराबाद
परामर्शी (हिंदी), दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू

Prof. Rishabhadeo Sharma
Former Head, Higher Education and Research Centre, Dakshin Bharat Hindi Prachar Sabha, Hyderabad
Consultant (Hindi), DDE, MANUU

प्रो. श्याम राव राठोड़
अध्यक्ष, हिंदी विभाग
अंग्रेज़ी और विदेशी भाषा वि.वि.,हैदराबाद

Prof. Shyamrao Rathod
Head, Department of Hindi
EFL University, Hyderabad

डॉ. गंगाधर वानोडे
क्षेत्रीय निदेशक
केंद्रीय हिंदी संस्थान, सिकंदराबाद, हैदराबाद

Dr. Gangadhar Wanode
Regional Director
Central Institute of Hindi
Hyderabad Centre, Secunderabad, Hyd

डॉ. आफताब आलम बेग
सहायक कुल सचिव,
दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू

Dr. Aftab Alam Baig
Assistant Registrar, DDE, MANUU

डॉ. वाजदा इशरत
अतिथि प्राध्यापक/असिस्टेंट प्रोफ़ेसर (संविदा)
दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू

Dr. Wajada Ishrat
Guest Faculty/Assistant Professor (Cont.)
DDE, MANUU

पाठ्यक्रम-समन्वयक

डॉ. आफ़ताब आलम बेग

सहायक कुल सचिव, दूरस्थ शिक्षा निदेशालय

मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी, हैदराबाद

लेखक	इकाई संख्या
• **प्रो. गोपाल शर्मा**, पूर्व प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, भाषा विज्ञान विभाग, अरबा मींच विश्वविद्यालय, इथोपिया.	1, 2
• **डॉ. शशिबाला,** हिंदी अध्यापक, केंद्रीय विद्यालय, राष्ट्रीय पुलिस अकादमी, शिवरामपल्ली, हैदराबाद	3, 4
• **डॉ. पूर्णिमा शर्मा**, हिंदी काउंसलर, डॉ. बी. आर. अम्बेडकर सार्वत्रिक विश्वविद्यालय, हैदराबाद.	5, 6
• **डॉ. वाजदा इशरत,** अतिथि प्राध्यापक, दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू	7, 9
• **डॉ. एन. लक्ष्मीप्रिया**,महात्मा गांधी सरकारी कॉलेज मायाबंदर (अंडमान निकोबार)	8, 10
• **डॉ. गुर्रमकोंडा नीरजा**, असिस्टेंट प्रोफ़ेसर, उच्च शिक्षा और शोध संस्थान, दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, हैदराबाद.	11, 12
• **डॉ. सुपर्णा मुखर्जी**, हिंदी विभाग, सेंट एंस जूनियर एंड डिग्री कॉलेज फॉर गर्ल्स एंड वूमेंस, हैदराबाद	13, 17
• **डॉ. डॉली** , असिस्टेंट प्रोफ़ेसर, गुरुनानक कॉलेज, चेन्नई, तमिलनाडु	14,18
• **डॉ. सुषमा देवी,** सहायक व्याख्याता, हिंदी विभाग, भवन्स विवेकानंद कॉलेज, सैनिकपुरी, हैदराबाद.	15, 16
• **डॉ. मंजु शर्मा**, अध्यक्ष, हिंदी विभाग, चिरेक इंटरनेशनल स्कूल हैदराबाद.	19, 20
• **डॉ. के अविनाश**, अकादमिक एसोसिएट, डॉ. बी. आर. अम्बेडकर सार्वत्रिक विश्वविद्यालय, हैदराबाद.	21, 22
• **डॉ. चंदन कुमारी**, पूर्व प्राध्यापक , हिंदी विभाग, भवन्स श्री ए. के दोषी महिला कॉलेज, जामनगर	23, 24

विषयानुक्रमणिका

संदेश	:	कुलपति	7
संदेश	:	निदेशक	8
भूमिका	:	पाठ्यक्रम –समन्वयक	9

खंड/इकाई		**विषय**	**पृष्ठ**
खंड 1			
इकाई 1	:	भारतेंदु हरिश्चंद्र : व्यक्तित्व एवं कृतित्व	13
इकाई 2	:	गंगा-यमुना : भारतेंदु हरिश्चंद्र	31
इकाई 3	:	विरह वेदना : भारतेंदु हरिश्चंद्र	46
इकाई 4	:	मातृभाषा प्रेम : भारतेंदु हरिश्चंद्र	62
खंड 2			
इकाई 5	:	अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध : व्यक्तित्व एवं कृतित्व	78
इकाई 6	:	दिवस का अवसान : अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध	95
इकाई 7	:	मैथिलीशरण गुप्त : व्यक्तित्व एवं कृतित्व	112
इकाई 8	:	आदर्श : मैथिलीशरण गुप्त	127
खंड 3			
इकाई 9	:	जयशंकर प्रसाद : व्यक्तित्व एवं कृतित्व	146
इकाई 10	:	आँसू : जयशंकर प्रसाद	162
इकाई 11	:	सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' : व्यक्तित्व एवं कृतित्व	183
इकाई 12	:	सरोज स्मृति : सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'	201

खंड 4

इकाई 13	:	सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' : व्यक्तित्व एवं कृतित्व	218
इकाई 14	:	बना दे चितेरे : अज्ञेय	240
इकाई 15	:	हमारा देश : अज्ञेय	256
इकाई 16	:	मैं वहाँ हूँ : अज्ञेय	270

खंड 5

इकाई 17	:	नागार्जुन : व्यक्तित्व एवं कृतित्व	284
इकाई 18	:	'गुलाबी चूड़ियाँ' और 'शासन की बंदूक' : नागार्जुन	305
इकाई 19	:	कालिदास : नागार्जुन	319
इकाई 20	:	'मेघ बजे' और 'खुरदरे पैर' : नागार्जुन	334

खंड 6

इकाई 21	:	नरेश मेहता : व्यक्तित्व एवं कृतित्व	348
इकाई 22	:	माँ और पुरुष : नरेश मेहता	362
इकाई 23	:	किरन धेनुएँ : नरेश मेहता	377
इकाई 24	:	इतिहास और प्रतिहास : नरेश मेहता	393
		परीक्षा प्रश्न पत्र का नमूना	**410**

प्रूफ रीडर:

प्रथम	:	डॉ. वाजदा इशरत, दू. शि. नि., मानू
द्वितीय	:	डॉ. एल. अनिल, दू. शि. नि., मानू
अंतिम	:	डॉ. आफताब आलम बेग, सहायक कुल सचिव, दू. शि. नि., मानू

संदेश

मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी की स्थापना 1998 में संसद के एक अधिनियम द्वारा की गई थी। यह NAAC मान्यत प्राप्त एक केंद्रीय विश्वविद्यालय है। विश्वविद्यालय का अधिदेश है: (1) उर्दू भाषा का प्रचार-प्रसार और विकास (2) उर्दू माध्यम से व्यावसायिक और तकनीकी शिक्षा (3) पारंपरिक और दूरस्थ शिक्षा के माध्यम से शिक्षा प्रदान करना, और (4) महिला शिक्षा पर विशेष ध्यान देना। यही वे बिंदु हैं जो इस केंद्रीय विश्वविद्यालय को अन्य सभी केंद्रीय विश्वविद्यालयों से अलग करते हैं और इसे एक अनूठी विशेषता प्रदान करते हैं, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में भी मातृभाषा और क्षेत्रीय भाषाओं में शिक्षा के प्रावधान पर जोर दिया गया है।

उर्दू माध्यम से ज्ञान-विज्ञान के प्रचार-प्रसार का एकमात्र उद्देश्य उर्दू भाषी समुदाय के लिए समकालीन ज्ञान और विषयों की पहुंच को सुविधाजनक बनाना है। लंबे समय से उर्दू में पाठ्यक्रम सामग्री का अभाव रहा है। इस लिए उर्दू भाषा में पुस्तकों की अनुपलब्धता चिंता का विषय रहा है। नई शिक्षा नीति 2020 के दृष्टिकोण के अनुसार उर्दू विश्वविद्यालय का मातृभाषा/घरेलू भाषा में पाठ्यक्रम सामग्री प्रदान करने की राष्ट्रीय प्रक्रिया का हिस्सा बनना अपना सौभाग्य मानता है। इसके अतिरिक्त उर्दू में पठन सामग्री की अनुपलब्धता के कारण उभरते क्षेत्रों में अद्यतन ज्ञान और जानकारी प्राप्त करने या मौजूदा क्षेत्रों में नए ज्ञान प्राप्त करने में उर्दू भाषी समुदाय सुविधाहीन रहा है। ज्ञान के उपरोक्त कार्य-क्षेत्र से संबंधित सामग्री की अनुपलब्धता ने ज्ञान प्राप्त करने के प्रति उदासीनता का वातावरण बनाया है जो उर्दू भाषी समुदाय की बौद्धिक क्षमताओं को मुख्य रूप से प्रभावित कर सकता है। ये वह चुनौतियां हैं जिनका सामना उर्दू विश्वविद्यालय कर रहा है। स्व-अध्ययन सामग्री का परिदृश्य भी बहुत अलग नहीं है। प्रत्येक शैक्षणिक वर्ष के प्रारंभ में स्कूल/कॉलेज स्तर पर भी उर्दू में पाठ्य पुस्तकों की अनुपलब्धता पर चर्चा होती है। चूंकि उर्दू विश्वविद्यालय की शिक्षा का माध्यम केवल उर्दू है और यह विश्वविद्यालय लगभग सभी महत्वपूर्ण विषयों के पाठ्यक्रम प्रदान करता है, इसलिए इन सभी विषयों की पुस्तकों को उर्दू में तैयार करना विश्वविद्यालय की सबसे महत्वपूर्ण जिम्मेदारी है। इन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए मौलाना आज़ाद राष्ट्रीय उर्दू विश्वविद्यालय अपने दूरस्थ शिक्षा के छात्रों को स्व-अध्ययन सामग्री अथवा सेल्फ लर्निंग मैटेरियल (SLM) के रूप में पाठ्य सामग्री उपलब्ध कराता है। वहीं अन्य विषयों में भी उर्दू माध्यम से ज्ञान प्राप्त करने के इच्छुक किसी भी व्यक्ति के लिए भी यह सामग्री उपलब्ध है। अधिकाधिक लोग इससे

लाभान्वित हो सकें, इसके लिए उर्दू में इलेक्ट्रॉनिक पाठ्य सामग्री अथवा eSLM विश्वविद्यालय की वेबसाइट से मुफ्त डाउनलोड के लिए उपलब्ध है।

मुझे अत्यंत प्रसन्नता है कि संबंधित शिक्षकों की कड़ी मेहनत और लेखकों के पूर्ण सहयोग के कारण पुस्तकों के प्रकाशन का कार्य उच्च-स्तर पर प्रारंभ हो चुका है। दूरस्थ शिक्षा के छात्रों की सुविधा के लिए, स्व-अध्ययन सामग्री की तैयारी और प्रकाशन की प्रक्रिया विश्वविद्यालय के लिए सर्वोपरि है। मुझे विश्वास है कि हम अपनी स्व-शिक्षण सामग्री के माध्यम से एक बड़े उर्दू भाषी समुदाय की आवश्यकताओं को पूरा करने में सक्षम होंगे और इस विश्वविद्यालय के अधिदेश को पूरा कर सकेंगे।

एक ऐसे समय जब हमारा विश्वविद्यालय अपनी स्थापना की 25वीं वर्षगांठ मना रहा है, मुझे इस बात का उल्लेख करते हुए हर्ष हो रहा है कि विश्वविद्यालय का दूरस्थ शिक्षा निदेशालय कम समय में स्व-अध्ययन सामग्री तथा पुस्तकें तैयार कर विद्यार्थियों को पहुंचा रहा है। देश के कोने कोने में छात्र विभिन्न दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रमों से लाभान्वित हो रहे हैं। यद्यपि पिछले दो वर्षों के दौरान कोविड-19 की विनाशकारी स्थिति के कारण प्रशासनिक मामले और संचार चलन भी काफी कठिन रहे हैं लेकिन विश्वविद्यालय द्वारा दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रमों को सफलतापूर्वक संचालित करने के लिए सर्वोत्तम प्रयास किया जा रहा है। मैं विश्वविद्यालय से जुड़े सभी विद्यार्थियों को इस विश्वविद्यालय का अंग बनने के लिए ह्रदय से बधाई देता हूं और यह विश्वास दिलाता हूँ कि मौलाना आज़ाद राष्ट्रीय उर्दू विश्वविद्यालय का शैक्षिक मिशन सदैव उनके के लिए ज्ञान का मार्ग प्रशस्त करता रहेगा।

शुभकामनाओं सहित!

प्रो. सैयद ऐनुल हसन

कुलपति

संदेश

दूरस्थ शिक्षा प्रणाली को पूरी दुनिया में अत्यधिक कारगर और लाभप्रद शिक्षा प्रणाली की हैसियत से स्वीकार किया जा चुका है और इस शिक्षा प्रणाली से बड़ी संख्या में लोग लाभान्वित हो रहे हैं। मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी ने भी अपनी स्थापना के आरंभिक दिनों से ही उर्दू तबके की शिक्षा की स्थिति को महसूस करते हुए इस शिक्षा प्रणाली को अपनाया है। मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी का बाकायदा प्रारम्भ 1998 में दूरस्थ शिक्षा प्रणाली और ट्रांसलेशन डिविजन से हुआ था और इस के बाद 2004 में बाकायदा पारंपरिक शिक्षा का आगाज़ हुआ। पारंपरिक शिक्षा के विभिन्न विभाग स्थापित किए गए। नए स्थापित विभागों और ट्रांसलेशन डिविजन में नियुक्तियाँ हुईं। उस वक़्त के शिक्षा प्रेमियों के भरपूर सहयोग से स्व-अधिगम सामग्री को अनुवाद व लेखन के द्वारा तैयार कराया गया।
पिछले कई वर्षों से यूजीसी-डीईबी (UGC-DEB) इस बात पर ज़ोर देता रहा है कि दूरस्थ शिक्षा प्रणाली के पाठ्यक्रम व व्यवस्था को पारंपरिक शिक्षा प्रणाली के पाठ्यक्रम व व्यवस्था से लगभग जोड़कर दूरस्थ शिक्षा प्रणाली के मयार को बुलंद किया जाय। चूंकि मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी दूरस्थ शिक्षा और पारंपरिक शिक्षा का विश्वविद्यालय है, अतः इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए यूजीसी-डीईबी (UGC-DEB) के दिशा निर्देशों के मुताबिक दूरस्थ शिक्षा प्रणाली और पारंपरिक शिक्षा प्रणाली के पाठ्यक्रम को जोड़कर और गुणवततापूर्ण करके स्व-अधिगम सामग्री को पुनः क्रमवार यू.जी. और पी.जी. के विद्यार्थियों के लिए क्रमशः 6 खंड-24 इकाइयों और 4 खंड – 16 इकाइयों पर आधारित नए तर्ज़ की रूपरेखा पर तैयार कराया जा रहा है।

दूरस्थ शिक्षा निदेशालय यू.जी., पी.जी., बी.एड., डिप्लोमा और सर्टिफिकेट कोर्सेज पर आधारित कुल 15 पाठ्यक्रम चला रहा है। बहुत जल्द ही तकनीकी हुनर पर आधारित पाठ्यक्रम शुरू किए जाएंगे। अधिगमकर्ताओं की सरलता के लिए 9 क्षेत्रीय केंद्र (बंगलुरु, भोपाल, दरभंगा, दिल्ली, कोलकाता, मुंबई, पटना, रांची और श्रीनगर) और 6 उपक्षेत्रीय केंद्र (हैदराबाद, लखनऊ, जम्मू, नूह, वाराणसी और अमरावती) का एक बहुत बड़ा नेटवर्क तैयार किया है। इन केन्द्रों के अंतर्गत एक साथ 155 अधिगम सहायक केंद्र (लर्निंग सपोर्ट सेंटर) तथा 20 प्रोग्राम सेंटर काम कर रहे हैं। जो अधिगमकर्ताओं को शैक्षिक और प्रशासनिक सहयोग उपलब्ध कराते हैं। दूरस्थ शिक्षा निदेशालय (डी. डी. ई.) ने अपनी शैक्षिक और व्यवस्था से संबन्धित कार्यों में आई.सी.टी. का इस्तेमाल शुरू कर दिया है। इसके अलावा अपने सभी पाठ्यक्रमों में प्रवेश सिर्फ ऑनलाइन तरीके से ही दे रहा है।

दूरस्थ शिक्षा निदेशालय की वेबसाइट पर अधिगमकर्ता को स्व-अधिगम सामग्री की सॉफ्ट कॉपियाँ भी उपलब्ध कराई जा रही हैं। इसके अतिरिक्त शीघ्र ही ऑडियो-वीडियो रिकॉर्डिंग का लिंक भी वैबसाइट पर उपलब्ध कराया जाएगा। इसके साथ-साथ अध्ययन व अधिगम के बीच एसएमएस (SMS) की सुविधा उपलब्ध की जा रही है। जिसके द्वारा अधिगमकर्ताओं को पाठ्यक्रमों के विभिन्न पहलुओं जैसे- कोर्स के रजिस्ट्रेशन, दत्तकार्य, काउंसलिंग, परीक्षा के बारे में सूचित किया जाता है।

आशा है कि देश में शैक्षिक और आर्थिक रूप से पिछड़ी हुई उर्दू आबादी को मुख्यधारा में शामिल करने में दूरस्थ शिक्षा निदेशालय की भी मुख्य भूमिका होगी।

प्रो. मो. रज़ाउल्लाह ख़ान
निदेशक, दूरस्थ शिक्षा निदेशालय

भूमिका

'आधुनिक हिंदी कविता' शीर्षक यह पुस्तक मौलाना आजाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी, हैदराबाद के बी. ए. (हिंदी) - तृतीय सत्र - के दूरस्थ माध्यम के छात्रों के लिए तैयार की गई है। इसकी संपूर्ण योजना विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी) के निर्देशों के अनुसार नियमित माध्यम के पाठ्यक्रम के अनुरूप रखी गई है।

हिंदी कविता का आधुनिक काल काव्य बोध, युगीन चेतना, भाषा और शिल्प - सभी दृष्टियों से बड़े बदलावों से भरा हुआ है। मोटे तौर पर इसे भारतेंदु युग, द्विवेदी युग, छायावाद युग, प्रगति-प्रयोग युग और नई कविता युग में विभाजित किया जाता है। यह पाठ्यक्रम इन सभी युगों के आंतरिक बदलावों और उसके साथ-साथ कविता में आए बदलावों का बोध कराने के उद्देश्य से तैयार किया गया है। 6 खंडों में क्रमशः सुनियोजित 24 ईकाइयों में बँटे हुए इस पाठ्यक्रम के अध्ययन से विद्यार्थी भारतीय पुनर्जागरण आंदोलन, स्वतंत्रता आंदोलन और स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के काल में भारतीय जनता की चित्तवृत्ति के अनुरूप हिंदी कविता के क्रमिक विकास से भली-भाँति परिचित हो सकेंगे। इस दृष्टि से यहाँ भारतेंदु हरिश्चंद्र, अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध', मैथिलीशरण गुप्त, जयशंकर प्रसाद, सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय', नागार्जुन और नरेश मेहता जैसे वस्तु और शिल्प की दृष्टि से महत्वपूर्ण प्रमुख कवियों के व्यक्तित्व और कृतित्व की झाँकी प्रस्तुत की गई है। साथ ही इन कवियों की निर्धारित कविताओं का विस्तार से गहन अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

इस पाठ्यक्रम के अध्ययन से विद्यार्थी जहाँ एक ओर आधुनिक हिंदी कविता के विकास से परिचित होंगे, वहीं निर्धारित कवियों और उनकी कविताओं के अध्ययन से उनकी सामाजिक, सांस्कृतिक और भाषिक समझ का भी विकास होगा। कविताओं का चयन इस प्रकार से किया गया है कि उन्हें पढ़कर विद्यार्थी के भीतर राष्ट्रीय, लोकतांत्रिक और मानवीय मूल्यों तथा सौंदर्य बोध का विकास हो सके। इस सारी सामग्री को छात्रों की सुविधा के लिए सरल, सहज और सुबोध भाषा में प्रस्तुत किया गया है। इस समस्त पाठ सामग्री को तैयार करने में हमें जिन विद्वान इकाई लेखकों, ग्रंथों और ग्रंथकारों से सहायता मिली है उन सबके प्रति हम कृतज्ञ हैं।

डॉ. आफताब आलम बेग

पाठ्यक्रम-समन्वयक

आधुनिक हिंदी कविता

इकाई 1 : भारतेंदु हरिश्चंद्र : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 मूल पाठ : भारतेंदु हरिश्चंद्र : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

1.3.1 जीवन परिचय

1.3.2 रचना यात्रा

1.3.3 रचनाओं का परिचय

1.3.4 हिंदी साहित्य में स्थान और महत्व

1.4 पाठ सार

1.5 पाठ की उपलब्धियाँ

1.6 शब्द संपदा

1.7 परीक्षार्थ प्रश्न

1.8 पठनीय पुस्तकें

1.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! आप जानते ही हैं कि आधुनिक काल से पूर्व हिंदी का अस्तित्व मुख्य रूप से ब्रज भाषा और अवधी के रूप में था। केवल पद्य में ही नहीं, उसके पूर्व का जो थोड़ा बहुत गद्य मिलता है वह भी इन्हीं भाषाओं में है। हिंदी साहित्य में 'भारतेंदु' के आविर्भाव से आधुनिक गद्य साहित्य परंपरा का प्रवर्तन होता है। भारतेंदु हरिश्चंद्र का प्रभाव हिंदी भाषा और साहित्य दोनों पर इतना गहरा पड़ा है कि उनके समय में लेखकों और कवियों का एक समूह 'भारतेंदु मंडल' कहा जाने लगा था। लगभग 35 वर्ष की अल्पायु में ही असामयिक निधन होने पर भी उन्होंने साहित्य की अनेक विधाओं में प्रचुर मात्रा में लेखन किया और हिंदी साहित्य को नए मार्ग पर ला खड़ा किया। आधुनिक हिंदी साहित्य आज जिस स्थान और स्थिति पर खड़ा है, उसकी नींव को पुख्ता करने में भारतेंदु और उनके मंडल का योगदान सुवर्णाक्षरों में लिखे जाने के योग्य है।

भारतेंदु हरिश्चंद्र के व्यक्तित्व और कृतित्व से परिचय कराती यह इकाई आपको एक ओर तो हिंदी साहित्य में आधुनिक काल के आरंभ से परिचित कराएगी दूसरी ओर यह भी स्पष्ट हो

जाएगा कि 1857 के पश्चात किस प्रकार हिंदी साहित्यकारों ने सामाजिक चेतना को बल प्रदान किया। भारतेंदु को आप एक ऐसी धुरी की तरह देखेंगे जिसके इर्द-गिर्द अनेक कवि और लेखक जुट गए थे। 'सिद्ध वाणी के अत्यंत सरस हृदय कवि' (रामचंद्र शुक्ल का कथन) ने प्राचीन और नवीन का ऐसा सुंदर सामंजस्य प्रस्तुत किया कि उनकी सूफी समान रंगत, सांप्रदायिकता से मुक्त विचारधारा और राज-समाज का संतुलन उन्हें अभूतपूर्व बना देता है।

1.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप -

- भारतेंदु की संक्षिप्त जीवन गाथा से परिचित हो सकेंगे।
- भारतेंदु के साहित्यिक व्यक्तित्व के निर्माण में उनकी जीवन-चर्या की भूमिका से अवगत हो सकेंगे।
- भारतेंदु के विपुल कृतित्व के बारे में जान सकेंगे।
- भारतेंदु के कवि रूप से परिचित हो सकेंगे।
- भारतेंदु के व्यक्तित्व और कृतित्व के ऐतिहासिक महत्व को समझ सकेंगे।

1.3 मूल पाठ : भारतेंदु हरिश्चंद्र : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

1.3.1 जीवन परिचय

आधुनिक हिंदी साहित्य के पुरोधा और भारतीय नवजागरण के प्रतीक भारतेंदु हरिश्चंद्र का जन्म 9 सितंबर सन 1850 ई. को काशी में हुआ। ये कलकत्ता के इतिहास-प्रसिद्ध सेठ अमीचंद के वंशज थे। इनके पिता का नाम गोपाल चंद था किंतु वे अपने उपनाम गिरिधरदास के नाम से अधिक जाने जाते हैं। माता का नाम पार्वती देवी था और छोटे भाई गोकुल चंद के नाम से विख्यात हुए। भारतेंदु तो इनका उपनाम है। हरिश्चंद्र का जन्म उनके ननिहाल में हुआ था। जब वे पाँच वर्ष के थे तब उनकी माता का और जब वे दस वर्ष के थे तब पिता का देहांत हो गया। संपन्न होने पर भी इसी कारण से उनकी शिक्षा का समुचित प्रबंध न हो सका।

हिंदी की प्रारंभिक शिक्षा पंडित ईश्वर दत्त और उर्दू का ज्ञान मौलवी ताज अली से घर पर ही प्राप्त किया। बचपन से ही इनमें काव्य रचना की प्रतिभा थी। पाँच वर्ष की अवस्था में ही उन्होंने एक दोहा रचा -

लै ब्योंड़ा ठाड़े भए, श्री अनिरुद्ध सुजान।

बानासुर की सेन को, हनन लगे भगवान॥

पिता ने बालक हरिश्चंद्र की प्रतिभा को देखकर आशीर्वाद दिया जो फलीभूत भी हुआ। पिता की मृत्यु के तीन चार-साल तक वे बनारस के क्वीन्स कॉलेज जाते अवश्य रहे पर मन उनका वहाँ नहीं रमता था। वैसे वे कुशाग्र बुद्धि और तीव्र स्मरणशक्ति वाले थे और स्वाध्याय से हिंदी, संस्कृत और अंग्रेजी के अतिरिक्त मराठी, बंगला, गुजराती, राजस्थानी, पंजाबी और उर्दू आदि अनेक भारतीय भाषाएँ अच्छी प्रकार से जानते थे। बाल्यावस्था में ही उनमें कविता के प्रति अनुराग और रुचि हो गई। माता की मृत्यु के पश्चात पिता के पुनर्विवाह के कारण विमाता मोहनाबीबी का दुर्व्यवहार उन्हें बहुत परेशान रखता था। उनकी देखभाल कदमाबाई और तिलकधारी नामक नौकरों ने किया। माता-पिता की असमय मृत्यु और विमाता के दुर्व्यवहार के अनेक करुण प्रसंगों का हरिश्चंद्र पर बड़ा प्रभाव पड़ा। स्नेह और प्रेम के भूखे बालक पर व्यापक मानव प्रेम के लिए अकुलाहट सदा बनी रही।

तेरह वर्ष की अवस्था में (1883) उनका विवाह काशी के रईस लाला गुलाब राय की पुत्री मन्ना देवी के साथ सम्पन्न हुआ। पंद्रह वर्ष की अवस्था में परिवार से सलाह करके वे सपरिवार जगन्नाथ धाम की यात्रा पर निकल पड़े। यह यात्रा विद्यालयी शिक्षा में एक ओर तो बाधा बनी पर दूसरी ओर उसने अनेक प्रकार के नए अनुभवों के द्वार खोल दिए।

डॉ. रामविलास शर्मा के शब्द हैं, 'भारतेंदु की यात्रा सिर्फ शौकीनों की यात्रा न थी। यह उनकी शिक्षा का आवश्यक अंग था। यात्रा में उन्हें काफी कष्ट उठाने पड़ते थे।' इस यात्रा में उनका परिचय बंगाल की नवीन साहित्यिक प्रगति से हुआ। इस प्रकार समय के साथ-साथ भारतेंदु के व्यक्तित्व में अनेक गुणों का विकास होता गया।

धनवान पिता के पुत्र हरिश्चंद्र का विवाह धनवान परिवार की कन्या से अवश्य हो गया था परंतु पत्नी से उनका मन कभी न मिला। दो संतानें - एक पुत्र बृजरत्नदास और पुत्री विद्यावती - भी हुए। पत्नी के अतिरिक्त भारतेंदु हरिश्चंद्र की दो प्रेमिकाएँ भी थीं। मल्लिका और माधवी। मल्लिका बंगाली भाषी कवयित्री थी और माधवी एक क्षत्रिय बाला जो बाद में मुस्लिम बन गई थी और जिसे भारतेंदु ने हिंदू रीति रिवाजों से शुद्ध कराकर अपने साथ रख लिया था। माधवी और मल्लिका से अपने स्नेह को उन्होंने कभी नहीं छिपाया। इतना ही नहीं उन्हें समय समय पर काव्य रचना की ओर प्रवृत्त भी किया और उनके बनाए पद्यों को अपने संग्रहों में समुचित स्थान दिया।

1880 ईस्वी में 'सार-सुधानिधि' नामक पत्रिका के माध्यम से पंडित रघुनाथ, सुधाकर द्विवेदी, रामेश्वर दत्त व्यास आदि के प्रस्तावानुसार हरिश्चंद्र को 'भारतेंदु' की पदवी से विभूषित किया गया। राजा शिवप्रसाद हिंदुस्तानी का समर्थन करने के कारण अंग्रेजों के कृपा-भाजन थे और उन्हें 'सितारेहिंद' (भारत के नक्षत्र) की सरकारी उपाधि मिली थी। 'सितारे' की तुलना में 'इंदु' अर्थात 'चंद्रमा' जनता के द्वारा हिंदी-सेवा के लिए दिया गया बड़ा उपहार था।

भारतेंदु का प्रादुर्भाव हिंदी के लोक-पक्ष की हिंदुस्तानी की सरकारी धुन पर विजय थी। हिंदी के रूप में राष्ट्रीयता का यह उदय-काल था। आचार्य शुक्ल के अनुसार, भारतेंदु ने अपनी पुस्तक 'कालचक्र' में लिखा था हिंदी नई चाल में ढली - 1873 ई.। 1884 में भारतेंदु की बलिया यात्रा एक प्रकार से उनकी अंतिम यात्रा सिद्ध हुई और लौटने पर वे कार्य भार और अन्य सांसरिक चिंताओं से अस्वस्थ रहने लगे। 6 जनवरी, 1885 को चौंतीस वर्ष चार महीने की अवस्था में उनका देहांत हो गया। अल्पायु में भारतेंदु ने देश और हिंदी भाषा तथा साहित्य की जो सेवा की, वह चिर स्मरणीय रहेगी।

भारतेंदु ने अपने बहुमुखी व्यक्तित्व के समस्त गुणों को अपने कृतित्व के माध्यम से अभिव्यक्त किया जिन्हें आज भी जब हम पढ़ते हैं तो उनके गौरवशाली व्यक्तित्व का चित्र हमारे मन पर चित्रित हो जाता है। हिंदी क्षेत्र में नवजागरण की पहली सशक्त साहित्यिक अभिव्यक्ति भारतेंदु हरिश्चंद्र के व्यक्तित्व में मिलती है। स्वदेशी की भावना और भारत राष्ट्र की धर्म-निरपेक्ष परिकल्पना में भारतेंदु अपने समय से बहुत आगे हैं। टैक्स, महामारी, धन के विदेशों में चले जाते रहने के विरुद्ध आवाज उठाते हैं। स्वदेशी और निजभाषा की उन्नति के लिए आग्रह करते हैं, पर संयम भाव से।

भारतेंदु के व्यक्तित्व की तीन बड़ी विशेषताएँ हैं - सत्यनिष्ठा, दानशीलता और वचनबद्धता। तत्कालीन धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक परिस्थितियों तथा नवीन राष्ट्रीय चेतना आदि के प्रभावों के कारण उनमें देशभक्ति और राष्ट्रीयता की भावना भी कूट-कूट कर भर गई थी। उनका जीवन तथा व्यक्तित्व भी इन अनेक भावनाओं का परिपाक है। एक ओर देश में नव जागरण और दूसरी ओर राजभक्ति और दरबारीपन दोनों उनके हृदय में नई चेतना भर रहे थे। उन्होंने अपने पूर्वजों के कुकर्मों को भी खुलकर प्रस्तुत किया और उनकी निंदा की।

भारतेंदु की बहुमुखी प्रतिभा और उनके गुणों की सभी प्रशंसा करते हैं। उनके जीवन के किसी भी पक्ष को देखा जाए तो उनकी संवेदनशीलता और पर-दुखकातरता प्रकट होती है।

अपने इन गुणों के कारण वे धनी होने पर भी कुछ समय बाद अभावग्रस्त हो गए। डॉ.गणपतिचंद्र गुप्त ने भारतेंदु के स्वभाव के बारे में लिखा है कि ‘अपनी प्रिय जनता के लिए भारतेंदु जहाँ लखपति से कंगाल हो गए थे, वहाँ उन्होंने अपने नाम को भी घिसकर ‘हरिश्चंद्र’ से ‘हरिचंद्र’ बना डाला था परंतु अपनी स्वाभिमानी स्वभाव के कारण कभी अपने लिए किसी से सहायता नहीं माँगी।’ भारतेंदु ने एक कवित्त द्वारा स्वयं अपना परिचय दिया है जिसकी कुछ पंक्तियाँ आप यहाँ पढ़ें और संपूर्ण कवित्त अवश्य पढ़ें क्योंकि इसके बिना भारतेंदु का जीवन-वृत्त अधूरा रहेगा।

सेवक गुनीजन के, चाकर चतुर के हैं,
कविन के मीत, चित हित गुनगानी के।
सीधन सों सीधे, महाबाँके हम बाँकन सों।
‘हरिचन्द’ नगद दामाद अभिमानी के॥

ऐसी पंक्तियों को पढ़कर कौन विजयदेव नारायण साही की तरह न कह देगा? ‘भारतेंदु आधुनिक हिंदी साहित्य के बाबा हैं।’

भारतेंदु की चार व्यक्तिगत इच्छाएँ थीं - कृष्ण भगवान का मंदिर अपने बगीचे में बनवाना, धार्मिक उत्सवों के लिए विदेश यात्राएँ करना, हिंदी विश्वविद्यालय की स्थापना करना, पश्चिमोत्तर में भारतीय शिल्पकला का कॉलेज स्थापित करना। भारतेंदु का व्यक्तित्व और उनका निजी जीवन और उनकी इच्छाएँ उनके आर्थिक अभाव और अल्पायु में मृत्यु हो जाने के कारण पूरे न हो सके।

इस प्रकार भारतेंदु के व्यक्तित्व में एक ओर तो अभिजात्य संस्कार थे तो दूसरी ओर वे आम आदमी के साथ तादात्म्य स्थापित करने की क्षमता भी रखते थे। वे विशिष्ट और सामान्य दोनों एक साथ थे। राजभक्त और देशभक्त, सनातनी और आडंबर विरोधी, परंपरावादी वैष्णव और आधुनिक एक साथ। राजभक्ति उन्हें संस्कारों में मिली थी और सामाजिक परिस्थितियों ने इनमें देश भक्ति की भावना को अंकुरित किया था। भारतेंदु ने समाज और साहित्य की आवश्यकताओं को पहचाना और उन्हें अपने छोटे से जीवन काल में ही पूरा भी किया। उनके चंद्रमा के समान लोकप्रिय व्यक्तित्व के आकर्षण का कारण यह भी था कि उन्होंने कभी अपने तथाकथित ‘कलंक’ और दोषों को कभी छिपाया नहीं। धन का अपव्यय करते हुए वे एक बार कह उठे थे, ‘इस धन ने मेरे पूर्वजों को खाया है, अब मैं इसे खाऊँगा।

बोध प्रश्न

- धनी परिवार में जन्म लेने पर भी बालक हरिश्चंद्र को बचपन में किन बातों का दुख था?
- जगन्नाथ धाम की यात्रा का हरिश्चंद्र के साहित्यिक व्यक्तित्व के निर्माण में क्या योगदान है?
- भारतेंदु के व्यक्तित्व की कुछ विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
- भारतेंदु की चार इच्छाएँ कौन सी हैं जो पूरी न हो सकीं?

1.3.2 रचना यात्रा

भारतेंदु हरिश्चंद्र एक ऐसे लेखक थे जिनकी अल्पायु में मृत्यु अवश्य हो गई थी पर उन्होंने अपनी लेखनी से विपुल मात्रा में अनेक विधाओं में लिख कर हिंदी के साहित्य कोश में अभिवृद्धि की। आचार्य शुक्ल जी के अनुसार 'उन्होंने एक ओर तो हिंदी साहित्य की नवीन गति के प्रवर्तन में योगदान दिया, दूसरी ओर पुरानी परिपाटी की रचना के साथ भी अपना पूरा संबंध बनाए रखा।' अपने समय की परिस्थितियों, घटनाओं पर जम कर लिखा।

भारतेंदु ने समाज और साहित्य दोनों के लिए अतुलनीय योगदान दिया। उन्होंने तीन पत्रिकाएँ निकालीं - सन 1868 में 'कवि-वचन-सुधा', सन 1873 में 'हरिश्चंद्र मैगजीन' (बाद में 'हरिश्चंद्र चंद्रिका') और सन 1874 में 'बाला बोधिनी'। इसके अतिरिक्त इनके चारों ओर लेखकों और कवियों का एक मंडल तैयार हो गया था जिसमें उस युग के प्रसिद्ध साहित्यकारों जैसे बदरी नारायण चौधरी 'प्रेमघन', प्रतापनारायण मिश्र, बालकृष्ण भट्ट, अंबिका दत्त व्यास, राधाकृष्ण गोस्वामी, जगमोहन सिंह और लाला श्रीनिवासदास के नाम प्रमुख हैं। भारतेंदु ने 'पेनी रीडिंग' नाम से एक गोष्ठी स्थापित की और 'तदीय समाज' के नाम से एक सभा की स्थापना की। शिक्षा के प्रसार के लिए 'चौखम्भा स्कूल' खोला जो आजकल 'हरिश्चंद्र डिग्री कॉलेज' कहा जाता है।

भारतेंदु ने अनेक भारतीय नगरों की यात्राएँ की जो उनके लिए लाभकारी रहा। इन यात्राओं में दिए गए व्याख्यानों से हिंदी की चहुँमुखी उन्नति हुई। बलिया वाला व्याख्यान 'भारतवर्ष की उन्नति कैसे हो सकती है' तो जग-प्रसिद्ध है ही। भारतेंदु के लिए उन्नति में निज भाषा का 'सुधार' और 'प्रगति' या 'विकास' दोनों ही सम्मिलित हैं।

बोध प्रश्न

- भारतेंदु ने कौन सी तीन पत्रिकाएँ निकालीं?
- भारतेंदु मंडल के चार प्रमुख साहित्यकारों के नाम लिखिए।
- भारतेंदु के अनुसार भारतवर्ष की उन्नति कैसे हो सकती है?

1.3.3 रचनाओं का परिचय

भारतेंदु के रचनाकार-व्यक्तित्व को प्रस्तुत करना कठिन है। वे हृदय से कवि हैं और उनकी कविता ब्रजभाषा में है। यही नहीं अधिकतर भक्ति संस्कारों और रीतिकालीन भंगिमा से युक्त है। कुछ कविताएँ खड़ी बोली में भी हैं। नाटकों में तो उनका मन रमा ही है। भारतेंदु की अभिव्यक्ति व्यवस्था के दो प्रमुख पक्ष हैं। विचार और आंदोलन के लिए खड़ी बोली गद्य का प्रयोग और संस्कार रचना तथा पद्य के लिए प्रायः ब्रजभाषा के प्रयोग का आग्रह।

भारतेंदु के व्यक्तित्व के समान ही उनका कृतित्व भी बहुल और विविधता गुणयुक्त है। अपनी विलक्षण मेधा और उर्वर लेखनी से दस-बीस वर्षों में ही आपने इतने ग्रंथों की रचना की है कि आप आश्चर्य से भर जाएँगे। विद्वान अध्येता उनकी रचनाओं को भाव और विषयानुसार चार भागों में विभाजित करते हैं - भक्ति-प्रधान, शृंगार प्रधान, देश-प्रेम की भावना प्रधान और सामाजिक समस्या प्रधान।

भारतेंदु के जीवन और साहित्य सर्जना के दो सिद्धांत वाक्य थे, 'स्वत्व निज भारत गहै' और 'निज भाषा उन्नति अहै सब उन्नति को मूल।' भारत अपना स्वत्व ग्रहण करे और मातृभाषा हिंदी का सर्वांगीण विकास हो, वह नए रूप में ढले। भारतेंदु की धारणा के अनुसार सन 1873 में 'हिंदी नई चाल में ढली'। यह 'चाल' शिल्प और संवेदना की दृष्टि से एकदम अनोखी और नवीन थी। खड़ी बोली गद्य में हिंदी की यात्रा जातीय संवेदना से अनुप्राणित होकर प्रारंभ हुई थी जिसे भारतेंदु और उनके समकालीन रचनाकारों ने अपनी साहित्य साधना से अपेक्षित गति प्रदान की।

भारतेंदु हरिश्चंद्र की काव्य-कृतियों के संख्या 70 बताई जाती है। इनका संकलन काशी नागरी प्रचारिणी सभा, काशी द्वारा 'भारतेंदु ग्रंथावली-भाग 2' में किया गया है। इन काव्य ग्रन्थों की सूची की नामावली इस प्रकार है - भक्त सर्वस्व, प्रेम मालिका, कार्तिक स्नान, वैशाख महात्म्य, प्रेम सरोवर, प्रेमाश्रुवर्षण, जैन कुतूहल, प्रेम माधुरी, प्रेम तरंग, उत्तरार्ध भक्तमाल, प्रेमप्रलाप, गीत गोविंदानंद, सतसई शृंगार, होली, मधु मुकुल, राग संग्रह, वर्षा-विनोद, विनय प्रेम पचासा, फूलों का गुच्छा, प्रेम फुलवारी, कृष्ण चरित, श्री अलवरत वर्णन, श्री राजकुमार सुस्वागत पत्र, सुमनावली, प्रिंस ऑफ वेल्स के पीड़ित होने पर कविता, देवी छदय प्रताप, प्रातः स्मरण मंगल पाठ, चतुरंग, तन्मय लीला, दैन्य प्रताप, उरेहना, दानलीला, रानी छद्म लीला,

संस्कृत लावणी, बसंत होली।

भारतेंदु ने मूल संस्कृत, बंगला और अँग्रेजी से अनुवाद को मिलाकर कुल सत्रह नाटक रचे। 'नाटक' (1883) शीर्षक से एक लंबा निबंध भी लिखा जो हिंदी आलोचना की आधारशिला कहा जा सकता है। मौलिक नाटकों में विषय, नाट्य रूप, ऐतिहासिक विकासक्रम प्रत्येक दृष्टि से ताजगी है। इनमें से 'अंधेर नगरी'(1881) सरल शैली में लिखा गया तीखा व्यंग्य है। जोनाथन स्विफ्ट की अंग्रेजी रचना 'गलिवर्स ट्रेवल्स' के समान इसमें अर्थ की परतें अनेक स्तरों पर खुलती हैं। शासन सत्ता का अंधापन और अंधेर इस नाटक का प्रमुख उपजीव्य है। उन्होंने बांग्ला के नाटकों का अनुवाद भी किया जिनमें धनंजय विजय, विद्या सुंदर, पाखंड विडंबन तथा मुद्राराक्षस आदि प्रमुख हैं। वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति, श्री चंद्रावली, भारत दुर्दशा, अंधेर नगरी, नील देवी आदि उनके मौलिक नाटक हैं।

भारतेंदु की कुछ रचनाएँ उनकी राजभक्ति की ओर संकेत करती हैं। भारतेंदु के व्यक्तित्व में द्वैत तब परिलक्षित होता है जब आप उनकी रचनाओं का गंभीर पाठ करते हैं। वे ऐसे भक्त थे जिनकी पैनी दृष्टि तत्कालीन राजनीति पर केंद्रित थी। रामस्वरूप चतुर्वेदी 'हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास' में लिखते हैं - ब्रिटिश शासन के युग में पराधीनता जितनी गहरी होती गई अपनी अस्मिता का बोध उतना ही तीव्र हुआ। 'हिंदुस्तान का मेवा - फूट और बैर' कहकर वे 'अंधेर नगरी' नाटक में भारतीयों को चेताते हैं। महारानी विक्टोरिया के कल्याण की कामना अवश्य करते हैं, पर 1857 के स्वतंत्रता-संग्राम के प्रति भी आकृष्ट होते हैं, पर कुछ भयभीत होकर - जिन भय सिर न हिलाय सकत कहूँ भारतवासी। स्वतंत्र अभिव्यक्ति की तड़प और विदेशी राज में देशवासियों की विवशता का संकेत शासन की वक्र दृष्टि से बचने के लिए है। 1882 में अंग्रेजों की मिश्र देश में विजय पर भारतेंदु ने 'विजयिनी-विजय-पताका' कविता लिखी थी। उन्हें अंग्रेज़ और अंग्रेज़ी दोनों से शिकायत है और वे कटाक्ष करना नहीं भूलते –

अंग्रेज़ राज सुख साज सजे सब भारी।
पै धन बिदेश चलि जात इहै अति ख़्वारी॥

और अंग्रेज़ी के लिए वह मुकरी जिसमें वे अंग्रेज़ी में 'भीतर तत्व न झूठी तेज़ी' कहकर उपहास करते हैं, क्या कोई भूल सकता है?

भारतेंदु हरिश्चंद्र के कृतित्व पर दो दृष्टियों से विचार किया जा सकता है- एक गद्य भाषा के स्वरूप के प्रतिष्ठापक के रूप में और दूसरे आधुनिक साहित्य परंपरा के प्रवर्तक के रूप में।

भारतेंदु की कृतियों की विशेषताओं के आधार पर उनके कृतित्व के कुछ गुणों को निम्नवत प्रस्तुत किया जा सकता है -

देश तथा जाति प्रेम - भारतेंदु जातीय कवि हैं जिन्हें सदा हिंदी, हिंदू और हिंदुस्तान का ध्यान रहता था। उनकी रचनाओं में अपने देश का गौरव, तत्कालीन दीन अवस्था और भविष्य के सपने सर्वत्र हैं।

हिंदी गद्य और नाटक के जन्मदाता - भारतेंदु से कुछ वर्ष पहले सैयद इंशा अल्लाह खाँ, लल्लू लाल, सदल मिश्र और राजा शिव प्रसाद आदि गद्य लेखक हुए किंतु या तो वे लल्लू लाल की तरह ब्रजभाषा मिश्रित पद्य का अधिक प्रयोग करते थे या शिव प्रसाद की तरह अरबी-फारसी के शब्दों का अधिक प्रयोग करते थे।

भारतेंदु ने गद्य को अनिश्चितता से निकाल कर उसे निश्चित रूप दिया। इसलिए उन्हें आधुनिक हिंदी गद्य का जन्मदाता कहा जाता है। हिंदी में नाट्य साहित्य की नीव भी भारतेंदु ने ही डाली थी। उनके पिता गोपाल चंद्र ने 'नहुष नाटक' लिखा अवश्य था पर वह ब्रजभाषा में था। इसके बाद लक्ष्मण सिंह ने अनुवाद किए। भारतेंदु ने पहली भर हिंदी के पाठकों को नाटक और नाटक पर सैद्धांतिक विवेचन प्रस्तुत किया।

भाषा की परिष्कृति - भारतेंदु ने प्राचीन प्रचलित ब्रजभाषा के स्थान पर हिंदी को नई चाल में ढाला। भाषा की नई शैली, नए शब्दों और नए मुहावरों का प्रकाशन किया। पद्य को ब्रजभाषा में ही रखकर गद्य को उन्होंने बोलचाल की खड़ी बोली में ही रखा।

विविध विषय प्रतिपादिकता - भारतेंदु विविध विषयों और विधाओं का समयानुसार प्रयोग करते थे। कविता में वे अन्य कवियों के समान भक्ति और शृंगार तक ही सीमित न रहे बल्कि प्रेम, भक्ति, प्रकृति वर्णन, स्वदेश प्रेम, इतिहास, संस्कृति आदि अनेक विषयों पर और हास्य, वीर, वीभत्स तथा करुणा आदि रसों से युक्त कविता करते थे। हास्य, विनोद, प्रहसन और कटाक्ष के चित्रण में भारतेंदु की कुशलता की दाद देनी होगी।

कहा जा सकता है कि हिंदी में उस समय जिस बात की कमी उन्हें दिखाई दी वह उन्होंने पूरी की। गद्य लेखन-शैली निश्चित की, नाट्य साहित्य की नीव डाली, भाषा का संशोधन किया, और हिंदी-भाषा को विविध विषयों तथा नए भावों से समृद्ध किया तथा हिंदी में हास्य रस की कमी को यथा संभव दूर किया। धर्म, भारत की गौरवमयी संस्कृति, भीतरी कलह का दुख, देशभक्ति, समाजसुधार, राष्ट्रीय एकता और स्वाधीनता के लिए आग्रह आदि भारतेंदु में हैं। अपने

समय के अनेक लेखकों को विभिन्न प्रकार से प्रेरित करते हुए उन्होंने कल्पवृक्ष के समान छाया और मनोवांछित आश्रय दिया। भारतेंदु हिंदी साहित्य के नवरत्नों में स्थान पाने योग्य हैं। 'भारतेंदु' की उपाधि नोबेल पुरस्कार से बढ़कर रही। 1950 में भारतेंदु की जन्मशती के अवसर पर उनके समान ही स्वाभिमानी कवि निराला ने कहा था, 'मैं उनके दरबार का दरबान मात्र हूँ।"

बोध प्रश्न

- भारतेंदु की रचनाओं को भाव और विषयानुसार विभाजित कीजिए।
- 'भारतेंदु की राजभक्ति' से क्या तात्पर्य है?
- भारतेंदु के कृतित्व के चार गुण बताइए।
- भारतेंदु ने हिंदी भाषा के विकास के लिए क्या-क्या कदम उठाए?

1.3.4 हिंदी साहित्य में स्थान और महत्व

उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य भाग से हिंदी नई चाल में ही नहीं ढली कविता ने भी एक नया मोड़ लेती है। भारतेंदु हरिश्चंद्र का जन्म एक ऐसे वर्ष में हुआ जब एक ओर तो रीति-काल समाप्त होता है और एक नया युग - आधुनिक युग - का प्रारंभ होता है। भारतेंदु इसी से आधुनिक युग के जनक कहलाते हैं। इस शताब्दी के उत्तरार्ध में राजनीति, धर्म, विज्ञान, शिक्षा, समाज, सभी क्षेत्रों में आंदोलन और नवजागरण के लक्षण दृष्टिगोचर होते हैं। इसी काल में 1857 का स्वतंत्रता संग्राम हुआ, इंडियन नेशनल कांग्रेस की स्थापना हुई, आर्य-समाज की नींव पड़ी, रेल-तार-डाक और सड़कों का जाल बिछा, विश्वविद्यालय खुले, विधवा विवाह, बाल विवाह, वृद्ध विवाह और स्त्री-शिक्षा की समस्याओं पर गंभीरता से विचार-विमर्श हुआ। इन परिस्थितियों का प्रभाव उस युग के कवियों की रचनाओं पर पड़ा। देश में नवीन चेतना व्याप्त हो रही थी। कविता की भाषा अभी मुख्य रूप से ब्रज ही रही पर उस युग के गद्य ने खड़ी बोली को स्वीकार करना प्रारम्भ कर दिया था। खड़ी बोली में पद्य लिखने का स्फुट प्रयत्न स्वयं भारतेंदु ने भी किया।

भारतेंदु के वृहत साहित्यिक योगदान के कारण ही 1857 से 1900 तक के काल को भारतेंदु युग के नाम से जाना जाता है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार, भारतेंदु अपनी सर्वतोमुखी प्रतिभा के बल से एक ओर तो पद्माकर और द्विजदेव की परंपरा में दिखाई पड़ते थे, तो दूसरी ओर बंग देश के माइकेल मधुसूदन दत्त और हेमचंद्र की श्रेणी में। प्राचीन और नवीन का सुंदर सामंजस्य भारतेंदु की कला का विशेष माधुर्य है। डॉ. तारकनाथ बाली ने 'हिंदी

साहित्य का आधुनिक इतिहास' में विद्वत्तापूर्ण टिप्पणी करते हुए लिखा है कि "भारतेंदु हरिश्चंद्र के सामने एक ओर तो परंपरा थी, जिसमें श्रेयस्कर तत्व भी थे और लोक विरोधी रूढ़ियाँ तथा अंधविश्वास भी थे। इसके अतिरिक्त उनकी दृष्टि प्रधान रूप से अपने समकालीन समाज की दुर्दशा भी थी, जो ब्रिटिश साम्राज्यवाद के शोषण और राष्ट्र-विरोधी नीतियाँ भी थीं। परंपरा से उन्हें दर्शन, भक्ति और शृंगार आदि का विपुल साहित्य प्राप्त हुआ तथा सती प्रथा, विधवाओं की दुर्दशा आदि कुप्रथाओं का भी सामना करना पड़ा। उनकी कविता में प्रायः इन सभी विषयों को उजागर किया गया है।"

भारतेंदु का विपुल सृजनात्मक लेखन तो है ही उल्लेखनीय, उनका दूसरा सबसे बड़ा योगदान हिंदी भाषा को नई चाल में ढालने का भी रहा। उनसे पहले राजा लक्ष्मण सिंह की संस्कृतनिष्ठ हिंदी और राजा शिवप्रसाद 'सितारेहिंद' की फारसीनिष्ठ शैली का बोलबाला था। भारतेंदु ने मध्यम मार्ग चुना और इन दोनों प्रवृत्तियों का मेल करके भाषा के उस रूप को प्रचारित किया जिसमें संस्कृत और अरबी-फारसी के शब्द प्रयोग में संतुलन आता चला गया। नई चाल में ढली यही हिंदी बाद में प्रेमचंद आदि के द्वारा परवान चढ़ी। वे गद्य खड़ी बोली में लिखते थे लेकिन कविता के लिए उन्होंने ब्रज भाषा को चुना था। उर्दू में भी आपने 'रसा' उपनाम से कुछ लेखन किया। इस प्रवृत्ति को 'भाषा का द्वैध' कहा गया जो इनके बाद दो दशक तक चलता रहा और जिसे महावीर प्रसाद द्विवेदी और उनके गुरुत्व से प्रेरित कवियों के अनथक प्रयासों से 1900 में खड़ी बोली के रूप में प्रतिष्ठित किया गया।

भारतेंदु हरिश्चंद्र ने हिंदी भाषा और साहित्य को एक नई दिशा दी। साहित्य में नई विधाओं का प्रणयन किया। काव्य में विविध विषयों का समावेश किया। सामाजिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर काव्य रचना की। भारतेंदु युग के आगमन से पूर्व 1857 का स्वाधीनता संग्राम हो चुका था। विदेशी शासन से जनता दुखी थी। साहित्य में राजनीतिक, सामाजिक समस्याओं को स्थान देकर जनता में जन-जागरण लाने का कार्य शुरू किया गया। भारतेंदु के प्रभाव से तत्कालीन सभी कवियों में देश-प्रेम एवं भाषा-प्रेम बढ़ा। कवियों ने पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन किया। कविता में राजनीतिक सामाजिक और आर्थिक समस्याओं को अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया गया। भारतेंदु के परवर्ती साहित्यकारों ने उनके द्वारा अधूरे छोड़े कार्यों को पूरा करने का प्रयत्न किया।

भारतेंदु युग पर एक महत्वपूर्ण कृति के लेखक और प्रख्यात आलोचक डॉ. रामविलास

शर्मा का मत है - भारतेंदु एक विशाल आंदोलन के केंद्र थे। वह दूसरों को एक सहकारी की भाँति उत्साहित करते थे। उन्होंने वे विषय दिए जिन पर वह ग्राम गीत लिखना आवश्यक समझते थे। भारतेंदु देश के राजनीतिक आंदोलन की बहुत सी बातें पहले ही सोच चुके थे। समाज सुधार से लेकर स्वदेशी आंदोलन तक उनकी दृष्टि गई थी। वे देश की जनता में एक नई चेतना जगाना चाहते थे जो प्रत्येक क्षेत्र में उसे सजग रखे। (भारतेंदु युग और हिंदी भाषा की विकास परंपरा, 1943, पृष्ठ 13-14)।

विश्वभर मानव के शब्दों में भारतेंदु के व्यक्तित्व और काव्य की महत्ता यह है कि प्राचीन को आत्मसात करके उन्होंने नवीन की सृष्टि की। डॉ. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय के अनुसार प्राचीन से नवीन के संक्रमण काल में भारतवासियों की नवोदित आकांक्षाओं और राष्ट्रीयता के प्रतीक थे; वे भारतीय नवोत्थान के अग्रदूत थे। उनके राधा-कृष्ण संबंधी पदों और प्रेम-संबंधी कवित्त-सवैयों से यह स्पष्ट सिद्ध होता है कि वे भक्ति और रीतिकाल दोनों योगों के सपने एक साथ देखते थे। साथ ही राष्ट्रीयता, समाज-सुधार और हास्य-व्यंग्य पर लेखनी चलाने के कारण वे नवयुग के जन्मदाता भी सिद्ध हुए। हिंदी भाषा और साहित्य के प्रचार प्रसार के लिए उन्होंने जीवन भर अथक प्रयत्न किया। वे भाषा-प्रेमी, भाषा-प्रचारक और भाषा-उन्नायक थे। इस प्रकार उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध के भारतेंदु अकेले महाकवि हैं। किशोरीलाल गुप्त का कहना सही है कि भारतेंदु उन महाकवियों में हैं जो अपनी पूर्व परंपरा पर चलते हुए अपनी भी एक परंपरा छोड़ जाते हैं। जैसा कि डॉ. योगेंद्रनाथ शर्मा 'अरुण' ने लिखा है -

> "भारतेंदु बाबू हरिश्चंद्र प्राचीन रूढ़ियों और रुग्ण परंपराओं से निरंतर जूझकर जिस आधुनिकता, लोकधर्मिता और सबसे बढ़कर अदम्य जन चेतना को लेकर हिंदी साहित्य में सर्वथा नई और प्राणवान संस्कृति के संवाहक बने उसने उन्हें कालजयी बना दिया है। 'कामायनी' के प्रणेता महाकवि जयशंकर प्रसाद ने तो भारतेंदु हरिश्चंद्र को ही आधुनिकता और यथार्थवाद का प्रवर्तक माना है।" (गगनांचल, भारतेंदु विशेषांक, जुलाई-अक्टूबर 2013)।

बोध प्रश्न

- भारतेंदु युग से क्या तात्पर्य है?
- भारतेंदु की कविता और नाटकों के प्रमुख चार विषय कौन से हैं?
- 'भारतेंदु की देश-भक्ति' से क्या तात्पर्य है?

विवेचनात्मक टिप्पणी

प्रिय छात्रो! भारतेंदु हरिश्चंद्र के जीवन और कार्यों के बारे में पढ़कर अब तक आप यह समझ चुके होंगे कि वे हिंदी साहित्य के आधुनिक काल के प्रवर्तक और हिंदी नवजागरण के सूत्रधार थे। जैसा कि आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा है -

> "ये केवल चौंतीस वर्षा और चार महीने जीवित रहे। .... इतने अल्पकाल में शायद ही किसी अन्य व्यक्ति ने इतना बड़ा साहित्यिक कार्य किया हो। इनकी अपूर्व प्रतिभा ने भाषा और साहित्य दोनों पर प्रभाव डाला। सिर्फ पंद्रह वर्ष की अवस्था में अपने परिवार के साथ ये जगन्नाथ धाम गए। इस यात्रा में इनका परिचय बंगाल के उगते हुए साहित्य से हुआ।... इस नई जागृति को देखकर भारतेंदु बहुत प्रभावित हुए; और हिंदी में नवयुग का आरंभ नहीं हुआ है, ऐसा अनुभव करने लगे।" (हिंदी साहित्य : उद्भव और विकास, पृ. 208)

हिंदी साहित्य में नए युग का सूत्रपात तभी संभव था जब साहित्य को रीतिकालीन दरबारी संस्कृति से मुक्त करके आम जन गण के व्यापक सुख-दुख से जोड़ा जा सकता। भारतेंदु ने सजगतापूर्वक यह कार्य करके दिखाया।

छात्रो! 'आधुनिकता' के दो लक्षण माने जाते हैं - 1. मध्यकाल से भिन्नता और 2. नवीन इहलौकिक दृष्टिकोण। रीतिकाल में हिंदी साहित्य घोर शृंगारिकता में डूब चुका था। एक ही विषय को बार-बार दुहराया जा रहा था। परलोकवादी दृष्टि की प्रबलता के कारण पुनर्जन्म और भाग्यवाद इतने हावी हो चुके थे कि देश अकर्मण्यता के अंधे कुएँ में घिरा जा रहा था। लोग गुलामी को भी ईश्वर की इच्छा और भाग्य का लेखा मानने लगे थे। ऐसी स्थिति में समाज और साहित्य दोनों ही में आधुनिक दृष्टिकोण की स्थापना के लिए नवजागरण जरूरी था। समूचे हिंदी क्षेत्र में इसे प्रसारित करने का बीड़ा भारतेंदु ने उठाया। इसके लिए जनता तक पहुँचने की नई युक्ति का सहारा लेना जरूरी थी। और यह नई युक्ति थी पत्रकारिता। जगन्नाथ धाम से लौटने के बाद भारतेंदु ने हिंदी नवजागरण के अपने किशोर स्वप्न को साकार करने के लिए पत्रकारिता का सहारा लिया और साहित्य को व्यापक जनता के साथ जोड़ा। यथा -

> "घर लौटकर केवल सत्रह वर्ष की अवस्था में उन्होंने 'कविवचन सुधा' नामक की एक पत्रिका निकाली। पहले तो इसमें केवल प्राचीन कवियों की कविताएँ छपा करती थीं, किंतु बाद में गद्य लेख भी रहने लगे। सन् 1873 ई. में 'हरिश्चंद्र

> मैगजीन' नाम की दूसरी पत्रिका निकाली। आठ संख्याओं (अंकों) के बाद पत्रिका का नाम बदलकर 'हरिश्चंद्र चंद्रिका' कर दिया गया। इस चंद्रिका में हरिश्चंद्र की परिमार्जित हिंदी का प्रथम दर्शन हुआ।" (हिंदी साहित्य : उद्भव और विकास, पृ. 208)

भारतेंदु के संबंध में यह बात भी ध्यान खींचती है कि उनका परिवार अपनी राजभक्ति के लिए ब्रिटिश राज द्वारा प्रशंशित था, लेकिन उन्होंने स्वयं राजभक्ति से आगे निकलकर राष्ट्र भक्ति का मार्ग अपनाया। उन्होंने हिंदी भाषी जनता को अशिक्षा, अज्ञान, अपौरुष, अकर्मण्यता और आत्महीनता के अंधकार से निकालने के लिए स्वभाषा और स्वदेशी को अपनाने का ऐसा मंत्र दिया जिसने उस काल के युवकों के मन में स्वतंत्रता की चेतना जगाने का काम किया। यथा -

> "भारतेंदु हरिश्चंद्र ने एक ओर 1857 के प्रथम स्वाधीनता संग्राम से उत्पन्न राष्ट्रीय चेतना को प्रखर अभिव्यक्ति दी। और ब्रिटिश राज के शोषण व दमन चक्र से जनता को परिचित कराते हुए उसे स्वदेश, स्वभाषा और स्वतंत्रता का संस्कार दिया। दूसरी ओर उन्होंने हिंदी साहित्य के तत्कालीन परिवेश को नेतृत्व प्रदान करते हुए... युगानुरूप नया तेवर दिया। ... यही कारण है कि साहित्य के इतिहासकारों ने हिंदी साहित्य के आधुनिक काल का प्रवर्तक तो माना ही, उसके प्रथम उत्थान का नामकरण भी उनके नाम पर किया है।" (कविता के पक्ष में, पृ.116)

1.4 पाठ सार

हिंदी साहित्य के पितामह भारतेंदु हरिश्चंद्र (1850-1885) को काव्यप्रतिभा अपने पिता गोपाल चंद्र से विरासत में मिली। अपने छोटे से जीवन में उन्होंने साहित्य सेवा के साथ-साथ समाज सुधार और अन्य अपने मित्रों-साहित्यिकों की सहायता करते रहना अपना कर्तव्य समझा। भारतेंदु ने 70 काव्य ग्रंथों की रचना की और समाज-सुधार, राष्ट्र-प्रेम आदि नवीन विषयों को भी अपनाया। उनकी कविता शृंगार-रस प्रधान, भक्ति-रस प्रधान, सामाजिक समस्या प्रधान तथा राष्ट्र प्रेम प्रधान हैं। प्रकृति चित्रण में वे मानव-प्रकृति के प्रति अधिक आकर्षित रहे। भाषा शैली में ब्रज भाषा के साथ ही रीति कालीन रसपूर्ण अलंकार शैली का प्रयोग है। नाटक

का प्रवर्तन किया। हिंदी गद्य को नई चाल में ढाला और निज भाषा हिंदी को सब उन्नति का मूल मानते हुए उसके विकास के लिए अनेक प्रयत्न किए। भारतेंदु का व्यक्तित्व और कृतित्व इतना प्रभावशाली रहा कि उनका युग 'भारतेंदु युग' के नाम से प्रसिद्ध हुआ। सुमित्रानंदन पंत ने इनके बारे में ठीक ही लिखा है -

भारतेंदु कर गए, भारती की वीणा निर्माण।
किया अमर स्पर्शों में, जिसका बहु विधि स्वर संधान॥

1.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. भारतेंदु हरिश्चंद्र की जीवन गाथा बहुत छोटे समय में बहुत बड़ी उपलब्धियों की गाथा है।
2. भारतेंदु के साहित्यिक व्यक्तित्व के निर्माण में उनके जीवन-चर्या की केंद्रीय भूमिका है। उन्होंने अपनी सारी शक्ति भाषा और साहित्य के विविध रूपों को समृद्ध करने में लगाई।
3. भारतेंदु बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। उनका अनुभव और अध्ययन बहुत गहन था। इसके प्रमाण उनके विभिन्न विधाओं के मौलिक और अनूदित साहित्य में देखे जा सकते हैं।
4. भारतेंदु हरिश्चंद्र ने पीछे से चली आती साहित्य की मध्यकालीन परिपाटी को उलट दिया। तथा लेखन को आम जन-गण के साथ जोड़ा।
5. भारतेंदु हरिश्चंद्र का हिंदी साहित्य पर इतना गहरा प्रभाव पड़ा कि उन्हें आधुनिक काल के प्रवर्तन का श्रेय दिया गया।

1.6 शब्द संपदा

---

1. अनुप्राणित = प्रेरित, समर्पित
2. अभिजात्य = उच्च कुल (में जन्म लेने) के योग्य
3. अस्मिता = अहंभाव, अपनी सत्ता का भाव, आपा, अहंकार, अभिमान
4. आडंबर = दिखावा, अनावश्यक या दिखाऊ आयोजन
5. उपजीव्य = जिसके सहारे जीवन चलता हो
6. कटाक्ष = वक्र दृष्टि, तिरछी निगाह, व्यंग्य, ताना मारना
7. कुशाग्र = कुश की नोक के समान, अति तीक्ष्ण, नुकीला, बुद्धिमान
8. तादात्म्य = तल्लीनता, एक जान होना

9. परिलक्षित = अच्छी तरह देखा-भाला हुआ

10. प्रादुर्भाव = प्रकट होना, उत्पत्ति

11. भंगिमा = कलापूर्ण शारीरिक मुद्रा, अदा (जैसे अंग भंगिमा), कुटिलता, वक्रता (जैसे भाव भंगिमा)

12. मेधा = धारण शक्ति, बुद्धि

1.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. भारतेंदु हरिश्चंद्र का जीवन परिचय और प्रमुख रचनाओं का उल्लेख करते हुए उनके साहित्यिक व्यक्तित्व पर प्रकाश डालिए।
2. 'अपने देश में अपनी भाषा के माध्यम से उन्नति करो' कथन से क्या तात्पर्य है? वर्तमान संदर्भ में इसकी प्रासंगिकता पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।
3. भारतेंदु की हिंदी सेवा पर एक सारगर्भित निबंध लिखिए।
4. "भारतेंदु के व्यक्तित्व और कृतित्व में राजभक्ति और देशभक्ति का समावेश और संतुलन है।" प्रमाण सहित विवेचन कीजिए।
5. हिंदी साहित्य के विकास में भारतेंदु के योगदान को सुनिश्चित कीजिए।
6. क्या भारतेंदु को 'आधुनिकता का अग्रदूत' कहा जा सकता है? तर्क सहित उत्तर दीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. भारतेंदु ने हिंदी के लिए जो कार्य किए उनमें से सबसे प्रमुख कौन से हैं और क्यों?
2. भारतेंदु ने अपने नाटकों में किन प्रमुख समस्याओं को रेखांकित किया?
3. भारतेंदु के 'भाषा-द्वैध' को स्पष्ट कीजिए।
4. भारतेंदु का पत्रकार-रूप पर टिप्पणी लिखिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए।

1. भारतेंदु हरिश्चंद्र का जन्म स्थान है – ( )

    (अ) काशी (आ) जबलपुर (इ) जयपुर (ई) पटना

2. भारतेंदु हरिश्चंद्र कृत 'नाटक' किस विधा की रचना है – ( )

    (अ) नाटक (आ) निबंध (इ) कहानी (ई) कविता

3. स्त्री शिक्षा के लिए भारतेंदु ने कौन सी पत्रिका निकाली थी ( )

    (अ) कवि वचन सुधा (आ) हरिश्चंद्र चंद्रिका (इ) बालाबोधिनी (ई) तदीय समाज

4. "मैं उनके दरबार का दरबान मात्र हूँ।" कथन किस साहित्यकार का है? ( )

    (अ) विजय देव नारायण साही (आ) सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला

    (इ) आचार्य रामचंद्र शुक्ल (ई) रामविलास शर्मा

5. 'हिंदी नई चाल में ढली।' यह कथन किस पुस्तक का है? ( )

    (अ) दिल्ली दरबार दर्पण (आ) नाटक (इ) काल चक्र (ई) सत्य हरिश्चंद्र

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. ....की उपाधि जनता द्वारा हरिश्चंद्र को दी गई क्योंकि राजा शिवप्रसाद को अंग्रेजी सरकार द्वारा दी गई उपाधि 'सितारे हिंद' से लोग अप्रसन्न थे।
2. भारतेंदु ने हिंदी में पहली बार .... की रचना की।
3. भारतेंदु के समय में भाषा के दो स्कूल .... और .... चलते थे।
4. भारतेंदु ने अपनी कविता की भाषा...........ही रखी किंतु गद्य में .... का प्रयोग किया।
5. उर्दू में भारतेंदु ....उपनाम से लिखा करते थे।
6. भारतेंदु ने अपने पिता द्वारा लिखित हिंदी का प्रथम नाटक .... को माना जो वास्तव में ब्रज भाषा में था।

III. सुमेल कीजिए।

1. बाला बोधिनी	(अ) व्याख्यान
2. पेनी रीडिंग	(आ) कविता
3. विजयिनी विजय पताका	(इ) पत्रिका
4. काल चक्र	(ई) गोष्ठी

5. भारतवर्ष की उन्नति कैसे हो सकती है (उ) पुस्तक

1.8 पठनीय पुस्तकें

1. भारतेंदु हरिश्चंद्र : ब्रजरत्नदास
2. भारतेंदु हरिश्चंद्र : लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय
3. भारतेंदु और अन्य सहयोगी कवि : किशोरी लाल गुप्त
4. भारतेंदु हरिश्चंद्र : रामविलास शर्मा
5. भारतेंदु युग और हिंदी भाषा की विकास परंपरा : रामविलास शर्मा
6. भारतेंदु समग्र : सं. हेमंत शर्मा
7. कविता के पक्ष में : ऋषभदेव शर्मा एवं पूर्णिमा शर्मा

इकाई 2 : गंगा-यमुना : भारतेंदु हरिश्चंद्र

रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 मूल पाठ : गंगा-यमुना : भारतेंदु हरिश्चंद्र

2.3.1 अध्येय कविता का सामान्य परिचय

2.3.2 अध्येय कविता

2.3.3 विस्तृत व्याख्या

2.3.4 समीक्षात्मक अध्ययन

2.4 पाठ सार

2.5 पाठ की उपलब्धियाँ

2.6 शब्द संपदा

2.7 परीक्षार्थ प्रश्न

2.8 पठनीय पुस्तकें

2.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! आधुनिक हिंदी कविता की यह दूसरी इकाई है। पहली इकाई में भारतेंदु हरिश्चंद्र के व्यक्तित्व और कृतित्व का परिचय आपने प्राप्त किया। आप यह जान चुके हैं कि हिंदी के गद्य और पद्य को नई चाल में ढालने का कार्य भारतेंदु ने किया। गद्य के लिए खड़ी बोली का प्रयोग करने के बावजूद उन्होंने ब्रज भाषा में काव्य रचना की और इसमें परंपरा का निर्वाह किया। इस इकाई में भारतेंदु द्वारा रचित दो प्रसिद्ध कविताएँ 'गंगा-यमुना' हैं। गंगा और यमुना नदियों के सौंदर्य का वर्णन करती ये कविताएँ उनके दो नाटकों का अंश हैं। भारतेंदु ने प्रचलित छंद विधान - कवित्त, सवैया, दोहा, सोरठा आदि का प्रयोग किया और यहाँ दिए जा रहे दो पद भी इसी परंपरा का पालन करते हैं।

भारतेंदु के प्रकृति वर्णन में वही प्रवृत्ति रही जो इस युग के अधिकांश कवियों की थी। जहाँ पूर्ववर्ती कवियों ने नायक-नायिकाओं के प्रेम-विरह आदि के लिए ही प्रकृति वर्णन किया, वहाँ अब प्रेम की सीमा से बाहर जीवन के विशाल क्षेत्र को ध्यान में रखकर प्रकृति वर्णन किया

जाने लगा। देश दशा का वर्णन करने के निमित्त भारतेंदु होली-दिवाली त्योहारों का चित्रण करते हैं। विदेशी शासन द्वारा भारत में निष्क्रियता, निरीहता, अज्ञान का वातावरण बन गया था। भारतेंदु ने प्रकृति से उसे जोड़ कर देखा। कवि प्रकृति में अपने जीवन और समाज का अक्स देखते हैं। प्रकृति को मानव-समाज के संपर्क के रूप में देखते हुए भारतेंदु के गंगा-यमुना के इन प्रसिद्ध वर्णनों में प्रकृति की सुषमा का उपयोग उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, संदेह आदि अलंकारों की सृष्टि के लिए हुआ है।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई में आप भारतेंदु की दो कविताओं का अध्ययन करेंगे। स्मरण रहे ये दोनों कवितांश उनके दो अलग अलग नाटकों में आए हैं। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप -

- निर्धारित काव्यांशों में निहित प्रकृति चित्रण की विशेषताओं से अवगत हो सकेंगे।
- इन काव्यांशों में निहित भक्ति भावना को समझ सकेंगे।
- इन काव्यांशों के भाव सौंदर्य का आस्वादन कर सकेंगे।
- इन काव्यांशों की शिल्पगत विशेषता से परिचित हो सकेंगे।
- इन काव्यांशों में निहित पौराणिक और मिथकीय संदर्भों से अवगत हो सकेंगे।
- निर्धारित काव्यांशों की व्याख्या कर सकेंगे।

2.3 मूल पाठ : गंगा-यमुना : भारतेंदु हरिश्चंद्र

2.3.1 अध्येय कविता का सामान्य परिचय

भारतेंदु हरिश्चंद्र द्वारा रचित दो कविताओं का पाठ आप अब करने जा रहें हैं। एक में गंगा नदी की शोभा का वर्णन है। दूसरी कविता में यमुना नदी के सौंदर्य का वर्णन है। भारतेंदु हरिश्चंद्र के कवि रूप की उनके नाटककार और हिंदी के उन्नायक साहित्यकार से बहुत भिन्नता है। कवि के रूप में वे आपको खड़ी बोली के स्थान पर ब्रज भाषा का प्रयोग अधिक करते दिखाई देंगे। इन दोनों काव्यांशों में अलंकारों की बहुलता, पौराणिक मिथकों का उल्लेख और वर्णन वैचित्र्य की प्रचुरता आपका मन मोह लेगी।

2.3.2 अध्येय कविता : गंगा-यमुना

1. गंगा-वर्णन

नव उज्ज्वल जलधार हार हीरक सी सोहति।

बिच-बिच छहरति बूंद मध्य मुक्ता मनि पोहति॥
लोल लहर लहि पवन एक पै इक इम आवत।
जिमि नर-गन मन बिबिध मनोरथ करत मिटावत॥
सुभग स्वर्ग सोपान सरिस सबके मन भावत।
दरसन मज्जन पान त्रिविध भय दूर मिटावत॥
श्रीहरि पद-नख-चंद्रकांत-मनि-द्रवित सुधारस।
ब्रह्म कमण्डल मंडन भव खंडन सुर सरबस॥
शिवसिर-मालति-माल भगीरथ नृपति पुण्यफल।
एरावत-गत गिरिपति-हिम-नग-कण्ठहार कल॥
सगर-सुवन सठ सहस पारस जल मात्र उधारन।
अगनित धारा रूप धारि सागर संचारन॥

2. यमुना- वर्णन

तरनि तनूजा तट तमाल तरुवर बहु छाये।
झुके कूल सौं जल-परसन हित मानहु सुहाये॥
किधौं मुकुर में लखत उझकि सब निज-निज सोभा॥
कै प्रनवत जल जानि परम पावन फल लोभा॥
मनु आतप वारन तीर कौं, सिमिटि सबै छाये रहत॥
कै हरि सेवा हित नै रहे, निरखि नैन मन सुख लहत॥

निर्देश : इन काव्यांशों का सस्वर वाचन कीजिए। इन काव्यांशों का मौन वाचन कीजिए।

2.3.3 विस्तृत व्याख्या

गंगा वर्णन

नव उज्ज्वल जलधार हार हीरक सी सोहति।
बिच-बिच छहरति बूंद मध्य मुक्ता मनि पोहति॥
लोल लहर लहि पवन एक पै इक इम आवत।
जिमि नर-गन मन बिबिध मनोरथ करत मिटावत॥
सुभग स्वर्ग सोपान सरिस सबके मन भावत।

दरसन मज्जन पान त्रिविध भय दूर मिटावत॥

शब्दार्थ : उज्ज्वल = चमकदार। सोहति = सुंदर लगती है। छहरति = बिखरना, छितरना। पोहति= पिरोना। लोल = कंपायमान, चंचल। लहि = प्राप्त होना, पहुँचना। जिमि = जिस प्रकार से। बिबिध = अनेक। सोपान = सीढ़ी, रास्ता, पथ। सरिस = के समान। दरसन = दर्शन। मज्जन= स्नान। पान = पीना, आचमन करना।

संदर्भ : प्रस्तुत पदयांश भारतेंदु हरिश्चंद्र द्वारा रचित सत्य विचार पर आधारित 'सत्य हरिश्चंद्र' नाटक का अंश है और गंगा छवि वर्णन के रूप में विख्यात है।

प्रसंग : भारतेंदु हरिश्चंद्र अपनी कवित्व शक्ति का परिचय देते हुए वाराणसी में गंगा नदी के सहज प्रवाह को कविता के शिल्प में प्रस्तुत करते हैं। इसके साथ ही गंगा माता के प्रति अपनी अगाध श्रद्धा भक्ति को भी व्यक्त करते हैं।

व्याख्या : कवि ने गंगा नदी के जल प्रवाह के सौंदर्य पर मुग्ध होकर इन पंक्तियों के द्वारा उसका एक शब्द चित्र प्रस्तुत किया है। गंगा के जल की नवीन और जगमग जगमग करती धारा हीरे के हार के समान शोभायमान हो रही है। जल की अविरल धारा के बीच बीच में जल की बूंदें ऐसी भली लग रहीं हैं जैसे जल की धारा में मणि-मोतियों को गूँथ दिया गया हो। जब जब कोई सुंदर लहर हवा के बहाव से जल की गति को बढ़ाते हुए एक दूसरे पर सवार होकर अठखेलियाँ करती है तो ऐसा प्रतीत होता है मानो मन में आते जाते विभिन्न भावों में उथल-पुथल हो रही हो। स्वर्ग की ओर जाने वाले सुंदर मार्ग को देखकर जैसा आनंद होता है वैसा ही यह लहरों का लहराना सबको आनंदित करता है। कवि का मत है कि इस शोभा के दर्शन से और दर्शन के उपरांत गंगा स्नान और गंगा-जल के आचमन से तीनों प्रकार के भयों से मुक्ति प्राप्त हो जाती है।

काव्यगत विशेषता

'नव उज्जवल जलधार हार हीरक सी सोहति' पंक्ति में उपमा अलंकार की शोभा अपनी पूर्णता से है। यहाँ 'नव उज्जवन जलधार' उपमेय, 'हीरे का हार' उपमान, 'सोहति' साधर्म्य (क्रियारूप) और 'सी' वाचक शब्द है। उपमा के चारों अंगों के कथन से यहाँ पूर्णोपमा तो है ही, 'सी' वाचक के कारण श्रोती (श्रोती का अर्थ है श्रवण मात्र से ही) भी है। कमल सा मुख में जैसे 'कमल सा' सुनते ही तुरत जिज्ञासा होती है और 'मुख' सुनते ही वह शांत हो जाती है। इस पंक्ति में उपमेय-उपमान का संबंध स्वतः सिद्ध है। इस प्रकार यहाँ 'श्रोती पूर्णोपमा' अलंकार है। 'हार हीरक', 'बिच-बिच', 'मध्य-मुक्ता मणि' आदि शब्दों में एक ही वर्ण की दो या दो से अधिक बार

आवृत्ति हो रहे है, इसलिए यहाँ अनुप्रास अलंकार है।

त्रिविध भय - त्रिविध भय हैं (क) आध्यात्मिक - शरीर में रोग आदि (ख) आधिभौतिक- बाह्य वस्तुओं आदि से प्राप्त जैसे व्याघ्र चोर आदि (ग) आधिदैविक - प्रकृति के प्रकोप जैसे भूकंप तूफान आदि। विश्व का प्रत्येक जीव दुखी है। वह तीन प्रकार के तापों (दुखों) से तप रहा है। आध्यात्मिक (दैहिक - शारीरिक, मानसिक), आधिभौतिक (भौतिक), और आधिदैविक (दैविक)। रामचरितमानस के उत्तरकाण्ड की एक अर्धाली है - दैहिक, दैविक, भौतिक तापा।

बोध प्रश्न

- गंगा जल की धारा को हीरे के हार के समान क्यों कहा गया है?
- गंगा को 'स्वर्ग सोपान' और 'त्रिविध भय हारी' से कवि किस ओर संकेत कर रहा है?

श्रीहरि पद-नख-चंद्रकांत-मनि-द्रवित सुधारस।
ब्रह्म कमण्डल मंडन भव खंडन सुर सरबस॥
शिवसिर-मालति-माल भगीरथ नृपति पुण्यफल।
एरावत-गत गिरिपति-हिम-नग-कण्ठहार कल॥
सगर-सुवन सठ सहस पारस जल मात्र उधारन।
अगनित धारा रूप धारि सागर संचारन॥

शब्दार्थ : द्रवित = बहना, भर जाना। सुर = देवता। मालति-माल = मालती (चमेली, मोगरा) के फूलों की माला। गिरिपति = हिमालय। हिम-नग = हिमालय। सहस = सहस्त्र। सुवन=पुत्र। पारस = लोहे से सोना बनानेवाला एक कल्पित पत्थर, बहुत लाभदायक और उपयोगी वस्तु। उधारण = उद्धार करने वाला। सागर = समुद्र। संचारण = फैलना, फैलाना।

संदर्भ : प्रस्तुत पदयांश भारतेंदु हरिश्चंद्र द्वारा रचित सत्य विचार पर आधारित 'सत्य हरिश्चंद्र' नाटक के तीसरे अंक का अंश है और गंगा छवि वर्णन के रूप में विख्यात है।

प्रसंग : इन काव्य पंक्तियों में भारतेंदु ने प्रकृति वर्णन से एक पग आगे जाकर अपनी भक्ति भावना को भी अभिव्यक्ति दी है। यहाँ गंगा एक नदी मात्र न होकर धार्मिक और सांस्कृतिक दृष्टि से संपन्न पतित-पावनी 'गंगा मैया' हो गईं हैं।

व्याख्या : भारतेंदु गंगा की लहरों को देखकर उनके प्रति अपने आनंद की अभिव्यक्ति करने के पश्चात अपने वर्णन को आगे बढ़ाते हैं। वे अब उन धार्मिक, सांस्कृतिक और पौराणिक विश्वासों का उल्लेख करते हैं जो गंगा को स्वर्ग से पृथ्वी पर उतार लाने के विषय में कहे जाते हैं। भगवान

विष्णु के चंद्रकांत मणि के समान पैरों के नाखूनों से अमृत तुल्य जो जल निकला वह ब्रह्मा जी के कमंडल में समाकर समस्त देवी देवताओं के लिए उपलब्ध हुआ।

पृथ्वी पर जब सगर-पुत्रों के उद्धार के लिए राजा भगीरथ के अथक प्रयत्नों से गंगा का अवतरण हुआ तब उसके वेग को संभालने के लिए शंकर जी की जटा-जूटों में जा समाई। गंगा शिवजी की जटा में जा समाई। उसका वेग और प्रवाह कम हो गया। तदुपरांत भगीरथ गंगा को समतल भूमि की ओर ले गए। यहाँ सगर के साठ हजार मृत पुत्रों का इस जल के स्पर्श से पारस पत्थर के स्पर्श के समान उद्धार हुआ।

मानव-जाति के कल्याण के लिए अनवरत बहती स्वर्ग की नसैनी हिमालय पुत्री गंगा अनगिनत धारा प्रवाह से समस्त भारत को आप्लावित करके अंत में समुद्र में मिल जाती है। स्वर्ग से उतरी ऐसी पुण्य-सलिला गंगा नदी का सौंदर्य वर्णनातीत है अर्थात इसके अतीत और वर्तमान के सौंदर्य का वर्णन करना कठिन है।

काव्यगत विशेषता

इस काव्यांश में गंगावतरण की पृष्ठभूमि और मिथकीय प्रसंगों के उल्लेख से कवि ने वर्णन के सौंदर्य में अभिवृद्धि की है। कुछ प्रसंगों का विवरण इस प्रकार है।

चंद्रकांत मणि : सुश्रुत संहिता (45/27) में यह उल्लेख मिलता है कि इस मणि से चंद्र किरणों की उपस्थिति में उत्पन्न जल कीटाणुओं का नाश करके शीतलता प्रदान करता है।

ऐरावत : 'इरा' का अर्थ जल है, अत: इरावत (समुद्र) से उत्पन्न हाथी को ऐरावत नाम दिया गया है। समुद्रमंथन से प्राप्त 14 रत्नों में ऐरावत भी था। इसे शुक्लवर्ण और चार दाँतोंवाला बताया गया है। रत्नों के बँटवारे के समय इंद्र ने उक्त दिव्यगुणयुक्त हाथी को अपनी सवारी के लिए ले लिया था। इसलिए इसका इंद्रहस्ति अथवा इंद्रकुंजर नाम भी पड़ा।

सगर-सुवन : पौराणिक कथा के अनुसार माता गंगा श्री विष्णु जी के चरणों से अवतरित हुई। अपने पूर्वजों का उद्धार करने के लिए राजा दिलीप के पुत्र भगीरथ ने गंगा जी की कठिन तपस्या की ताकि भगवान शिव माता गंगा को पृथ्वी पर उतारे। गंगा माता राजा भागीरथ के पीछे-पीछे कपिल मुनि के आश्रम में गई और उनका स्पर्श पाते ही भागीरथ के पूर्वजों यानि राजा सगर के 60 हजार भस्म हुए पुत्रों का उद्धार हुआ।

पारस : पारस पत्थर या स्पर्श मणि (तेलुगु-परुसवेदी) एक ऐसा काल्पनिक पत्थर है जिसके छूने से लोहा सोना बन जाता है।

बोध प्रश्न

- कवि ने प्रायः प्रत्येक पंक्ति में एक कथा का स्मरण किया है, इनमें से दो का एक एक वाक्य में उल्लेख कीजिए।
- यहाँ कवि की भक्ति भावना प्रबल है या प्रकृति चित्रण?

यमुना वर्णन

तरनि तनूजा तट तमाल तरुवर बहु छाये।
झुके कूल सौं जल-परसन हित मनहु सुहाये॥
किधौं मुकुर में लखत उझकि सब निज-निज सोभा।
कै प्रनवत जल जानि परम पावन फल लोभा॥
मनु आतप वारन तीर कौं, सिमिटि सबै छाये रहत।
कै हरि सेवा हित नै रहे, निरखि नैन मन सुख लहत॥

शब्दार्थ : तरनि-तनूजा = सूर्यपुत्री यमुना। तमाल = एक प्रकार का सदाबहार वृक्ष। कूल = किनारा। परसन = स्पर्श करने के लिए। सुहाये = शोभायमान हो। किंधौ = अथवा। मुकुर = दर्पण। लखत = देखना। उझकि = उचक कर। प्रनवत = प्रणाम करते हैं। आतप = धूप। वारन = निवारण करना। तीर = तट। निखि = देखकर नै रहे-झुक रहे हैं। लहत = प्राप्त करना।

संदर्भ : प्रस्तुत काव्यांश भारतेंदु हरिश्चंद्र द्वारा रचित 'अविचल प्रेम' को प्रदर्शित करने वाले नाटक 'चंद्रावली नाटिका' से लिया गया है।

प्रसंग : प्रस्तुत पदयांश में भारतेंदु ने यमुना नदी के किनारे छाए हुए तमाल के अनेक वृक्षों का आलंकारिक भाषा में वर्णन किया है। इनको देखकर कवि के हृदय पटल पर अनेक छाया चित्र निर्मित हुए हैं। कवि भारतेंदु ने यमुना के जल पर पड़ने वाले चंद्रमा के प्रतिबिंब का वर्णन किया है। चंद्रमा का यह रूप कवि को अपनी ओर आकर्षित कर रहा है जिसे देखकर कवि के मन में भिन्न-भिन्न प्रकार की कल्पनाएँ मुखर हो रहीं हैं।

व्याख्या : नदी के किनारे खड़े वृक्षों को देखकर कवि को ऐसा प्रतीत होता है जैसे तमाल के वृक्ष यमुना नदी को स्पर्श करना चाहते हों या फिर वे झुककर नदी के जल में अपना प्रतिबिंब देखना चाहते हों। कभी कभी कवि को लगता है मानो वे नदी के तट को धूप से बचाने के लिए उसे छाया प्रदान कर रहें हों या वे तट पर, कृष्ण को नमन करने और उनकी सेवा करने के लिए झुके हुए हों। कवि जब यमुना नदी के जल पर चंद्रमा के प्रतिबिंब को देखता है तो कभी उसे लहरों

पर सौ-सौ चंद्रमा दिखाई देते हैं। कभी वह उसे दूर जाकर अदृश्य होता हुआ अनुभूत होता है। कभी वह उसे जल में झूला झूलते हुए प्रतीत होता है तो कभी उसे उसमें बच्चे द्वारा उड़ाई गई पतंग की अनुभूति होती है।

कवि कह रहे हैं कि यमुना के किनारे की ओर झुके हुए तमाल के वृक्षों को देखकर ऐसा लग रहा है मानो तट को धूप-ताप से बचाने के लिए वे एक साथ सिमट कर उसे छाया प्रदान कर रहे हो या वे तट पर, कृष्ण को नमन करने एवं उनकी सेवा करने के लिए झुके हुए हों। उनके तट पर झुके होने का कारण कृष्ण का दर्शन पाना भी हो सकता है, जिनके दर्शन से मन एवं आँखों को अत्यधिक शीतलता एवं सुख मिलता है।

काव्यगत विशेषता

भारतेंदु के इस पद में कुछ ऐसा आकर्षण है कि पाठक भावविभोर हो जाता है। यह यमुना तट राधा-कृष्ण के दिव्य प्रेम का आधार है। यहीं तो शरद पूर्णिमा की रात महा रास हुआ था। यह तमाल उनकी लीला का प्रथम साक्षी है। जयदेव ने गीत-गोविंद के प्रथम श्लोक में लिखा है कि बादलों के उमड़ने-घुमड़ने से आकाश और सघन तमालों से भूमि पहले ही श्यामल हो रही थी कि रात घिर आयी। श्याम तमाल के फूलों की मादक गंध का वर्णन करते हुए जयदेव लिखते हैं, ऐसा लगता है मानो इसने कस्तूरी की गंध को अपने वश में कर लिया है। (मृगमद सौरभ रभस वशंवद नवदल माल तमाले)

प्रस्तुत पद में कवि ने अलंकारों का सुंदर प्रयोग किया है। ‘तरनि तनुजा तट तमाल’ में ‘त’ वर्ण की आवृत्ति होने के कारण अनुप्रास अलंकार, ‘सब निज-निज सोभा’ में ‘निज-निज’ की पुनरावृत्ति के कारण पुनरुक्तिप्रकाश अलंकार व ‘मनु आतप वारन तीर कौं’ में उत्प्रेक्षा अलंकार है। सम्पूर्ण पदयांश में मानवीकरण अलंकार की प्रतिष्ठा है। कवि ने ब्रज भाषा का प्रयोग करते हुए मुक्तक शैली में काव्य रचना की है। जल पर पड़ने वाली चंद्रमा की छाया का वर्णन करते हुए पदयांश में शृंगार रस की प्रधानता विद्यमान है। माधुर्य गुण और लक्षणा शब्दशक्ति भी काव्य में विद्यमान हैं। छंद : छप्पय है।

‘अनुप्रास’ शब्द के तीन खंड हैं - अनु+ प्र+ आस, अनु = वर्णनीय रसादि के अनुकूल, प्र= प्रकृष्ट, आस = वर्ण विन्यास, अर्थात अनुप्रास का अर्थ है वर्णनीय रसभावादि के अनुसार उत्कृष्ट वर्णों का विन्यास। इस अलंकार के अनेक भेद-प्रभेद हैं किंतु आप केवल इतना ही जान लें कि जिस काव्य पंक्ति में एक ही वर्ण की एक से अधिक बार आवृत्ति हो वहाँ अनुप्रास अलंकार होता

है। जैसे - तरणी तनुजा तट तमाल तरुवर बहु छाए - इस पंक्ति में 'त' व्यंजन का प्रयोग एक से अधिक बार हुआ है, इसलिए यहाँ 'अनुप्रास' अलंकार मानना होगा।

भुवनभास्कर सूर्य इसके पिता, मृत्यु के देवता यम इसके भाई और भगवान श्रीकृष्ण इसके पति स्वीकार्य किए गए हैं। जहाँ भगवान श्रीकृष्ण ब्रज संस्कृति के जनक कहे जाते हैं, वहाँ यमुना इसकी जननी मानी जाती है। इस प्रकार यह सच्चे अर्थों में ब्रजवासियों की माता है। अतः ब्रज में इसे यमुना मैया कहते हैं।

तमाल का वृक्ष : पंडित विद्या निवास मिश्र ने अपने एक ललित निबंध 'तमाल के झरोखे से' में लिखा है, "इसे पहचानते ही लगा था कि जाने कब से इसे पहचानता हूँ। काली कालिंदी को इसी ने अपनी घनी काली छाया से और काला भँवर बना दिया। इसी ने गोरी राधा के उज्जवल-नील प्यार की छाँह और सघन और आर्द्र कर दी। इसको मैं हर वसंत में झरते और झीने-झीने फूलों से भरते देखता हूँ। हर वर्षा में इसे सघन पत्र-जाल का छत्र बना देखता हूँ। इसकी छाँह में जो रसवर्षा होती है वह बाहर की रसवर्षा होती है वह बाहर की रसवर्षा से कहन अधिक जोरदार होती है। यह तमाल दोनों रसवर्षाओं से भीग-भीगकर सिहरता रहता है।"

बोध प्रश्न

- यमुना नदी के किनारे खड़े वृक्षों को देखकर कवि को क्या प्रतीत होता है?
- कवि को यमुना नदी के जल पर पड़े चंद्रमा के प्रतिबिंब को देखकर क्या अनुभूति होती है?
- पदयांश का केंद्रीय भाव स्पष्ट कीजिए।
- 'यमुना वर्णन' की काव्यगत विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
- 'ससि' व 'नभ' शब्दों के दो दो पर्यायवाची शब्द लिखिए।
- क्या आपको 'चंद्रावली' और 'तरणि-तनूजा' में कुछ अर्थ साम्य प्रतीत होता है? यदि हाँ तो वह क्या है?

2.3.4 समीक्षात्मक अध्ययन

भारतेंदु जी की यह विशेषता रही कि जहाँ उन्होंने ईश्वर भक्ति आदि प्राचीन विषयों पर कविता लिखी वहाँ उन्होंने समाज सुधार, राष्ट्र प्रेम आदि नवीन विषयों को भी अपनाया। भारतेंदु की रचनाओं में अंग्रेजी शासन का विरोध, स्वतंत्रता के लिए उद्दाम आकांक्षा और जातीय भावबोध की झलक मिलती है। विषय के अनुसार उनकी कविता शृंगार-प्रधान, भक्ति-प्रधान, सामाजिक समस्या प्रधान तथा राष्ट्र प्रेम प्रधान है। भारतेंदु जी ने शृंगार के संयोग और

वियोग दोनों ही पक्षों का सुंदर चित्रण किया है।

भारतेंदु जी कृष्ण के भक्त थे और पुष्टि मार्ग के मानने वाले थे। उनको कविता में सच्ची भक्ति भावना के दर्शन होते हैं। भारतेंदु ने अपने काव्य में अनेक सामाजिक समस्याओं का चित्रण किया। उन्होंने समाज में व्याप्त कुरीतियों पर तीखे व्यंग्य किए। इनके काव्य में राष्ट्र-प्रेम भी भावना स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। प्रकृति चित्रण में भारतेंदु जी को अधिक सफलता नहीं मिली, क्योंकि वे मानव-प्रकृति के शिल्पी थे, बाह्य प्रकृति में उनका मन पूर्ण रूप से नहीं रम पाया। अतः उनके अधिकांश प्रकृति चित्रण में मानव हृदय को आकर्षित करने की शक्ति का अभाव है।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने 'हिंदी साहित्य का इतिहास' (पृ. 565) में भारतेंदु के प्रकृति चित्रण में पुरानी परिपाटी को रेखांकित किया है। शुक्ल जी का मत है कि भारतेंदु प्रकृति को उद्दीपन के रूप में तथा अलंकारों के रूप में प्रस्तुत किया है। विशुद्ध प्रकृति का वर्णन बहुत कम हुआ है। वास्तव में भारतेंदु मानव प्रकृति के कवि थे, बाह्य प्रकृति की अनंतरूपता के साथ उनके हृदय का सामंजस्य नहीं पाया जाता। अपने नाटकों में दो स्थान पर उन्होंने जो प्राकृतिक वर्णन रखें हैं (जैसे सत्य हरिश्चंद्र में गंगा का वर्णन, चंद्रावली नाटिका में यमुना का वर्णन) वे केवल परंपरा का पालन मात्र करते हैं। उनके भीतर उनका हृदय नहीं पाया जाता।

इसके विपरीत शुक्ल जी के समकालीन गोपाल लाल खन्ना ने लिखा है कि 'सत्य हरिश्चंद्र' नाटक में जिस गंगा का और 'चंद्रावली' नाटिका में जिस यमुना का वर्णन किया गया है, वह वही है, जिस रूप में उन्होंने उनको देखा और जैसा भाव उनके हृदय में आया।

वन, नदी, पर्वत आदि के चित्रों द्वारा इन्होंने मनुष्य की कल्पना की मैल छाँट उसे स्वस्थ और स्वच्छ करने का भार अपने ऊपर नहीं लिया। इनकी रचनाओं में विशुद्ध प्राकृतिक वर्णनों का अभाव बराबर पाया जाता है। वस्तु वर्णन में इन्होंने मनुष्य की कृति ही की ओर अधिक रुचि दिखाई जैसे 'सत्य हरिश्चंद्र' के गंगा के इस वर्णन में। 'चंद्रावली' नाटिका में एक जगह यमुना के तट का वर्णन आया है। वह भी नियमानुगत और परंपराभुक्त (कान्वेंशनल) ही है। इसमें उपमाओं की भरमार इस बात को सूचित करती है कि कवि का ध्यान उल्लिखित प्राकृतिक वस्तुओं पर रमता नहीं था, हट-हट जाता था। (रामचंद्र शुक्ल, नागरीप्रचारिणी पत्रिका, अप्रैल 1911 ई.)

यहाँ यह कहना आवश्यक है कि गंगा और यमुना के संबंध में भारतेंदु की रचनाओं को केवल प्रकृति चित्रण के रूप में नहीं देखना चाहिए। इन कविताओं के माध्यम से उन्होंने भारतीय संस्कृति के गौरव के प्रति पाठकों को आकर्षित किया है। इनमें निहित आध्यात्मिक और

सांस्कृतिक संदर्भ प्रकृति और पर्यावरण के प्रति भारतीय समाज में चले आ रहे आदर भाव को प्रकट करते हैं। दोहराना न होगा कि भारत में नदियों को माता के समान पूजनीय माना जाता है। यह पूज्यता का भाव आज फिर से जगाने की जरूरत है क्योंकि सांस्कृतिक परंपराओं को भूलकर लोगों ने नदियों के जल को इतना प्रदूषित कर दिया है कि अमृतवाहिनी कही जाने वाली नदियाँ विषैली हो गई हैं। अंततः डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी के शब्दों में यह कहा जा सकता है कि -

> "भारतेंदु ऐसे भक्त थे जो समकालीन राजनीति पर पूरी दृष्टि रखते थे। और उनकी रचना इस पूरी स्थिति में निष्पन्न होती है। एक ओर 'श्रीचंद्रावली' नाटिका है जिसमें चंद्रावली के माध्यम से लेखक ने अपनी ही 'प्रेमाभक्ति' को निष्ठापूर्ण अभिव्यक्ति दी है। इसमें केवल नारी पात्र हैं। कृष्ण भी रंगमंच पर जोगिन के वेश में आते हैं। दूसरी ओर 'मुद्रारक्षस' का रूपांतर है जिसमें नारी पात्रों का प्रायः एकांत अभाव है और जहाँ कूटनीति के दाँव-पेंच पूरी जटिलता में अंकित हुए हैं। इन दोनों को मिलाकर भरातेंदु का संश्लिष्ट व्यक्तित्व बंता है जो पुनर्जागरण चेतना के अनुरूप है। हिंदी साहित्य में पुनर्जागरण भारतेंदु के माध्यम से अवतरित होता है, और तब यह स्वाभाविक है कि वे आधुनिक काल के प्रवर्तक माने जाते हैं।" (हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास, पृ. 85)

बोध प्रश्न

- भारतेंदु का प्रकृति चित्रण कैसा है?
- विषय के अनुसार भारतेंदु की कविताओं में किन विषयों को प्रमुख रूप से देखा जा सकता है?

2.4 पाठ सार

आधुनिक हिंदी साहित्य में नव जागरण का संदेश लेकर आए भारतेंदु बहुमुखी प्रतिभा के धनी हैं। कविता, कहानी, नाटक, उपन्यास, निबंध आदि विधाओं में आपने बहुतायत से लेखन किया। गद्य के लिए हिंदी को नई चाल में ढालते हुए खड़ी बोली का प्रयोग किया किंतु कविता के लिए उन्होंने ब्रज भाषा का प्रयोग ही जारी रखा। अपने नाटकों में अनेक पद्यों का प्रयोग करते हुए कवि ने सत्य-हरिश्चंद्र और चंद्रावली नाटिका में क्रमशः गंगा और यमुना का बहुत सुंदर और आलंकारिक वर्णन किया है। इन वर्णनों को आलंकारिक कहा गया है और उद्दीपनकारी भी।

यदि गंगा की लहरें हीरे के हार सी सुंदर हैं तो यमुना के किनारे भी तमाल के वृक्षों से सुसज्जित हैं। शोभा दोनों की ही नयनाभिराम है। चाहे आचार्य रामचंद्र शुक्ल जैसे प्रतिष्ठित लेखक इन पद्यों की कितनी भी आलोचना करें किंतु इनकी चित्रात्मकता से कोई इंकार नहीं कर सकता। भक्ति-भावना को प्रकृति चित्रण से मिलाकर प्रस्तुत करके कवि ने इन पदों को काव्य-गुणों से भी सराबोर किया है। डॉ. लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय ने इस विषय में ठीक ही कहा है कि भारतेंदु हरिश्चंद्र ने हृदयगत अनुराग को प्रकृति के रेखाचित्र में अंकित कर घटना को अलौकिक रूप दिया है और उसमें समस्त रागात्मक अनुभावों का स्पष्टीकरण किया है जो पुष्टिमार्ग की साधना में पूर्ण रूप से घटित होते हैं।

2.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. भारतेंदु पद्य और गद्य दोनों ही क्षेत्रों में युग प्रवर्तक माने जाते हैं।
2. भारतेंदु हरिश्चंद्र ने अपने नाटकों में बीच-बीच में आवश्यकता के अनुसार कविताओं का सुंदर प्रयोग किया हैं।
3. भारतेंदु हरिश्चंद्र ने गंगा का वर्णन 'सत्य हरिश्चंद्र' नाटक में किया है।
4. यमुना का आलंकारिक वर्णन 'चंद्रावली' नाटिका में मिलता है।
5. भारतेंदु ने गंगा और यमुना का वर्णन करते समय प्रकृति चित्रण से आगे बढ़कर अपनी भक्ति भावना को भी प्रकट किया है।
6. गंगा और यमुना विषयक कविताएँ भारतेंदु की सांस्कृतिक चेतना की भी परिचायक हैं।

2.6 शब्द संपदा

1. अनंतरूपता = अनेक स्वरूपों में दिखाई पड़ना
2. अर्धाली = छंद विशेषतः चौपाई का आधा भाग। चौपाई की एक पंक्ति में दो भाग होते हैं तथा प्रत्येक भाग अर्धाली कहलाता है। दैहिक दैविक भौतिक ताप। राम राज नहिं काहुहि ब्यापा॥
3. आर्द्र = गीला , तरल, नम , सना हुआ, लथ-पथ।
4. आलंबन = आधार
5. उद्दीपन = 'उत्' उपसर्ग पूर्वक 'दीप' मूल शब्द में 'णिच्' (संस्कृत) 'अन' (हिंदी)

प्रत्यय लगने पर 'उद्दीपन' शब्द की निष्पत्ति होती है। इसका शाब्दिक अर्थ है -ज्योति, अग्नि अथवा किसी भाव को बढ़ा देना। इस शब्द का प्रयोग प्रायः काव्य की आत्मा माने जाने वाले तत्त्व **रस** के संदर्भ में होता हुआ मिलता है। विभाव दो कहे गए हैं - आलंबन और उद्दीपन। आलंबन वह है जिसके प्रति आश्रय या पात्र के हृदय में कोई भाव स्थित हो। जैसे नायक के लिये नायिका और नायिका के लिये नायक। उद्दीपन वह है जिससे आलंबन के प्रति स्थित भाव उद्दीप्त या उत्तेजित हो। यहाँ भारतेंदु ने प्रकृति वर्णन के द्वारा वही कार्य साधन किया है।

6. नयनाभिराम = नयनों को सुंदर लगनेवाला। सुंदर, मनोहर।
7. परिपाटी = वह विचार, प्रथा या क्रम जो बहुत दिनों से प्रायः एक ही रूप में चला आया हो, किसी जाति, समाज आदि में कोई काम करने का कोई विशिष्ट बँधा हुआ ढंग अथवा शैली।

   विशिष्ट अवसर पर कोई विशिष्ट काम करने की प्रथा।
8. सराबोर = तरबतर, भरा हुआ, परिपूर्ण
9. सामंजस्य = मेल, अपने परिवेश व परिस्थितियों के साथ समायोजन कर लेना ।

2.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. पठित कविताओं के आधार पर भारतेंदु हरिश्चंद्र के काव्य में प्रकृति चित्रण पर एक दो पंक्ति के उदाहरण देते हुए अपने विचार व्यक्त कीजिए।
2. 'गंगा-यमुना' के वर्णन में कवि भारतेंदु ने परंपरा का पालन मात्र किया है।" क्या आप इस कथन से सहमत हैं?
3. 'गंगा-यमुना' कविताएँ भारतेंदु की भक्तिभावना का किस प्रकार परिचय देती हैं? स्पष्ट कीजिए।
4. 'गंगा-यमुना' कविताओं में अलंकारों का प्रयोग जिस उद्देश्य से किया गया है, क्या वह पूरा

होता है?

5. गंगा और यमुना के सौंदर्य वर्णन में किन किन प्राचीन मिथकीय कथाओं का प्रयोग किया गया है? कम से कम चार कथाओं का उल्लेख करते हुए उनकी उपयोगिता पर विचार कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. भारतेंदु के अनुसार गंगा किस प्रकार 'त्रिविध पापों' को दूर करती है?
2. सगर पुत्रों के उद्धार में गंगा किस प्रकार सहायक हुई?
3. यमुना तट और तमाल के वृक्षों से कृष्ण राधा का संबंध क्या है और कवि उसे किस प्रकार स्थापित करता है?
4. "गंगा-यमुना नदियाँ भारतीय संस्कृति और पर्यावरण की धरोहर हैं।" पठित पद्यों के आधार पर स्पष्ट कीजिए ।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए।

1. गलत जोड़ा चिह्नित कीजिए - ( )

   (अ) तरुणी-स्त्री (आ) तनुजा-पुत्री (इ) तट-किनारा (ई) तरणी-वृक्ष

2. 'गंगा-यमुना' कविताओं में छंद का प्रयोग है - ( )

   (अ) दोहा (आ) रोला (इ) छप्पय (ई) हरिगीतिका

3. 'गंगा-यमुना' कविताओं की भाषा है - ( )

   (अ) खड़ी बोली (आ) हिंदी (इ) ब्रज भाषा (ई) सुंदर भाषा

4. सगर के पुत्रों की संख्या थी - ( )

   (अ) साठ हजार (आ) छह (इ) सात (ई) साठ

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. गंगा-वर्णन भारतेंदु के............... नाटक का अंश है और यमुना वर्णन .... नाटक का।
2. गंगा यमुना कविताओं मे........... पारंपरिक और .... प्रधान है।
3. भारतेंदु ने प्रकृति को .... तथा .... के रूप में प्रस्तुत किया है।

4. गंगा-यमुना वर्णन में कवि ने वर्तमान खड़ी बोली के स्थान पर अपने समय की .... भाषा का प्रयोग किया है।
5. गंगा-यमुना कविताओं में ....गुण की बहुतायत है ।

III. सुमेल कीजिए।

1. दैहिक दैविक भौतिक तापा (अ) श्री चंद्रावली
2. गंगा शोभा वर्णन (आ) सत्य हरिश्चंद्र
3. यमुना शोभा वर्णन (इ) अर्धाली
4. तट तमाल तरुवर (ई) उपमा अलंकार
5. जलधार हार हीरक सी सोहति (उ) अनुप्रास अलंकार

2.8 पठनीय पुस्तकें

1. भारतेंदु समग्र : सं. हेमंत शर्मा
2. हिंदी साहित्य कोश (भाग 2) : नामवाची शब्दावली
3. भारतेंदु हरिश्चंद्र : बृजरत्न दास
4. भारतेंदु हरिश्चंद्र : लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय

इकाई 3 : विरह वेदना : भारतेंदु हरिश्चंद्र

रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 मूल पाठ : विरह वेदना : भारतेंदु हरिश्चंद्र

3.3.1 अध्येय कविता का सामान्य परिचय

3.3.2 अध्येय कविता

3.3.3 विस्तृत व्याख्या

3.3.4 समीक्षात्मक अध्ययन

3.4 पाठ सार

3.5 पाठ की उपलब्धियाँ

3.6 शब्द संपदा

3.7 परीक्षार्थ प्रश्न

3.8 पठनीय पुस्तकें

3.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! आपने पूर्व की एक इकाई में भारतेंदु हरिश्चंद्र के जीवन और व्यक्तित्व के विषय में विस्तार से पढ़ और समझ लिया है। हिंदी प्रदेश और साहित्य के इतिहास में उनके जैसा रोमांटिक व्यक्तित्व न उनसे पहले हुआ न उनके बाद। डॉ. लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय के शब्दों में "वे मातृभाषा के निःस्वार्थ सच्चे सेवक, देश-भक्त, परदुखकातर, उदार, धर्मपारायण आदि एक साथ अनेक रूप ग्रहण कर साहित्य-क्षेत्र में अवतीर्ण हुए थे और अपने समय के प्रतिनिधि साहित्यकार थे।" उनके कवि रूप का भी परिचय आपको अवश्य मिला होगा। परंपरानुरूप रचनाओं के अंतर्गत उनकी भक्ति-संबंधी रचनाओं का प्रधान और प्रमुख स्थान है।

भारतेंदु हरिश्चंद्र का जीवन प्रेम से ओतप्रोत रहा। उनकी रचनाओं के शब्द-शब्द से प्रेम टपकता है। अनेक प्रकार से प्रेम की व्याख्या उन्होंने की और उसके महत्व को बताया। रसिकता और पीड़ा का अनोखा मेल भारतेंदु के कवित्त सवैयों में पाया जाता है। इन रचनाओं की मार्मिकता के मूल में एक प्रकार की अतृप्ति की भावना है। प्रेम में बहुत कुछ पाकर भी कवि का

मन पूर्ण रूप से कभी संतुष्ट नहीं हुआ। यही कारण है कि संयोग की अपेक्षा वियोग संबंधी उनकी रचनाओं में अधिक मधुरता आ गई है। भारतेंदु के पिता भक्त थे और भक्ति भावना उन्हें पैतृक-दाय के रूप में प्राप्त हुई थी। अपने आराध्य कृष्ण के विभिन्न रूपों को और उनकी विभिन्न लीलाओं को भारतेंदु कविता के शिल्प में प्रस्तुत करते रहे। राधा कृष्ण की छवि को उन्होंने भक्त की दृष्टि से देखा।

भारतेंदु की अनेक रचनाओं जैसे प्रेम सरोवर और प्रेम-माधुरी आदि में विशुद्ध शृंगार भावना की अभिव्यक्ति हुई है। शृंगार के दोनों रूपों - संयोग और वियोग - में कवि का प्रेम-संबंधी आदर्श प्रकट हुआ है। भारतेंदु के वियोग शृंगार से अभिसिंचित कवित्त-सवैये और विशेष रूप से समस्या-पूर्ति के निमित्त रचित पदों में विभिन्न अनुभूतियों की व्यंजना अत्यंत स्वाभाविक है। इन पदों का अक्टूबर 1875 में 'कविवचन सुधा' में प्रकाशन हुआ फिर चंद्र-प्रभा प्रेस में 1882 में दूसरी आवृत्ति हुई। यहाँ प्रस्तुत पद 'जानि सुजान मैं प्रीति करि' 108 वाँ और 'इन दुखियान को' 129 वाँ पद हैं।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अंतर्गत आप भारतेंदु हरिश्चंद्र की कविता 'विरह वेदना' का अध्ययन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन से आप -

- भारतेंदु के कृष्ण के प्रति भक्ति भाव को समझ सकेंगे।
- भक्ति भाव के साथ ही प्रेम और उसमें भी 'वियोग' पक्ष का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- भारतेंदु के कवित्त-सवैयों के भावगत सौंदर्य से अवगत हो सकेंगे।
- भारतेंदु की कविता 'विरह वेदना' की शिल्पगत विशेषता से परिचित हो सकेंगे।
- निर्धारित पदों की सप्रसंग व्याख्या कर सकेंगे।

3.3 मूल पाठ : विरह वेदना : भारतेंदु हरिश्चंद्र

3.3.1 अध्येय कविता का सामान्य परिचय

अध्येय कविता के रूप में यहाँ दो पद दिए गए हैं। दोनों पदों में कृष्ण और गोपिकाओं के प्रेम का वर्णन है। बल्कि कहें तो गोपिकाओं का कृष्ण के प्रति प्रेम और कृष्ण की उपेक्षा और उसके कारण गोपिकाओं की मनोदशा का काव्यात्मक और भावपूर्ण विवरण है। पहले पद में एक गोपिका दूसरी से अपनी मनोव्यथा कहती है और अपने भोलेपन में बाहरी आकर्षण में पड़ जाने

का रोना रोती है। दूसरे पद में कृष्ण के वियोग की पराकाष्ठा होने पर मर जाने की अवस्था में भी प्रतीक्षारत रहने और आँखें खुली रह जाने की अनूठी बात कही गई है। दोनों पदों में कृष्ण के प्रति गोपिकाओं के अनन्य प्रेम की चर्चा में कवि ने लोकोक्तियों और लोक विश्वासों के द्वारा ऐसा शब्द चित्र प्रस्तुत किया है कि आप ब्रज भाषा में लिखे गए इन पदों को पढ़कर भाव को समझते चले जाएँगे। कवित्त-सवैये जब सस्वर पढ़े जाते हैं तब उनका अर्थ आसानी से समझ में आ जाता है, इसलिए सीख-समझकर इनका सस्वर वाचन अवश्य करें।

3.3.2 अध्येय कविता : विरह वेदना

[1]

जानि सुजान मैं प्रीति करि सहिके जग की बहु भाँति हँसाई।
त्यों 'हरिचंदजू' जो-जो कहौ सो करयो चुप है करि कोटी उपाई।
सोऊ नहीं निबही उनसों, उन तोरत बार कछू न लगाई ।
साँची भई कहनावति वा अरी, ऊँची दुकान की फीकी मिठाई ॥

[2]

इन दुखियान को न चैन सपनेहुं मिल्यौ,
तासों सदा व्याकुल बिकल अकुलायेंगी।
प्यारे 'हरिचंद जू' की बीती जानि औध, प्रान
चाहत चले पै ये तो संग न समायंगी।
देख्यो एक बारहू न नैन भरि तोहिं यातें,
जौन जौन लोक जैहें तहाँ पछताएँगी।
बिना प्रान-प्यारे भये दरस तुम्हारे, हाय!
मरेहू पै आँखें ये खुली ही रहि जाएँगी॥

निर्देश : इस कविता का सस्वर वाचन कीजिए।
इस कविता का मौन वाचन कीजिए।

3.3.3 विस्तृत व्याख्या

जानि सुजान मैं प्रीति करि सहिके जग की बहु भाँति हँसाई।
त्यों 'हरिचंदजू' जो-जो कहौ सो करयो चुप है करि कोटी उपाई ।
सोऊ नहीं निबही उनसों, उन तोरत बार कछू न लगाई।

साँची भई कहनावति वा अरी, ऊँची दुकान की फीकी मिठाई॥

शब्दार्थ : जानि = जान कर। सुजान = सुसभ्य, अच्छा। सहिके = सहकर। कोटी = अनेक। उपाई= उपाय। निबही = निभाना। कहनावती = कहा जाता है।

संदर्भ : यह पद 'विरह वेदना' (प्रेम माधुरी कविता-संग्रह का 108वाँ पद 'जानि सुजान मैं प्रीति करि' है) शीर्षक से प्रस्तुत है जिसे आधुनिक हिंदी साहित्य के प्रमुख कवि भारतेंदु हरिश्चंद्र ने रचा है।

प्रसंग : गोपिकाएँ श्री कृष्ण के प्रेम में पड़ तो गई हैं पर वे उनको निर्मोही भी मानती हैं। वे कहती हैं कि कृष्ण को निर्मोही जानते हुए भी उन्होंने उनसे प्रेम करने की भूल की है उसका परिणाम यह हुआ है कि वह भूल ही उनके अब गले पड़ गई है। इसमें किसी ओर का भला क्या दोष? उन्होंने ही कृष्ण को 'सुजान' अर्थात भला आदमी समझा था।

व्याख्या : एक गोपिका दूसरी से अपने मन की पीड़ा बताते हुए कहती है कि जिस प्रकार जन्म-मरण और सुख-दुख दोनों सभी के जीवन में आते हैं और चाहे कितना भी तर्क-वितर्क करो, इनसे छुटकारा नहीं होता वैसे ही कृष्ण जी के वृंदावन में रहते यदि उन्हें सुख मिलता है तो उनके मथुरा चले जाने पर दुख भी होता है। भोली-भाली वे आपस में इसी बात पर विचार विमर्श और बहस कर कर के हार जाती हैं। उन्हें कुछ समझ नहीं आता। कभी वे भाग्य को दोष देती हैं और कभी कृष्ण को निर्मोही बताती हैं। वे इसे समझने की कोशिश करती हैं। वे कहती हैं कि उन्होंने कृष्ण के रूप-स्वरूप को देखकर और उस पर मुग्ध होकर बड़ी भूल है। उन्होंने यह भी भूल की है कि जिसे उन्होंने सुजान समझा था, बुद्धिमान और भरोसेमंद माना था वह भी ऐसा निकला जैसे किसी हलवाई की दुकान पर अनेक मिठाइयाँ सजाकर रख दी गईं हों और उनके आकर्षण से बंधकर ग्राहकों का झुंड आकर मिठाई खरीद ले। इस मिठाई को बड़े चाव से खाने के बाद वे जब यह सच जान जाते हैं कि यह मिठाई तो फीकी और स्वाद रहित है तो जैसी निराशा उन ग्राहकों को हो रही है वैसी ही कृष्ण की मोहनी मुस्कान से आकृष्ट हुई उनको होती है। वे इसकी खीज प्रकट करके रह जाती हैं।

काव्यगत विशेषता

भारतेंदु कविता में प्रतिदिन की बोलचाल की कहावतों और लोकोक्तियों का बहुत अच्छा प्रयोग करते हैं। इससे कविता में भावों की पुष्टि तो होती ही है, गज़ब का आकर्षण भी आ जाता है। इस पद का सर्वाधिक आकर्षण इसमे प्रयोग की गई लोकोक्ति है - ऊँची दुकान फीके पकवान।

भारतेंदु के इस भाषा प्रयोग को रामचंद्र शुक्ल ने 'चलती भाषा प्रयोग' कहा है। 'भाषा की रूप प्रतिष्ठा' के लिए ये प्रयोग उल्लेखनीय हैं।

बोध प्रश्न

- गोपिका कृष्ण को 'निर्मोही' क्यों कहती हैं?
- गोपिकाओं ने कृष्ण को लेकर क्या भूल की? यह भूल हो क्यों गई?
- इस भूल का परिणाम क्या हुआ?
- यहाँ प्रयुक्त लोकोक्ति को लिखकर उसका अर्थ बताते हुए उसका अपने वाक्य में प्रयोग भी कीजिए।

> इन दुखियान को न चैन सपनेहुं मिल्यौ,
> तासों सदा व्याकुल बिकल अकुलायेंगी।
> प्यारे 'हरिचंद जू' की बीती जानि औध, प्रान
> चाहत चले पै ये तो संग न समायंगी।
> देख्यो एक बारहू न नैन भरि तोहिं यातें,
> जौन जौन लोक जैहें तहाँ पछताएँगी।
> बिना प्रान-प्यारे भये दरस तुम्हारे, हाय !
> मरेहू पै आँखें ये खुली ही रहि जाएँगी॥

शब्दार्थ : चैन = शांति, सुख। बिकल = बेचैन। औध=अवधि। जौन-जौन = जिस जिस।

संदर्भ : यह पद 'विरह वेदना' (प्रेम माधुरी कविता-संग्रह का 129वां पद) शीर्षक से प्रस्तुत है जिसे आधुनिक हिंदी साहित्य के प्रमुख कवि भारतेंदु हरिश्चंद्र ने रचा है।

प्रसंग : इस सवैये में श्री कृष्ण के विरह में व्याकुल गोपियों के नेत्रों की दशा का मार्मिक चित्रण किया गया है। प्रेम भी बेचारा ऐसा दो के बीच में पड़ा है कि कुछ कहा नहीं जा सकता। प्रतिक्षण मिलना होता रहे तभी ठीक है, नहीं तो कभी एक पक्ष की विरहाग्नि प्रबल, कभी दूसरे पक्ष की। इसी प्रेम में दुखी होकर गोपिका अपने आप को कोस रही है।

व्याख्या : विरहिणी गोपिका कहती हैं कि प्रियतम श्रीकृष्ण के विरह में व्याकुल इन नेत्रों को सपने में भी शांति नहीं मिल पाती है क्योंकि इन्होंने कभी स्वप्न में भी श्रीकृष्ण के दर्शन नहीं किए। इसलिए ये सदा प्रिय-दर्शन के लिए व्याकुल होते रहेंगे। प्रियतम के लौट आने की अवधि को बीतती हुई जानकर उनके प्राण इस शरीर से निकलकर जाना चाहते हैं, परंतु मरने पर भी ये

नेत्र प्राणों के साथ नहीं जाना चाहते क्योंकि इन्होंने अपने प्रियतम कृष्ण को जी भरकर नहीं देखा है। इसलिए जिस किसी भी लोक में ये नेत्र जाएँगे वहाँ पश्चाताप ही करते रहेंगे।

गोपिका विलाप के स्वर में दुखी होकर कह उठती है, "हे उद्धव ! तुम श्री कृष्ण से कहना कि हमारे नेत्र मृत्यु के पश्चात भी उनके दर्शन की प्रतीक्षा में खुले रहेंगे"। इस अनोखे किंतु सहज कथन से गोपिका वास्तव में सभी श्रोताओं को अवाक कर देतीं हैं। मरने पर आँखों का खुले रह जाना सबने देखा होगा किंतु प्रिय की प्रतीक्षा में इनका खुले रह जाना 'दूर की कौड़ी लाना' है। यही इस पद का स्वाभाविक और अनूठा सौंदर्य है।

काव्यगत विशेषता

गोपियों के एकनिष्ठ प्रेम का चित्रण है। भाषा - ब्रज, 'सपनेहूँ चैन न मिलना', 'देखो एक बारहू न नैन भरि' में मुहावरों का सुंदर प्रयोग है। शैली - मुक्तक, रस - वियोग शृंगार, छंद - सवैया, अलंकार - अनुप्रास, पुनरुक्तिप्रकाश। भाव साम्य - सूरदास ने भी लगभग इसी प्रकार से वर्णन किया है - अँखियाँ हरि दरसन की प्यासी ....। भावों का ऐसा उत्कर्ष बड़ा प्रभावशाली है।

अंतिम पंक्तियों को यदि उद्धव को संबोधित मान लें तो एक अनूठे भाव और संपूर्ण दृष्टांत पर ध्यान चला जाता है ।

बोध प्रश्न

- वियोगिनी गोपियों की आँखों को सदैव पश्चाताप क्यों रहेगा?
- कृष्ण के रूप-सौंदर्य को देखे बिना गोपियों के नेत्रों की क्या दशा हो रही है?
- 'मरेहू पै आँखें ये खुली ही रहि जाएँगी' पंक्ति का भाव सौंदर्य स्पष्ट कीजिए।
- क्या उपरोक्त पंक्ति (मरेहू पै आँखें ये खुली ही रहि जाएँगी) आपको वीभस्त या घिनौनी लगती है? तर्कपूर्ण उत्तर दीजिए।
- मुक्तक किसे कहते हैं ? भारतेंदु द्वारा अपनाए गए दो छंदों के नाम लिखो ।

3.3.4 समीक्षात्मक अध्ययन

भारतेंदु युग के प्रवर्तक भारतेंदु हरिश्चंद्र हैं। उनका कृतित्व संक्रांतिकालीन समय में आया इसलिए गद्य में वे विचार-अभिव्यक्ति के लिए खड़ी बोली को अपनाते हैं किंतु कविता के लिए ब्रज भाषा को ही पकड़े रहते हैं। भारतेंदु के बाद ही खड़ी बोली हिंदी क्षेत्र की व्यापक काव्य भाषा बनी। आप देखेंगे कि इतने वर्षों के बाद ब्रज भाषा की ये रचनाएँ कुछ कठिन अवश्य हैं किंतु अबोधगम्य नहीं। इनका एक अलग स्वर और मिठास है। कवि-हृदय भारतेंदु की ब्रज भाषा

कविता में भक्तिकालीन संस्कारों के साथ-साथ कुछ कुछ रीतिकालीन भंगिमा भी दिख जाती है। मानवीय चरित्र और स्वभाव को अभिव्यक्त करते ये दो पद अपने आप में एक अलग आख्यान रच रहे हैं।

भारतेंदु हरिश्चंद्र की काव्य रचनाओं से उनके व्यक्तित्व के दो रूप बहुत स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं। वे प्रमुखतः शांत और शृंगार रस के कवि हैं। अन्य रसों - जैसे हास्य की रचनाएँ भी हैं, किंतु इतनी अधिक नहीं। शृंगार के दोनों पक्षों - संयोग और वियोग में से वियोग में उनका मन अधिक रमा है।

साहित्य का श्रेष्ठ रस शृंगार है और इसका भी परिष्कृत रूप विरह वर्णन में मिलता है। शृंगार के अंतर्गत वियोग-पक्ष का लगभग सभी रीतिकालीन कवियों ने वर्णन किया है। किंतु उनके विरह वर्णन में नैसर्गिकता के स्थान पर नायिका के साथ खिलवाड़ किया गया मिलता है। विरह वेदना के वर्णन में कवि काम से मुक्त प्रेम की अभिव्यक्ति करता है। प्रथमानुराग, मान, प्रवास और करुण वियोग के चार रूप हैं। आप उपरोक्त दो पदों में देख सकते हैं कि पहले पद में मान-विरह है तो दूसरे में अंत में करुण रस की व्याप्ति हो जाती है। गोपियों की विरह वेदना उपालंभ (उलाहना) के रूप में अभिव्यक्त हुई है। यदि भ्रमर-गीत परंपरा में रखकर इन पदों को देखा जाए तो इनकी सबसे महत्वपूर्ण उपलब्धि वर्णन और उक्ति की नवीनता होगी।

भारतेंदु हरिश्चंद्र ने अपनी कवित्व शक्ति से अपने प्रेमी स्वभाव के साथ कुल की वैष्णव परंपरा का ऐसा सामंजस्य किया कि उनकी भक्ति-भावना के अनेक आयाम उपस्थित होते चले गए। भारतेंदु जी वल्लभ संप्रदाय में दीक्षित कृष्णभक्त कवि थे। अपने आत्मपरिचय वाले प्रसिद्ध कवित्त में वे कह देते हैं, “सरबस रसिक के, सुदामा दास प्रेमिन के, सखा प्यारे कृष्ण के, गुलाम राधा रानी के।” भारतेंदु ने भक्तिपरक लगभग डेढ़ हज़ार पद लिखे। भारतेंदु ने वैष्णव घराने में जन्म लिया था और वे वल्लभाचार्य द्वारा प्रचारित संप्रदाय के अनुयायी थे। यही कारण है कि हृदय से भक्त होने के कारण कृष्ण की समस्त लीलाओं का वर्णन उन्होंने बड़े प्रेम और भक्तिभाव से किया है। इस दृष्टि से वे विद्यापति, सूरदास और अन्य कृष्णभक्त कवियों की परंपरा में आते हैं। वे कृष्ण ही नहीं कृष्ण भक्तों का गुणगान करने में भी निपुण रहे। ‘उत्तर भक्तमाल’ में उन्होंने अपने वंश के उल्लेख के साथ कृष्ण-भक्त हिंदू-मुसलमान कवियों का परिचय भी दिया है। इसी पुस्तक में भारतेंदु का रसखान के लिए लिखा गया वह छप्पय है जिसमें वह प्रसिद्ध पंक्ति आती है - इन मुसलमान हरिजनन पै कोटिन हिंदुन वारियै।

बोध प्रश्न

- भारतेंदु किस संप्रदाय में दीक्षित कृष्णभक्त कवि थे?
- वियोग के चार रूपों का उल्लेख कीजिए।

बाबू गुलाब राय (अध्ययन और आस्वाद 1957) के मत में "भारतेंदु की भक्ति में दीनता और अक्खड़पन के साथ दाम्पत्य भाव का-सा विरहोन्माद भी है।" भारतेंदु के पदों में यह गोपिका- प्रसंग के रूप में अभिव्यक्त हुई है। हरिश्चंद्र ने कृष्ण की लीला का गान अवश्य किया किंतु किसी प्रकार की सांप्रदायिक कट्टरता उनमें नहीं है। राधा-कृष्ण-काव्य में भक्ति और शृंगार का ऐसा अद्भुत समावेश है कि दोनों एक हो जाते हैं। भारतेंदु से पूर्व नंददास व सूरदास ने भी गोपिकाओं या गोपियों को आधार बनाकर पद लिखे हैं।

भारतेंदु द्वारा वर्णित गोपियों का स्वरूप भी पारंपरित गोपियों से भिन्न नहीं है। कृष्ण के मथुरा गमन के पश्चात वे अपनी खीझ कभी कृष्ण, कभी कुब्जा तथा कभी अपने आप पर भी प्रकट करती हैं। मथुरा से आए उद्धव स्वयं को कृष्ण द्वारा प्रेषित निर्गुण ब्रहम के ज्ञाता बतलाते हैं और यह भी कहते हैं कि उन्हें स्वयं ने गोपियों को ज्ञानोपदेश देने के लिए ब्रज में भेजा है किंतु गोपियाँ उनके इस कथन पर विश्वास न करके उनका उपहास करती हैं। उपहासपूर्ण पदों के माध्यम से गोपिकाओं के छल रहित व्यवहार का बोध होता है।

भारतेंदु हरिश्चंद्र का संपूर्ण जीवन प्रेम से ओतप्रोत जीवन था। उनके द्वारा लिखित पदों में प्रेम की व्याप्ति सर्वत्र है। प्रेम के अनेक रूपों को प्रस्तुत करते हुए उन्होंने प्रेम की अनुभूत व्याख्या की। रसिकता और पीड़ा का अभूतपूर्व संयोग भारतेंदु के प्रेम विषयक कवित्त-सवैयों में पाया जाता है। इन पदों में एक ओर तो रीतिकालीन प्रेमी-कवियों की सरसता है दूसरी ओर उनकी अपनी अतृप्ति की भावना है। यह भावना अनन्यता और तन्मयता का अपूर्व संगम है। प्रेम में बहुत कुछ पाकर भी भारतेंदु का प्रेमी-हृदय सदा असंतुष्ट ही रहा। इसी कारण से संयोग की अपेक्षा वियोग-संबंधी उनकी रचनाएँ अधिक प्रभावशाली और मार्मिक बन पड़ी हैं।

भारतेंदु जी का विरह वर्णन पुरानी परिपाटी के कवियों के वर्णन से कुछ भिन्न है। इनमें अतिशयोक्ति की कमी और स्वाभाविकता की पूर्णता है। हिंदी में नखशिख वर्णन और उर्दू में सरापा लिखने की प्रथा प्राचीन है। आँखों की आकर्षण शक्ति पर भी कवियों ने खूब लिखा है। किंतु भारतेंदु के निम्नलिखित पद में संवेदना का अतिरेक हो गया है और ब्रजरत्न दास के शब्दों में कहें तो, "ये आँखें उर्दू शायरी की बेवफाई छोड़कर यहीं 'लहद' (कब्र) तक ही देखने को नहीं

तरसतीं बल्कि जन्मजन्मांतर में जिस जिस लोक में वे जाएँगी वहाँ वहाँ उन्हें इस दर्शन की याद बनी रहेगी।" -

इन दुखियान को न चैन सपनेहुं मिल्यौ,..... मरेहू पै आँखें ये खुली ही रहि जाएँगी॥

उपर्युक्त उद्धृत एक दूसरे पद में लोकोक्ति के प्रयोग से जो अनूठापन आ गया है और कवि का वाक्-चातुर्य पद में विलक्षणता ले आया है, यह भी स्मरणीय और रेखांकित करने योग्य है। अपने भावों की पुष्टि के लिए कहावतों और लोकोक्तियों का प्रयोग करके भारतेंदु ने एक ओर तो गोपिकाओं के भोलेपन को दिखाया है दूसरी ओर उनकी व्यावहारिक समझ को भी दिखा दिया है, "और हमने तो उन्हें भला आदमी सुजान समझा था, जानती न थीं कि वे ऐसे निकलेंगे, नहीं तो यह जग हँसाई न होती।" प्रेम और विरह में दग्ध होकर इस तरह कहना बड़ा स्वाभाविक है। विकल होकर गोपिकाएँ ऐसे ही उपालंभ तो देंगी और क्या? यहाँ तो केवल दो पद ही आपने पढ़ें हैं, इनके अतिरिक्त भी अनेक पद हैं जहाँ ऐसी लोकोक्तियों का प्रयोग हुआ है। गद्य में, मुख्यतः नाटकों में, भी ऐसी योजना बहुत है। उनकी भलमनसाहत और भोलापन विरह के पदों में बिखरा पड़ा है। अंत में कुछ न समझ पाने पर वे कह उठती हैं कि कुछ नहीं ये विरह भाग्य के अधीन है - सबको जहाँ भोग मिल्यो तहाँ हाय वियोग हमारे ही बांटें परयो। 'बांटे पड़ना' में जो बात है वह कितना अनूठा है, बस समझ लीजिए। कहा जा सकता है कि भारतेंदु अपनी काव्य रचना में जीवन और जीवंतता का समावेश करते थे। वे स्वयं लाइफ-फुल या जीवन रस से लबरेज थे और अपनी कविता के लिए उक्तियाँ समाज के सभी लोगों के साथ 'दस तरह के लोगों के साथ' उठ बैठकर या अनुभव से प्राप्त करते थे।

भारतेंदु का कवि रूप कभी यह मान ही नहीं सका कि ब्रजभाषा के अतिरिक्त भी किसी और भाषा-बोली में अच्छी कविता हो सकती है। उनकी काव्य प्रतिभा कहीं सूरदास के स्वर में स्वर मिलाकर गाती है, "उधौ जो अनेक मन होते", कहीं वे रसखान कवि के समान ब्रज भूमि के प्रति अपना आकर्षण और प्रेम दिखाते हैं, 'ब्रज की लता पता मोहि कीजै', कभी वे समर्पित पुष्टि मार्गी के समान बोल उठते हैं, 'श्री बल्लभ बल्लभ कहौ, छोड़ उपाय अनेक' और कभी घनानंद के प्रेम की टीस लेकर 'काले परे कोस चलि थक गए पाय' कहकर आराध्य के दर्शन के लिए आतुर और व्याकुल दिखाई देते हैं।

भक्तिकाल से लेकर रीतिकाल तक मुक्तक शैली में कविता करने के लिए कवियों ने प्रायः दोहा, कवित्त और सवैया छंदों का प्रयोग किया। रसखान, घनानंद और आलम ने यदि कवित्त

सवैयों का प्रयोग भक्ति के पद रचने में किया तो भूषण ने वीर रस के लिए। भारतेंदु ने आधुनिक युग के आरंभ में इस परंपरा को अपने अनेक समकालीनों के समान जारी रखा। यूँ तो सवैये 14 प्रकार के होते हैं किंतु आपको इतने विस्तार में जाने की आवश्यकता नहीं है। बस इतना जानना पर्याप्त होगा कि अमुक पदयांश की रचना किस छंद में हुई है। भारतेंदु अपनी कविता में नित्य की बोलचाल की कहावतों और लोकोक्तियों का बहुत ही अच्छा प्रयोग करते हैं। इससे कविता के भावों की पुष्टि होती है।

भारतेंदु ने काव्य रचना के लिए खड़ी बोली का प्रयोग नहीं किया क्योंकि उस समय तक इसमें काव्य रचना की परिपाटी शुरू नहीं हुई थी। इसके स्थान पर चली आ रही ब्रज भाषा को ही सरल, सरस और परिष्कृत करके उन्होंने कविता की। संस्कृत के तत्सम शब्दों के स्थान पर तद्भव शब्दों का अधिक प्रयोग किया। उदाहरण के लिए, उपरोक्त पद संख्या 2 को देखें तो यहाँ प्रान, बिकल, नैन और औध आदि तद्भव शब्दों का प्रयोग हुआ है जिनके तत्सम शब्द क्रमशः प्राण, विकल, नयन और अवधि हैं। इस प्रकार भारतेंदु की कविता में अनेक शब्दों को रेखांकित किया जा सकता है। उर्दू के प्रचलित शब्दों और कहावतों का भी बहुत सुंदर प्रयोग करके भारतेंदु ने भाषा की रवानी को बनाए रखा है। अप्रचलित शब्दों को भी छोड़ दिया और काव्य की ब्रज भाषा का एक चलता हुआ सर्वसाधारण के उपयुक्त स्वरूप विकसित किया। उपरोक्त दो पदों से इसे आर भी अधिक समझा जा सकता है। प्रचलित लोकोक्तियों और लोक विश्वासों और परंपराओं का प्रयोग करके भाषा को आकर्षक बनाया गया है। कहना न होगा कि भारतेंदु ने लोकोक्तियों और मुहावरों के प्रयोग करते हुए ब्रजभाषा की लाक्षणिकता बनाए रखी। भारतेंदु साहित्य के अध्येताओं को यह स्मरण रखना चाहिए कि वे जीवन के किसी क्षेत्र में अतिवादी नहीं थे। राजनीतिक, धार्मिक, सामाजिक, साहित्यिक आदि सभी क्षेत्रों में उन्होंने समन्वयात्मक दृष्टिकोण को अपनाया। हिंदी भाषा और साहित्य के उस दौर में ऐसे ही साहित्यकार की आवश्यकता थी।

यहाँ इस तथ्य का उल्लेख भी आवश्यक है कि भारतेंदु हरिश्चंद्र ने हिंदी काव्य को नए-नए विषयों की ओर उन्मुख करने के बावजूद भक्ति और शृंगार का बहिष्कार नहीं किया। संभवतः इसीलिए आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने यह लिखा है कि

> "गद्य को जिस परिमाण में भारतेंदु ने नए-नए विषयों और मार्गों की ओर लगाया उस परिमाण में पद्य को नहीं। उनकी अधिकांश कविता तो कृष्ण भक्त कवियों के

अनुकरण पर गेय पदों के रूप में है जिनमें राधा कृष्ण की प्रेम लीला और विरह का वर्णन है। (हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ.402)

भारतेंदु जी राधा-कृष्ण के भक्त थे। इस नाते उन्होंने कृष्ण की लीलाओं का वर्णन गोपी भाव से किया है। गोपी भाव का अर्थ है कि भक्त अपने आप को श्रीकृष्ण की प्रेमिका गोपी मानता है। इसी भाव के अनुरूप कृष्ण के गोकुल से मथुरा चले जाने पर उनके विरह में व्याकुल गोपिकाएँ यह अनुभव करती हैं कि जिस प्रकार जन्म-मरण और सुख-दुख दोनों सभी के जीवन में आते हैं और चाहे कितना भी तर्क-वितर्क करो, इनसे छुटकारा नहीं होता वैसे ही कृष्ण जी के वृंदावन में रहते यदि उन्हें सुख मिलता है, तो उनके मथुरा चले जाने पर दुख भी होता है। विरह में व्याकुल होने पर कृष्ण को उलाहना देने के अंदाज़ में वे यहाँ तक कहती हैं कि जिसे हमने सुजान समझा था, बुद्धिमान और भरोसेमंद माना था वह भी ऐसा निकला जैसे किसी हलवाई की दुकान पर अनेक मिठाइयाँ सजाकर रख दी गईं हों और उनके आकर्षण से बंधकर ग्राहकों का झुंड आकर मिठाई खरीद ले और बाद में पछताए। गोपियों के प्रेम का चरम उत्कर्ष तब दिखाई देता है जब वे उद्धव को यह कहती हैं कि श्रीकृष्ण के लौट आने की अवधि को बीतती हुई जानकर हमारे प्राण शरीर से निकलकर जाना चाहते हैं, परंतु मरने पर भी ये नेत्र प्राणों के साथ नहीं जाना चाहते क्योंकि इन्होंने अपने प्रियतम कृष्ण को जी भरकर नहीं देखा है। इसलिए जिस किसी भी लोक में ये नेत्र जाएँगे वहाँ पश्चाताप ही करते रहेंगे। इस प्रकार भारतेंदु ने अभिलाषा से लेकर मृत्यु तक विरह की विविध दशाओं का मार्मिक चित्रण किया है।

प्रिय छात्रो! भारतेंदु के जीवन और रचनाओं के बारे में पढ़कर अब तक आप यह जान चुके होंगे कि उनकी प्रतिभा बहुमुखी थी। वे एक साथ प्राचीन और नवीन दोनों प्रवृत्तियों को साथ लेकर चल सकते थे। विषय वस्तु और शैली शिल्प दोनों ही स्तरों पर वे एक ओर तो मध्यकालीन परंपरा का विकास करते हैं तथा दूसरी ओर उसे तोड़कर नए युग का सूत्रपात भी करते हैं। डॉ. सुरेश चंद्र गुप्त के शब्दों में -

> "उन (भारतेंदु) की प्रमुख विशेषता यह है कि अपनी अनेक रचनाओं में जहाँ वे प्राचीन काव्य प्रवृत्तियों के अनुवर्ती रहे, वहीं नवीन काव्य धारा के प्रवर्तन का श्रेय भी उन्हीं को प्राप्त है। राजभक्त होते हुए भी वे देशभक्त थे, दास्य भाव की भक्ति के साथ ही उन्होंने माधुर्य भाव की भक्ति भी की है, नायक-नायिका के सौंदर्य वर्णन में ही न रमकर उन्होंने उनके लिए नवीन कर्तव्य क्षेत्रों का भी निर्देश किया

है और इतिवृत्तात्मक काव्य शैली के साथ ही उनमें हास्य-व्यंग्य का पैनापन भी विद्यमान है। अभिव्यंजना क्षेत्र में भी उन्होंने ऐसी ही परस्पर विरोधी प्रतीत होने वाली प्रवृत्तियों को अपनाया है जो उनकी प्रयोगधर्मी मनोवृत्ति का प्रमाण है। (हिंदी साहित्य का इतिहास, सं. नगेंद्र, पृ. 451)

बोध प्रश्न

- भारतेंदु के प्रेम विषयक कवित्त-सवैयों में क्या पाया जाता है?
- भारतेंदु की प्रमुख विशेषता क्या है?
- भारतेंदु ने कृष्ण की लीलाओं का वर्णन किस भाव से किया है?
- भारतेंदु ने अपनी भाषा को आकर्षक कैसे बनाया?

3.4 पाठ सार

हिंदी क्षेत्र में पुनर्जागरण की पहली सशक्त साहित्यिक अभिव्यक्ति भारतेंदु हरिश्चंद्र (1850-1885) के व्यक्तित्व में मिलती है। भारतेंदु हरिश्चंद्र हिंदी भाषा और साहित्य के उन महान रचनाकारों में से एक हैं जिन्होंने न केवल अपनी पूर्व परंपरा पर चलते हुए काव्य रचना की बल्कि स्वयं एक परंपरा भी प्रारंभ की। भारतेंदु की कविता में भक्ति और प्रेम की प्राचीन कवियों से चली आ रही धारा के दर्शन होते हैं। उनके भक्ति काव्य में कबीर, सूरदास, तुलसी की झलक है और रीतिकाल के घनानंद, रसखान, ठाकुर, बोधा और आलम का प्रभाव भी भारतेंदु की कविता पर है। उन्होंने कवित्त सवैयों की रीतिकालीन परंपरा को आगे बढ़ाया। विरह का अस्वाभाविक वर्णन उन्होंने नहीं किया। उनकी विरह वेदना को अभिव्यक्त करती रचनाओं में स्वाभाविकता और अबोध प्रेम की उदभावना हुई है। वे राधा-कृष्ण और गोपिकाओं के परस्पर प्रेम को अपने युगानुकूल भाषा में व्यक्त करते हैं। कविता के लिए ब्रज भाषा को अपनाए रखना उन्हें पसंद आया। खड़ी बोली को उन्होंने गद्य के लिए रखा।

यदि आप भारतेंदु काव्य की संरचनागत विशेषताओं पर विचार करते हैं तो इसके अंतर्गत भाषा, काव्य रूप, छंद, रस, अलंकार आदि आते हैं। सरल, सरस, प्रचलित और परिष्कृत भाषा का प्रयोग करके और अनेक नए पुराने काव्य रूपों में भाषा प्रयोग करते हुए कवि ने मुक्तकों की झड़ी लगा दी। रसों में शृंगार और उसमें भी वियोग के चित्रण में बहुत नवीनता दिखाई। 'प्रेम माधुरी' संग्रह में संयोग और वियोग के जो अनेक पद हैं उनमें से केवल दो यहाँ

प्रस्तुत किए गए। इन दो नमूनों से भी भारतेंदु की अनुपम प्रतिभा का अंदाजा लगाया जा सकता है। काव्यालंकारों के प्रयोग का एक अतिशयता पूर्ण रूप आपने 'गंगा' और 'यमुना' के वर्णन में देखा किंतु इनके संयत प्रयोग को यहाँ निर्धारित पदों में देखकर आप यह कह उठेंगे कि रीति कालीन काव्य व्यवस्था से भारतेंदु ने धीरे धीरे ही सही किंतु नाता अवश्य तोड़ा। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप भी इस बात को मानेंगे।

3.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. भारतेंदु की कविता में भक्ति और शृंगार के अद्‌भुत समावेश को देखा जा सकता है।
2. भारतेंदु ने विरह वेदना के वर्णन में उदात्त प्रेम की अभिव्यक्ति की है।
3. भारतेंदु के भक्ति एवं प्रेमपरक काव्य में अनन्यता और तन्मयता का अपूर्व संगम द्रष्टव्य है।
4. भारतेंदु ने सूरदास की भाँति ब्रज की गोपियों के स्वभाव में भोलेपन के साथ-साथ व्यावहारिकता का समावेश किया है।

3.6 शब्द संपदा

1. अभिसिंचित = अच्छी तरह सींचा हुआ, भावनात्मक स्तर पर पोषित
2. उपालंभ = उपालंभ का सरल अर्थ है 'उलाहना'। किंतु कवियों ने इसके द्वारा प्रेम और आत्मीयता को भी चित्रित किया है। शृंगार के वियोग पक्ष में यह संयोग की आकांक्षा से भर देता है। भक्ति-काव्य के अंतर्गत उपालंभ काव्य का प्रमुख आधार कृष्ण का मथुरा प्रवास है। गोपियों की वियोग-वेदना कृष्ण के मित्र उद्धव को आया देखकर और मुखर हो जाती है। वे भ्रमर के बहाने खूब अपने मन की कह देती हैं। ये दो पद तो बानगी हैं । भारतेंदु ने 'चंद्रावली' में इसका व्यापक चित्रण किया है।
3. ओतप्रोत = परस्पर मिला हुआ, भरा हुआ
4. तन्मयता = व्यस्त होने की स्थिति, लीन, दत्त चित्त
5. दीक्षित = जिसने दीक्षा प्राप्त की हो, सुयोग्य
6. निर्गुण ब्रह्म = निर्गुण संस्कृत भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ विशिष्टता रहित

या गुण रहित ईश्वर या ब्रह्म है।

7. पराकाष्ठा = चरम सीमा, अति

8. परिष्कृत = साफ-सुथरा

9. पुष्टिमार्ग = संसार में दैहिक, दैविक एवं भौतिक दु:खों से दु:खी प्राणियों के लिए पुष्टिमार्ग साधना का वह पथ है, जिस पर चलकर व्यक्ति कष्टों से मुक्त होकर श्रीकृष्ण की भक्ति के अलौकिक आस्वाद को पाकर धन्य हो जाता है।

10. खड़ी बोली पैतृक दाय = पूर्वजों द्वारा प्राप्त विरासत

11. भ्रमर गीत = श्रीमदभागवत में गोपियों द्वारा भ्रमर को संबोधित करके उपालंभ (ताना) देना ही भ्रमर गीत कहलाता है। हिंदी साहित्य में सूरदास से लेकर अनेक कवियों ने इस परंपरा के अनुसार पदों को लिखा है। भारतेंदु ने भी कुछ पद इस परंपरा के अनुसार लिखे हैं।

12. मार्मिकता = किसी वस्तु या तथ्य के अंदर तक समझबूझ कर चलने का भाव

13. मुक्तक शैली = काव्य का वह रूप जिसमें एक ही छंद में एक विचार, एक भाव या एक अनुभूति को बिना किसी पूर्वापर संबंध के अपने आप में पूर्णता के साथ प्रस्तुत किया गया हो। भारतेंदु हरिश्चंद्र का लगभग समूचा काव्य मुक्तक के अंतर्गत आता है।

3.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. कृष्ण भक्त परंपरा में भारतेंदु के योगदान का विवेचन कीजिए।
2. वियोग के रूपों के आधार पर पठित पदों में वर्णित विरह वेदना के स्वरूप का निर्धारण करें ।
3. "भारतेंदु के पदों में भाव व काव्य सौंदर्य का अनूठा संतुलन है।" तर्कपूर्ण उत्तर दीजिए।
4. पठित पदों के आधार पर गोपियों के वाकचातुर्य का विश्लेषण 'भ्रमर-गीत परंपरा' के विशेष संदर्भ में कीजिए ।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए -

(अ) अन्य कृष्ण भक्त कवि और भारतेंदु की भक्ति

(आ) भारतेंदु की कविता में विरह वेदना

(इ) भारतेंदु के कवित्त सवैयों का प्रतिपाद्य

(ई) भारतेंदु की काव्य भाषा

2. "ऊँची दुकान फीके पकवान" लोकोक्ति का प्रयोग करके कवि भारतेंदु ने क्या भाव व्यंजना की है? स्पष्ट कीजिए।

3. भारतेंदु के पदों से उनके चपल वाग्वैभव का अहसास किस प्रकार होता है, उदाहरण देकर बताइए?

4. आपके विचार से भारतेंदु ने किस भक्त कवि का अपनी कविता में अधिक अनुसरण किया है?

5. भारतेंदु के विरह के पद पढ़कर क्या आपको भी लगता है कि वे अपनी कविता के लिए भाव 'दस तरह के आदमियों के साथ उठ बैठकर' भी प्राप्त करते थे?

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए

1. भारतेंदु गद्य में विचार-अभिव्यक्ति के लिए किस भाषा को अपनाते हैं? ( )

(अ) ब्रज भाषा (आ) खड़ी बोली (इ) अवधी (ई) भोजपुरी

2. भारतेंदु के भाषा प्रयोग को किसने 'चलती भाषा प्रयोग' कहा है? ( )

(अ) रामचंद्र शुक्ल (आ) नगेंद्र (इ) रामस्वरूप चतुर्वेदी (ई) हजारी प्रसाद द्विवेदी

3. गोपिकाएँ किसके विरह में डूबी हैं? ( )

(अ) उद्धव (आ) श्रीकृष्ण (इ) राधा (ई) यशोदा

4. अँखियाँ ..... दरसन की प्यासी। ( )

(अ) सूरज (आ) हरि (इ) उद्धव (ई) यशोदा

II. रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए।

1. उद्धव अपने आपको .... द्वारा प्रेषित निर्गुण ब्रहम का ज्ञाता बताते हैं।

2. संयोग से अधिक .... संबंधी भारतेंदु की रचनाएँ अधिक मार्मिक हैं।

3. भारतेंदु वल्लभ संप्रदाय में दीक्षित ....भक्त कवि थे।

4. भारतेंदु ने .... और .... जैसे पदों के माध्यम से काव्य रचना की।

5. भारतेंदु हरिश्चंद्र का लगभग समूचा काव्य .... के अंतर्गत आता है ।

III. सुमेल कीजिए।

1. कृष्ण भक्ति	(अ) रामचंद्र शुक्ल
2. चलती भाषा प्रयोग	(आ) भारतेंदु हरिश्चंद्र
3. संपादक- कवि वचन सुधा	(इ) पुष्टि मार्ग
4. मरेहू पै आँखें ये	(ई) खुली ही रहि जाएँगी

3.8 पठनीय पुस्तकें

1. भारतेंदु समग्र : सं. हेमंत शर्मा

2. भारतीय साहित्य शास्त्र कोश : राजवंश सहाय हीरा

3. भारतेंदु हरिश्चंद्र : ब्रजरत्न दास

4. भारतेंदु हरिश्चंद्र : लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय

इकाई 4 : मातृभाषा प्रेम : भारतेंदु हरिश्चंद्र

रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 मूल पाठ : मातृभाषा प्रेम : भारतेंदु हरिश्चंद्र

4.3.1 अध्येय कविता का सामान्य परिचय

4.3.2 अध्येय कविता

4.3.3 विस्तृत व्याख्या

4.3.4 समीक्षात्मक अध्ययन

4.4 पाठ सार

4.5 पाठ की उपलब्धियाँ

4.6 शब्द संपदा

4.7 परीक्षार्थ प्रश्न

4.8 पठनीय पुस्तकें

4.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! भारतेंदु युग के कवियों का 'मातृभाषा प्रेम' एक से बढ़कर एक है। उन्होंने अपने इस प्रेम की अभिव्यक्ति कविताओं के माध्यम से भी की है। इस पथ का श्रीगणेश भारतेंदु हरिश्चंद्र (1850-1885) ने किया। भारतेंदु ने हिंदी के लिए अपना सर्वस्व न्योछावर कर दिया था। उन्हें हिंदी की तत्कालीन दुर्दशा पर अत्यंत क्षोभ था। फारसी के बाद तब उर्दू का राजकाज में बोलबाला था। उस युग के कवियों ने उर्दू बीबी का जो मज़ाक उड़ाया और भारतेंदु ने 'उर्दू का स्यापा' (1868) लिखा वह भी उनके हिंदी प्रेम का ही सूचक है। अंग्रेजी के प्रति भी वे शंकाशील थे। भारतेंदु हरिश्चंद्र के हिंदी प्रेम की पराकाष्ठा उनके हिंदी की उन्नति पर व्याख्यान से प्रकट होती है। हिंदी पढ़ने के पक्ष में वे इतने तर्क देते हैं कि यहाँ इन 10 दोहों में कुल 98 दोहों का मर्म पूर्णतः प्रकट नहीं हो सकता। फिर भी उसकी एक स्पष्ट झलक यहाँ अवश्य दिखाई देगी। स्वतंत्रता से पूर्व हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाने के प्रयत्नों के फलस्वरूप स्वतंत्रता के पश्चात संविधान ने उसे राजभाषा के पद पर प्रतिष्ठित किया गया। इसका कुछ श्रेय भारतेंदु हरिश्चंद्र के

'मातृभाषा प्रेम' को भी अवश्य देना होगा। भारत के भविष्य का पूर्वानुमान करके भारतेंदु ने 'निज भाषा' को सभी प्रकार की उन्नति का 'मूल' और उसके अज्ञान को हिय का 'शूल' घोषित किया था।

4.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई में आप भारतेंदु हरिश्चंद्र की कविता 'मातृभाषा प्रेम' का अध्ययन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप -

- निर्धारित कविता की सप्रसंग व्याख्या कर सकेंगे।
- निर्धारित कविता के शिल्प सौंदर्य से परिचित हो सकेंगे।
- भारतेंदु हरिश्चंद्र के भाषा संबंधी विचारों से अवगत हो सकेंगे।
- स्वभाषा और मातृभाषा का महत्व समझ सकेंगे।
- व्यक्तित्व विकास में मातृभाषा की भूमिका से परिचित हो सकेंगे।
- सामाजिक और राष्ट्रीय उत्थान में अपनी भाषा की आवश्यकता को समझ सकेंगे।

4.3 मूल पाठ : मातृभाषा प्रेम : भारतेंदु हरिश्चंद्र

4.3.1 अध्येय कविता का सामान्य परिचय

प्रिय छात्रो! भारतेंदु हरिश्चंद्र द्वारा विरचित 10 दोहों के इस संकलन का हिंदी भाषा और साहित्य के अध्येताओं में बहुत सम्मान है। शायद ही कोई हिंदी प्रेमी होगा जो इनमें से कई दोहों को न जानता हो। भारतेंदु ने जून 1877 में 'हिंदी वर्धिनी सभा' में 'हिंदी की उन्नति पर एक व्याख्यान' (हिंदी प्रदीप खंड 1, संख्या 1-2, काशी नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा 'हिंदी भाषा' नाम से प्रकाशित) नामक काव्यात्मक निबंध पढ़ा था। इस निबंध में 98 दोहें हैं और इन सबका आधार है हिंदी, हिंदुस्तानी और हिंदुस्तान के प्रति असीम प्रेम। निज भाषा ज्ञान को संस्कृत और अंग्रेज़ी के ज्ञान से अधिक उपयोगी मानते हुए हरिश्चंद्र कहते हैं कि निज भाषा हिंदी की उन्नति करके ही अपने देश भारत या हिंदुस्तान की सब प्रकार की उन्नति हो सकती है। बाबू भारतेंदु हरिश्चंद्र विरचित यहाँ संकलित 10 दोहों को 'मातृभाषा प्रेम' शीर्षक से प्रस्तुत किया गया है। मातृभाषा की उन्नति कैसे हो? यहाँ मातृभाषा के दो अर्थ हैं - व्यापक अर्थ में यह 'निज भाषा' है और कोई भी भाषा हो सकती है। दूसरी ओर यह 'हिंदी' है जिसकी उन्नति का लक्ष्य है। किसी

भी समाज और व्यक्ति के लिए ज्ञान-विज्ञान के विविध क्षेत्रों में उन्नति तभी संभव है जब अपनी भाषा (हिंदी) की उन्नति और अभिवृद्धि हो। इसके लिए उसका व्यापक प्रयोग हो और दूसरी देशी-विदेशी भाषाओं का सम्मान करते हुए अपनी मातृभाषा की उन्नति के सभी प्रयत्न किए जाने चाहिए। यदि हम अपनी सर्वांगीण उन्नति चाहते हैं तो अपनी भाषा के माध्यम से ही कर सकते हैं।

4.3.2 अध्येय कविता : मातृभाषा प्रेम

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल
बिन निज भाषा-ज्ञान के मिटत न हिय को सूल । 1।
अंग्रेज़ी पढ़ि के जदपि, सब गुन होत प्रवीन
पै निज भाषा-ज्ञान बिन, रहत हीन के हीन । 2।
उन्नति पूरी है तबहिं, जब घर उन्नति होय
निज शरीर उन्नति किये, रहत मूढ़ सब कोय । 3।
निज भाषा उन्नति बिना, कबहूं न ह्वैहैं सोय ।
लाख उपाय अनेक यों, भले करे किन कोय । 4।
इक भाषा इक जीव इक, मति सब घर के लोग
तबै बनत है सबन सों, मिटत मूढ़ता सोग। 5।
और एक अति लाभ सब, बात सुनै जो कोय
निज भाषा में कीजिए, जो विद्या की बात । 6।
तेहि सुनि पावै लाभ सब, बात सुनाई जो कोय
यह गुन भाषा और महं, कबहुँ नाहीं होय । 7।
विविध कला शिक्षा अमित, ज्ञान अनेक प्रकार
सब देसन से लै करहू, भाषा माहि प्रचार । 8।
भारत में सब भिन्न अति, ताहीं सों उत्पात
विविध देस मतहू विविध, भाषा विविध लखात । 9।
सब मिल तासों छांड़ि कै, दूजे और उपाय
उन्नति भाषा की करहु, अहो भ्रातगन आय । 10।

> **निर्देश :** इन दोहों का सस्वर वाचन कीजिए।
> इन दोहों का मौन वाचन कीजिए।

4.3.3 विस्तृत व्याख्या

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल
बिन निज भाषा-ज्ञान के मिटत न हिय को सूल ।

शब्दार्थ : निज = अपनी। हिय = हृदय। सूल = पीड़ा।

संदर्भ : प्रस्तुत दोहा 'मातृभाषा प्रेम' शीर्षक से संकलित और मूलतः 'मातृभाषा की उन्नति पर व्याख्यान' के रूप में आधुनिक काल के युग प्रवर्तक भारतेंदु हरिश्चंद्र द्वारा विरचित है।

प्रसंग : हिंदी भाषा के विकास और प्रचार के लिए सदैव तत्पर भारतेंदु ने इस दोहे में सूत्र रूप से 'निज भाषा' की उन्नति के विषय में अपने विचार व्यक्त किए हैं।

व्याख्या : कवि भारतेंदु का स्पष्ट मत है कि अपनी भाषा की उन्नति में ही सब प्रकार की उन्नति और विकास निर्भर है। इसकी ही उन्नति से जीवन में सभी प्रकार की उन्नति संभव है और यही एकमात्र उपाय है। अपने हृदय की पीड़ा और मानसिक क्लेश से छुटकारा तभी संभव है जब अपनी भाषा का विकास हो। दूसरों की भाषा के प्रयोग से अपना भला कदापि संभव नहीं।

व्याख्या : 'निज भाषा' से कवि का सीधा और स्पष्ट संकेत यहाँ 'हिंदी' से है। भारतेंदु से समय में अंग्रेज़ी भाषा का राजकाज में वर्चस्व होता जा रहा था जो भारतीयों के लिए अपमानजनक था। यह भाव 'शूल' या काँटे जैसा चुभा जा रहा था कि अपने देश में अपनी भाषाओं की उन्नति नहीं हो रही है।

काव्यगत विशेषता

यह दोहा ब्रज भाषा में है जो हिंदी क्षेत्र की 18 बोलियों में से एक है। हिंदी भाषा की प्राण प्रतिष्ठा करना इसका मुख्य लक्ष्य है। अंग्रेज़ी शासन के प्रति संकेत रूप में आ-विकर्षण का भाव 'हिय को सूल' कहकर व्यक्त किया गया है।

(आप आगे दूसरे 9 दोहों में कोई काव्यगत विशेषता न देखें तो यहाँ दी गई विशेषताओं को ही वहाँ लिखा गया मान लें। यह भी उल्लेखनीय है कि दोहा एक ऐसा छंद हैं जो शब्दों की मात्राओं के अनुसार निर्धारित होता है। इसके दो पद होते हैं तथा प्रत्येक पद में दो चरण होते हैं। पहले चरण को विषम चरण तथा दूसरे चरण को सम चरण कहा जाता है। विषम चरण की कुल मात्रा 13 होती हैं तथा सम चरण की कुल मात्राएँ 11 होती हैं। अर्थात दोहा का एक पद

13-11 की यति (रुकावट, विश्राम) पर होता है। इस यति का ध्यान आप दोहा पढ़ते समय अवश्य रखें।)

बोध प्रश्न

- 'निज' भाषा से क्या तात्पर्य है?
- हृदय की पीड़ा क्या है और यह कैसे दूर हो सकती है?
- इस दोहे की सार्वभौमिकता पर टिप्पणी कीजिए।

अंग्रेज़ी पढ़ि के जदपि, सब गुन होत प्रवीन

पै निज भाषा-ज्ञान बिन, रहत हीन के हीन ।

शब्दार्थ : जदपि = यद्यपि। गुन = गुण। प्रवीन = प्रवीण, योग्यता प्राप्त करना। पै = फिर भी।

संदर्भ : प्रस्तुत दोहा 'मातृभाषा प्रेम' शीर्षक से संकलित और मूलतः 'मातृभाषा की उन्नति पर व्याख्यान' के रूप में आधुनिक काल के युग प्रवर्तक भारतेंदु हरिश्चंद्र द्वारा विरचित है।

प्रसंग : जहाँ 'निज' भाषा से हिंदी और समस्त भारतीय भाषाओं से तात्पर्य है और दूसरी ओर विदेशी भाषा अंग्रेज़ी का प्रचार प्रसार है जिसको सर्व ज्ञान का स्रोत कहा जा रहा है किंतु ऐसा नहीं है।

व्याख्या : भारतेंदु हरिश्चंद्र के मतानुसार अंग्रेज़ी भाषा के पठन-पाठन से भारतीय अनेक गुणों से चाहे माला माल हो जाए और चाहे ज्ञान विज्ञान की अनेक जानकारी उन्हें सहज ही अंग्रेज़ी के माध्यम से प्राप्त हो जाए। किंतु फिर भी अपनी भाषा के ज्ञान के बिना उनका सर्वांगीण विकास नहीं हो सकता। वे हीन के हीन ही रहेंगे। तात्पर्य यह है कि उनका सम्मान तभी होगा जब वे अपनी भाषा में प्रवीणता प्राप्त करके गौरवान्वित होंगे।

काव्यगत विशेषता

भारत के सांस्कृतिक और सामाजिक गौरव की स्थापना का पहला कदम निजभाषा ज्ञान है। बिना मातृभाषा के ज्ञान और अध्ययन या अंग्रेज़ी माध्यम से प्राप्त जानकारी अधूरी रहेगी।

बोध प्रश्न

- 'हीन के हीन' से कवि का क्या तात्पर्य है?

उन्नति पूरी है तबहिं, जब घर उन्नति होय ।

निज शरीर उन्नति किये, रहत मूढ़ सब कोय ॥

शब्दार्थ : घर = स्वदेश। निज = अपनी। मूढ़ = मूर्ख।

संदर्भ : प्रस्तुत दोहा 'मातृभाषा प्रेम' शीर्षक से संकलित और मूलतः 'मातृभाषा की उन्नति पर व्याख्यान' के रूप में आधुनिक काल के युग प्रवर्तक भारतेंदु हरिश्चंद्र द्वारा विरचित है।

प्रसंग : इस दोहे में कवि ने स्व की उन्नति से पहले स्वदेश की उन्नति का विचार करने के विचार पर गंभीरता से सोचने को कहा है।

व्याख्या : भारतेंदु ने स्वदेश के प्रति जन-चेतना जाग्रत करने के लिए इस दोहे में देश को देह से आगे रखकर देखने के लिए कहा है। वे कहते हैं कि तब तक हमारी उन्नति अधूरी रहेगी जब तक हमारा घर उन्नति प्राप्त नहीं कर लेता। हमारा 'घर' हमारा देश है। देश वंदना का सबसे अच्छा मार्ग है अपने घर अर्थात देश को विकास के मार्ग पर अग्रसर करने की चेष्टा करना। आत्मोन्नति या अपनी उन्नति और विकास के फलस्वरूप भी सबका मूर्ख और अज्ञानी रह जाना संभव है।

बोध प्रश्न

- हमारी उन्नति कब पूरी होगी? कब नहीं?

निज भाषा उन्नति बिना, कबहूं न ह्वैहैं सोय ।
लाख उपाय अनेक यों, भले करे किन कोय ।

शब्दार्थ : ह्वैहैं = होंगे। यों का अर्थ = इस प्रकार से। किन = क्यों। कोय = कोई।

संदर्भ : प्रस्तुत दोहा 'मातृभाषा प्रेम' शीर्षक से संकलित और मूलतः 'मातृभाषा की उन्नति पर व्याख्यान' के रूप में आधुनिक काल के युग प्रवर्तक भारतेंदु हरिश्चंद्र द्वारा विरचित है।

प्रसंग : इस दोहे में कवि अपनी भाषा की उन्नति के साधन के विषय में अपने विचार व्यक्त करते हैं।

व्याख्या : कवि ने इस दोहे के द्वारा अपने पाठकों को यह सलाह और सीख दी है कि अपनी भाषा की उन्नति और विकास के लिए हमें विश्राम या नींद लेना गंवारा नहीं करना चाहिए। अपनी भाषा की उन्नति के अभाव में कैसी नींद और काहे का विश्राम?

बोध प्रश्न

- इस दोहे में निज भाषा की उन्नति के बिना क्या न करने के लिए कहा गया है?

इक भाषा इक जीव इक, मति सब घर के लोग।
तबै बनत है सबन सों, मिटत मूढ़ता सोग।।

शब्दार्थ : इक = एक। मति = बुद्धि, विचार। तबै=तभी। सों = के। मूढ़ता = मूर्खता। सोग= शोक, दुख।

संदर्भ : प्रस्तुत दोहा 'मातृभाषा प्रेम' शीर्षक से संकलित और मूलतः 'मातृभाषा की उन्नति पर व्याख्यान' के रूप में आधुनिक काल के युग प्रवर्तक भारतेंदु हरिश्चंद्र द्वारा विरचित है।

प्रसंग : कवि इस दोहे में अपनी भाषा की उन्नति के लिए आपसी मतभेद को मिटाने के लिए कहते हैं ।

व्याख्या : कवि का मत है कि तभी हमारे मन का शोक और हमारी मूर्खता पर हमारी विजय होगी जब हम एक एक करके सभी अपनी विद्या बुद्धि से विचार कर एक साथ एक स्वर में अपनी मातृ भाषा की उन्नति के प्रति सचेत होंगे। कवि घर को सामान्य अर्थ - परिवार से लेकर इसके व्यापक अर्थ की ओर भी संकेत करते हैं। आपसी बातचीत में अपनी भाषा प्रयोग और व्यापक रूप से उसका प्रयोग दोनों ही हमारी जड़ता, अज्ञान और मूर्खता को नष्ट करने वाले हैं।

बोध प्रश्न

- मूर्खता से शोक कैसे बढ़ता है और इसे दूर करने का क्या उपाय है?

और एक अति लाभ सब, बात सुनै जो कोय।
निज भाषा में कीजिए, जो विद्या की बात।।

शब्दार्थ : सुनै = सुनेंगे। निज भाषा = अपनी भाषा

संदर्भ : प्रस्तुत दोहा 'मातृभाषा प्रेम' शीर्षक से संकलित और मूलतः 'मातृभाषा की उन्नति पर व्याख्यान' के रूप में आधुनिक काल के युग प्रवर्तक भारतेंदु हरिश्चंद्र द्वारा विरचित है।

प्रसंग : कवि अपनी मातृ भाषा के माध्यम से आपसी विचार विनिमय करने का एक ओर लाभ भी बताते हैं।

व्याख्या : भारतेंदु के अनुसार अपनी भाषा में वार्तालाप करने से और उसका प्रयोग सूचना और ज्ञान के प्रचार प्रसार के लिए करने से एक लाभ यह होगा कि सब आपकी बातों को सुनेंगे। यही नहीं जो भी सुनेगा वह उस बात को उसी अर्थ में ग्रहण भी करेगा। किसी प्रकार की कोई गलतफहमी न हो सकेगी।

बोध प्रश्न

- अपनी भाषा में बातचीत करने का एक दूसरा लाभ यहाँ क्या बताया गया है?

तेहि सुनि पावै लाभ सब, बात सुनाई जो कोय।
यह गुन भाषा और महं, कबहुँ नाहीं होय।।

शब्दार्थ : तेहि = इसको। पावै= प्राप्त करते हैं। महं = में। कबहुँ = कभी भी। होय = होगा।

संदर्भ : प्रस्तुत दोहा 'मातृभाषा प्रेम' शीर्षक से संकलित और मूलतः 'मातृभाषा की उन्नति पर व्याख्यान' के रूप में आधुनिक काल के युग प्रवर्तक भारतेंदु हरिश्चंद्र द्वारा विरचित है।

प्रसंग : इस दोहें में भी इस बात को एक बार फिर से कहा गया है कि अपनी भाषा में आपसी विचार विमर्श करना दूसरी भाषा में कुछ कहने सुनने से अच्छा है।

व्याख्या : कवि के विचार में अपनी भाषा के प्रयोग से सभी को लाभ होता है। सभी बात को सही सही सुन समझ लेते हैं। यह गुण किसी ओर भाषा में कभी न होगा। कहने का अर्थ है कि अन्य भाषा प्रयोग से सबको एक साथ वह लाभ प्राप्त नहीं कराया जा सकता। यह कभी नहीं हो सकता कि अपनी भाषा प्रयोग के मुक़ाबले दूसरी भाषा में वह लाभ हो।

बोध प्रश्न

- मातृभाषा को छोड़कर अन्य भाषा में कौनसा गुण नहीं हो सकता?

विविध कला शिक्षा अमित, ज्ञान अनेक प्रकार।

सब देसन से लै करहू, भाषा माहि प्रचार।।

शब्दार्थ : अमित = बेहद, अत्यधिक। देसन = देशों में। माहि = माध्यम से।

संदर्भ : प्रस्तुत दोहा 'मातृभाषा प्रेम' शीर्षक से संकलित और मूलतः 'मातृभाषा की उन्नति पर व्याख्यान' के रूप में आधुनिक काल के युग प्रवर्तक भारतेंदु हरिश्चंद्र द्वारा विरचित है।

प्रसंग : इस दोहे में भारतेंदु अपनी भाषा के महत्व को समझाने के बाद उसके माध्यम से दूसरी भाषाओं के ज्ञान के प्रसार के महत्व को बताते हैं।

व्याख्या : विश्व में अनेक भाषाएँ हैं। अनेक भाषाओं में विज्ञान, कला, शिक्षा आदि के विविध क्षेत्रों में बहुत सी ज्ञानवर्धक बातें भरी पड़ी हैं। हमें अपनी भाषा की उन्नति के लिए सब देशों की सब भाषाओं से उस ज्ञान को लेकर अपने लोगों में अपनी भाषा के द्वारा उसका प्रचार करना चाहिए। यहाँ कवि अनुवाद के महत्व को स्वीकार करते हुए अपनी भाषा की उन्नति के लिए उसके उपयोग को सुनिश्चित करना चाहता है।

बोध प्रश्न

- सब देशों से क्या और किस प्रकार लेना चाहिए?

भारत में सब भिन्न अति, ताहीं सों उत्पात।

विविध देस मतहू विविध, भाषा विविध लखात।

शब्दार्थ : अति = बहुत। ताहीं= तभी। सों = तो। उत्पात = विघ्न, बाधा। मतहू= मत, विचार-

धाराएँ, लखात = देखना

संदर्भ : प्रस्तुत दोहा 'मातृभाषा प्रेम' शीर्षक से संकलित और मूलतः 'मातृभाषा की उन्नति पर व्याख्यान' के रूप में आधुनिक काल के युग प्रवर्तक भारतेंदु हरिश्चंद्र द्वारा विरचित है।

प्रसंग : कवि यहाँ भारत की भिन्नता और विविधता के संदर्भ में अनेक भाषाओं की भूमिका का विश्लेषण करते हैं।

व्याख्या : कवि भारतेंदु के अनुसार भारत में भाषाई एकता के मार्ग में अनेक बाधाएँ हैं। हमारे देश में सब कुछ अलग अलग और भिन्न-भिन्न है और शायद यह भी झगड़े की जड़ प्रतीत होता है। यहाँ इतने मत, संप्रदाय, विचारधाराएँ और राज्य तो हैं ही, भाषाएँ और बोलियाँ भी अनेक देखी जाती हैं। इस भिन्नता के कारण हिंदी की उन्नति में बाधा आ जाती है।

बोध प्रश्न

- 'उत्पात' शब्द का यहाँ प्रयोग करके कवि किस ओर संकेत कर रहा है?

सब मिल तासों छांड़ि कै, दूजे और उपाय।
उन्नति भाषा की करहु, अहो भ्रातगन आय।।

शब्दार्थ : तासों = उनको (भिन्नताओं को)। छांड़ि= छोड़ कर। दूजे = दूसरा। अहो = अरे!

संदर्भ : प्रस्तुत दोहा 'मातृभाषा प्रेम' शीर्षक से संकलित और मूलतः 'मातृभाषा की उन्नति पर व्याख्यान' के रूप में आधुनिक काल के युग प्रवर्तक भारतेंदु हरिश्चंद्र द्वारा विरचित है।

प्रसंग : इस दोहे में कवि आपसी सद्भाव और मेलमिलाप के द्वारा अपनी भाषा (हिंदी) की उन्नति में लग जाने को कहता है।

व्याख्या : भारतेंदु जी कहते हैं कि हम सब भारतवासियों को प्रांत, भाषा, पंथ, मत, संप्रदाय आदि की भिन्नता को छोड़कर या त्यागकर भारतवर्ष की उन्नति के लिए दूसरा एक अचूक उपाय करना चाहिए। सभी भाइयों और बहनों को एक साथ मिलकर अपनी भाषा हिंदी की उन्नति करनी चाहिए।

बोध प्रश्न

- सब कुछ छोड़कर सबसे पहले क्या करना चाहिए और कैसे?

4.3.4 समीक्षात्मक अध्ययन

यह कथन अब आपको मुँह जबानी याद ही हो गया होगा कि 1877 में 'हिंदी वर्धिनी सभा' में भारतेंदु हरिश्चंद्र ने हिंदी के संबंध में एक काव्यात्मक व्याख्यान दिया था। इसमें कवि

का निज-भाषा प्रेम छलक-छलक पड़ता है। उनका मत है कि आप संस्कृत, फारसी, अरबी और अंग्रेज़ी आदि देशी विदेशी भाषाओं के चाहे कितने ही बड़े विद्वान क्यों न हों, परंतु अपनी भाषा के ज्ञान के बिना आपका यह ज्ञान व्यर्थ है। भारतेंदु स्वयं बहुभाषाविद थे। वे हिंदी के अतिरिक्त कई अन्य भाषाएँ भी जानते थे। उन्होंने संस्कृत, बंगला और अंग्रेज़ी से अनुवाद किए। उर्दू में भी लिखा। किंतु अपने जातीय गौरव, धार्मिक अस्मिता, सामाजिक महत्ता और ऐतिहासिक आवश्यकता के कारण वे हिंदी को निज भाषा के रूप में अंगीकार कर प्रेरणास्पद बने।

भारतेंदु के निज भाषा प्रेम में कोई धार्मिक संकीर्णता नहीं है। उन्होने निजी स्वार्थ की तुलना में देश, धर्म और समाज के हित को अधिक महत्व दिया। हिंदी भाषा और नागरी लिपि के विकास, प्रचार और प्रसार को भारतीयों के उत्थान और उन्नति की पहली शर्त माना। बलिया में दिये गए व्याख्यान 'भारतवर्ष की उन्नति कैसे हो सकती है' (1884) को एक बार ही पढ़ने से स्पष्ट हो जाता है कि भारतेंदु में स्वदेशी की भावना और राष्ट्र की धर्मनिरपेक्ष परिकल्पना अपने समय से बहुत आगे थी। वे मानो आधुनिक भारत के संविधान की प्रस्तावना को बहुत पहले से पूर्वाशित करते दिखाई देते हैं। वे कहते हैं, 'परदेसी वस्तु और परदेसी भाषा का भरोसा मत करो। अपने देश में, अपनी भाषा में उन्नति करो।' हंटर कमीशन के समक्ष अपनी गवाही में भी आपने मातृभाषा हिंदी का पक्ष प्रस्तुत किया था।

यहाँ उनका तर्क यह है कि प्रत्येक जाति अपनी ही भाषा को छोड़कर कभी किसी अन्य अधिक पूर्ण भाषा को नहीं अपनाती। अंग्रेजी में उच्चारण आदि के अनेक प्रकार के दोष हैं, पर अंग्रेज़ जाति ने कभी किसी अन्य अधिक पूर्ण भाषा को नहीं अपनाया। बल्कि वे अनेक देशों की भाषाओं के शब्द और ज्ञान को अपनी भाषा को समृद्ध बनाने के लिए प्रयोग करते हैं। भारतेंदु का मत है कि जब अपने समर्थकों की शक्ति से एक अपूर्ण भाषा इतनी व्यापक बन सकती है तो क्या एक वैज्ञानिक और पूर्ण भाषा इस स्थिति को प्राप्त नहीं कर सकती। हिंदी की महत्ता और अँग्रेजी तथा उर्दू के समक्ष तत्कालीन हिंदी की चिंताजनक स्थिति और इसकी उन्नति को सब उन्नति का मूल मानते हुए भविष्य-दृष्टा की तरह अपने इस सुचिंतित व्यक्तित्व में वे देशवासियों को हिंदी के बहाने निज भाषा के उत्थान के लिए प्रेरणा देते हैं।

भारतेंदु ने एक ओर तो संस्कृत और फारसी भाषा की जटिलता की ओर ध्यान आकृष्ट किया दूसरी ओर उर्दू और हिंदी के प्रश्न को भी विचारार्थ प्रस्तुत किया। इस प्रस्तुतीकरण में किसी भी भाषा के प्रति कोई दुराग्रह या बैर भाव न था। वे न तो अंग्रेजी के महत्व को नकारते हैं

और न बहुभाषा के ज्ञान को व्यर्थ समझते हैं। उन्होंने यह अवश्य बल देकर कहा कि अपनी भाषा के संस्कारों के बिना कोई चाहे कितना भी बहुभाषाविद हो जाए परंतु वह अधूरा ही रहेगा। उन्होंने उदाहरण देकर यह भी कहा कि विदेशियों की दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति का रहस्य यही है कि वे अपनी भाषा में ज्ञान-विज्ञान व साहित्य का संग्रह और विकास करते हैं। भारतेंदु ने यह भी बता दिया कि संसार का विविध ज्ञान जहाँ से भी मिले उसे अनुवाद के माध्यम से अपनी भाषा में लाना चाहिए। अपनी भाषा को भी पूरी कोशिश करके संसार भर में फैलाना चाहिए। इसके लिए हमें आपसी वैर विरोध छोड़कर मिल जुलकर अनेक माध्यमों से अपनी भाषा के प्रचार द्वारा उसकी उन्नति करनी चाहिए। हिंदी से और हिंदी में अनुवाद और पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन, सृजनात्मक लेखन और ज्ञान विज्ञान का निज भाषा के माध्यम से पठन-पाठन आदि भारतेंदु के लिए निज भाषा उन्नति के साधन हैं।

‘हिंदी साहित्य का इतिहास’ के लेखक आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनेक निबंध ‘चिंतामणि’ (1939) पुस्तक में संग्रह किए गए हैं। इनमें से एक निबंध का शीर्षक है - भारतेंदु हरिश्चंद्र। इसे आपको अवश्य पढ़ना चाहिए। ‘हिंदी गद्य साहित्य के स्वरूप प्रतिष्ठापक’ और ‘वर्तमान साहित्य परंपरा के प्रवर्तक’ (शुक्ल जी के शब्द) के रूप में भारतेंदु हिंदी भाषा को परिष्कृत, परिमार्जित और परिनिष्ठित करने के लिए विविध प्रकार से जुट पड़े थे। वे हिंदी की स्वतंत्र सत्ता को स्थापित करना चाहते थे। उन्होंने हमारे जीवन के साथ हमारे साहित्य को फिर से लगा दिया। देशभक्ति को कविता का विषय बनाया। नीलदेवी, भारत दुर्दशा आदि नाटकों में संवाद के रूप में जो कविताएँ भारतेंदु के लिखीं उनमें अतीत का गौरव गान, वर्तमान के प्रति रोष, भविष्य की चिंता आदि भरे पड़े हैं। स्वदेशाभिमान, स्वजाति-प्रेम, समाज-सुधार आदि भावनाओं को अपनी रचनाओं में गूँथा। उन्होंने अपनी कविताओं में नए नए भाव तो भरे किंतु उसके स्वरूप को परंपरानुसार ही रखा। प्रचलित दोहा छंद का प्रयोग करते हुए और भाषा को ब्रज ही रखते हुए भारतेंदु उनमें ‘निज भाषा’ के प्रति प्रेम के भाव भर देते हैं।

बोध प्रश्न

- भारतेंदु का निज भाषा प्रेम कैसा था?
- भारतीयों के उत्थान और उन्नति की पहली शर्त के रूप में किसे माना गया?

विवेचनात्मक टिप्पणी

प्रिय छात्रो! भारतेंदु हरिश्चंद्र का भाषा संबंधी दृष्टिकोण बहुत स्पष्ट और उदार था। उनके

समय में एक ओर तो यह विवाद चल रहा था कि हिंदी साहित्य की भाषा का स्वरूप क्या हो - ब्रज भाषा अथवा खड़ी बोली। उन्होंने यह अनुभव किया कि पत्रकारिता जैसे नए माध्यम द्वारा हिंदी साहित्य को यदि अधिक व्यापक पाठक समूह तक पहुँचना है, तो ब्रज भाषा की तुलना में खड़ी बोली अधिक उपयुक्त होगी। इसलिए उन्होंने गद्य के लिए खड़ी बोली की वकालत की। आगे चलकर पद्य के लिए भी खड़ी बोली ही स्वीकार कर ली गई। दूसरा विवाद यह था कि हिंदी भाषा का स्वरूप कैसा हो - संस्कृत निष्ठ या अरबी-फारसी निष्ठ। भारतेंदु ने इन दोनों ही स्वरूपों को अतिवादी माना और लोक प्रचलित हिंदी को साहित्य की भाषा बनाने पर ज़ोर दिया। कहना न होगा कि आगे चलकर प्रेमचंद और महात्मा गांधी ने इसी भाषा रूप को अपनाया। एक तीसरा विवाद और था जो इन दोनों विवादों की तुलना में विकट था। अंग्रेजी और भारतीय भाषा के बीच चुनाव का विवाद। भारतेंदु हरिश्चंद्र बड़ी सीमा तक इस बात के पक्षधर तो थे कि सभी भारतीयों को आधुनिक शिक्षा और ज्ञान-विज्ञान से परिचित होना चाहिए। लेकिन इसके लिए अंग्रेजी भाषा को माध्यम बनाना उन्हें उचित नहीं लगता था। इसीलिए उन्होंने 'निज भाषा' के रूप में अपनी-अपनी मातृभाषाएँ अपनाने का संदेश दिया। वे मानते थे कि भले ही कोई व्यक्ति या समाज अंग्रेजी के माध्यम से अनेक विद्याओं में प्रवीण हो जाए, लेकिन यदि वह अपनी भाषा से अपरिचित है तो उसकी उन्नति संभव नहीं। उन्होंने अपने इस संदेश द्वारा भारतीयों को भाषागत हीनता की ग्रंथि से मुक्त होने में सहायता की। उन्होंने समझाया कि निज भाषा के ज्ञान के बिना आप हीन के हीन ही रह जाते हैं।

हिंदी साहित्य के इतिहास में भारतेंदु हरिश्चंद्र को युग प्रवर्तक माने जाने का एक बड़ा कारण उनकी भाषा संबंधी क्रांतिकारी चेतना भी है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने माना है कि हिंदी साहित्य में भाषा का निखरा हुआ शिष्ट सामान्य रूप भारतेंदु की कला के साथ ही प्रकट हुआ। उनके प्रभाव से उसका काल के सब लेखकों ने अपनी भाषा की प्रकृति को अच्छी तरह परख कर युग के अनुरूप नया मुहावरा गढ़ा। यथा -

> "हरिश्चंद्र काल के सब लेखकों में अपनी भाषा की प्रकृति की पूरी परख थी। संस्कृत के ऐसे ही शब्दों और रूपों का व्यवहार वे करते थे जो शिष्ट समाज के बीच प्रचलित चले आते हैं। जिन शब्दों या उनके जिन रूपों से केवल संस्कृत भाषी ही प्रचलित होते हैं और जो भाषा के प्रवाह के साथ ठीक चलते नहीं उनका प्रयोग वे बहुत औचट में पड़कर ही करते थे। ... सारांश यह कि उस काल में हिंदी

का शुद्ध साहित्य-उपयोगी रूप ही नहीं, व्यवहार-उपयोगी रूप भी निखरा। (हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ.308)

4.4 पाठ सार

उपर्युक्त संकलित दोहों के द्वारा भारतेंदु हरिश्चंद्र के निज भाषा प्रेम की बानगी मिलती है। यहाँ निज भाषा से तात्पर्य हिंदी भाषा से है। हिंदी, हिंद-देशवासी और हिंदुस्तान के प्रति भारतेंदु का प्रेम जितना प्रबल है उतनी ही विरक्ति उन्हें विदेशी भाषा अंग्रेजी से है। भारतेंदु का स्वदेश प्रेम यही है। उनका मानना है कि निज भाषा के प्रचार प्रसार के द्वारा ही हमारा पूर्ण विकास संभव है। उन्होंने निज भाषा हिंदी की उन्नति करके अपने देश भारतवर्ष की सर्वांगीण उन्नति करने के लिए अपने देशवासियों का आह्वान किया है। उनका मानना था कि किसी देश या जाति की समग्र प्रगति उस देश या जाति की अपनी भाषा की उन्नति में निहित होती है। वे इसके लिए अंग्रेजों और उनकी भाषा अँग्रेजी को इसका प्रमाण मानकर प्रस्तुत करते हैं।

अंग्रेज़ जाति ने अपनी भाषा की उन्नति करके ही अपने साम्राज्य को विश्व भर में फैलाया। अपनी भाषा की सम्यक जानकारी और उसके बहुविध प्रयोग के द्वारा ही हमारे सब दुख दूर होंगे। समस्त ज्ञान जब अपनी भाषा के माध्यम से उपलब्ध होता है तो देशवासियों के मन की पीड़ा तो दूर होती ही है उनके जीवन का अंधकार भी ज्ञान के प्रकाश से मिट जाता है। इससे भाव और चिंतन की कुछ ऐसी एकता स्थापित होती है कि अन्य लोग भी प्रेरणा प्राप्त करने लगते हैं। इसलिए अपनी भाषा की उन्नति की दिशा में प्रयत्न करना हरेक नागरिक का पावन कर्तव्य है।

आओ, अपनी भाषा की उन्नति में लगें। इसे राजकाज की भाषा बनाएँ। अपनी भाषा में हर तरह के अनुसंधान करें। आपस का बैर विरोध छोड़कर एक प्राण हो जाएँ। सभी तत्पर होकर भारतमाता की आदर्श संतान बनें। कब तक हम दुख सहते रहेंगे। विदेशी भाषा के गुलाम बने रहेंगे। अब न कोरे ज्ञान से काम चलेगा और न आराम फरमाने से। बुद्धि, विज्ञान और समृद्धि से पीछे रहने का कारण हमारा अज्ञान है। आपस के वैर भाव को भुलाकर निज भाषा की उन्नति लक्ष्य हो। देश के जीवन में सवेरा तभी होगा जब मिलकर हम इस लक्ष्य को प्राप्त करेंगे।

4.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. भारतेंदु हरिश्चंद्र ने भारत की भाषा समस्या को गहराई से समझा था।
2. भारतेंदु की मान्यता है कि कोई भी समाज तभी उन्नति कर सकता है जब वह अपने दैनिक कार्यों से लेकर ज्ञान-विज्ञान तक सारे प्रयोजनों के लिए अपनी भाषा का व्यवहार करे।
3. भारतेंदु ने भारतीयों की दीनता और पराधीनता को दूर करने के लिए निज भाषा द्वारा आत्मगौरव का संदेश दिया।
4. भारतेंदु अंग्रेजी और पाश्चात्य ज्ञान के विरोधी नहीं थे। परंतु वे अवश्य चाहते थे कि राष्ट्रीय स्वाभिमान के प्रतीक के रूप में हर भारतीय को अपनी भाषा में अवश्य प्रवीण होना चाहिए।

4.6 शब्द संपदा

1. अनुनय	= विनय, विनती
2. आकांक्षा	= इच्छा
3. क्षोभ	= बहुत दुख, व्याकुलता
4. निधि	= खजाना, संपत्ति
5. पराकाष्ठा	= चरम सीम
6. पुरोधा	= प्रमुख
7. प्रतिपाद्य	= किसी बात को साबित करना (कविता का प्रतिपाद्य का अर्थ है कि उस कविता के माध्यम से कवि ने किस बात पर किस प्रकार से बल दिया है और वास्तव में क्या कहना चाहा है।)
8. प्रतिष्ठापक	= प्रतिष्ठा करने वाला, संस्थापक
9. मनीषा	= बुद्धि
10. विरक्ति	= किसी वस्तु या व्यक्ति में रुचि न रह जाना
11. सर्वांगीण	= सभी अंगों में व्याप्त होने वाला, पूर्ण

4.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. भारतेंदु के मत में अंग्रेज़ी या कोई अन्य भाषा से हिंदी भाषा क्यों श्रेष्ठ है?
2. भारतेंदु के मत के आधार पर मातृ भाषा की उपयोगिता पर विस्तार से चर्चा कीजिए।
3. भारतेंदु के 'मातृभाषा प्रेम' की उनके द्वारा लिखित दोहों के आधार पर चर्चा कीजिए।
4. भारतेंदु रचित 'मातृभाषा-प्रेम' का प्रतिपाद्य स्पष्ट कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. संस्कृत और हिंदी भाषा में क्या अंतर है?
2. अपनी भाषा के ज्ञान के बिना क्या होता है?
3. मूढ़ता का शोक क्या है और इसे कैसे मिटाया जा सकता है?
4. मातृभाषा की उन्नति कैसे हो सकती है?

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए।

1. भारतेंदु किस काल या युग के कवि नहीं हैं - ( )
   (अ) भक्ति काल (आ) भारतेंदु युग (इ) आधुनिक काल (ई) आदि काल
2. वियोग में उपालंभ का अर्थ है - ( )
   (अ) दुख (आ) शिकायत (इ) अशिष्ट व्यवहार (ई) उपदेश
3. 'भारतेंदु हरिश्चंद्र' निबंध किसकी रचना है? ( )
   (अ) हेमंत शर्मा (आ) ब्रजरत्नदास (इ) रामचंद्र शुक्ल (ई) रामविलास शर्मा
4. भारतेंदु के द्वारा रचित 'मातृभाषा प्रेम' के दोहों की भाषा क्या है? ( )
   (अ) ब्रजभाषा (आ) पुरानी हिंदी (इ) आधुनिक हिंदी (ई) इनमें से कोई नहीं

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. भारतेंदु के अनुसार .... की उन्नति सब उन्नति की जड़ है।

2. भारतेंदु ने हिंदी वर्धिनी सभा में .... नामक काव्यात्मक निबंध जून 1877 में पढ़ा था।

3. भारतेंदु के लिए यहाँ व्यापक अर्थ में निज भाषा का तात्पर्य .... से है।

4. दूसरी भाषाओं से अपनी भाषा में ज्ञान .... के माध्यम से लाकर प्रसारित किया जा सकता है।

III. सुमेल कीजिए।

1. हिंदी की उन्नति पर एक व्याख्यान	(अ) 1868
2. भारतवर्ष की उन्नति कैसे हो सकती है	(आ) 1877
3. भारतेंदु की मृत्यु	(इ) 1884
4. उर्दू का स्यापा	(ई) 1885

4.8 पठनीय पुस्तकें

1. भारतेंदु समग्र : सं. हेमंत शर्मा

2. चिंतामणि ('भारतेंदु हरिश्चंद्र' निबंध) : आचार्य रामचंद्र शुक्ल

3. भारतेंदु हरिश्चंद्र : ब्रजरत्न दास

इकाई 5 : अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 मूल पाठ : अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' : व्यक्तित्व एवं कृतित्व
5.3.1 जीवन परिचय
5.3.2 रचना यात्रा
5.3.3 रचनाओं का परिचय
5.3.4 हिंदी साहित्य में स्थान एवं महत्व
5.4 पाठ सार
5.5 पाठ की उपलब्धियाँ
5.6 शब्द संपदा
5.7 परीक्षार्थ प्रश्न
5.8 पठनीय पुस्तकें

5.1 प्रस्तावना

अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' को खड़ी बोली हिंदी के प्रथम महाकवि के रूप में जाना जाता है। इन्हें 'आधुनिक हिंदी के व्यास' भी कहा जाता है। कवि के साथ-साथ वे उपन्यासकार, आलोचक और इतिहासकार भी थे। महाकाव्यत्व की दृष्टि से उनका 'प्रिय प्रवास' एक सफल ग्रंथ है। गद्य के क्षेत्र में भी हरिऔध का स्थान उल्लेखनीय है। उनकी चिंताओं में लोकमंगल की भावना को देखा जा सकता है। उन्होंने हिंदी गद्य को सरलता प्रदान की। छात्रो! इस इकाई में आप अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' के व्यक्तित्व और कृतित्व से संबंधित कुछ प्रमुख बातों की जानकारी प्राप्त करेंगे।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अंतर्गत आप अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' के व्यक्तित्व और कृतित्व का अध्ययन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन से आप -

- महाकवि ‘हरिऔध’ की वैयक्तिक और साहित्यिक पृष्ठभूमि को समझ सकेंगे।
- ‘हरिऔध’ जी के कृतित्व की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- ‘हरिऔध’ जी के युगीन परिवेश को समझ सकेंगे।
- ‘हरिऔध’ जी की प्रमुख रचनाओं का संक्षिप्त परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- ‘हरिऔध’ जी की रचनाओं की प्रासंगिकता से अवगत हो सकेंगे।
- हिंदी साहित्य में ‘हरिऔध’ के स्थान और उनके महत्व को समझ सकेंगे।

5.3 मूल पाठ : अयोध्या सिंह उपाध्याय ‘हरिऔध’ : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

“भारतेंदु के पीछे और द्वितीय उत्थान के पहले ही हिंदी के लब्धप्रतिष्ठित कवि पं.अयोध्या सिंह उपाध्याय (हरिऔध) नए विषयों की ओर चल पड़े थे। खड़ी बोली के लिए उन्होंने पहले उर्दू के छंदों और ठेठ बोली को उपयुक्त समझा, क्योंकि उर्दू के छंदों में खड़ी बोली अच्छी तरह मँज चुकी थी।” (रामचंद्र शुक्ल, हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ. 412)। छात्रो! आगे हम हरिऔध के व्यक्तित्व और रचना संसार की जानकारी प्राप्त करेंगे।

5.3.1 जीवन परिचय

द्विवेदी युग के प्रमुख रचनाकारों में अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' का स्थान उल्लेखनीय है। उनका जन्म 15 अप्रैल, 1865 को आजमगढ़ में हुआ तथा 6 मार्च, 1947 को उनकी मृत्यु हुई। उनकी प्रारंभिक शिक्षा-दीक्षा निजामाबाद एवं आजमगढ़ में हुई। निजामाबाद से मिडिल स्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद काशी के क्वींस कॉलेज में अंग्रेजी पढ़ने के लिए गए, किंतु स्वास्थ्य बिगड़ने के कारण उन्हें कॉलेज छोड़ना पड़ा। अतः घर पर ही रह कर संस्कृत, उर्दू, फारसी और अंग्रेजी का अध्ययन करने लगे। 1884 में निजामाबाद के मिडिल स्कूल में अध्यापक बने।

1889 में हरिऔध जी कानूनगो बने थे; 1924 में हिंदी साहित्य सम्मेलन के प्रधान पद को सुशोभित किया था। 1932 में कानूनगो पद से अवकाश प्राप्त करने के बाद उन्होंने काशी हिंदू विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग के अवैतनिक शिक्षक के रूप में अध्यापन का कार्य किया था। इस अध्यापन कार्य से भी मुक्त होने के बाद वे अपने गाँव जाकर बस गए और साहित्य सेवा में लीन हो गए।

हरिऔध के संबंध में उमाकांत गोयल लिखते हैं कि “पुरातन संस्कृति का पुनरुद्धार, देश

के वर्तमान युवक का उचित मार्गदर्शन तथा कविता में उपदेशात्मक वृत्ति को इन्होंने आरंभ से ही अपना ध्येय रखा।" (सं. नगेंद्र, हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ. 485)।

अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' बड़े मिलनसार व्यक्ति थे। उनके इसी स्वभाव पर प्रकाश डालते हुए गिरिजादत्त शुक्ल लिखते हैं कि "छोटे से छोटे व्यक्ति भी उनसे सरलता के साथ मिल सकता है, क्योंकि वे छोटे-बड़े सभी का आदर करते हैं। किसी हिंदी-हितैषी के मिल जाने पर तो वे ऐसे प्रसन्न होते हैं जैसे कोई स्वजन या सगा मिल गया हो। अपनी शक्ति भर वे सभी की सहायता करते हैं और करना चाहते हैं।" (महाकवि हरिऔध, पृ. 29)

बोध प्रश्न

- अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' किस युग के रचनाकार थे?
- अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' का जन्म कहाँ हुआ?
- अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' का ध्येय क्या था?
- अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' के स्वाभाव को स्पष्ट कीजिए।

5.3.2 रचना यात्रा

हरिऔध जी संस्कृत, उर्दू, फारसी और अंग्रेजी के प्रतिष्ठित विद्वान थे। पहले तो उन्होंने अपनी रचनाएँ ब्रजभाषा में की लेकिन बाद में खड़ी बोली में काव्य सृजन करने लगे। खड़ीबोली के मानक रूप को स्थिर करने में उन्होंने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उन्होंने उस परिपाटी को समाप्त किया जिसके अनुसार यह माना जाता था कि काव्य के लिए अवधी और ब्रज भाषा ही उपयुक्त है। उन्होंने खड़ी बोली में महाकाव्य का सृजन करके खड़ी बोली की क्षमता को सिद्ध किया। अतः उनको 'खड़ीबोली के प्रथम महाकवि' और 'आधुनिक हिंदी के व्यास' कहा जाता है।

हरिऔध जी जब साहित्य के क्षेत्र में अवतरित हुए तब भारत पराधीनता की जंजीरों में जकड़ी हुई थी। नवजागरण की लहर दौड़ रही थी। समाज में उथल-पुथल मचा हुआ था। आर्य समाज, ब्रह्म समाज, प्रार्थना समाज, थियोसोफिकल सोसाइटी आदि भारतीय समाज में सुधार लाने का प्रयास कर रहे थे। अतः उन परिस्थितियों का प्रभाव हरिऔध पर पड़ना स्वाभाविक था। उन्होंने समय की नब्ज को पहचाना तथा तत्कालीन सामाजिक और राजनैतिक उथल-पुथल के प्रति आक्रोश अपनी रचनाओं के माध्यम से व्यक्त किया। उनका काव्य नायक जनकल्याण की भावना रखता है। उनके काव्य में लोक मंगल की भावना को देखा जा सकता है। हरिऔध कवि के साथ-साथ उपन्यासकार, नाटककार, आलोचक और बाल साहित्यकार भी थे। प्रारंभ में वे

नाटक और उपन्यास लेखन की ओर आकर्षित थे लेकिन बाद में कविता की ओर बढ़े। हरिऔध की प्रतिभा का विकास कवि के रूप में हुआ है।

उनकी प्रमुख रचनाएँ इस प्रकार हैं -

नाटक : प्रद्युम्न विजय (1893), रुक्मिणी परिणय (1894); उपन्यास - प्रेमकान्ता (1894), ठेठ हिंदी का ठाट (1899), अधखिला फूल (1907)

काव्य : रसिक रहस्य (1899), प्रेमाम्बुवारिधि (1900), प्रेम प्रपंच (1900), प्रेमाम्बु प्रश्रवण (1904), प्रेमाम्बु प्रवाह (1909), प्रेम पुष्पहार (1904), उद्बोधन (1906), काव्योपवन (1909), प्रिय प्रवास (1914), कर्मवीर (1916), ऋतु मुकुर (1917), पद्म प्रसून (1925), पद्म प्रमोद (1927), चोखे चौपदे (1932), चुभते चौपदे (1932), वैदेही वनवास (1940) और रस कलश (1940)।

आलोचना : हिंदी भाषा और साहित्य का विकास। इनके अतिरिक्त हरिऔध ने बाल साहित्य का भी सृजन किया था। उनके बाल साहित्य में बाल विभव, बाल विलास, फूल पत्ते, चन्द्र खिलौना, खेल तमाशा, उपदेश कुसुम, बाल गीतावली, चाँद सितारे आदि उल्लेखनीय हैं।

बोध प्रश्न

- खड़ीबोली के प्रथम महाकवि कौन हैं और क्यों?
- हरिऔध की कुछ काव्य कृतियों का नाम बताइए।
- हरिऔध ने किस परिपाटी को तोड़ा?

5.3.3 रचनाओं का परिचय

छात्रो! अब तक आपने अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' के जीवन और रचनाओं से संबंधित जानकारी प्राप्त कर चुके हैं। अब हम उनकी प्रमुख कृतियों का संक्षिप्त परिचय प्राप्त करेंगे जिससे उनकी काव्यागत विशेषताओं के बारे में आसानी से समझा जा सकता है।

प्रिय प्रवास (1914)

'प्रिय प्रवास' खड़ी बोली में रचित प्रथम महाकाव्य है। इसमें कृष्ण के बाल काल से लेकर मथुरा प्रवास तक की कथा है। इसके संबंध में अपनी पुस्तक 'हिंदी साहित्य के इतिहास' में रामचंद्र शुक्ल ने लिखा है कि "उक्त काव्य में श्रीकृष्ण ब्रज के रक्षक नेता के रूप में अंकित किए गए हैं। खड़ी बोली में इतना बड़ा काव्य अभी तक नहीं निकला है। यह काव्य अधिकतर भावव्यंजनात्मक और वर्णात्मक है। कृष्ण के चले जाने पर ब्रज की दशा का वर्णन बहुत अच्छा

है। विरह वेदना से क्षुब्ध वर्णावली प्रेम की अनेक अंतर्दशाओं की व्यंजना करती बहुत दूर तक चलती है।" (हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ. 413)। 'प्रिय प्रवास' पर हरिऔध को 'मंगलाप्रसाद पारितोषक' प्रदान किया गया था।

यह 17 सर्गों में रचित महाकाव्य है। प्रथम सर्ग में संध्या का चित्रण है। गोचारण कराने के बाद कृष्ण अपने सखाओं के साथ गोकुल की ओर लौट रहे हैं। कवि कहते हैं कि इस दृश्य को देखने के लिए सारा गाँव उमड़ पड़ता है। कृष्ण की बंसी सुनते ही सब काम-धाम छोड़कर दौड़ पड़ते हैं -

सकल वासर आकुल से रहे।
अखिल मानव गोकुल ग्राम के।
अब दिनांत विलोकित ही बढ़ी।
ब्रज-विभूषण दर्शन लालसा।
सुन पड़ा स्वर यों कल वेणु का
सकल ग्राम समुत्सुक हो उठा।

दूसरे सर्ग में यह घोषणा सुनाई जाती है कि कल कृष्ण मथुरा चले जाएँगे। इस सूचना से सभी ग्रामवासी व्याकुल हो जाते हैं -

कमल लोचन कृष्ण वियोग की
अशनि पात सभा यह सूचना।
परम आकुल गोकुल के लिए
अति निष्टकारी घटना हुई।

तीसरे सर्ग में नन्द बाबा और यशोदा माँ की व्याकुलता और कृष्ण की कुशलता के लिए मनौतियों का चित्रण है -

प्रमुदित मथुरा के मानवों को बना के
सकुशल रह के औ विघ्न बाधा बचा के।
निज प्रिय सुत दोनों साथ लेके सुखी हो
जिस दिन पलटेंगे गह स्वामी हमारे।

चौथे सर्ग में कृष्ण के प्रति राधा के आपार प्रेम का चित्रण है -

हृदय चरण में तो मैं चढ़ा ही चुकी हूँ।

सविधि वर्ण की थी कामना और मेरी।

पाँचवे सर्ग में माता यशोदा का विरह चित्रण है। वह कहती हैं -

अहह दिवस ऐसा हाय! क्यों आज आया।
निज प्रियसुत से जो मैं जुदा हो रही हूँ।
अगणित गुणवाली प्राण से नाथ प्यारी।
यह अनुपम थाती मैं तुम्हें सौंपती हूँ।

छठे सर्ग में गोकुल वासियों का विरह चित्रण है। इस सर्ग में राधा की विरह वेदना का मार्मिक चित्रण है। श्री कृष्ण की विरह वेदना से दग्ध राधा की मनोदशा का वर्णन करते हुए कवि कहते हैं कि राधा रूपी चातकी के लिए श्रीकृष्ण रूपी घनश्याम ही जीवन का आधार थे और वह उनके आने का मार्ग देख रही थी -

नाना चिंता सहित दिन को राधिका थी बिताती।
आंखों को थी सजल रखती उन्मना थी बिताती।
शोभा वाले जलद वपु की, हो रही चातकी थी।
उत्कंठा थी परम प्रबला, वेदना वर्द्धिता थी॥

राधा पवन को दूत बनाकर अपनी विरह वेदना व्यक्त करती है -

तू जाती है सकल थल ही, वेगवाली बड़ी है।
है सीधी तरल हृदया, ताप उन्मूलती है।
मैं हूँ जी में बहुत रखती, वायु तेरा भरोसा।
जैसे हो ऐ भगिनी, बिगड़ी बात मेरी बना दे॥

सातवें सर्ग में यह दिखाया गया है कि जब बाबा नन्द मथुरा से अकेले गोकुल लौट आते हैं तो माता यशोदा अपने लाल के बारे में उत्सुकता वश तरह-तरह के प्रश्न करती हैं -

प्रिय पति वह मेरा प्राण प्यारा कहाँ है?
दुख जलधि निमग्न का सहारा कहाँ है?
अब तक जिसको मैं देख के जी सकी हूँ?
वह हृदय हमारा नेत्र तारा कहाँ है?

आठवें सर्ग में यह दिखाया गया है कि गोकुलवासी कृष्ण के साथ बिताए हुए दिनों को याद कर रहे हैं। नवें सर्ग में श्रीकृष्ण गोकुल वासियों को याद करते हुए दिखाई देते हैं। दसवें सर्ग

में जब उद्धव गोकुल आता है तो यशोदा माँ और नन्द बाबा अपने लाल के बारे में पूछते हैं -

मेरे-प्यारे सकुशल सुखी और सानंद तो है
कोई चिंता मलिन उनको तो नहिं है बनाती?

ग्यारहवें सर्ग में उद्धव गोकुल वासियों को सांत्वना और उपदेश देते हुए दिखाई देते हैं। इसी सर्ग में कालीय मर्दन घटना का भी चित्रण है। इस सर्ग में कवि ने कृष्ण के लोकोपकारक रूप का चित्रण किया है -

अतः करूँगा यह कार्य स्वयं
स्व-हस्त में दुर्लभ प्राण को लिए
****
प्रवाह होते तक शेष-श्वास के
स-शकत होते तक एक लोभ के
किया करूँगा हित सर्व-भूत का

बारहवें सर्ग में भी कृष्ण के लोक कल्याणकारक रूप का चित्रण है। तेरहवें सर्ग में कृष्ण का समाज सेवक और जन नायक रूप व्यंजित है। चौदहवें सर्ग गोपि-उद्धव संवाद पर आधारित है। पंद्रहवें सर्ग में गोपियों की विरह वेदना का चित्रण है। सोलहवें सर्ग में राधा-उद्धव संवाद है। उद्धव राधा के प्रेम को व्यर्थ साबित करने में लग जाता है लेकिन राधा अपने प्रेम की महानता एवं उपयोगिता के बारे में बताती है। अंत में राधा की ही जीत होती है। सत्रहवें सर्ग में कवि ने यह दर्शाया है कि वैयक्तिक प्रेम से ऊंचा है वैश्विक प्रेम।

'प्रिय प्रवास' में श्रीकृष्ण के मानवीय स्वरूप की प्रतिष्ठा करके हरिऔध ने अपने आधुनिक दृष्टिकोण का परिचय दिया है। उनके श्रीकृष्ण 'रसराज' या 'नटनागर' होने की अपेक्षा लोकरक्षक नेता है। इसके माध्यम से हरिऔध यह निरूपित करना चाहते हैं कि मानवीय गुणों से युक्त व्यक्ति ही देश की रक्षा कर सकता है।

बोध प्रश्न

- किस रचना पर हरिऔध को मंगलाप्रसाद पारितोषक' प्राप्त हुआ?
- 'प्रिय प्रवास' के किस सर्ग में कृष्ण के लोकोपकारक रूप व्यंजित है?
- 'प्रिय प्रवास' का ग्यारहवाँ सर्ग क्यों महत्वपूर्ण है?
- 'पवन दूत' का प्रसंग किस सर्ग में है?

- सोलहवें सर्ग में कवि ने किस विषय की सार्थकता के बारे में बताया है?
- 'प्रिय प्रवास' में कृष्ण का कौन-सा रूप व्यंजित है?

पद्म प्रसून (1925)

इस संग्रह की अधिकांश कविताओं में सामाजिक, धार्मिक, नैतिक आदि अवस्थाओं के शब्द चित्र हैं। हरिऔध 'परिवर्तन' शीर्षक कविता में यह संकेत करते हैं कि समय के साथ चलना चाहिए -

परिवर्तन है प्रकृति नियम का नियमन कारक।
प्रवाहमान जीवन प्रवाह का पाठ बिस्तारक।
परिवर्तन के समय जो न परिवर्तन होगा।
साथ रहेगा अहित, हित न उसका हित होगा॥

हरिऔध की कविताओं में देशभक्ति की भावना को यत्र-तत्र देखा जा सकता है। यथा -

न जिसने घर संभाला देश को क्या वह संभालेगा।
न जो मक्खी उड़ा पाता है वह पंखा झलेगा क्या॥ (कुछ उलटी सीधी बातें)
बालक ही है देश जाति का सच्चा-संबल।
वही जाति-जीवन-तरु का है परम मधुर फल॥ (अविनय)

मानवता के संबंध में हरिऔध के विचार देखें -

हिंसा-प्रतिहिंसा प्रवंचना पामरता से रह कर दूर।
देश-जाति-हित व्रत-रत रह वह बनता है पातक-तम-सूर॥
मुक्ति से अधिक विभुवर की शुचि भक्ति को करेगा वह प्यार।
प्राणिमात्र का सुख-साधन ही होता है उसका संसार॥
धरा-धाम में धर्म-प्राण ही जान सके हैं क्या है धर्म।
वह मानव-ही-मानव है जो समझ सके मानवता-मर्म॥

बोध प्रश्न

- मानवता के संबंध में हरिऔध के विचार को स्पष्ट करें।

वैदेही वनवास (1940)

यह 1940 में प्रकाशित खंड काव्य है। इसमें कुल 18 सर्ग हैं। इस काव्य का प्रधान रस करुण है। इसकी कथावस्तु का आधार है रामकथा। विजयेंद्र स्नातक का कथन है कि 'वैदेही

वनवास' में हरिऔध ने "सीता के गौरव की रक्षा की है, इसलिए यह प्रसंग उत्साह, आनंद, गौरव और सद्भावना से पूर्ण है।" (द्विवेदी युगीन हिंदी नवरत्न, पृ. 44)। इसमें राम के जीवन के उत्तरार्द्ध चरित्र का वर्णन है। इसमें यथासंभव बोचाल की भाषा का प्रयोग किया गया है। सरल और सुबोध शैली में कवि कहते हैं -

मन का नियमन प्रति-पालन शुचि-नीति का।
प्रजा-पुंज-अनुरंजन भव-हित-साधना॥
कौन कर सका भू में रघुकुल-तिलक सा।
आत्म-सुखों को त्याग लोक-अराधना॥

बोध प्रश्न

- 'वैदेही वनवास' की कथा का आधार क्या है ?

कर्मवीर (1916)

इस कविता में कवि ने श्रम सिद्धांत के महत्व को दर्शाया है। उनके अनुसार वे लोग बहुत ही प्रशंसनीय हैं जो मेहनत करते हैं। भाग्य के भरोसे बैठने वालों की अपेक्षा वे लोग अभिनंदनीय हैं जो परिश्रम करके लक्ष्य को प्राप्त करते हैं। सच्चे कर्मवीर मुश्किलों से रस्ता निकालकर मंजिल तक पहुँच जाते हैं -

देख कर बाधा विविध, बहु विघ्न घबराते नहीं।
रह भरोसे भाग के दुख भोग पछताते नहीं।
काम कितना ही कठिन हो किन्तु उकताते नहीं।
भीड़ में चंचल बने जो वीर दिखलाते नहीं।
हो गये एक आन में उनके बुरे दिन भी भले।
सब जगह सब काल में वे ही मिले फूले फले

बोध प्रश्न

- कर्मवीर का क्या कर्तव्य है ?

रस कलश (1940)

यह ब्रजभाषा काव्य संग्रह है। इसमें उनकी आरंभिक स्फुट कविताएँ संकलित हैं। ये कविताएँ शृंगारिक हैं तथा काव्य निरूपण की दृष्टि से लिखी गई हैं।

ठेठ हिंदी का ठाट (1899)

इस उपन्यास की कहानी बिल्कुल सीधी सादी है। देवबाला की शादी देवनंदन के साथ सामाजिक कुरीति के कारण नहीं हो पाती। देबाला का विवाह रमाकांत से होता है। वह बुरी आदतों का शिकार हो जाता है और पत्नी तथा बच्चे को छोड़कर चला जाता है।

देवनंदन साधु वेष धारण कर लेता है जो "सांसारिक विषयों के प्रति विराग का सूचक है।" उसका प्रेम त्यागमय है। इसका परिचय उस वक्त मिलता है जब देवबाला कष्ट में पड़ती है। वह देवबाला के बच्चे की बीमारी का इलाज भी करता है और रमाकांत को ढूँढ़कर देवबाला के पास ले आता है। देवनंदन के माध्यम से हरिऔध यह टिप्पणी करते हैं कि "देस की बुरी रीतियों, झूठे घमंडों से कितने फूल जो ऐसे ही बिना बेले कुम्हला जाते हैं, कितनी लहलही बेलियाँ जो नुच कर धूल में मिल जाती हैं, नहीं कहा जा सकता राम! क्या तुम यही चाहते हो, यह देस बुरी रीतियों के बस में पड़ ऐसे ही दिन दिन मिट्टी में मिलता रहे?"

इस उपन्यास के माध्यम से हरिऔध ने एक ओर प्रेम की स्वाभाविकता को दर्शाया है वहीं दूसरी ओर नैतिकता की ओर पाठकों का ध्यान आकर्षित किया है।

बोध प्रश्न

- 'ठेठ हिंदी का ठाट' के माध्यम से हरिऔध ने पाठकों को क्या समझाने का प्रयास किया है?

अधखिला फूल (1907)

इस उपन्यास की नायिका है देवहूती और नायक है देवस्वरूप। इस उपन्यास में हरिऔध देवस्वरूप के माध्यम से पाखंडी साधुओं पर टिप्पणी करते हैं - "आज कल साधु होना भेड़ियाघसान हो गया है - जिसको देखो वही साधु बना फिरता है, पर इस भाँत साधु होने से साधु न होना ही अच्छा है।" इस तरह झूठ के आवरण में लोगों को ठगने से अच्छा है उनके लिए कुछ कर दिखाना। इस उपन्यास में देवस्वरूप लोगों का भला करता है - "देवस्वरूप बहुत दिन तक इस धरती पर रहे, उनके हाथों देस का, देस के लोगों का बहुत कुछ भला हुआ, देवहूती भी उनकी छाया थी।"

बोध प्रश्न

- 'अधखिला फूल' उपन्यास के माध्यम से हरिऔध क्या कहना चाहते हैं?

5.3.4 हिंदी साहित्य में स्थान एवं महत्व

अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' कवि सम्राट और साहित्य वाचस्पति जैसे उपाधियों

से सम्मानित हुए। इनकी साहित्यिक सेवाओं का ऐतिहासिक महत्व है। निःसंदेह ये हिंदी साहित्य की एक महान विभूति हैं। हरिऔध के संबंध में सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' का यह कथन उल्लेखनीय है - "खड़ी बोली के उस काल के कवियों में पं. अयोध्या सिंह 'हरिऔध' की काव्य-साधना विशेष महत्व की ठहरती है। सहृदयता और व्यक्तित्व के विचार से भी ये अग्रगण्य हैं। इनके समस्त पद औरों की तुलना में अधिक मधुर हैं, जो इनकी कवित्त शक्ति के परिचायक है।"

हरिऔध की काव्यगत विशेषताओं को भी देखना उचित होगा। उन्होंने विविध विषयों पर काव्य रचना की है। राधा-कृष्ण, सीता-राम से संबंधित विषयों के साथ-साथ उन्होंने आधुनिक समस्याओं को भी अपनी रचनाओं में सम्मिलित किया है। प्राचीन और आधुनिक भावों का सम्मिश्रण उनकी रचनाओं में देखा जा सकता है।

'प्रिय प्रवास' में उन्होंने यशोदा माँ का करुण चित्र इस प्रकार खींचा है कि पाठक का हृदय द्रवित हो उठता है। यथा -

प्रिय प्रति वह मेरा प्राण प्यारा कहाँ है?
दुःख जल निधि डूबी का सहारा कहाँ है?
लख मुख जिसका मैं आजलौं जी सकी हूँ।
वह हृदय हमारा नैन तारा कहाँ है?

वहीं 'चोखे चौपदे' में 'माँ की ममता' का हृदयस्पर्शी अंकन किया है -

प्यार माँ के समान है किस का।
है कढ़ी धार किस हृदय-तल से।
छातियों में हमें दिये किस ने।
दूध के दो भरे हुए कलसे॥

हरिऔध का प्रकृति चित्रण अद्‌भुत है। जहाँ भी अवसर मिला वहाँ उन्होंने प्रकृति का मनोरम चित्र खींचा है। संध्या का सुंदर दृश्य देखें -

दिवस का अवसान समीप था
गगन था कुछ लोहित हो चला।
तरु शिखा पर थी जब राजती,
कमलिनी-कुल-वल्लभ की प्रभा॥ (प्रिय प्रवास)

कृष्ण के वियोग में ब्रज के वृक्ष भी रोते हैं। इसका चित्रण देखें -

फूलों-पत्तों सकल पर हैं वादि-बूँदें लखातीं,
रोते हैं या विपट सब यों आँसुओं की दिखा के।

'अधखिला फूल' उपन्यास में अंकित प्रकृति का चित्र देखें - "बैसाख का महीना, दो घड़ी रात बीत गई है। चमकीले तारे चारों ओर आकास में फैले हुए हैं, दूज का बाल सा पतला चाँद, पच्छिम ओर डूब रहा है, अंधियाला बढ़ता आता है, ज्यों ज्यों अंधियाला बढ़ता है, तारों की चमक बढ़ती जान पड़ती है। उनमें जोत सी फूट रही है, वह कुछ हिलते भी हैं, उनमें चुपचाप कोई कोई टूट पड़ते हैं, जिससे सुनसान आकास में रह कर फुलझड़ी सी छूट जाती है।"

हरिऔध अपनी रचनाओं में सामाजिक विसंगतियों पर भी प्रहार करते हुए दिखाई देते हैं। वे अपने कृष्ण को लोक नायक के रूप में दर्शाते हैं जो समाज कल्याण के लिए तत्पर रहता है-

अपूर्व-आदर्श दिखा नरत्व का।
प्रदान की है पशु को मनुष्यता।
सिखा उन्होंने चित की समुच्चता।
बना दिया मानव गोप-वृन्द को॥ (प्रिय प्रवास, तेरहवाँ सर्ग)

समाज में चारों ओर फैली ढोंग पर प्रहार करते हुए हरिऔध कहते हैं -

ढोंग रच रच ढकोसले फ़ैला।
जब उन्होंने कि जाति घर घाले।
तब रखें पाँव फ़ूँक फ़ूँक न क्यों।
और के कान फूँकने वाले। (चुभते चौपदे)

सामाजिक बुराइयों को दूर करने के लिए हरिऔध ने हर तरह का प्रयास किया है। 'जीवन-मरण' शीर्षक कविता में वे खुलकर कहते हैं कि

झोंपड़ी किसी की फुँकती है तो भले ही फुँके
उसे क्या जो फूँक फूँक देता पर टट्टी है।
कैसे भला लोक-लाभ-लालसा लुभाये उसे
जिसने कि लूटपाट ही की पढ़ी पट्टी है।
हरिऔधा मानवता ममता न होगी उसे
पामरता प्रीति घटे होती जिसे घट्टी है।

पड़ के खटाई में न खट्टी मीठी जान सके

आज भी हमारी आँख की न खुली पट्टी है

समाज की सबसे बड़ी कमजोरी है जाति प्रथा। इसने मानवता को निगल लिया। हरिऔध छुआछूत को नहीं मानते। इस संबंध में उनका स्पष्ट विचार द्रष्टव्य है -

इन्हें हम छूते नहीं समझ अछूत,

जो हैं माने गए सदा परम पतित।

पास उनके हैं होता क्या नहीं हृदय,

वेदनाओं से वे होते क्या नहीं व्यथित?

***

आदमी हैं, आदमीयत है बहाली,

बात यह कोई कहे इतरा नहीं।

छेद छाती में अछूतों के हुए

जो अछूता जी गया छितरा नहीं।

हरिऔध समाज और लोक सेवा पर अधिक जोर देते हैं -

हो न जिसमें जाति-हित का राग कुछ,

बात वह जी में ठनी तो क्या ठनी!

हो सकी जब देश की सेवा नहीं,

तब भला हमसे बनी तो क्या बनी!

तत्कालीन समाज में वृद्ध विवाह का प्रचलन था। उस पर प्रहार करते हुए हरिऔध कहते हैं कि

हो बड़े बूढ़े न गुड़ियों को ठगे।

पाउडर मुंह पर न अपने वे मले।

ब्याह के रंगीन जामा को पहन

बेमानी का पहन जामा न लें।

अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' के संबंध में रामवृक्ष बेनीपुरी का कहना है कि "उपाध्याय जी पूरे शब्द-शिल्पी हैं। आपके एक-एक शब्द कहने-चुनाए नेप-तुले होते हैं। जहाँ आपने केवल संस्कृत की ही सरिता बहाई है, वहाँ भी - उस सरिता-स्रोत पर भी - आपकी सुंदर

शब्द-तरंग-माला अठखेलियाँ करती दीख पड़ती हैं।" (अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' रचनावली, पृ. 6)

हिंदी साहित्य के क्षेत्र में अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है। इस संबंध में नन्ददुलारे वाजपेयी का यह कथन उल्लेखनीय है - "हरिश्चंद्र के बाद हिंदी के क्षेत्र में जिन दो पुरुषों ने पदार्पण किया है उनके नाम हैं पंडित अयोध्या सिंह उपाध्याय और बाबू मैथिलीशरण गुप्त। इन दोनों का कविता-काल प्रायः एक ही है, दोनों ने हिंदी की खड़ी बोली की कविता को अपनाया और सफलतापूर्वक काव्य ग्रंथों की रचना की। दोनों ही देश-भक्त तथा जाति-भक्त आत्माएँ हैं। पर इतनी समानता होते हुए भी कविता की दृष्टि से उपाध्याय जी का स्थान गुप्त जी से ऊंचा है।" (महाकवि हरिऔध, पृ.16 से उद्धृत)। पं. लोचनप्रसाद पांडे का कथन है कि "जिस भाँति बाबू हरिश्चंद्र 'आधुनिक हिंदी साहित्य के जनक' कहलाए उसी भाँति खड़ी बोली की कविता के विषय में आपका स्थान है।" (वही, पृ. 18)।

बोध प्रश्न

- छुआछूत के संबंध में हरिऔध का विचार स्पष्ट कीजिए।
- हिंदी साहित्य में हरिऔध का क्या महत्व है?

5.4 पाठ सार

छात्रो! इस पाठ के अध्ययन से आप यह समझ ही चुके हैं कि हिंदी साहित्य के क्षेत्र में अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है। हरिऔध जहाँ तत्सम निष्ठ शब्दावली का प्रयोग करते हैं वहीं सीधी सरल शब्दों का प्रयोग भी करते हैं। जहाँ एक ओर वे 'ब्रज-विभूषण-दर्शन-लालसा' (प्रिय प्रवास) लिखते हैं वहीं दूसरी ओर यह लिखते हैं कि 'देखो लड़को, बंदर आया, एक मदारी उसको लाया।' (बंदर और मदारी)। कहने का आशय है कि हरिऔध ने हर विषय पर लिखा है। रामवृक्ष बेनीपुरी कहते हैं कि भाषा उनकी अनुचरी है। छंद, अलंकार आदि का प्रयोग हरिऔध की कविता में देखा जा सकता है। वे प्रकृति प्रेमी थे। उनकी रचनाओं में प्रकृति के मनोरम चित्रों को देखा जा सकता है। साथ ही देश प्रेम, राष्ट्र प्रेम आदि को देखा जा सकता है। अपनी काव्य कृति 'प्रिय प्रवास' के कारण हरिऔध खड़ी बोली के प्रथम महाकवि बने।

5.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' खड़ी बोली हिंदी के प्रथम महाकवि के रूप में जाने जाते हैं।
2. 'प्रिय प्रवास' खड़ी बोली का प्रथम महाकाव्य है। 'प्रिय प्रवास' पर 'हरिऔध' जी को मंगलाप्रसाद पारितोषक प्राप्त हुआ।
3. 'हरिऔध' जी कवि के साथ-साथ उपन्यासकार, आलोचक, इतिहासकार और बाल साहित्यकार भी थे।
4. उनकी रचनाओं में लोक जागरण और समाज सुधार की भावना को देखा जा सकता है।
5. उन्होंने उस परिपाटी को तोड़ा जिसके अनुसार यह माना जाता था कि काव्य के लिए अवधी और ब्रज भाषा ही उपयुक्त है।
6. उनकी रचनाओं में जहाँ एक ओर प्रकृति चित्रण है, वहीं दूसरी ओर देशप्रेम, राष्ट्रीय भावना, लोक जीवन और भारतीय संस्कृति भी समाहित है।

5.6 शब्द संपदा

1. अंतर्दशा	=	मानसिक स्थिति
2. अवैतनिक	=	बिना वेतन के
3. कानूनगो	=	राजस्व महकमे का वह क्षेत्रीय अधिकारी जो लेखपालों के कागज की जांच करता है
4. नवजागरण	=	किसी युग में विचार तथा व्यवहार के स्तर पर होने वाली नवीन चेतना या जागृति
5. परिपाटी	=	परंपरा, नियम
6. पुनरुद्धार	=	किसी नष्ट हुई टूटी-फूटी वस्तु को फिर से ठीक करना
7. प्रतिभा	=	असाधारण बुद्धि, विलक्षण बौद्धिक शक्ति
8. भावव्यंजनात्मक	=	भावबोधक, अच्छे प्रकार से या स्पष्ट रूप से भाव को प्रकट करना
9. मानक	=	प्रामाणिक
10. लब्धप्रतिष्ठित	=	यशस्वी

11. लोकमंगल = जनकल्याण, जनता की भलाई

5.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. हरिऔध की रचना यात्रा पर प्रकाश डालिए।
2. 'प्रिय प्रवास' की विशेषताओं को स्पष्ट कीजिए।
3. हिंदी साहित्य में हरिऔध के स्थान को निरूपित कीजिए।
4. हरिऔध की काव्यागत विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
5. तत्कालीन सामाजिक विसंगतियों पर हरिऔध ने किस प्रकार प्रहार किया? स्पष्ट कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' के जीवन पर प्रकाश डालिए।
2. हरिऔध की रचनाओं का संक्षिप्त परिचय दीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. किस रचना पर हरिऔध को मंगलाप्रसाद पारितोषक प्राप्त हुआ? ( )
   (अ) ठेठ हिंदी का ठाठ (आ) प्रिय प्रवास (इ) रुक्मिणी परिणय (ई) अधखिला फूल
2. इसमें एक हरिऔध की रचना नहीं है। ( )
   (अ) ठेठ हिंदी का ठाट (आ) प्रिय प्रवास (इ) चोखे चौपदे (ई) सरोज स्मृति
3. 'प्रिय प्रवास' का रचना काल क्या है? ( )
   (अ) 1914 (आ) 1915 (स) 1916 (ई) 1917
4. 'वैदेही वनवास' काव्य का प्रधान रस क्या है? ( )
   (अ) शृंगार (आ) करुण (स) रौद्र (ई) हास्य

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. .... शीर्षक काव्य की कथावस्तु का आधार रामकथा है।

2. हरिऔध .... युग के कवि थे।

3. खड़ी बोली के प्रथम महाकाव्य .... है।

4. पवन दूत का प्रसंग .... काव्य में है।

III. सुमेल कीजिए -

1. प्रिय प्रवास	(अ) देवहूती
2. वैदेही वनवास	(ब) राधा
3. ठेठ हिंदी के ठाट	(स) देवबाला
4. अधखिला फूल	(द) सीता

5.8 पठनीय पुस्तकें

1. हिंदी साहित्य का इतिहास : रामचंद्र शुक्ल
2. हिंदी साहित्य का इतिहास : सं. नगेंद्र
3. हिंदी साहित्य कोश, भाग 2 : सं धीरेंद्र वर्मा
4. अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' रचनावली
5. द्विवेदी युगीन हिंदी नवरत्न : विजयेंद्र स्नातक

इकाई 6 : दिवस का अवसान : अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध'

रूपरेखा

6.1 प्रस्तावना

6.2 उद्देश्य

6.3 मूल पाठ : दिवस का अवसान : अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध'

6.3.1 अध्येय कविता का सामान्य परिचय

6.3.2 अध्येय कविता

6.3.3 विस्तृत व्याख्या

6.3.4 समीक्षात्मक अध्ययन

6.4 पाठ सार

6.5 पाठ की उपलब्धियाँ

6.6 शब्द संपदा

6.7 परीक्षार्थ प्रश्न

6.8 पठनीय पुस्तकें

6.1 प्रस्तावना

द्विवेदी युगीन कवियों में हरिऔध जी का स्थान महत्वपूर्ण है। उन्होंने उस परंपरा को तोड़ा जिसके अनुसार यह माना जाता रहा कि काव्य के लिए अवधी और ब्रजभाषा ही उपयुक्त है। उन्होंने खड़ी बोली को काव्य की भाषा के रूप में प्रतिष्ठित किया। खड़ी बोली हिंदी में 'प्रिय प्रवास' महाकाव्य की रचना की। हिंदी साहित्य के क्षेत्र में 'प्रिय प्रवास' को खड़ी बोली हिंदी का प्रथम महाकाव्य होने का गौरव प्राप्त है। छात्रो! इस इकाई के अंतर्गत आप अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' कृत 'प्रिय प्रवास' के प्रथम सर्ग के दस छंदों का अध्ययन करेंगे।

6.2 उद्देश्य

इस इकाई के अंतर्गत आप अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' कृत 'प्रिय प्रवास' के प्रथम सर्ग के दस छंदों का अध्ययन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन से आप -

- 'प्रिय प्रवास' के छंदों की सप्रसंग व्याख्या कर सकेंगे।

- इन छंदों में निहित साहित्यिक सौंदर्य पर प्रकाश डाल सकेंगे।
- हरिऔध की काव्यागत विशेषताओं से परिचित हो सकेंगे।

6.3 मूल पाठ : दिवस का अवसान : अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध'

6.3.1 अध्येय कविता का सामान्य परिचय

'प्रिय प्रवास' (1914) अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' द्वारा रचित महाकाव्य है। इसमें कुल मिलाकर सत्रह सर्ग हैं। इसके चरित नायक श्रीकृष्ण हैं। इस काव्य में कृष्ण के चरित्र की आधुनिक व्याख्या प्रस्तुत है। इसमें लोकोद्धार की भावना को देखा जा सकता है। कवि ने इस काव्य में प्रमुख रूप से पाँच पात्रों - यशोदा, नंद, राधा, कृष्ण और उद्धव के चरित्रांकन पर ध्यान केंद्रित किया है। इस काव्य में उन्होंने यशोदा और राधा के विरह वर्णन पर विशेष ध्यान दिया है।

'प्रिय प्रवास' अर्थात प्रिय का प्रवास। गोकुल ग्राम के प्रिय कृष्ण का मथुरा प्रवास। "नाम से जैसा लगता है प्रिय प्रवास यानी ब्रजवासियों के प्रिय कृष्ण का मथुरा प्रवास चरम घटना होनी चाहिए। या कंस वध जैसी महत्वपूर्ण घटना के कार्य के रूप में चित्रित किया जा सकता था। लेकिन संपूर्ण ग्रंथ में ब्रजवासियों के विरह वर्णन को ही अपेक्षाकृत अधिक महत्व मिला है।" (हिंदी महाकाव्य का स्वरूप विकास, पृ. 697)

'प्रिय प्रवास' के प्रथम सर्ग का छंद द्रुतविलंबित छंद है। द्रुत का अर्थ है तेज और विलंबित का अर्थ है मंदता अर्थात जिसमें तीव्रता न हो। कहने का आशय है कि काव्य पंक्ति का आधा भाग तेज गति से चलती है और अगले भाग में उतनी तीव्रता नहीं होती। इससे संगीतात्मकता पैदा होती है। इस प्रथम सर्ग में कवि ने प्रकृति का विशेष रूप से संध्या का मनोरम चित्रण किया है।

संध्याकाल का वर्णन करते हुए कवि कहते हैं कि दिन का अंत निकट है। अर्थात सूरज ढलने वाला है। सारा आकाश लाल रंग से ढका हुआ है। सूर्य की किरणें पेड़ों की चोटियों पर सुशोभित हैं। शाम होते ही पक्षी घर वापस लौट रहे हैं। जंगल के बीचों बीच उनका कलरव बढ़ रहा है। विभिन्न प्रकार के पक्षी शोर करते हुए आसमान में उड़ रहे हैं। आकाश में लालिमा बढ़ रही है। दसों-दिशाएँ साँझ की लालिमा में डूब चुकी हैं। जंगल के सभी पेड़ों की हरियाली पर सूर्य की लालिमा चढ़ गई। आकाश की यह लालिमा नदी और तालाब के किनारों पर भी दिखाई देने लगी। जल में दिखाई पड़ने वाली यह लालिमा अत्यंत सुंदर है। अब वह पहाड़ों की चोटियों

पर चढ़ गई। और अब सूरज का बिंब धीरे-धीरे आकाश से अदृश्य होने लगा।

घर लौटने का संकेत करते हुए श्रीकृष्ण मुरली बजाने लगे तो जंगल में मुरली की ध्वनि गूँजने लगी। कृष्ण की मुरली की ध्वनि सुनकर सभी गोप भी अपने वाद्य यंत्र बजाने लगे। यह सुनकर सभी गाय और बछड़े दौड़ते हुए आ गए। गायों के चलने से आकाश में धूल छा गई। सभी गोप कृष्ण के साथ मिलकर गोकुल वापस लौटने लगे। गोकुल गाँव के हर घर में प्रसन्नता बहने लगी क्योंकि सारे लोग श्रीकृष्ण के दर्शन की लालसा में बैठे हुए हैं।

छात्रो! आगे हम प्रथम सर्ग के 10 छंदों की व्याख्या करेंगे।

6.3.2 अध्येय कविता : दिवस का अवसान

दिवस का अवसान समीप था।
गगन था कुछ लोहित हो चला।
तरु-शिखा पर थी अब राजती।
कमलिनी-कुल-वल्लभ की प्रभा।। 1 ।।
विपिन बीच विहंगम वृंद का।
कलनिनाद विवर्द्धित था हुआ।
ध्वनिमयी-विविधा विहगावली।
उड़ रही नभ-मण्डल मध्य थी।। 2 ।।
अधिक और हुई नभ-लालिमा।
दश-दिशा अनुरंजित हो गई।
सकल-पादप-पुंज हरीतिमा।
अरुणिमा विनिमज्जित सी हुई।। 3 ।।
झलकने पुलिनों पर भी लगी।
गगन के तल की यह लालिमा।
सरि सरोवर के जल में पड़ी।
अरुणता अति ही रमणीय थी।। 4 ।।
अचल के शिखरों पर जा चढ़ी।
किरण पादप-शीश-विहारिणी।
तरणि-बिंब तिरोहित हो चला।

गगन-मण्डल मध्य शनैः शनैः।। 5 ।।
ध्वनि-मयी कर के गिरि-कंदरा।
कलित-कानन केलि निकुंज को।
बज उठी मुरली इस काल की।
तरणिजा-तट-राजित-कुंज में ।। 6 ।।
क्वणित मंजु-विषाण हुए कई।
रणित शृंग हुए बहु साथ ही।
फिर समाहित-प्रांतर-भाग में।
सुन पड़ा स्वर धावित-धेनु का।। 7 ।।
निमिष में वन-व्याप्ति-वीथिका।
विविध-धेनु-विभूषित हो गई।
धवल-धूसर-वत्स-समूह भी।
विलसता जिनके दल साथ था।। 8 ।।
जब हुए समवेत शनैः शनैः।
सकल गोप सधेनु समंडली।
तब चले ब्रज-भूषण को लिये।
अति अलंकृत-गोकुल-ग्राम को।। 9 ।।
गगन मंडल में रज छा गई।
दश-दिशा बहु-शब्दमयी हुई।
विशद-गोकुल के प्रति-गेह में।
बह चला वर-स्रोत विनोद का।। 10 ।।

निर्देश : इन छंदों का सस्वर वाचन कीजिए।
इन छंदों का मौन वाचन कीजिए।

6.3.3 विस्तृत व्याख्या

[1]

दिवस का अवसान समीप था।
गगन था कुछ लोहित हो चला।

तरु-शिखा पर थी अब राजती।

कमलिनी-कुल-वल्लभ की प्रभा।।

शब्दार्थ : दिवस = दिन। अवसान = समाप्ति। गगन = आकाश। लोहित = लाल रंग। तरु-शिखा = पेड़ों के शिखर। कमिलिनी-कुल-वल्लभ = सूर्य। प्रभा = चमक।

संदर्भ : प्रस्तुत काव्यांश अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' कृत 'प्रिय प्रवास' महाकाव्य के प्रथम सर्ग से उद्धृत है।

प्रसंग : इस पद में संध्या का सुंदर दृश्य अंकित है।

व्याख्या : दिवस का अवसान समीप आ रहा है अर्थात दिन ढल रहा है। शाम का समय है। सूरज पश्चिम की ओर धीरे-धीरे डूब रहा है। ऐसी स्थिति में आसमान लाल दिखाई दे रहा है। ढलती सूर्य की किरणें आकाश में फैली हुई हैं। उन किरणों के कारण आकाश में लालिमा छाई हुई है। पश्चिम में ढलते सूरज की चमक पेड़ों के शिखरों दिखाई दे रहा है।

सूर्यास्त के समय आकाश में सूर्य का प्रतिबिंब लाल दिखाई देता है। सूर्य की किरणों आकाश में इस तरह फैलती हैं कि सारा आकाश लाल हो उठता है। लाल रंग की अनेक छटाएँ दिखाई देंगे जो देखने में सुंदर लगते हैं। प्रस्तुत छंद पढ़ते समय आँखों के सामने सूर्यास्त का चित्र उपस्थित होना स्वाभाविक है।

विशेष :

1. महाकाव्य की शुरूआत मंगलाचरण से होती है। यहाँ कवि ने सीधे-सीधे भगवान की प्रार्थना से शुरू न करके संध्या चित्रण से काव्य की शुरूआत की है। यह भी एक तरह से मंगलाचरण ही है।
2. सायंकालीन प्रकृति का मनोरम चित्र इस छंद में अंकित है।
3. पहला चरण दूसरे चरण का कारण है अर्थात गगन में लालिमा दिवस के अवसान के कारण है। अतः इसे काव्यलिंग अलंकार कहा जाता है।
4. कवि ने सूर्य का प्रयोग न करके कमलिनी-कुल-वल्लभ का प्रयोग किया है। अतः इसे पर्यायोक्ति अलंकार कहा जाता है।
5. स्वभावोक्ति अलंकार, समासोक्ति अलंकार, पर्याय अलंकारों का भी सुंदर प्रयोग हुआ है।
6. बिंबात्मकता।

बोध प्रश्न

- इस छंद में चित्रित प्राकृतिक घटकों को पहचानिए।
- संध्या के समय सूर्य की प्रभा कैसी थी?
- 'कमलिनी-कुल-वल्लभ' से कवि का क्या आशय है?
- इस छंद में प्रयुक्त अलंकारों को पहचानिए।

[2]

विपिन बीच विहंगम वृंद का।
कलनिनाद विवर्द्धित था हुआ।
ध्वनिमयी-विविधा विहगावली।
उड़ रही नभ-मण्डल मध्य थी।।

शब्दार्थ : विपिन = जंगल। विहंगम = पक्षी। वृंद = समूह। कलनिनाद = कलरव की ध्वनि। विवर्द्धित = बढ़ना। विहग = पक्षी। नभ = आकाश।

संदर्भ : प्रस्तुत काव्यांश अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' कृत 'प्रिय प्रवास' महाकाव्य के प्रथम सर्ग से उद्धृत है।

प्रसंग : शाम के समय घोंसलों की ओर लौट रहे पक्षियों के समूहों का सुंदर चित्र अंकित है।

व्याख्या : सूरज ढल रहा है। सुबह खाने की तलाश में निकली पक्षियाँ शाम होते ही अपनी-अपनी घोंसलों की ओर लौट रहे हैं। जंगल का वातावरण विविध पक्षियों की आवाजों से भर चुका है। और आवाज बढ़ती ही जा रही है। अलग-अलग प्रकार की पंछी तो अलग-अलग प्रकार की ध्वनियाँ। इस तरह कलरव करते हुए - शोर मचाते हुए आकाश मंडल में पक्षियों का समूह पंक्तिबद्ध होकर उड़ रहा है। यह दृश्य मन को प्रफुल्लित करता है।

विशेष :

1. ध्वन्यात्मकता।
2. अनुप्रास अलंकार बार-बार कुछ वर्णों की आवृत्ति हुआ है।
3. कलनिनाद विवर्द्धित - कानों को मधुर लगने वाले ध्वनियों की आवृत्ति हुई है। अतः इसे श्रुत्यानुप्रास अलंकार कहा जाता है।

बोध प्रश्न

- अपने शब्दों में इस दृश्य का चित्रण करें।

- ‘कलनिनाद विवर्द्धित’ से क्या आशय है?
- विविध पक्षियों की आवाज सुनने में आपको किस तरह की अनुभूति होती है?
- ‘ध्वनिमयी-विविधा विहगावली’ कहने से आप में अनोखे के समक्ष कौन से चित्र उभर रहा है?

[3]

अधिक और हुई नभ-लालिमा।
दश-दिशा अनुरंजित हो गई।
सकल-पादप-पुंज हरीतिमा।
अरुणिमा विनिमज्जित सी हुई।।

शब्दार्थ : नभ = आकाश। लालिमा = लाल। दश-दिशा = दसों दीक्षाएँ, चारों ओर। अनुरंजित = जिसका दिल बहलाया गया हो, अनुरक्त। पादप = पौधे। पुंज = समूह। हरीतिमा = हरियाली। अरुणिमा = लाल। विनिमज्जित = डूबी हुई।

संदर्भ : प्रस्तुत काव्यांश अयोध्या सिंह उपाध्याय ‘हरिऔध’ कृत ‘प्रिय प्रवास’ महाकाव्य के प्रथम सर्ग से उद्धृत है।

प्रसंग : सूर्यास्त के समय पूरा आकाश लाल दिखाई देता है। उस दृश्य का मनोरम चित्रण।

व्याख्या : आकाश में लालिमा अधिक हो रही है। अर्थात सूरज पश्चिम की ओर धीरे-धीरे ढल रहा है। दिन छिपने का समय और निकट आ रहा है। दसों-दीशाएँ साँझ की लालिमा में रंग गए। यह दृश्य अत्यंत आह्लादकारक होता है। सभी प्रकार के पेड़-पौधों के समूहों पर अरुणिमा छा गई। ऐसा लगता है कि मानो पेड़ों की हरियाली पर सूर्य की किरणों की लालिमा चढ़ गई। हरे भरे पेड़ों पर लाल रंग की किरणों की छाया पड़ने से ऐसा लगता है कि हरा और लाल एक-दूसरे में मिल गए हों।

विशेष :

1. दृश्यात्मकता।
2. संध्या के बढ़ते वातावरण का चित्रण।
3. ‘अरुणिमा विनिमज्जित सी हुई’ - इसमें वस्तुत्प्रेक्षा अलंकार है। जहाँ एक वस्तु में दूसरी वस्तु की संभावना की जाए अर्थात एक वस्तु को दूसरी वस्तु मान ली जाए वहाँ वस्तुत्प्रेक्षा अलंकार होता है।

4. अनुरंजित होने का अर्थ होता है अनुरागपूर्ण होना। लेकिन यहाँ इसका प्रयोग रंग में रंग जाने के अर्थ में किया गया है। अतः यह श्लेष अलंकार है।

बोध प्रश्न

- 'अरुणिमा विनिमज्जित सी हुई' - इस पंक्ति को पढ़ते समय आपके आँखों के सामने क्या दृश्य उभर रहा है?
- वस्तुत्प्रेक्षा अलंकार किसे कहते हैं?
- श्लेष अलंकार से क्या अभिप्राय है?

[4]

झलकने पुलिनों पर भी लगी।
गगन के तल की यह लालिमा।
सरि सरोवर के जल में पड़ी।
अरुणता अति ही रमणीय थी।।

शब्दार्थ : पुलिन = नदी या सागर का रेतीला किनारा, तट। गगन = आकाश। तल = निचला भाग, सतह। सरि = झरना। सरोवर = तालाब। अरुणता = लालिमा। रमणीय = सुंदर, मनोहर।

संदर्भ : प्रस्तुत काव्यांश अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' कृत 'प्रिय प्रवास' महाकाव्य के प्रथम सर्ग से उद्धृत है।

प्रसंग : संध्याकालीन लालिमा का स्वाभाविक और मनोरम चित्रण अंकित है।

व्याख्या : झरने और तालाब के तट पर लालिमा दिखाई देने लगी। अब तक जो लालिमा पेड़-पौधों के शिखरों पर थी अब वह नदी, झरने और तालाब के तट पर दिखाई देने लगी। कहने का यह आशय है कि उसका पटल विस्तार हो रहा है और वह पूरे आकाश में फ़ैल रही है। नदी और तालाबों के जल में भी लालिमा प्रतिबिंबित होने लगी है। मानो ऐसा लग रहा है कि लालिमा उछल उछल कर जगह-जगह पहुँच रही है। यह चित्र देखने में मनमोहक होता है।

विशेष :

1. स्वभावोक्ति अलंकार।

बोध प्रश्न

- सूरज की लालिमा कहाँ पहुँची?
- संध्याकालीन चित्र को अपने शब्दों में प्रस्तुत कीजिए।

[5]

अचल के शिखरों पर जा चढ़ी।
किरण पादप-शीश-विहारिणी।
तरणि-बिंब तिरोहित हो चला।
गगन-मण्डल मध्य शनैः शनैः।।

शब्दार्थ : अचल = पर्वत, पहाड़। पादप = पौधा। शीश = सिर। तरणि = सूर्य। बिंब = परछाई। तिरोहित = अदृश्य, लुप्त। शनैः शनैः = धीरे-धीरे।

संदर्भ : प्रस्तुत काव्यांश अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' कृत 'प्रिय प्रवास' महाकाव्य के प्रथम सर्ग से उद्धृत है।

प्रसंग : सूर्य धीरे-धीरे पहाड़ों के पीछे छिप रहा है। सूर्यास्त का चित्रण है।

व्याख्या : पौधों की चोटियों पर खेलने वाली किरणें अब पर्वत शिखर पर जा चढ़ीं। और उसके बाद धीरे-धीरे सूर्य की परछाई आकाश में छिपने लगी। सायंकाल के समय सूर्य की किरणें धीरे-धीरे सिमटती हुई जा रही हैं।

बोध प्रश्न

- 'तरणि-बिंब तिरोहित हो चला' से आप क्या समझते हैं?
- अचल के शिखरों पर जा चढ़ी। / किरण पादप-शीश-विहारिणी। इसकी व्याख्या अपने शब्दों में कीजिए।

[6]

ध्वनि-मयी कर के गिरि-कंदरा।
कलित-कानन केलि-निकुंज को।
बज उठी मुरली इस काल की।
तरणिजा-तट-राजित-कुंज में ।।

शब्दार्थ : कंदरा = गुफ़ाएँ। कानन = वन। निकुंज = उपवन। तरणिजा = यमुना, कालिंदी। राजित = सुशोभित। कुंज = बाग-बगीचा, उपवन।

संदर्भ : प्रस्तुत काव्यांश अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' कृत 'प्रिय प्रवास' महाकाव्य के प्रथम सर्ग से उद्धृत है।

प्रसंग : शाम हो चुका है। घर वापस लौटना का समय समीप आ चुका है। अतः कृष्ण मुरली

बजाकर सबको संकेत कर रहे हैं।

व्याख्या : दिन छिपने का समय होने से घर लौटने के लिए संकेत करते हुए श्रीकृष्ण मुरली बजाते हैं। इससे पर्वत की गुफ़ाएँ गूँजने लगी। मुरली बजने से विहार स्थल, जंगल सब ध्वनिमय हो गए। यमुना नदी के किनारे स्थित बाग-बगीचे में भी श्रीकृष्ण की मुरली बज उठी। कृष्ण की बंसी की मधुर ध्वनि से सारा वातावरण सुरमय हो गया।

विशेष :

1. कवि ने यह नहीं कहा कि कृष्ण ने मुरली बजाई बल्कि 'बज उठी मुरली' का प्रयोग किया है। अतः इसे पर्यायोक्ति अलंकार का उदाहरण कहा जा सकता है।
2. ध्वन्यात्मकता।
3. 'कलित-कानन केलि-निकुंज को' अनुप्रास अलंकार का उदाहरण है। इसमें 'क' वर्ण की आवृत्ति हुई है।

बोध प्रश्न

- किन शब्दों से ध्वन्यात्मकता प्रकट होता है?

[7]

क्वणित मंजु-विषाण हुए कई।
रणित शृंग हुए बहु साथ ही।
फिर समाहित-प्रांतर-भाग में।
सुन पड़ा स्वर धावित-धेनु का।।

शब्दार्थ : क्वणित = ध्वनित, झंकृत। मंजु = मनोहर, सुंदर। विषाण = सींग, सींग से बना बाजा। रणित = बजता हुआ। शृंग = सींग, सींग से बना बाजा। प्रांतर = मध्य भाग। धावित = तज दौड़ता हुआ। धेनु = गाय।

संदर्भ : प्रस्तुत काव्यांश अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' कृत 'प्रिय प्रवास' महाकाव्य के प्रथम सर्ग से उद्धृत है।

प्रसंग : शाम का समय हो चुका है। सब घर वापस लौट रहे हैं। वाद्य यंत्रों के बजने और गायों के दौड़ने का चित्र अंकित है।

व्याख्या : कृष्ण की मुरली बजने से सभी गोप-बालाओं को घर लौटने का संकेत मिल चुका है। तो उन लोगों ने भी अपने-अपने गायों को मध्य भाग में एकत्रित करने के लिए - विषाण और

शृंग - जानवरों की सींगों से बने तरह-तरह के वाद्य यंत्रों को बजाने लगे। सारा वातावरण तरह-तरह के सुरों से सुरमय हो गया। वाद्य यंत्रों की आवाज सुनकर जंगल में चरने वाले गाय दौड़ने लगे। सभी तरफ से दौड़ती हुई गायों की आवजें सुनाई देने लगीं।

विशेष :

1. पहली पंक्ति में प्रयुक्त 'क्वणित' शब्द 'कामायनी' की इस पंक्ति की याद दिलाती है - कंकण क्वणित रणित नूपुर थे, हिलते थे छाती पर हार ।
2. यहाँ प्रयुक्त 'धेनु' शब्द जातिवाचक संज्ञा का सूचक है।
3. ध्वन्यात्मकता का प्रयोग।

बोध प्रश्न

- ध्वन्यात्मक शब्दों को छाँटिए।

[8]

निमिष में वन-व्याप्ति-वीथिका।
विविध-धेनु-विभूषित हो गई।
धवल-धूसर-वत्स-समूह भी।
विलसता जिनके दल साथ था।।

शब्दार्थ : निमिष = क्षण, पल। वीथिका = मार्ग। विभूषित = सुशोभित। धवल = सफेद। धूसर = मटमैला। वत्स = गाय का बच्चा, बछड़ा। विलसिता = विलास करता हुआ।

संदर्भ : प्रस्तुत काव्यांश अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' कृत 'प्रिय प्रवास' महाकाव्य के प्रथम सर्ग से उद्धृत है।

प्रसंग : शाम को घर वापस लौटने का संकेत पाकर दौड़कर आ रहे गायों का चित्रण किया गया है।

व्याख्या : देखते-देखते पल भर में जंगल के चारों ओर के मार्गों से विविध प्रकार की गाएँ दौड़ते हुए आ गए। उनके साथ-साथ उनके सफेद और मटमैले बछड़ों का समूह भी वहाँ आ पहुँचा जो उन गायों के साथ चर रहा था।

बोध प्रश्न

- इस छंद को पढ़ने से आपके सामने कौन सा दृश्य उभर रहा है?

[9]

जब हुए समवेत शनैः शनैः।
सकल गोप सधेनु समंडली।
तब चले ब्रज-भूषण को लिये।
अति अलंकृत-गोकुल-ग्राम को।।

शब्दार्थ : समवेत = एकत्र। शनैः शनैः = धीरे-धीरे। ब्रज-भूषण = कृष्ण।

संदर्भ : प्रस्तुत काव्यांश अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' कृत 'प्रिय प्रवास' महाकाव्य के प्रथम सर्ग से उद्धृत है।

प्रसंग : गोचारण के बाद कृष्ण और सभी गोप-बालाओं का घर वापस लौटने का चित्रण।

व्याख्या : सभी गोप गायों की मंडली के साथ धीरे-धीरे एक जगह एकत्रित हो चुके हैं। तब ब्रज-भूषण अर्थात श्रीकृष्ण को साथ लेकर सभी लोग अलंकृत गोकुल ग्राम अर्थात सुंदर गोकुल ग्राम की ओर चलने लगे।

विशेष :

1. इस पद में सामूहिक चेतना को देखा जा सकता है। 'समवेत' और 'समंडली' इस चेतना के द्योतक शब्द हैं।

बोध प्रश्न

- कवि ने 'अलंकृत गोकुल ग्राम' का प्रयोग क्यों किया है?

[10]

गगन मंडल में रज छा गई।
दश-दिशा बहु-शब्दमयी हुई।
विशद-गोकुल के प्रति-गेह में।
बह चला वर-स्रोत विनोद का।।

शब्दार्थ : गगन = आकाश। रज = धूल। विषाद = विशाल। गेह = घर। वर-स्रोत = झरना। विनोद = हँसी-खुशी।

संदर्भ : प्रस्तुत काव्यांश अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' कृत 'प्रिय प्रवास' महाकाव्य के प्रथम सर्ग से उद्धृत है।

प्रसंग : गोचारण के बाद कृष्ण और सभी गोप-बालाओं का घर वापस लौटने का चित्रण।

व्याख्या : जब गाएँ चलती हैं तो आकाश मंडल में गो-रज अर्थात धूल उड़ता है। चारों ओर गायों

की रंभाने की आवाज गूँज रही है। विशाल गोकुल के हर घर में हँसी-खुशी का झरना बहने लगा क्योंकि उनके प्रिय कृष्ण और गोप घर वापस लौट रहे हैं।

विशेष :

1. 'दश-दिशा बहु शब्दमयी हुई' - अतिशयोक्ति अलंकार
2. 'स्रोत' शब्द का प्रायः प्रयोग पानी के साथ होता है। जैसे जल स्रोत। लेकिन यहाँ कवि ने विनोद के साथ 'स्रोत' शब्द का मार्मिक प्रयोग किया है - रूपक अलंकार

बोध प्रश्न

- इस छंद में प्रयुक्त अलंकारों को पहचानिए।

6.3.4 समीक्षात्मक अध्ययन

'प्रिय प्रवास' अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' कृत खड़ी बोली हिंदी का प्रथम महाकाव्य है। इसकी रचना का प्रारंभ 15 अक्टूबर, 1909 में किया गया था और 24 फरवरी, 1913 में इसका लेखन पूरा हुआ। इसका प्रकाशन 1914 में हुआ था। इस ग्रंथ का नाम 'ब्रजांगना-विलाप' था लेकिन कवि ने इसका नामकरण 'प्रिय प्रवास' किया। इसके संबंध में स्वयं कवि उद्गार देखें - "मैंने पहले इस ग्रंथ का नाम 'ब्रजांगना-विलाप' रखा था, किंतु कई कारणों से मुझको इसका नाम बदलना पड़ा, जो इस ग्रंथ के समग्र पढ़ जाने पर आप लोगों को स्वयं अवगत होंगे।"

'प्रिय प्रवास' की भाषा तत्समनिष्ठ है। इसमें श्रीकृष्ण महापुरुष की तरह, एक लोकोपकारक की तरह अंकित है न कि ब्रह्म की तरह। कवि ने इस काव्य कृति में पौराणिक कथा को नया आयाम प्रदान किया है। आपको पहले भी बताया गया है कि यह काव्य खड़ी बोली में लिखा गया है। 'प्रिय प्रवास' की भूमिका में स्वयं अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' ने इस ग्रंथ की आवश्यकता के संबंध में स्पष्ट किया है कि "खड़ी बोली में छोटे-छोटे काव्य-ग्रंथ अब तक लिपिबद्ध हुए हैं, परंतु उनमें से अधिकांश सौ दो सौ पद्यों में समाप्त हैं, जो कुछ बड़े हैं, वे अनुवादित हैं मौलिक नहीं। सहृदय कवि बाबू मैथिलीशरण गुप्त का 'जयद्रथ वध' निस्संदेह मौलिक ग्रंथ है, परंतु यह खंड काव्य है। इसके अतिरिक्त ये समस्त ग्रंथ अंत्यानुप्रास विभूषित हैं; इसलिए खड़ी बोलचाल में मुझको एक ऐसे काव्य ग्रंथ की आवश्यकता देख पड़ी, जो महाकाव्य हो; और ऐसी कविता में लिखा गया हो जिसे भिन्नतुकांत कहते हैं। अतएव मैं इस न्यूनता की पूर्ति के लिए कुछ साहस के साथ अग्रसर हुआ और अनवरत परिश्रम कर के इस 'प्रिय प्रवास'

नामक ग्रंथ की रचना की।” छात्रो! यदि आप ‘प्रिय प्रवास’ के छंदों को ध्यान से पढ़ेंगे तो आप पाएँगे कि इन छंदों में तुकांत बिल्कुल भिन्न है। उदाहरण के लिए देखें इसका प्रथम छंद - दिवस का अवसान समीप था/ गगन था कुछ लोहित हो चला/ तरु-शिखा पर थी अब राजती/ कमलिनी-कुल-वल्लभ की प्रभा।

‘प्रिय प्रवास’ के प्रकाशन के बाद इस के संबंध में ‘अभ्युदय’ में पं. वेंकटेश नारायण तिवारी आ अग्रलेख प्रकाशित हुआ था। इसमें उन्होंने यह स्पष्ट किया कि “अतुकांत छंदों में कविता रचने का हिंदी में यह पहला ही प्रयत्न है, और हम यह कहने का साहस करते हैं कि तुकांत काव्य के इतिहास में कवि चंदबरदाई आ जो स्थान है, और हिंदी गद्य में जो गौरव लल्लू लाल को प्राप्त है, वही स्थान और वही गौरव श्रीयुत अयोध्या सिंह उपाध्याय को ‘प्रिय प्रवास’ की बदौलत अतुकांत काव्य की गाथा से उस समय तक दिया जाएगा जब तक हिंदी साहित्य में नवीनता और सजीवता का आदर है। इन में कोई संदेह नहीं कि हिंदी साहित्य में ‘प्रिय प्रवास’ ने एक महत्वपूर्ण नवीन युग का प्रारंभ किया है।” (महाकवि हरिऔध, पृ. 6 से उद्धृत)

बोध प्रश्न

- हिंदी साहित्य के इतिहास में ‘प्रिय प्रवास’ का क्या महत्व है?
- ‘भिन्नतुकांत’ से क्या अभिप्राय है?
- ‘प्रिय प्रवास’ का प्रारंभिक नाम क्या था?

6.4 पाठ सार

छात्रो! इस इकाई के अध्ययन से आपको यह स्पष्ट हो ही चुका है कि ‘प्रिय प्रवास’ खड़ी बोली हिंदी में लिखित प्रथम महाकाव्य है। इसमें कुल सत्रह सर्ग हैं। इस पाठ में आपने प्रथम सर्ग के दस छंदों का अध्ययन किया है। इन छंदों में साँझ का चित्रण है। सूर्यास्त के समय सूरज पश्चिम की ओर डूबने से पहले पूरे आकश में लालिमा बिखेरता है। पेड़-पौधों, पर्वत शिखरों, सरोवर के किनारों, नदी जल आदि में लालिमा बिखेरते हुए सूरज धीरे-धीरे सिमट जाता है। शाम को पंछी कलरव करते हुए घोंसलों में वापस जाते हैं। घर वापस लौटने का संकेत देते हुए कृष्ण मुरली बजाने लगते हैं। मुरलीनाद सुनकर सभी गोप भी अपने-अपने वाद्य यंत्र बजाने लगते हैं। सभी गाय अपने बछड़ों के साथ दौड़ते हुए आते हैं और सभी गोकुल ग्राम वापस लौटते हैं। कृष्ण के आगमन का समय निकट आने से सभी गोकुल वासी प्रफुल्लित हो उठते हैं।

6.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' ने खड़ी बोली को हिंदी पद्य की भाषा के रूप में तो प्रतिष्ठित किया ही, 'प्रिय प्रवास' के रूप में 'खड़ी बोली का प्रथम महाकाव्य' रचकर उसकी क्षमता के बारे में भारतेंदु युग से चली आ रही आशंकाओं को निर्मूलन कर दिया।
2. हरिऔध ने अपने महाकाव्य 'प्रिय प्रवास' का आरंभ महाकाव्य की एक काव्य रूढ़ि के अनुरूप प्रकृति चित्रण के साथ किया।
3. 'प्रिय प्रवास' का आरंभिक संध्या वर्णन का चित्र बृज संस्कृति को साकार करने में समर्थ है।
4. इस संध्या वर्णन में कवि ने तत्सम प्रधान भाषा और द्रुत-विलंबित छंद के प्रयोग द्वारा खड़ी बोली के लालित्य का सुंदर उदाहरण प्रस्तुत किया है।

6.6 शब्द संपदा

1. अनवरत	=	बिना रुके, लगातार
2. पौराणिक	=	जिसका विवरण पुराणों में मिलता हो, प्राचीन काल का
3. प्रतिबिंब	=	परछाई
4. प्रतिष्ठित	=	सम्मान
5. प्रवास	=	पना देश चूड़कर किसी अन्य देश में रहने का भाव, देशांतरण
6. बिंबात्मकता	=	चित्रात्मकता
7. महाकाव्य	=	वह बड़ा विस्तृत और सर्गबद्ध काव्य ग्रंथ जिसमें प्रायः सभी रसों, ऋतुओं और प्राकृतिक दृश्यों का वर्णन हो
8. लोकोद्धार	=	लोक का उद्धार, जन साधारण का उद्धार
9. लोकोपकारक	=	जन साधारण का हित करने वाला

6.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. विवेच्य कविता का सारांश अपने शब्दों में लिखिए।
2. पठित पाठ के आधार पर कविता की विषय वस्तु पर प्रकाश डालिए।
3. 'प्रिय प्रवास' की काव्यगत विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. दिवस का अवसान समीप था/ गगन था कुछ लोहित हो चला/ तरु-शिखा पर थी अब राजती/ कमलिनी-कुलवल्लभ की प्रभा। इस छंद की सप्रसंग व्याख्या कीजिए।
2. अधिक और हुई नभ-लालिमा/ दश-दिशा अनुरंजित हो गई/ सकल-पादप-पुंज हरीतिमा/ अरुणिमा विनिमज्जित सी हुई। इस छंद की सप्रसंग व्याख्या कीजिए।
3. झलकने पुलिनों पर भी लगी/ गगन के तल यह लालिमा / सरि सरोवर के जल में पड़ी/ अरुनता आती ही रमणीय थी। इस छंद की सप्रसंग व्याख्या कीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. दिवस का अवसान समीप था, गगन था कुछ हो चला । ( )

   (अ) मोहित (आ) लोहित (इ) सोहित (ई) शोभित

2. सकल-पादप-पुंज हरीतिमा, अरुणिमा .... सी हुई । ( )

   (अ) सज्जित (आ) अर्जित (इ) विनिमज्जित (ई) लज्जित

3. कमलिनी-कुल-वल्लभ का अर्थ .... है। ( )

   (अ) सूर्य (आ) चंद्र (इ) ग्रह (ई) नक्षत्र

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. 'प्रिय प्रवास' का प्रारंभिक नाम .... था।
2. 'प्रिय प्रवास' की भाषा .... है।

3. प्रिय प्रवास’ में कृष्ण का .... रूप अंकित है।

4. शोर मचाते हुए आकाश मंडल में .... का समूह पंक्तिबद्ध होकर उड़ रहा है।

III. सुमेल कीजिए -

1. प्रिय प्रवास	(अ) पौधा
2. विषाण	(आ) सूर्य
3. तरणि	(इ) लालिमा
4. अरुणिमा	(ई) महाकाव्य
5. पादप	(उ) वाद्य यंत्र

6.8 पठनीय पुस्तकें

1. प्रिय प्रवास : अयोध्या सिंह उपाध्याय ‘हरिऔध’

2. हिंदी महाकाव्य का स्वरूप विकास : शंभुनाथ सिंह

3. महाकवि हरिऔध : गिरिजादत्त शुक्ल

इकाई 7 : मैथिलीशरण गुप्त : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

रूपरेखा

7.1 प्रस्तावना

7.2 उद्देश्य

7.3 मूल पाठ : मैथिलीशरण गुप्त : व्यक्तिव एवं कृतित्व

7.3.1 जीवन परिचय

7.3.2 रचना यात्रा

7.3.3 रचनाओं का परिचय

7.3.4 हिंदी साहित्य में स्थान एवं महत्व

7.4 पाठ सार

7.5 पाठ की उपलब्धियाँ

7.6 शब्द संपदा

7.7 परीक्षार्थ प्रश्न

7.8 पठनीय पुस्तकें

7.1 प्रस्तावना

हिंदी साहित्य का आधुनिक काल साहित्यिक दृष्टि से सर्वश्रेष्ठ एवं महत्वपूर्ण युग माना जाता है। इसमें हिंदी की अनेक नई विधाओं का विकास हुआ। यह काल खड़ी बोली, ब्रजभाषा व गद्य लेखन की दृष्टि से स्वर्ण काल माना जाता है। आधुनिक काल को भिन्न-भिन्न चरणों में बाँटा गया है, जैसे - भारतेंदु युग, द्विवेदी युग, छायावाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद और नई कविता। इन सभी चरणों के अंतर्गत अलग-अलग प्रवृत्तियाँ पाई गई। तथा इन्हीं प्रवृत्तियों के अनुरूप इस समय बहुत से कवि एवं लेखक हुए। अतः द्विवेदी युग के प्रमुख कवि मैथिलीशरण गुप्त का नाम भी इस समय सर्वश्रेष्ठ कवियों में आता है। इन्हें राष्ट्रकवि के रूप में जाना जाता है। गुप्त जी ने अपनी कविताओं के माध्यम से तथा जन-जागरण का काम बहुत अधिक किया तथा उनकी कविताओं से खड़ी बोली हिंदी को काव्य भाषा के रूप में प्रतिष्ठित होने में बहुत अधिक सहायता मिली। गुप्त जी अपनी कृति भारत-भारती के कारण राष्ट्रकवि कहलाए। इनकी कविताओं में राष्ट्रीय भावना चरम विकास पर पहुँची। नारी भावना का चित्रण करने में भी गुप्त जी हिंदी

काव्य के इतिहास में बेजोड़ है।

7.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो ! इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप-

- द्विवेदी युग के प्रमुख कवि मैथिलीशरण गुप्त के व्यक्तित्व को जान सकेंगे।
- राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त की रचना यात्रा क्रमिक विकास से अवगत हो सकेंगे।
- मैथिलीशरण गुप्त के काव्य की प्रमुख विशेषताओं को जान सकेंगे।
- हिंदी साहित्य में मैथिलीशरण गुप्त के योगदान को समझ सकेंगे।

7.3 मूल पाठ: मैथिलीशरण गुप्त : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

7.3.1 जीवन परिचय

हिंदी के लोकप्रिय कवि मैथिलीशरण गुप्त द्विवेदी युग के सर्वश्रेष्ठ कवि माने जाते हैं। इनका जन्म चिरगाँव, झाँसी में 3 अगस्त, 1886 में हुआ तथा मृत्यु 1964 ई. में हुई। हिंदी साहित्य के इतिहास में वे खड़ी बोली के प्रथम महत्वपूर्ण कवि हैं। इनकी कविताओं में राष्ट्रीय भावना चरम विकास पर देखी जा सकती है। प्रारंभ में इनकी रचनाएँ कलकत्ता निकलने वाले पत्र 'वैश्योपकारक' में छपती थी। बाद में इनका परिचय महावीरप्रसाद द्विवेदी से हुआ और उसके बाद उनकी रचनाएँ 'सरस्वती' पत्रिका में प्रकाशित होने लगी। द्विवेदी जी गुप्त जी के गुरू के समान थे उनसे गुप्त जी को बहुत अधिक प्रेरणा मिली। जिसके परिणामस्वरूप इनकी काव्यकला में बहुत निखार आया। गुप्त जी की खड़ी बोली हिंदी में लिखी रचनाएँ सरस्वती पत्रिका में 1906 ई. से छपने लगी थी। इनकी कविताओं में राष्ट्रीय भावना चरम सीमा पर पाई जाती है। इन्हें अपनी कविता 'भारत भारती' से बहुत अधिक लोकप्रियता मिली। 'भारत भारती' में गुप्त जी ने देश के अतीत और वर्तमान का चित्र खीचा था तथा भविष्य की सुखद कामना की है। इनकी प्रथम पुस्तक 'रंग में भंग' का प्रकाशन 1909 में हुआ तथा 'भारत भारती' का प्रकाशन 1912 ई. में हुआ और इसी कविता से इन्हें प्रसिद्धि मिली। 'भारत भारती' ने हिंदी भाषि जनता में जाति, देश के प्रति गर्व और गौरवपूर्ण भावनाएँ प्रबुद्ध की अतः इसी काव्य के कारण उन्हें राष्ट्रकवि की उपाधि से सम्मानित किया गया। ये उपाधि गुप्त जी को महात्मा गांधी ने प्रदान की थी। वे 1952 में राज्यसभा के सदस्य भी नियुक्त किए गए।

मैथिलीशरण गुप्त जी की कविताओं ने खड़ी बोली हिंदी को काव्य भाषा के रूप में

प्रतिष्ठित करने में अहम भूमिका निभाई। इन्होंने अपने कविता के माध्यम से जन-जागरण का कार्य बहुत ही सफलता के साथ किया। स्वदशानुराग में निमग्न रहने वाले गुप्तजी सदैव भारतीय संस्कृति के गौरव के गुणगान के साथ-साथ स्त्री, कृषक और वंचित के हक में खड़े रहते थे।

गुप्त जी एक रामभक्त कवि थे। 'रामचरित मानस' के बाद रामकाव्य का दूसरा ग्रन्थ साकेत है, जिसकी रचना गुप्त जी ने की थी। अपनी कविता में उन्होंने बहुत अधिक संस्कृतनिष्ठ शब्दों का प्रयोग नहीं किया। उन्होंने साधारण बोलचाल की खड़ी बोली, हिंदी के जातीय मात्रिक छंद, गृहस्थ जीवन में प्रचलित पौराणिक आख्यान तथा अपने विचारों में विनम्र आत्मविश्वास ये सभी ही बुनियादी तत्व है, जिनसे गुप्त जी का रचनात्मक व्यक्तित्व निर्मित हुआ।

हिंदी के कवियों में प्रबंध-काव्य सबसे अधिक लिखने वाले कवि गुप्त जी ही हैं। उनकी वास्तविक काव्य प्रतिभा प्रबंध काव्यों में दिखाई देती है। इनके प्रबंध काव्य ज्यादातर पौराणिक एवं ऐतिहासिक कथानक पर आधारित है। इन प्रबंध काव्यों की मूल संवेदना आधुनिक है, इनमें पौराणिक कथानक को नवीणता से जोड़कर दिखाया गया है। इन काव्यों में गुप्त जी धार्मिक विश्वासों का पूरी मर्यादा रखते हुए कथा के भाव पक्ष को नवीणता से जोड़ दिया है। जो पाठकों को पढ़ने में बहुत रूचिकर लगता है। गुप्त जी के लेखन में संवेदना का अंश बहुत अधिक पाया जाता था। उनकी संवेदना की व्यापकता हम मार्क्स की पुत्री जैनी पर लिखित उनके लेख 'जियनी' से आंक सकते हैं।

गुप्त जी के दो मुख्य महाकाव्य 'साकेत' और 'यशोधरा' है। जो उनकी कीर्ति के आधार है। इन दोनों काव्य में गुप्त जी की प्रतिभा बहुत ही सुंदर ढंग से प्रदर्शित हुई है। 'साकेत' में कवि ने विशेष रूप से लक्ष्मण की पत्नी उर्मिला की भावात्मक अनुभूतियों तथा उसकी त्याग भरी व्यथा को दिखाया है।

"युग युग तक चलती रहे कठोर कहानी।
रघुकुल में भी थी एक अभागिन रानी॥"

इन पदों के माध्यम से गुप्त जी ने कैकेयी के चरित्र का चित्रण किया है। 'यशोधरा' में गुप्त जी ने नारी मन की करुण व्यथा को बहुत ही सुंदर ढंग से दिखाया है। उन्होंने समकालीन परिस्थितियों में नारी के दर्द को इन शब्दों के माध्यम से अभिव्यक्त किया है।

"अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी।

आंचल में है दूध और आँखों में पानी॥"

यहाँ 'दूध' माँ के वात्सल्य और आँखों में पानी उसकी विरह वेदना का द्योतक है।

यशोधरा भी एक कमज़ोर नारी नहीं है वह कहती हैं-

"सखि, वे मुझसे कहकर जाते,
कह, तो क्या वे मुझको अपनी पथ-बाधा ही पाते?"

गुप्त जी को अपनी मातृभूमि से भी बहुत लगाव था। मातृभूमि की शोभा का वर्णन करते हुए वे कहते हैं-

"नीलांबर परिधान हरित पट पर सुंदर है,
सूर्य चंद्र युग-मुकुट मेखला रत्नाकर है॥"

गुप्त जी की भाषा शुद्ध सरल, प्रसाद गुण से युक्त संस्कृत निष्ठ परिभार्जित खड़ी बोली है। इन्होंने विविध प्रकार के काव्यों की रचना की। साथ ही भाषा के सौंदर्य को बढ़ाने के लिए अलंकारों का भी प्रयोग किया। गुप्त जी को बहुत सी उपाधि और पुरस्कार भी प्रदान किए गए 1948 में इन्हें आगरा विश्वविद्यालय से उन्हें डी लिट की उपाधि से सम्मानित किया गया। 1962 ई. में तत्कालीन राष्ट्रपति डॉ. राजेंद्र प्रसाद ने उन्हें अभिनंदन ग्रंथ भेंट किया। 1954 में इन्हें साहित्य एवं शिक्षा क्षेत्र में पद्मभूषण से सम्मानित किया गया। हिंदु विश्वविद्यालय ने भी इन्हें डी लिट की उपाधि से सम्मानित किया। इन्होंने 1911 में साहित्य सदन नाम का एक स्वयं के प्रेस की स्थापना भी की तथा मानस मुद्रण की स्थापना 1954-55 में झांसी में की। अतः इन सब गुणों से परिपूर्ण गुप्त जी जनता के प्रतिनिधि कवि हैं।

बोध प्रश्न

- मैथिलीशरण गुप्त की कौन सी रचना देश में राष्ट्र प्रेम की धूम मचा दी थी?
- मैथिलीशरण गुप्त को राष्ट्रकवि की उपाधि किसने दी थी?

7.3.2 रचना यात्रा

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त भारतीय संस्कृति प्रमुख स्तंभ माने जाते हैं। उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व में राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक चेतना का पवित्र आदर्श है। इनकी रचना में भारतीय संस्कृति और राष्ट्रीय जनजागरण को सुन्दरता के साथ दिखाया गया है। महावीर प्रसाद द्विवेदी जी की प्रेरणा से गुप्त जी ने अपनी रचनाओं को लिखने के लिए खड़ी बोली को चुना। तथा खड़ी बोली को अपनी कविताओं के द्वारा काव्य भाषा का दर्जा दिया। इस तरह ब्रजभाषा जैसी समृद्ध

भाषा को छोड़कर समय के अनुकूल होने के कारण नये कवियों ने खड़ी बोली को ही काव्य भाषा के रूप में चुना। हिंदी साहित्य के इतिहास में गुप्त जी का यह योगदान बहुत ही महत्वपूर्ण माना जाता है।

गुप्त जी की रचनाओं में पवित्रता, नैतिकता और परंपरागत मानवीय सम्बन्धों की रक्षा जैसे गुण देखने को मिलते हैं। सर्वप्रथम द्विवेदी जी ने बारह वर्ष की अवस्था में ब्रजभाषा में 'कनकलता' नाम से कविता लिखी। बाद में उनकी खड़ी बोली में लिखी गई कविताएँ 'सरस्वती' पत्रिका में प्रकाशित होने लगी।

मैथिलीशरण गुप्त जी का रचनाकाल लगभग अर्द्धशताब्दी तक चला इस पूरी अवधि में इन्होंने दो महाकाव्यों, 19 खंडकाव्यों तथा अनेक स्फुट कविताओं की रचना की। इनके कुछ प्रमुख काव्य ग्रन्थ है- जयद्रथ-वध (1910), भारत-भारती (1912), पंचवटी (1925), झंकार (1929), साकेत (1931), यशोधरा (1932), द्वापर (1936), जयभारत (1952), विष्णुप्रिया (1957)। इन्होंने तिलोत्तमा, चंद्रहास और अनघ नाम के तीन नाटक तथा कुछ मुक्तकों की भी रचना की। पलासी का युद्ध, मेघनाद-वध, वृत्र-संहार आदि गुप्त जी के अनूदित काव्य हैं।

1909 में गुप्त जी का प्रथम काव्य संग्रह 'रंग में भंग' प्रकाशित हुआ तथा उसके बाद 1910 में 'जयद्रथ-वध' सामने आया। उन्होंने 1912 में राष्ट्रीय भावना से परिपूर्ण भारत-भारती का प्रकाशन किया। इस काव्य के कारण उनकी लोकप्रियता सर्वत्र फैल गई। गुप्त जी ने बहुत से काव्यग्रंथ का अनुवाद भी किया जैसे बंगाली काव्य ग्रंथ 'मेघनावध', 'विरहिणी', 'ब्रजांगना' तथा 'वीरांगना' का अनुवाद किया। इसी प्रकार उन्होंने संस्कृत के प्रसिद्ध ग्रन्थ 'स्वप्रवासवद्रत्ता' का भी अनुवाद किया। सन् 1916-17 ई. में गुप्त जी ने महाकाव्य 'साकेत' की रचना आरंभ की तथा 1931 में यह ग्रंथ पूर्ण हुआ। गुप्त जी का दूसरा महत्वपूर्ण महाकाव्य यशोधरा सन् 1932 ई. में पूर्ण हुआ साकेत के लिए मंगला प्रसाद पुरस्कार से सम्मानित किया गया। साकेत उनकी रचना का सर्वोच्च शिखर है। गुप्त जी भारतीय संस्कृति के प्रवक्ता माने जाते हैं तथा इनकी सभी रचनाएँ राष्ट्रीयता से ओत प्रोत है। भारत-भारती ने उत्तर भारत में राष्ट्रीयता के प्रचार और प्रसार में बहुत अहम भूमिका निभाई है।

बोध प्रश्न

- मैथिलीशरण गुप्त के किसी एक महाकाव्य का नाम बताइए?
- भारत-भारती काव्य का रचना काल क्या है?

7.3.3 रचनाओं का परिचय

हिंदी के लोकप्रिय कवि मैथिलीशरण गुप्त की कृत्तियों में आधुनिक युग की लोकोन्मुखता मानवीय करूणा के साथ घुल-मिल गई है। उनकी कृतियों पर गांधीवाद का प्रभाव देखा जाता है। वे अपने समय की समस्याओं के प्रति विशेष रूप से संवेदनशील थे। सबसे बड़ी बात यह है कि वे नए विचारों का हृदय से अपने काव्य में उपयोग करते थे। गुप्त जी ने राष्ट्रीय चेतना, सामाजिक जागृति और नैतिक मूल्यों पर बल दिया तथा अपनी रचनाओं के माध्यम से यह संदेश जन-जन तक पहुँचाने का प्रयास किया है। गुप्त जी लोक की महिमा प्रतिष्ठित करने वाले रचनाकार हैं। साकेत के राम कहते हैं-

‘संदेश नहीं मैं यहाँ स्वर्ग का लाया,
इस धरती को ही स्वर्ग बनाने आया।”

गुप्त जी मानववादी रचनाकार है। इन्होंने प्राचीन कथा में नवीणता को दर्शाया है। इन्होंने इसका अच्छा उदाहरण हम ‘साकेत’ में देख सकते हैं। साकेत में इन्होंने प्राचीन आख्यानों में आधुनिक बोध को कलात्मकता के साथ दर्शाया है।

राम तुम मानव हो, ईश्वर नहीं हो क्या?
तब मैं निरीखर हूँ, ईश्वर क्षमा करें।

गुप्त जी ने अपने काव्य में पारिवारिकता को केन्द्रीय संवेदना के रूप में उभारा है। संयुक्त परिवार भारतीय समाज की महत्वपूर्ण विशेषता है। इन्होंने पारिवारिक संबंधों का चित्रण भी नई चेतना के आलोक में किया है। उर्मिला, कैकेयी, यशोधरा, लक्ष्मण, सबमें कुछ न कुछ नवीनता दिखाने का प्रयास कवि ने किया है।

गुप्त जी के काव्य में नारी का स्थान बहुत ही महत्वपूर्ण होता है। नारी भावना को पहचानने और उसका चित्रण करने में गुप्त जी हिंदी काव्य के इतिहास में बेजोड़ है। नारी पात्रों पर स्थितियों का जो प्रभाव पड़ता है उसका चित्रण गुप्त जी बहुत ही स्वाभाविकता के साथ करते हैं। उन्हें नारी पत्र बहुत ही स्वाभिमानी, देशभक्त कर्तव्यपरायण होकर अपनी निजी वेदना खो नहीं देते। साकेत की उर्मिला, यशोधरा की गोपा इसका अच्छा उदाहरण है। भारतीय नारी के विषय गुप्त जी की यह उक्ति बहुत मार्मिक है-

अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी।
आँचल में है दूध और आँखों में पानी॥

गुप्त जी के काव्य में देश प्रेम की भावना कुट-कुट कर भरी हुई है। इसका उदाहरण हम भारत-भारती में देख सकते हैं। इनकी रचनाओं के माध्यम से हम सत्याग्रह अहिंसा, विश्वप्रेम, किसानों के प्रति प्रेम सब की झलक हम देख सकते हैं।

गुप्त जी के काव्य के कला पक्ष पर ध्यान दिया जाए तो हम पाते हैं कि इसमें शैली, छंद, भाषा, अलंकार आदि से बहुत ही समृद्ध है। इन्होंने खड़ी बोली को ही अपने काव्य का माध्यम बनाया। गुप्त जी ने अपने काव्य में प्रसाद, ओज व माधुर्य तीनों गुणों का समावेश किया है। लक्षणा और व्यंजना शब्द शब्द-शक्ति का प्रयोंग भी जगह-जगह देखा जा सकता है। इन्होंने अपने काव्य में विविध शैलियों का भी प्रयोग किया है। 'साकेत', 'जयद्रथ वध' और 'सिद्धराज' प्रबंधात्मक शैली में लिखा गया उनका काव्य है। उन्होंने अपने काव्य में छन्दों का भी सुन्दरता के साथ प्रयोग किया है।

बोध प्रश्न

- गुप्त जी के काव्य प्रमुख रूप से किस भावना को देखा जा सकता है?
- प्रबंधात्मक शैली में लिखे गए गुप्त जी के काव्यों के नाम बताइए।

मैथिलीशरण गुप्त जी की मुख्य रचनाएँ

भारत भारती

भारत भारती गुप्त जी की महत्वपूर्ण रचनाओं में एक है। इसका सृजन 1912 में हुआ तथा इसका प्रकाशन 1914 में किया गया। भारत भारती की रचना के प्रयोजन के बारे गुप्त जी बताते हैं कि "कोई दो वर्ष हुए मैंने 'पूर्व दर्शन' नाम की एक तुकबंदी लिखी थी। उस समय चित्र में आया था कि हो सकता है तो कभी इसे पल्लवित करने की चेष्टा करूँगा। इसके कुछ ही दिन बाद उक्त राजा (राजा रामपाल सिंह) का एक कृपा पत्र मुझे मिला, जिसमें उन्होंने मौलाना हाली के 'मुसद्दस' को लक्ष्य करके इस ढंग की एक कविता पुस्तक हिंदुओं के लिए लिखने का मुझसे अनुग्रहपूर्वक अनुरोध किया।" 'भारत भारती' में गुप्त जी ने स्वदेश प्रेम को दर्शाया है। तथा देश की दशा में सुधार लाने का प्रयोस किया है। गुप्त जी की इस कृति को हम सांस्कृतिक नवजागरण का ऐतिहासिक दस्तावेज़ कह सकते हैं। भारत भारती तीन खंडों में बाँटा गया है, अतीत खंड, वर्तमान खंड तथा भविष्यत खंड। इस कृति में राष्ट्रीयता की भावना को दर्शाया गया है।

भारतीय समाज और संस्कृति के अतीत, वर्तमान और भविष्य पर सोच-विचार के लिए पाठकों को विवश करने वाली यह रचना इस सद्भावना के साथ आरंभ होती है कि सारे संसार

में भारत और भारती का गौरव फिर से स्थापित हो जाए। इसके लिए कवि ने कोरी भावुकता के स्थान पर देश की दशा के ऊपर गंभीर विचार विमर्श की ज़रूरत बताई है -

हम कौन थे क्या हो गए हैं और क्या होंगे अभी,
आओ विचारें आज मिलकर ये समस्याएँ सभी।

गुप्त जी मानते थे कि अपने इतिहास को जाने बिना भारतीयों का सोया हुआ स्वाभिमान जाग नहीं सकता। जबकि स्वतंत्रता के संघर्ष में कूद पड़ने के लिए इसकी बड़ी आवश्यकता थी। इसलिए उन्होंने याद दिलाया कि भारतवर्ष अतीत में संसार का सिरमौर रहा है तथा किसी भी देश की सभ्यता और संस्कृति भारत जितनी पुरानी नहीं है। भारतवर्ष विद्या और कौशल के क्षेत्र में दुनिया का प्रथम आचार्य है। कवि ने यह भी याद दिलाया है कि हमारे पूर्वजों की कीर्ति अपार है। उनके लिए दैहिक सुख कोई महत्व नहीं रखते थे। बल्कि मानव कल्याण के लिए हमारे पूर्वजों ने प्राण नौछावर करने के अनेक उदाहरण प्रस्तुत किए थे। उनकी चेतना पूर्ण स्वाधीन थी-

वे मोह बंधन मुक्त थे, स्वच्छंद थे, स्वाधीन थे,
संपूर्ण सुख संयुक्त थे, वे शांति शिखरासीन थे।

कवि ने अपने पूर्वजों का गुणगान करते समय यह दर्शाया है कि भारतवर्ष अतीत में जगद्गुरू था। उनकी मान्यता है कि -

है आज पश्चिम में प्रभा जो, पूर्व से ही है गई,
हरते अंधेरा यदि न हम, होती न खोज नई-नई।

लेकिन जब कवि अपने समकालीन भारत की वर्तमान दशा पर विचार करते हैं तो दुख और क्षोभ से उनका हृदय हाहाकार करने लगता है। विदेशी आक्रमणों और लंबी गुलामी के कारण भारत का प्राचीन गौरव धूल में मिल गया। समाज का पतन हो गया। मर्यादाएँ भंग हो गईं। स्वार्थ, अहंकार, मद, दरिद्रता, दुर्भिक्ष और आत्महीनता ने भारतीयों को घेर लिया। स्वदेशी के स्थान पर विदेशी के आकर्षण ने भारतीय गौरव को नष्ट कर दिया। ऐसे समय कवि ने अपने देशवासियों को जागने और अपने कर्तव्य को पहचानने की प्रेरणा दी। साहित्यकारों को युग के चारण मानते हुए उन्होंने यह संदेश दिया कि काव्य का उद्देश्य मनोरंजन और चमत्कार नहीं, बल्कि लोक हित और जनता में उच्च भावों को जगाना है। वे कहते हैं -

केवल मनोरंजन न कवि का कर्म होना चाहिए,
उसमें चित उपदेश का भी मर्म होना चाहिए।

कवियो! उठो अब तो अहो, कविकर्म की रक्षा करो,
सब नीच भावों का हरण कर उच्च भावों को भरो।

'भारत भारती' के भविष्यत खंड में कवि ने यह प्रार्थना की है कि भारतीयों की 'पशु तुल्य परवशता' मिटे और यथार्थ मनुष्यता प्रकट हो। वे यह शुभकामना करते हैं कि -

सब की नसों में पूर्वजों का पुण्य रक्त प्रवाह हो,
गुण, शील, साहस, बल तथा सबमें भरा उत्साह हो।
सबके हृदय में सदा समवेदना का दाह हो,
हमको तुम्हारी चाह हो, तुमको हमारी चाह हो॥

बोध प्रश्न

- 'भारत-भारती' में गुप्त जी ने किस प्रेम को दर्शाया है?
- स्वतंत्रता के संघर्ष में कूद पड़ने के लिए किसकी आवश्यकता थी?
- 'भारत-भारती' को सांस्कृतिक नवजागरण का ऐतिहासिक दस्तावेज़ क्यों कहा जा सकता है?
- 'भारत-भारती' कितने खंडों में विभाजित है?

साकेत

साकेत राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त द्वारा लिखित महाकाव्य है। इसमें उर्मिला को केंद्र में रखा गया है। यह एक रामकथा है। साकेत के नवम सर्ग में उर्मिला की विरह वेदना का वर्णन किया है। इस महाकाव्य में पूरी कथा बारह सर्गों विभक्त है। कवि ने अपना पूरा ध्यान उर्मिला पर ही केंद्रित किया है। चूँकि, उर्मिला काव्य में उपेक्षित रही है। किसी ने भी उस पर काव्य लिखने का प्रयास नहीं किया था। आठवें सर्ग में कैकेयी के पश्चाताप का वर्णन कवि ने किया है जिसमें उन्होंने अपनी मौलिक प्रतिभा का परिचय दिया है।

'साकेत' नवजागरण और स्वतंत्रता आंदोलन काल की समग्र चेतना को व्यक्त करने वाली अभिनव रामकथा है। मैथिलीशरण गुप्त मानते हैं कि राम का चरित्र इतना विराट है कि उस पर कलम चलाने वाला कोई भी व्यक्ति कवि बन सकता है। लेकिन राम के इस चरित्र को गुप्त जी ने अपने युग के अनुरूप नए स्वरूप में प्रस्तुत किया। इस रचना के द्वारा उन्होंने लोक कल्याण का एक नया आदर्श स्थापित किया तथा उर्मिला के चरित्र को केंद्र में रखते हुए राम कथा का स्त्री केंद्रित पाठ प्रस्तुत करके समाज के निर्माण और राष्ट्र के उत्थान में स्त्री जाति के योगदान को रेखांकित किया। कवि ने यह दर्शाया है कि सीता और उर्मिला दोनों की तपस्या अपनी अपनी

जगह महान है। सीता ने जहाँ पति के साथ रहकर वन को ही राजभवन समझा, वहीं उर्मिला ने पति से अलग रहते हुए राजभवन में तपोवन जैसा जीवन जिया। नारी चरित्रों के उदात्त चित्रण की दृष्टि से 'साकेत' एक अनुपम कृति है।

बोध प्रश्न

- कवि ने 'साकेत' में अपना पूरा ध्यान उर्मिला पर ही क्यों केंद्रित किया?
- 'साकेत' को राम कथा का स्त्री केंद्रित पाठ क्यों कहा जा सकता है?
- 'साकेत' की रचना का मूल उद्देश्य क्या था?
- 'साकेत' के किस सर्ग में उर्मिला की विरह वेदना का चित्रण है?

यशोधरा

'यशोधरा' गुप्त जी द्वारा रचित प्रबंधकाव्य है। गद्य और पद्य मिश्रित होने के कारण इसे चंपू काव्य की कोटि में रखा जाता है। इसमें गौतम बुद्ध के गृह त्याग की कहानी को केंद्र में रखकर लिया गया है। इसमें नारी के विरहजन्य पीड़ा को विशेष रूप से दर्शाया गया है। इस काव्य का प्रमुख पात्र यशोधरा ही है। इस काव्य की रचना भी 'साकेत' की भाँति ही उपेक्षित नारी चरित्र को प्रतिष्ठा प्रदान करने के लिए की गई है। पति परित्यक्ता यशोधरा के हार्दिक दुख को प्रकट करना यहाँ कवि का मुख्य प्रयोजन रहा है। इसे इतिहास की विडंबना ही कहा जा सकता है कि भगवान बुद्ध के व्यक्तित्व की चकाचौंध के पीछे यशोधरा की पीड़ा कई शताब्दी तक अदृश्य रही। मानवीय सम्बन्धों के अमर गायक और मानव सुलभ सहानुभूति को प्रतिष्ठा प्रदान करने वाले राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने उन्हें नेपथ्य से निकालकर काव्य के रंगमंच पर प्रस्तुत किया।

इस काव्य में यह दर्शाया गया है कि रोग, वृद्धावस्था और मृत्यु के दृश्यों को देखकर गौतम इतने विचलित और भयभीत हो उठते हैं कि पत्नी यशोधरा और पुत्र राहुल को सोते हुए छोड़कर अमृत तत्व की खोज में निकल जाते हैं। उनके जाने के बाद आँचल में दूध और आँखों में पानी लिए यशोधरा किस प्रकार धैर्य पूर्वक जीवन यापन करती है यही इस काव्य का केंद्रीय कथ्य है। सिद्धि प्राप्त होने पर बुद्ध के लौटने पर मानिनी यशोधरा उतावली होकर स्वागत के लिए नहीं दौड़ती, बल्कि खुद बुद्ध उनके द्वार पर आकर भीख माँगते हैं। यशोधरा के पास सबसे बड़ा धन उनका पुत्र राहुल ही था। उसे ही वे उन्हें सौंप देती हैं और स्वयं भी उनका अनुसरण करती हैं। इस काव्य की ये पंक्तियाँ नारी जाति की मर्मवेदना की गायत्री बन गई हैं -

अबला जीवन हाय! तुम्हारी यही कहानी
आँचल में है दूध और आँखों में पानी।

बोध प्रश्न

- गौतम किसे देखकर विचलित हुए?
- 'यशोधरा' काव्य का केंद्रीय कथ्य क्या था?
- यशोधरा के पास क्या धन था?

7.3.4 हिंदी साहित्य में स्थान एवं महत्व

आधुनिक काल के प्रमुख कवियों में गुप्त जी का नाम आता है। ये आम जनता में बहुत लोकप्रिय थे। इन्होंने हिंदी साहित्य की सेवा बड़े उत्साह और इमानदारी के साथ किया। गुप्त जी द्विवेदी जी के आग्रह पर खड़ी बोली हिंदी को काव्य भाषा के रूप में स्वीकार किया। उन्होंने ब्रजभाषा को छोड़कर खड़ी बोली को अपने काव्य की भाषा बना ली। उनकी रचनाएँ बहुत अधिक जनप्रिय हैं। हिंदी साहित्य में तुलसीदास के बाद मैथिलीशरण गुप्त ही एक ऐसे कवि हैं जिन्हें जनता ने बहुत अधिक प्यार दिया है। नव-जागरण की चेतना ने इनके काव्य संवेदना में मिलकर नया काव्य-संस्कार पाया है। भारतेंदु ने जो राष्ट्रीयता की भावना का बीज़ काव्य में डाला था उसका विकास गुप्त जी के काव्य में बहुत अधिक देखा गया और उनका काव्य नए युग की नई चेतना का वाहक बना।

गुप्त जी की कविता ने जन-जागरण का काम बहुत अधिक सफलता के साथ किया। ये भारतीय सभ्यता और संस्कृति के परमभक्त थे, किंतु वे अंधभक्त नहीं थे। उन्हें सभी धर्मों से बहुत अधिक प्यार था। अन्य धर्मों के गुण लेने में वे संकोच नहीं करते थे। गुप्त जी के बारे में पं.रामचंद्र शुक्ल ने लिखा है- "गुप्त जी प्रतिभा की सबसे बड़ी विशेषता है कालानुसरण की क्षमता अर्थात उत्तरोतर बदलती हुई भावनाओं और काव्य प्रणालियों को ग्रहन करते चलने की शक्ति। इस दृष्टि से ये निस्संदेह हिंदी भाषी जनता के प्रतिनिधि कवि कहे जा सकते हैं। भारतेंदु के समय से स्वदेश-प्रेम की भावना जिस रूप में चली आ रही थी उसका विकास 'भारत भारती' में मिलता है। इधर के राजनीतिक आंदोलनों ने जो रूप धारण किया उसका पूरा-पूरा अभास पिछली रचनाओं में मिलता है। इनमें हम सत्याग्रह, अहिंसा, मनुष्यत्ववाद, विश्वप्रेम, किसानों और श्रमजीवियों के प्रति प्रेम और सम्मान सबकी झलक पाते हैं।"

भारतीय-संस्कृति और इतिहास की गुप्त जी को बहुत अधिक जानकारी थी और इसका

प्रयोग वह अपने काव्य में करते थे। अतीत से वर्तमान का इतना घनिष्ठ संवाद उनकी कविता में निरंतर मिलता है। वे दोनों को मिलाने वाले सेतु हैं।

गुप्त जी का महत्त्व इस बात में है कि बहुत आधिक आलोचना के बावजूद वे आधुनिक काल के एक बड़े कवि हैं। उनकी लोकप्रियता के अनेक कारण हैं जैसे सीधी सरल भाषा, पौराणिक कथानकों का चुनाव, गृहस्त जीवन की महिमा का महत्त्व, राष्ट्रीय भाव की अभिव्यक्ति आदि।

मैथलीशरण गुप्त का 'साकेत' महाकाव्य ही नहीं आधुनिक हिंदी का युग प्रवर्तक महाकाव्य है। 'साकेत' में उर्मिला के पारंपरिक चरित्र को एकदम बदल दिया गया है। मैथिलीशरण गुप्त ने अपनी रचनाओं में राष्ट्रीयता, समाजसुधार, नव जागरण, स्वतंत्र चेतना, मानवतावाद, समाजिक समता और गाँधीवाद आदि मूल्यों का समावेश किया है।

हमारी भारतीय संस्कृति में नारी को बहुत सम्मान दिया जाता है। गुप्त जी ने भी अपने काव्य में इसका अनुसरण किया है। उन्होंने नारी के अनेक प्रकार के चरित्र अपने काव्य में उपस्थित किए हैं। हम कह सकते हैं कि हिंदी के किसी भी कवि ने नारी के इतने विभिन्नतापूर्ण चरित्र नहीं प्रस्तुत किए होंगे। नारी की पीड़ाओं में गुप्त जी को गहरी सहानुभूति थी।

अतः हम कह सकते हैं कि हिंदी साहित्य के इतिहास में कवि मैथिलीशरण गुप्त का स्थान अपने राष्ट्रीय चेतना एवं सामाजिक जागृति और नैतिक मूल्यों पर बल देने वाले काव्य के लिए हमेशा याद किया जाएगा।

बोध प्रश्न

- मैथिलीशरण गुप्त के किस काव्य में स्वदेश प्रेम की भावना की झलक मिलती है?
- मैथिलीशरण गुप्त ने अपने कावयाओं में किन मूल्यों का समावेश किया?

7.4 पाठ-सार

मैथिलीशरण गुप्त, द्विवेदी युग के सर्वश्रेष्ठ कवि माने जाते हैं। प्रारम्भ में इनकी रचनाएँ कलकत्ता से निकलने वाले पत्र 'वैश्योपकारक' में प्रकाशित होती थी। द्विवेदी जी से मिलने के बाद इनकी रचनाएँ सरस्वती में प्रकाशित होने लगी। हरिऔध यही द्विवेदी युग के पहले कवि हैं, तो गुप्त जी इस युग के सम्पूर्ण प्रतिनिधि कवि हैं। द्विवेदी युग के काव्य को जितनी ही महत्वपूर्ण प्रवृत्तियाँ है, वे सभी गुप्त जी की रचनाओं में देखी जाती है। उन्होंने ब्रजभाषा को छोड़कर खड़ी

बोली हिंदी में काव्य रचना किया। गुप्त जी की रचनाओं में राष्ट्रीयता, समाज-सुधार, नवजागरण, स्वतंत्र चेतना, मानवतावाद, सामाजिक सभ्यता और गांधीवाद जैसे मुल्य देखने को मिलते हैं। इनकी प्रथम रचना 'रंग में भंग' का प्रकाशन सन् 1909 में हुआ, किंतु इनकी ख्याति 'भारत-भारती' (1912 ई.) से हुई। भारत-भारती को अंग्रेजों ने जब्त भी कर लिया था। इन कृति के प्रकाशन के बाद इन्हें राष्ट्रकवि के रूप में प्रसिद्धि मिली। भारत-भारती में भारत के अतीत का गौरवगान तथा तत्कालीन स्थिति का चित्रण किया गया है। इन्होंने दी महाकाव्यों तथा 19 खण्ड-काव्यों की रचना की। इनके दो महाकाव्य साकेत और यशोधरा है। इन्होंने लगभग 40 कृतियों की रचना की।

गुप्त जी के काव्य में पारिवारिक संबंधों का चित्रण नई चेतना के आलोक में किया गया है। साकेत में कवि ने उर्मिला को केन्द्र में रखकर काव्य की रचना की है। गुप्त जी ने नारी को अपने काव्य में मुख्य स्थान दिया है। अबला नारी में उन्हें गहरी सहानुभूति थी।

अतः इस प्रकार हम कह सकते हैं कि गुप्त जी अपने युग के महान कवि थे तथा अपने काव्य के माध्यम से समाज का सुधार करने वाले महान सुधारक थे।

7.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. मैथिलीशरण गुप्त द्विवेदी युग की राष्ट्रीय काव्यधारा के प्रमुख कवि हैं।
2. मैथिलीशरण गुप्त ने दो महाकाव्यों 'साकेत' और 'यशोधरा' तथा 19 खंड काव्यों की रचना की।
3. गुप्त जी की रचनाओं में 'भारत-भारती' का प्रमुख स्थान है।
4. गुप्त को 'राष्ट्रकवि' के रूप में सबसे पहले महात्मा गांधी ने संबोधित किया।
5. गुप्त जी रामभक्त कवि थे। उन्होंने 'साकेत' में रामकथा को उर्मिला के अवलोकन बिंदु से प्रस्तुत किया है।
6. 'यशोधरा' गौतम बुद्ध के गृह त्याग पर आधारित काव्य ग्रंथ है।

7.6 शब्द संपदा

1. उपाधि	=	सम्मान
2. कालानुसरण	=	समय के अनुसार

3. गृह-त्याग = घर छोड़कर जाना

4. गौरवपूर्ण = सम्मानित

5. प्रतिनिधि = स्थानापत्र व्यक्ति

6. माध्यम = साधन, उपाय

7. विरह = वियोग, अभाव

8. वेदना = कष्ट

9. सर्वश्रेष्ठ = सब में अच्छा

7.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. मैथिलीशरण गुप्त के काव्य की मुख्य विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
2. मैथिलीशरण गुप्त के व्यक्तित्व और कृतित्व पर प्रकाश डालिए।
3. मैथिलीशरण गुप्त की रचना यात्रा का वर्णन कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. 'भारत-भारती' के मूल चेतना पर प्रकाश डालिए।
2. 'साकेत' के संदर्भ अनुसार उर्मिला के विरह का वर्णन करें।
3. मैथिलीशरण गुप्त के काव्य के मूल स्वरों पर प्रकाश डालिए।
4. 'यशोधरा' के मूल कथ्य पर प्रकाश डालिए।
5. हिंदी साहित्य में मैथिलीशरण गुप्त के स्थान एवं महत्व को रेखांकित कीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. मैथिलीशरण गुप्त की वह रचना जिसने देश में राष्ट्रप्रेम की धूम मचा दी। ( )

(क) साकेत (ख) यशोधरा (ग) भारत-भारती (घ) जयभारत

2. साकेत के केन्द्र में किस पात्र की कथावस्तु है। ( )

(क) उर्मिला (ख) लक्ष्मण (ग) राम (घ) सीता

3. मैथिलीशरण गुप्त किस युग के कवि हैं। ( )

(क) छायावादी (ख) भारतेंदु युग (ग) द्विवेदी (घ) प्रगतिवादी युग

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. .... नवजागरण और स्वतंत्रता आंदोलन काल की समग्र चेतना को व्यक्त करने वाली अभिनव रामकथा है।
2. .... में गुप्त जी ने स्वदेश प्रेम को दर्शाया है।
3. किसानों और श्रमजीवियों के प्रति प्रेम और सम्मान .... रचना में देखा जा सकता है।
4. 'यशोधारा' को .... काव्य की कोटि में रखा जाता है।
5. भारतवर्ष ..... और ..... के क्षेत्र में दुनिया का प्रथम आचार्य है।

III. सुमेल कीजिए -

1. यशोधरा	(अ) प्रबंधात्मक शैली
2. साकेत	(आ) चंपू काव्य
3. भारत भारती	(इ) आधुनिक रामकथा
4. जयद्रथ वध	(ई) स्वदेश प्रेम

7.8 पठनीय पुस्तकें

1. भारत भारती : मैथिलीशरण गुप्त
2. साकेत : मैथिलीशरण गुप्त
3. हिंदी साहित्य का इतिहास : रामचंद्र शुक्ल
4. मैथिलीशरण गुप्त रचनावली

इकाई 8 : आदर्श : मैथिलीशरण गुप्त

रूपरेखा

8.1 प्रस्तावना

8.2 उद्देश्य

8.3 मूल पाठ : आदर्श : मैथिलीशरण गुप्त

8.3.1 अध्येय कविता का सामान्य परिचय

8.3.2 अध्येय कविता

8.3.3 विस्तृत व्याख्या

8.3.4 समीक्षात्मक अध्ययन

8.4 पाठ सार

8.5 पाठ की उपलब्धियाँ

8.6 शब्द संपदा

8.7 परीक्षार्थ प्रश्न

8.8 पठनीय पुस्तकें

8.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो, बी.ए. तृतीय सत्र में आधुनिक हिंदी कविता से संबंधित इस पाठ्यक्रम का यह इकाई 8 है। इस इकाई में आप द्विवेदी युगीन प्रसिद्ध कवि मैथिलीशरण गुप्त द्वारा रचित भारत भारती नामक काव्य संकलन से आदर्श खंड का पाठ करेंगे। मैथिलीशरण गुप्त द्विवेदी युग के प्रमुख कवि थे। भारतीय नवजागरण के विकास में गुप्तजी का योगदान अविस्मरणीय रहा है। अतीत गौरव गान के माध्यम से गुप्त जी ने राष्ट्र भक्ति एवं राष्ट्रीय चेतना को जन-जन में जाग्रत किया है। ऐतिहासिक, पौराणिक गाथा को गुप्त ने तत्कालीन परिस्थिति के अनुरूप इस प्रकार चित्रित किया है जिससे इतिहास और पुराण की जानकारी तो होती ही थी साथ ही तत्कालीन समाज को दिशा निर्देश भी मिलता रहा। उनकी रचनाएँ भविष्य के लिए भी मार्ग प्रशस्त करती रहीं, यही कारण है कि आज भी मैथिलीशरण गुप्त हिंदी साहित्य में राष्ट्रकवि के रूप में पहचाने जाते हैं और उनकी रचनाओं का हम निरंतर अध्ययन करते हैं।

गुप्त जी पहले रसिकेंद्र उपनाम से ब्रजभाषा में लेखन कार्य करते थे। कलकत्ते से

निकलनेवाले वैश्योपकारक नामक जातीय पत्र में उनकी रचनाएँ छपती थीं। इसके बाद वे झांसी में पं. महावीरप्रसाद द्विवेदी से मिले, जो सरस्वती पत्रिका का संपादन कर रहे थे। सरस्वती पत्रिका में अपनी रचनाएँ छपवाने की गुप्त जी को प्रबल इच्छा थी और इस इच्छा की पूर्ति के लिए उन्होंने अपनी रचनाएँ भेजी किंतु उनकी वह कविता सरस्वती में नहीं छपी और द्विवेदी जी ने उन्हें पत्र लिखकर सूचित किया- “आपकी कविता पुरानी भाषा में लिखी गई है।” सरस्वती में हम बोलचाल की भाषा में ही लिखी गई कविताएँ छापना पसंद करते हैं। उन्होंने यह भी लिखा था कि रसिकेंद्र बनने का जमाना अब गया। आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी की इन दोनों बातों का गुप्तजी पर विशेष असर पड़ा और उन्होंने खडीबोली में लिखना प्रारंभ किया। उपनाम को भी त्याग दिया। हेमंत नामक कविता लिखकर सरस्वती पत्रिका में छपने के लिए भेजी, जो अनगढ एवं अस्त-व्यस्त थी, किंतु द्विवेदी जी ने उसका संशोधन करके सरस्वती में छाप दी। इस प्रकार द्विवेदी जी के मार्गदर्शन में मैथिलीशरण गुप्त हिंदी साहित्याकाश में सूर्य के समान देदीप्त है।

गुप्त जी की भारत भारती 1914 में प्रकाशित हुई है। इस कृति के तीन खंड हैं जिनमें भारत का अतीत, वर्तमान व भविष्य चित्रित हैं। कवि ने इसमें परतंत्रता की बेडियाँ तोड़ने का आह्वान किया है। देशवासियों को पराधीनता की बेड़ियों से मुक्ति पाने का संदेश देते हुए गुप्त जी ने कहा है :

शासन किसी परजाति का चाहे विवेक विशिष्ट हो।
संभव नहीं है किंतु सर्वांश में वह इष्ट हो॥

सीधी सपाट बयानी अभिव्यक्ति के कारण इस कृति को तत्कालीन अंग्रेज सरकार ने जब्त कर लिया था। बावजूद इसके गुप्त जी ने अपनी रचनाओं के माध्यम से राष्ट्रप्रेम, देश सेवा, त्याग और बलिदान की प्रेरणा देते रहे। भारत भारती में संकलित आदर्श नामक कविता के अंश का विस्तृत अध्ययन आप आगे इस इकाई में करेंगे।

8.2 उद्देश्य

इस इकाई में आप राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त की कविता ‘आदर्श’ का अध्ययन करेंगे। इसके अध्ययन के उपरांत आप -

- ‘भारत भारती’ के कथ्य और महत्व से परिचित हो सकेंगे।

- राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त की सांस्कृतिक चेतना से अवगत हो सकेंगे।
- अध्येय कविता की व्याख्या कर सकेंगे।
- अध्येय कविता के काव्यागत सौंदर्य से परिचित हो सकेंगे।

8.3 मूल पाठ : आदर्श : मैथिलीशरण गुप्त

8.3.1 अध्येय कविता का सामान्य परिचय

प्रिय छात्रों, आप भारत-भारती से आदर्श शीर्षक कविता का अध्ययन कर रहे हैं। आदर्श शीर्षक कविता के भावार्थ एवं लक्ष्यार्थ को समझने से पहले मूल कृति भारत-भारती के बारे में जानलेना आवश्यक है। अत: यहाँ भारत-भारती पर संक्षिप्त विश्लेषण प्रस्तुत है। आशा है कि इसके अध्ययन से आप भारत-भारती की विषयवस्तु, कृति का आशय तथा गुप्त जी की रचनाधर्मिता को समझ पाएँगे। तो चलिए, भारत-भारती का संक्षिप्त परिचय प्राप्त कर लें।

मैथिलीशरण गुप्त की सर्वाधिक लोकप्रिय रचना है भारत-भारती। इस रचना का लेखन कार्य 1912 में पूरी हो चुकी थी, लेकिन दो वर्षों तक विद्वानों के परामर्श से इसमें संशोधन और संपादन करने के बाद 1914 में प्रकाशित कराया। इसके प्रकाशन के बाद संपूर्ण हिंदी क्षेत्र में इसकी ख्याति फैल गई और प्रभात-फेरियों में तथा अनेक विद्यालयों में प्रार्थना के रूप में इसके छंद गाए जाने लगे।

इस रचना की प्रसिद्ध उक्ति है- "हम कौन थे, क्या हो गए हैं और क्या होंगे अभी"। इसी के अनुसार यह काव्य तीन खंडों में विभाजित हैं- अतीत खंड, वर्तमान खंड और भविष्यत खंड। वर्तमान खंड अतीत खंड से थोडा बडा है और भविष्यत खंड सबसे छोटा। अतीत खंड में गुप्त जी ने भारत की असाधारण शक्ति एवं क्षमता का उल्लेख करते हुए अतीत गौरव का गान किया है। मंगलाचरण से इस खंड का प्रारंभ हुआ है तथा क्रमश: अलग-अलग शीर्षकों में कृति का विकास हुआ है। जैसे- मंगलाचरण, उपक्रमणिका, भारतवर्ष की श्रेष्ठता, हमारा उद्भव, हमारे पूर्वज, आदर्श, आर्य स्त्रियाँ, हमारी सभ्यता, जैसे शीर्षकों से कवि ने अतीत वर्तमान तथा भविष्य को दर्शाया है। वर्तमान खंड में भारत की तत्कालीन दुर्दशा का चित्रण है। अतीत और वर्तमान के बीच वैषम्य दिखलाकर उसे भविष्य-निर्माण के लिए तैयार करना कवि का उद्देश्य रहा है।

भारत-भारती का अतीत खंड भारतवर्ष के इतिहास पर गर्व करने को बाध्य करता है। उस समय का दर्शन, धर्म, प्राकृतिक संपदा, स्थापत्य कला कौशल, आयुर्वेद, सामाजिक व्यवस्था,

आदि तत्वों का स्मरण कराते हैं। मेगस्थनीज से लेकर आर.सी.दत्त तक के कथनों को प्रासंगिक ढंग से पाठकों के समक्ष रखा गया है। मुगल कालीन कुछ क्रूर घटनाओं की निंदा भी की गई है। अकबर जैसे कुशल शासक का बखान भी हुआ है। आविष्कार और आधुनिकीकरण के प्रचार हेतु अंग्रेजों की प्रशंसा भी इस खंड में की गई है। अतीत खंड में गुप्तजी ने पौराणिक घटनाएँ एवं चरित्र का वर्णन इतिहास की दृष्टि से किया है। इसमें कवि ने पहले पौराणिक पुरुष-चरित्रों का जिक्र किया है और उसके बाद स्त्री चरित्रों का। जैसे-

आमिष दिया अपना जिन्होंने श्येन-भक्षण के लिए,
जो बिक गए चांडाल के घर सत्य-रक्षण के लिए !
दे दीं जिन्होंने अस्थियाँ परमार्थ-हित जानी जहाँ,
शिवि, हरिश्चंद्र, दधीचि-से होते रहे दानी यहाँ ॥

शिवि, हरिश्चंद्र, दधीचि, पुरु, भरत, प्रह्लाद, ध्रुव, कुश, लव, अभिमन्यु आदि पुरुष चरित्रों की महानता का वर्णन किया है। इसी तरह सावित्री, सुकन्या अंशुमती, गांधारी, दमयंती आदि स्त्री चरित्रों को गौरव प्रदान किया है ।

मूँदें रही दोनों नयन आमरण 'गांधारी जहाँ
पति-संग 'दमयंती' स्वयं वन वन फ़िरी मारी जहाँ।
यों ही जहाँ की नारियों ने धर्म का पालन किया,
आश्चर्य क्या फ़िर ईश ने जो दिव्य बल उनको दिया॥

इसके अतिरिक्त ऐतिहासिक घटनाओं एवं चरित्रों का भी उल्लेख हुआ है । जैसे-

यूनान ही कह दे कि वह ज्ञानी-गुणी कब था हुआ?
कहना न होगा, हिंदुओं का शिष्य वह जब था हुआ ।

गुप्त जी ने इस प्रकार के वर्णन से भारत भूमि की महिमा को गौरव प्रदान किया है। भारत दर्शन का दूर-दूर तक पहले से हुए प्रचार का कवि उजागर करते हैं। जापान में प्रचलित बौद्ध धर्म का जन्म भारत में हुआ था। जापान के लिए उन्होंने जयपाणि शब्द का प्रयोग किया है। चारों वेद, वेदांतसूत्र के रचयिता व्यास, गौतम, कपिल, जैमिनि, पतंजलि, कणाद जैसे महान मनीषियों का चित्रण करते हुए गुप्त ने इस रचना को उत्कृष्ट बनाया है। गुप्त जी की एक विशेषता यह है कि उन्होंने अतीत में भारतीय वीरता का गुणगान करते हुए उसकी आध्यात्मिक चेतना को भी सिंचित किया है। अतीत खंड की समाप्ति कवि निम्नलिखित बंद से करते हैं-

हा दैव ! अब वे दिन कहाँ हैं और वे रातें कहाँ?
हैं काल की घातें कि कम की आज हैं बातें कहाँ?
क्या थे तथा अब क्या हुए हम, जानता बस काल हैं;
भगवान जानें, काल की कैसी निराली चाल है॥

इस व्यथित हृदय से कवि भारत-भारती के वर्तमान खंड में प्रवेश करता है ।

वर्तमान खंड : इस खंड में नैतिक पतन, अव्यवस्था और आपसी भेदभाव से जूझते उस समय के देश की दुर्दशा को दर्शाते हुए सामाजिक नूतनता की कवि ने माँग की है। नैतिक तथा धार्मिक पतन के लिए गुप्तजी ने उपदेशकों, संत-महंतों और ब्राह्मणों की निष्क्रियता और मिथ्या-व्यवहार को दोषी ठहराया है। इस खंड में हमारे सामाजिक दायित्व एवं कर्तव्य के प्रति सुप्त चेतना को जाग्रत करने का प्रयास कवि ने किया है। उनका प्रवेश सबसे पहले अकाल से होता है जो अंग्रेजी हुकूमत की देन है। दुर्भिक्ष शीर्षक कविता का यह बंद देखिए-

दुर्भिक्ष मानो देह धरके घूमता सब ओर है,
हा ! अन्न ! हा ! हा ! अन्न का रव गूँजता घनघोर है।
सब विश्व में सौ वर्ष में रण में मरे जितने हरे,
जन चौगुने उनसे यहाँ दस वर्ष में भूखों मरे॥

भारत कृषि प्रधान देश है। कवि ने कृषि और कृषक शीर्षक कविता में कृषकों की अवस्था का वर्णन करते हैं। अंग्रेजों ने भारत के धंधों को नष्ट कर अपने लिए सिर्फ़ एक कच्चे माल की आपूर्ति करनेवाला देश बनाकर छोड दिया था। भारत भूमि की उर्वरा शक्ति नष्ट होती जा रही थी। अंग्रेजों के विरोध में देश में स्वदेशी आंदोलन शुरू हो चुके थे। शिक्षा की स्थिति भी ऐसी थी कि वह विक्रय की वस्तु बन चुकी थी, जिससे साधारण जनता वंचित हो रहा था, धार्मिक स्थिति, नैतिक स्थिति में भी गिरावट आई थी, कवि ने इन्हीं सारी परिस्थितियों पर गंभीर चिंतन करते हुए वर्तमान खंड को संवारा है।

भविष्यत खंड : इस खंड में अपने ज्ञान, विवेक और विचारों की सीमा को छूते हुए गुप्तजी ने समस्या समाधान के हल खोजने और लोगों से उसके लिए आवाहन करने का भरसक प्रयास किया है। भविष्यत खंड में मुख्यत: नवीन उत्थान के लिए हिंदू जाति को कवि ने उद्बोधित किया है। संपूर्ण भारत की एकता का आह्वान कवि यदि ऐक्य हो तो फ़िर तुम्हारा कौन जग में जोड हो? पंक्ति से करता है। इतना ही नहीं कवि विज्ञान और वैज्ञानिक युग में प्रवेश, औद्योगिक

सभ्यता का ज्ञान आदि की अनिवार्यता पर भी प्रकाश डालता है। गांधीवादी तथा आर्यसमाजी विचारधारा भी इस रचना में झलकती है। इस कृति की अंतिम दो रचनाएँ शुभकामना और विनय गुप्तजी के देशभक्ति की परिचायक हैं। कवि ने ईश्वर से इस प्रकार प्रार्थना की है-

इस देश को हे दीनबन्धो ! आप फ़िर अपनाइए,
भगवान ! भारतवर्ष को फ़िर पुण्य-भूमि बनाइए,
जड़-तुल्य जीवन आज इसका विघ्न-बाधा पूर्ण है,
हेरम्ब ! अब अवलंब देकर विघ्नहर कहलाइए ।

इस प्रकार यह कह सकते हैं कि स्वदेश प्रेम, राष्ट्र प्रेम एवं राष्ट्रभक्ति का यह उत्कृष्ट काव्य है। वर्तमान खंड में देश की गहन निराशपूर्ण स्थिति का वर्णन होने पर भी भविष्यत खंड से पता चलता है कि कवि निराश नहीं है, बल्कि चिंता जताते हुए भी उससे उभरने का आह्वान किया है। कुलमिलाकर यह कहा जा सकता है कि भारत-भारती अपनी रचनाधर्मिता तथा विषय वस्तु की दृष्टि से आज भी एक प्रासंगिक है।

बोध प्रश्न

- गुप्त जी पहले किस उपनाम से लेखन करते थे?
- वैश्योपकारक कहाँ से प्रकाशित होती थी?
- भारत-भारती की रचना किस वर्ष संपन्न हुई थी?
- भारत-भारती में वर्णित किन्हीं चार आदर्श स्त्रियों का नाम लिखिए ।

भारत-भारती से आदर्श का संक्षिप्त परिचय

छात्रो ! अब तक के अध्ययन से आप जान चुके हैं कि भारत-भारती की रचना कविवर मैथिलीशरण गुप्त ने अलग-अलग शीर्षकों में किया है। उनमें से एक शीर्षक है आदर्श। जैसा कि नाम ही सूचित करता है, इस शीर्षक के अंतर्गत कवि गुप्त ने भारत का आदर्श, भारत के गौरवमय इतिहास, भारत के आदर्श मनीषि, स्वर्णिम परंपरा आदि का वर्णन किया है। इस वर्णन के अध्ययन से यही ज्ञात होता है कि कवि का मूल उद्देश्य अतीत के गौरवमय इतिहास एवं आदर्श मनीषियों का वर्णन करते हुए भारत भूमि को गरिमा प्रदान करना तथा उसके प्रति सम्मान तथा समर्पण की भावना जागृत करना रहा है। कवि की राष्ट्रभक्ति एवं राष्ट्रप्रेम को उजागर करने वाली यह रचना है। इसी रचना के माध्यम से गुप्त जी की ख्याति को चार चाँद लगे थे।

आदर्श शीर्षक के अंतर्गत कवि आर्यों की विशेषता, उनके द्वारा किए गए कार्य आदि का भरपूर प्रशंसा करते हुए कहते हैं कि ऐसे महान आर्यों क्या कोई अन्य देश में मिल सकते हैं? यह भारत ही है जहाँ आर्य, ऋषि-मुनि, श्रेष्ठ राजा, सत्य के मार्ग पर चलने वाले राजा हुए हैं। न केवल भारतवासी बल्कि जो बाहर से आते हैं, विदेशी भी इसका वर्णन करते न थकते हैं। गौतम, वशिष्ठ, मनु, वाल्मीकि, वेदव्यास जैसे महान साधकों की यह धरती है। यहाँ पृथु, पुरु, भरत, राम जैसे महान राजा हुए हैं। सत्य के राह पर चलने के लिए अपना सर्वस्व त्यागने वाले राजा-महाराजाओं की यह धरती है। सत्य हरिश्चंद्र जैसे राजा अपना सर्वस्व त्यागकर चाण्डाल के पास बिकने के लिए मजबूर हो जाते हैं। यह धरती न केवल त्याग और बलिदान के लिए प्रसिद्ध है, बल्कि दान, अतिथि सत्कार आदि सद्भावना, सदाचरण की दृष्टि से भी महान रही है। ऐसे कई कहानियाँ इस धरती पर विद्यमान हैं जिनके अध्ययन से हमारे मन में ऊर्जा उत्पन्न होती है। देशभक्ति की भावना जाग्रत होती है, देश के प्रति सम्मान की भावना तथा आदर्श के बीज बोये जाते हैं। इस प्रकार यह रचना अपने आप में महत्वपूर्ण रचना है।

8.3.2 अध्येय कविता : आदर्श

आदर्श जन संसार में इतने कहाँ पर हैं हुए?
सत्कार्य-भूषण आर्यगण जितने यहाँ पर हैं हुए।
हैं रह गये यद्यपि हमारे गीत आज रहे सहे।
पर दूसरों के भी वचन साक्षी हमारे हो रहे ॥1।
गौतम, वशिष्ठ-समान मुनिवर ज्ञान-दायक थे यहाँ,
मनु, याज्ञवल्क्य-समान विधि-विधायक थे यहाँ।
वाल्मीकि-वेदव्यास-से गुण-गान-गायक थे यहाँ,
पृथु, पुरु, भरत, रघु-से अलौकिक लोक-नायक थे यहाँ ॥2॥
लक्ष्मी नहीं, सर्वस्व जावे, सत्य छोडेंगे नहीं,
अंधे बनें पर सत्य से संबंध तोडेंगे नहीं।
निज सुत-मरण स्वीकार है पर वचन की रक्षा रहे,
है कौन जो उन पूर्वजों के शील की सीमा कहे? ॥3॥
सर्वस्व करके दान जो चालीस दिन भूखे रहे,
अपने अतिथि-सत्कार में फ़िर भी न जो रूखे रहे।

पर तृप्ति कर निज तृप्ति मानी रंतिदेव नरेश ने,
ऐसे अतिथि-संतोष-कर पैदा किये किस देश ने?॥4॥
आमिष दिया अपना जिन्होंने श्येन-भक्षण के लिए
जो बिक गये चांडाल के घर सत्य-रक्षण के लिए !
दे दीं जिन्होंने अस्थियाँ परमार्थी-हित जानी जहाँ,
शिवि, हरिश्चंद्र, दधीचि-से होते रहे दानी यहाँ ॥5॥

निर्देश : इस कविता का सस्वर वाचन कीजिए।
इस कविता का मौन वाचन कीजिए।

8.3.3 विस्तृत व्याख्या

आदर्श जन संसार में इतने कहाँ पर हैं हुए?
सत्कार्य-भूषण आर्यगण जितने यहाँ पर हैं हुए।
हैं रह गये यद्यपि हमारे गीत आज रहे सहे।
पर दूसरों के भी वचन साक्षी हमारे हो रहे॥1।

शब्दार्थ : सत्कार्य = अच्छा काम, आर्यगण = श्रेष्ठ लोग। साक्षी = गवाह।

संदर्भ : प्रस्तुत पद्यांश राष्ट्रकवि मैथिलीशरणगुप्त द्वारा रचित भारत-भारती के आदर्श खंड से उद्धृत है।

प्रसंग : भारत-भारती रचना के माध्यम से कवि ने भरसक यह प्रयास किया है कि भारतवासियों के मन में सुप्त चेतना को जाग्रत कर उन्हें प्रेरणा एवं स्फ़ूर्ति प्रदान करें। आदर्श की स्थापना हेतु कवि ने अनेकों महान मनीषियों का वर्णन इस अंश के अंतर्गत किया है।

व्याख्या : भारत भूमि की महानता का बखान करते हुए कवि आदर्श पुरुषों का वर्णन करते हैं और हमारे मन में यह प्रश्न छोड़ जाते हैं कि इस संसार में इतने सारे आदर्श पुरुष क्या आपको कहीं और मिलेंगे? आर्यों के योगदान, उनके द्वारा किए गए कार्य आदि का कवि यहाँ पर वर्णन करता है। कवि कहते हैं कि श्रेष्ठ कार्यों से सम्मानित आर्यजन जितने यहाँ पर हुए हैं, उतने आदर्श जन संसार में कहाँ पर हुए हैं। यद्यपि आज भारतीय संस्कृति और गौरवमय परंपरा के गीत आज कम ही गाए जा रहे हों, हमारी गौरवशाली गाथाएँ कमजोर पड़ गई हों, तथापि अन्य लोगों के वचन भी यही दर्शाता है कि इस देश का श्रेष्ठतम इतिहास रहा है।

विशेषताएँ : भारत की गौरवमय परंपरा का उल्लेख हुआ है। हरिगीतिका छंद में रचित रचना है

और गेय के अनुरूप है। भावानुकूल शब्दावली का प्रयोग हुआ है।

बोध प्रश्न

- उपर्युक्त पद्यंश में किसका चित्रण है?
- इस पद्यंश की विशेषताओं के बारे में बताइए।

गौतम, वशिष्ठ-समान मुनिवर ज्ञान-दायक थे यहाँ,
मनु, याज्ञवल्क्य-समान विधि-विधायक थे यहाँ।
वाल्मीकि-वेदव्यास-से गुण-गान-गायक थे यहाँ,
पृथु, पुरु, भरत, रघु-से अलौकिक लोक-नायक थे यहाँ ॥2॥

शब्दार्थ : अलौकिक = दिव्य, जो लोक में न हो।

संदर्भ : प्रस्तुत पद्यांश राष्ट्रकवि मैथिलीशरणगुप्त द्वारा रचित भारत-भारती के आदर्श खंड से उद्धृत है।

प्रसंग : भारत एक ऐसा देश है जहाँ अनेकों आदर्श पुरुषों ने जन्म लिया है और इस धरती को पावन बनाया है, पुण्य भूमि बनाया है। कवि ऐसे ही आदर्श पुरुषों का बखान करते हैं और आदर्श भारत की गरिमा को शिखर प्रदान करते हैं।

व्याख्या : भारत में उस युग में गौतम, वशिष्ठ जैसे ज्ञान प्रदान करने वाले श्रेष्ठ मुनि हुए थे। मनु और याज्ञवल्क्य जैसे उत्कृष्ट विधान व कानून के ग्रंथ बनाने वाले भी इस देश में ही हुए। संस्कृत में रामायण की रचना करने वाले वाल्मीकि, महाभारत के रचयिता वेदव्यास भी इसी धरती में जन्म लिए। ऐसे महान मनीषियों के चरित्र एवं काव्य कृतियों से न जाने कितने ही लोग प्रेरित हुए होंगे। पृथु, पुरु, भरत और रघु जैसे असाधारण मनीषियों की यह पावन भूमि है। मर्यादा की राह पर चलकर शासन करने वाले अनेकों राजा-महाराजा भी इस धरती के अंग हुए हैं।

विशेषताएँ : गौतम ऋषि षड्दर्शनों में से एक न्याय दर्शन के प्रणेता थे। इनके दर्शन को तर्कशास्त्र भी कहा जाता है। वाद-विवाद की कला में ये श्रेष्ठ थे। वशिष्ठ ऋषि योगवशिष्ठ नामक महान ग्रंथ के रचयिता हैं। यह ग्रंथ वशिष्ठ रामायण के नाम से भी प्रसिद्ध है। इसमें वशिष्ठ ऋषि ने श्रीराम को वेदांत का उपदेश दिया है। मनु को आदि मानव भी कहा जाता है, इनके द्वारा रचित मनुस्मृति एक प्रामाणिक विधि ग्रंथ है। याज्ञवल्क्य भी स्मृतिकार हैं और सामाजिक व्यवस्था पर आधारित इनकी रचना है। संस्कृत में रामायण की रचना करने वाले महान रचनाकार हैं वाल्मीकि। महाभारत जैसे महान ग्रंथ की रचना करने वाले वेदव्यास हैं। पृथु एक

महान राजा हुए। पुरु ययाति के राजा के छोटे पुत्र थे। राम भरत रघुकुल के तिलक हैं। ऐसे महान मनीषियों को गुप्त जी ने स्मरण किया है।

बोध प्रश्न

- इस पद्यंश को पढ़ने के बाद आपने क्या समझा?

लक्ष्मी नहीं, सर्वस्व जावे, सत्य छोड़ेंगे नहीं,
अंधे बनें पर सत्य से संबंध तोड़ेंगे नहीं।
निज सुत-मरण स्वीकार है पर वचन की रक्षा रहे,
है कौन जो उन पूर्वजों के शील की सीमा कहे? ॥3॥

शब्दार्थ : सर्वस्व = सब कुछ। पूर्वज = बुज़ुर्ग, पितर। सुत = पुत्र।

संदर्भ : प्रस्तुत पद्यांश राष्ट्रकवि मैथिलीशरणगुप्त द्वारा रचित भारत-भारती के आदर्श खंड से उद्‌धृत है।

प्रसंग : आदर्शों की चर्चा करते हुए कवि ऐसे व्यक्तियों की चर्चा करते हैं जिन्होंने सत्य पालन के लिए अपना सर्वस्व, दृष्टि एवं पुत्र तक न्यौछावर कर दिए थे। पूर्वजों के सदाचरण का उल्लेख है।

व्याख्या : प्रस्तुत पद्यांश में कवि ने ऐसे आदर्श पुरुषों एवं मनीषियों का वर्णन किया है जो अपार कष्ट सहकर भी सत्य के मार्ग पर डटे रहे। कवि कहते हैं कि भारत ऐसी भूमि है जहाँ ऐसे महान लोग हुए हैं जिनकी अपनी लक्ष्मी अर्थात संपत्ति, राजपाट, तेज आदि सभी नष्ट हो जाने पर भी, सत्य का मार्ग कभी न छोड़ने का जिन्होंने प्रण ली हो, हर हाल में सत्य का पालन करने का आदर्श जिनमें हो, अंधे होने पर भी सत्य से अपना नाता नहीं तोड़ेंगे, ऐसा व्रत जिन्होंने लिया था, अपने पुत्र की मृत्यु का दुख सहकर भी वचन निभाने की क्षमता जिनके अंदर थी, ऐसे हमारे पूर्वज हैं। हमारे ऐसे महान पूर्वजों का गुणगान करने की भला कोई सीमा हो सकती है? अर्थात उनके उत्तम आचरण का पूरा-पूरा ब्यौरा कौन दे सकता है? कवि हमारे लिए प्रश्न छोड़ देते हैं कि हम स्वयं ही सोचकर तय कर लें और भारत की महिमा को जान लें।

विशेषताएँ : प्रथम चरण में राजा सत्यव्रत की कथा कही गई है। राजा सत्यव्रत ने अपने वचन की सत्यता रखने के लिए शनिवार को लोहे की प्रतिमा खरीद ली जिसके कारण शील, तेज, लक्ष्मी उसे त्याग कर जाने को तैयार हो गए, फ़िर भी वह अपनी बात पर अडिग रहा। दूसरे चरण में कवि ने अलर्क राजा की ओर संकेत किया है जो सूर्यवंशी थे, कुवलयाश्व और मदालसा के पुत्र थे, सत्यपालन के लिए इन्होंने अपना नेत्रदान कर दिया था। तीसरे चरण में कवि ने राजा

मोरध्वज की ओर संकेत किया है जिन्होंने वचन की रक्षा के लिए पत्नी के साथ मिलकर पुत्र को आरे से चीर दिया था। महाभारत का यह प्रसंग है। वक्रोक्ति अलंकार है। सांकेतिक भाषा एवं व्यंजना का प्रयोग है।

बोध प्रश्न

- इस काव्यांश में गुप्त जी ने किन महान मनीषियों का स्मरण किया?

सर्वस्व करके दान जो चालीस दिन भूखे रहे,
अपने अतिथि-सत्कार में फ़िर भी न जो रूखे रहे ।
पर तृप्ति कर निज तृप्ति मानी रंतिदेव नरेश ने,
ऐसे अतिथि-संतोष-कर पैदा किये किस देश ने?॥4॥

शब्दार्थ : अतिथि = मेहमान। सत्कार = सेवा।

संदर्भ : प्रस्तुत पद्यांश राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त द्वारा रचित भारत-भारती के आदर्श खंड से उद्धृत है।

प्रसंग : आदर्शों की चर्चा करते हुए अब कवि राजा रंतिदेव के अनुपम आदर्श को प्रस्तुत करते हैं-

व्याख्या : प्रस्तुत पद्यांश में कवि ने ऐसे आदर्श पुरुष का चित्रण करते हैं जो अपना संपूर्ण वैभव त्याग दिया, दान में दे दिया, स्वयं चालीस दिन तक भूखा रहना स्वीकार किया, परंतु उस दशा में भी घर आए अतिथि का सत्कार, सम्मान में कोई कमी नहीं रखी, जिनका व्यवहार कभी कठोर न रहा। लोग यदि अभावग्रस्त हों और कोई अतिथि ऐसे में घर आ जाएँ तो अवश्य कुढने लगते हैं, तिरस्कार की दृष्टि से देखने लगते हैं, परंतु इस पुरुष ने अतिथि के सत्कार में कोई कसर न रखा। दूसरे की तृप्ति में स्वयं तृप्त होते रहे। ऐसे महान राजा रन्तिदेव इस धरती की शोभा है। स्वयं कष्ट में रहकर भी अतिथि को संतुष्ट करने वाले मनुष्य भारत के अतिरिक्त और किस देश ने पैदा किए हैं? हर पद्यांश में कवि ने पाठक वर्ग के लिए एक प्रश्न छोडा है और हमें सोचने के लिए मजबूर किया है।

विशेषताएँ : कहा जाता है कि रन्तिदेव मध्यप्रदेश के किसी भाग के राजा थे। एक बार उनके राज्य में भयंकर अकाल पड़ गया। भूखी प्रजा की पेट भरने के लिए राजा ने अपना कोष और धान बाँट दिया। राजा स्वयं चालीस दिन तक भूखे रहे, इकतालीसवें दिन उन्हें कहीं से थाली भर भोजन प्राप्त हुआ। वे जैसे ही हाथ-पांव धोकर भोजन करने बैठे, तभी एक ब्राह्मण अतिथि आ पहुँचे। राजा ने भोजन का आधा हिस्सा उन्हें दे दिया। अपना हिस्सा खाने ही वाले थे, इतने

में कहीं से एक चाण्डाल कुत्तों के साथ आ पहुँचा। राजा ने अपने हिस्से का सारा अन्न उसे दे दिया। राजा ने जब पानी पीना चाहा तो एक प्यासा आ गया और पानी की याचना करने लगा। राजा ने प्रसन्नता से उसे पानी पिला दिया और प्रसन्नता का अनुभव किया।

यहाँ परायी तृप्ति से अपने को तृप्त मानने में असंगति अलंकार है। किस देश ने उत्पन्न किए? अर्थात किसी ने भी नहीं, इस आशय में काकुवक्रोक्ति अलंकार है। तृप्ति की आवृत्ति से लाटानुप्रास है।

बोध प्रश्न

- उपर्युक्त अंश में कवि ने किसका चित्रण किया है?

आमिष दिया अपना जिन्होंने श्येन-भक्षण के लिए
जो बिक गये चांडाल के घर सत्य-रक्षण के लिए !
दे दीं जिन्होंने अस्थियाँ परमार्थी-हित जानी जहाँ,
शिवि, हरिश्चंद्र, दधीचि-से होते रहे दानी यहाँ ॥5॥

शब्दार्थ : आमिष = मांस। रक्षण = रक्षा।

संदर्भ : प्रस्तुत पद्यांश राष्ट्रकवि मैथिलीशरणगुप्त द्वारा रचित भारत-भारती के आदर्श खंड से उद्धृत है।

प्रसंग : आदर्श चित्रण के अंतर्गत कवि ऐसे मनीषियों का भी बखान करते हैं जिन्होंने सत्य का पालन करने के लिए अपने मार्ग में अनेकों कष्ट झेले।

व्याख्या : प्रस्तुत पद्यांश में कवि ऐसे मनीषियों का बखान कर रहे हैं जो सत्य के मार्ग पर चलने के लिए स्वयं को कठोर परिस्थितियों में डाला, स्वयं काँटों पर चलते रहे, किंतु सत्य के मार्ग से नहीं हटे। ऐसे राजाओं में से एक थे, शिवि राजा जिन्होंने कबूतर के बदले बाज को भोजन देने के लिए अपने ही शरीर का मांस दे दिया। सत्य की रक्षा के लिए राजा हरिश्चंद्र ने चाण्डाल के हाथों बिकना स्वीकार किया, दधीचि ऋषि जिन्होंने दूसरों के उपकार के लिए अपने शरीर की हड्डियाँ भी दे डाली थी । ऐसे दानी महापुरुष की यह जन्म भूमि है।

विशेषताएँ : राजा शिवि की परीक्षा लेने के लिए धर्म और अग्नि बाज और कबूतर के रूप में उपस्थिति हुए। कबूतर अपने आप को बचाने के लिए राजा शिवि की गोद पर जा बैठा। बाज अपने भोजन की मांग करने लगा और एक शर्त पर उस कबूतर को छोडने के लिए तैयार हो गया, वह था, स्वयं राजा शिवि को उसका मांस भोजन बनना पडेगा। कबूतर की रक्षा के उद्देश्य

से राजा शिवि अपने ही मांस को काटकर देने लगा, किंतु बाज का वजन बढता ही गया, अंत में शिवि ने अपना सिर काटने पर तुले। इस प्रकार की यह कहानी है, जिन्होंने अपने निजी खुशी और जीवन की परवाह नहीं की। गुरु विश्वामित्र को दिए गए वचन निभाने हेतु राजा हरिश्चंद्र को अपना सर्वस्व यहाँ तक कि बेटा और पत्नी को भी त्यागकर चांडाल का शरण लेना पडा। सत्य के पालन में उन्हें अनेकों संकटों का सामना करना पडा, किंतु सत्य से कभी न हटे। कवि ऐसे ही महान राजाओं का प्रस्तुत अंश में बखान कर रहे हैं।

बोध प्रश्न

- बाज़ को भोजन देने के लिए अपने ही शरीर का मांस किसने दिया?
- दधीचि ऋषि ने क्या किया?

8.3.4 समीक्षात्मक अध्ययन

भारतीय नवजागरण और मैथिलीशरण गुप्त

मैथिलीशरण गुप्त हिंदी साहित्य के आधुनिक काल के द्विवेदी युग के महान रचनाकार हैं जिन्हें राष्ट्रकवि के रूप में संबोधित किया जाता है। भारतेंदु युग से ही अर्थात 19वीं सदी से ही पुनर्जागरण या नवजागरण काल की शुरूआत हो जाती है। अंग्रेजों के शासन के दौरान विदेशी शिक्षा नीति, ज्ञान-विज्ञान के नए रूपों के साथ-साथ वैचारिक एवं सांस्कृतिक आंदोलन भी प्रारंभ हो चुके थे। द्विवेदी युग तक आते-आते स्वाधीनता आंदोलन अधिक शक्तिशाली हो गया था। ब्रिटीश सम्राज्यवाद के विरुद्ध देश के बुद्धिजीवि, क्रांतिकारी डटकर संघर्ष के लिए खडे थे। साहित्य के क्षेत्र में भी काफ़ी बदलाव होने लगे थे। खडी बोली में लेखन कार्य चल रहा था। द्विवेदी युग में आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी जी ने सरस्वती पत्रिका के माध्यम से खडी बोली हिंदी में लेखन कार्य को प्रोत्साहित कर रहे थे, साथ ही लेखकों को अपने कर्तव्य का बोध भी करवा रहे थे। गुप्त जी को भी उन्होंने कहा था कि अब रसिकेंद्र बनने का समय नहीं रहा। इसके माध्यम से वे लेखक को उनके कर्तव्य के प्रति सजग बना रहे थे।

ब्रजभाषा कविता की सामंतवादी रूढ़ियों को पीछे छोड़कर खडी बोली में साहित्य लेखन को महत्व दिया जाने लगा था। गद्य और पद्य दोनों विधाओं की रचनाएँ खडी बोली में ही होने लगी थी। इस युग के जितने भी साहित्यकार हुए सभी ने राष्ट्रप्रेम की अलख जगाई। गुप्त जी की यशोधरा, साकेत, भारत-भारती, जयद्रथ वध आदि रचनाएँ भारतीय आख्यान के साथ-साथ नारी शक्ति, स्वाधीनता, मानवीय मूल्य आदि के संदेश देते थे। इस प्रकार भारतीय नवजागरण

में गुप्त जी का विशेष योगदान रहा है।

बोध प्रश्न

- राजा शिवि की परीक्षा लेने के लिए बाज और कबूतर के रूप में कौन उपस्थित हुए थे?
- राजा रन्तिदेव कितने दिनों तक भूखे थे?
- गुप्तजी की प्रारंभिक रचनाएँ किस भाषा में लिखी गई हैं?

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त का रचना संसार

द्विवेदी युग के प्रख्यात रचनाकार, राष्ट्रीय कवि के रूप में ख्याति प्राप्त मैथिलीशरण गुप्त (1886-1964) ने आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी जी की प्रेरणा से ही ब्रजभाषा को छोड़कर खडीबोली में लेखन कार्य करने लगे। तत्कालीन परिस्थितियों का स्पष्ट प्रभाव उनकी रचनाओं में परिलक्षित होती हैं। उन्होंने काव्य के प्राचीन विषयों को द्विवेदीयुगीन नैतिकता का जामा पहनाकर नए मानवतावादी रूप में प्रस्तुत किया, देश के अतीत का गौरव गान किया, वर्तमान की दुर्दशा पर आक्रोश प्रकट किया और भविष्य के लिए आशा का बीज बोते हुए नूतन संदेश दिया। उनकी विशेषता यह रही कि वे बदलते परिवेश तथा भावनाओं के अनुरूप रचनाएँ करते थे। इसीलिए उनकी रचनाओं में एक ओर द्विवेदी युगीन इतिवृत्तात्मकता दिखाई देती है तो दूसरी ओर छायावादी बिंब भी दिखाई देती है।

गुप्त जी की काव्य रचना का प्रारंभ 1909 से माना जाता है जो कि उनके जीवन के अंत तक अनवरत चलता रहा। लगभग छ: दशकों में गुप्तजी की लगभग साठ कृतियों का उल्लेख किया जाता है। उनमें से कुछ प्रमुख रचनाएँ हैं- रंग में भंग, जयद्रथ-वध, भारत-भारती, शकुंतला, किसान, पत्रावली, हिंदू, वैतालिक, पंचवटी, स्वदेश संगीत, त्रिपथगा, शक्ति, गुरुकुल, झंकार, साकेत, यशोधरा, सिद्धराज, द्वापर, मंगलघट, आस्वाद, नहुष, कुणाल गीत, काबा और कर्बला, वन-वैभव, हिडिंबा, विष्णुप्रिया आदि। इनके अतिरिक्त गुप्त जी ने बंगला के माइकेल मधुसूदन दत्त के विरहिणी ब्रजांगना तथा मेघनाद वध, नवीन चंद्र सेन के काव्य का पलासी का युद्ध, हेमचंद्र के महाकाव्य का वृत्तसंहार और उमर खैयाम की रुबाइयत उमर खैयाम आदि ग्रंथों का काव्यानुवाद भी हिंदी में प्रस्तुत किया है। खडी बोली की उनकी प्रारंभिक रचनाओं में कृत्रिमता एवं सरल शब्दों का प्रयोग दिखाई देता है, किंतु आगे की रचनाओं में परिमार्जित भाषा, सुगठित विचार परिलक्षित होती है। पंचवटी उनकी उत्कृष्ट खंडकाव्य है जिसमें गुप्तजी की काव्य कला अधिक निखर आई है। साकेत, यशोधरा, द्वापर उनके उत्कर्षकालीन रचनाएँ हैं।

भाषा प्रयोग की दृष्टि से यदि देखा जाय तो हम पाते हैं कि गुप्त जी ने खडीबोली के व्यावहारिक, स्वच्छ, स्पष्ट, गद्यमय-भाषा के साथ-साथ तत्सम शब्दावली का प्रयोग किया है। प्राय: इसीलिए डॉ. सहदेव वर्मा ने कहा है- खडी बोली के उत्कर्ष में गुप्तजी का योग सुनार और जडिये का सा है, जिस प्रकार स्वर्णकार गहने को आकार देता है, अनगढ़ से सुगढ़ बनाता है और जडिया उसमें नग, मोती, आदि जड़कर अधिक सौंदर्य प्रदान करता है, वैसे ही गुप्तजी ने आरंभ में खडीबोली का व्याकरण सम्मत रूप प्रस्तुत कर धीरे-धीरे गुण,वृत्ति, शब्दशक्ति आदि का समावेश किया है। गुप्त जी ने खडीबोली को नवीन शब्द, उनके नवीन प्रयोग तथा नवीन अर्थ दिए जिनका विकास छायावादी कवियों में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है।"(मैथिलीशरण गुप्त का खडी बोली के उत्कर्ष में योगदान, डॉ. सहदेव वर्मा, पृ.सं 446)

बोध प्रश्न

- गुप्त जी के काव्य की क्या विशेषताएँ?

गुप्तजी की राष्ट्रीय भावना

गुप्तजी की रचनाओं में समाज सुधार की भावना, राष्ट्रीयता, जन-जागरण की प्रवृत्ति, एवं युगबोध विद्यमान हैं। उनकी कृति भारत-भारती में भारत के अतीत गौरव के साथ-साथ वर्तमान दुर्दशा की ओर ध्यान आकृष्ट किया गया है और परतंत्रता की बेडियों को तोडने का आग्रह है। इन्हीं कारणों से तत्कालीन अंग्रेज सरकार ने जब्त कर लिया था। इसके अतिरिक्त उनके अन्य काव्य-ग्रंथों में भी राष्ट्रप्रेम, देश सेवा, त्याग और बलिदान की प्रेरणा दी गई है। स्वदेश संगीत में गुप्त जी ने परतंत्रता की घोर निंदा करते हुए भारत की सुप्त चेतना को जगाने का प्रयास किया है। अनघ में सत्याग्रह की प्रेरणा देते हुए राष्ट्र सेवा, राष्ट्र रक्षा, आत्मोत्सर्ग की भावनाओं का निरूपण किया। वकसंहार में गुप्त जी ने अन्याय दमन की प्रेरणा दी है। साकेत में स्वावलंबन का पाठ पढाया। यशोधरा और द्वापर में नारी भावना की अभिव्यक्ति तथा राष्ट्र और समाज को उसके कर्तव्य का बोध कराते हैं। इस प्रकार गुप्त जी की लगभग सभी रचनाओं में राष्ट्रप्रेम और समाज सुधार की भावना झलकती है। लोककल्याण की भावना उसमें निहित है।

केवल मनोरंजन न कवि का कर्म होना चाहिए।
उसमें उचित उपदेश का भी मर्म होना चाहिए ॥

गुप्तजी की नारी भावना

गुप्तजी ने साकेत महाकाव्य में वियोगिनी उर्मिला का, मातृत्व भावयुक्त कैकेयी का, द्वापर

काव्य में विधृता का, यशोधरा खंडकाव्य में यशोधरा का, तथा विष्णुप्रिया में नायिका का चित्रण बडे ही मार्मिक एवं मनोयोग से किया है। नारी के संबंध में गुप्त जी की दो पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं-

अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी
आंचल में है दूध और आँखों में पानी ॥

उपरोक्त पंक्तियों में नारी को अबला कहते हुए उसकी अक्षमता पर दुख व्यक्त किया गया है तथा उसमें मातृत्व भाव की प्रबलता को स्वीकार करते हैं। इसका तात्पर्य यह नहीं कि गुप्त जी नारी को नर से हीन मानते हैं। वे नारी को नर की तुलना में अधिक गरिमा प्रदान करते हुए नर से श्रेष्ठ निरूपित करते हुए एक नहीं दो-दो मात्राएँ नर से भारी नारी कहकर नारी का सम्मान भी करते हैं।

आजादी से पूर्व सामंती युग में नारी पर हुए अत्याचार पर दुखी होकर नारी की महत्ता की स्थापना करते हैं। द्वापर में विधृता को अन्याय का विरोध करने वाली तेजस्विनी नारी के रूप में चित्रित कर नारी की महत्ता को स्थापित किया है। अन्याय के समक्ष कभी न झुकने का आह्वान करती हुई वह कहती है-

जाती हूँ जाती हूँ अब मैं और नहीं रुक सकती ।
इस अन्याय समक्ष मरूं मैं कभी नहीं रुक सकती ॥

गुप्तजी की रचनाओं में नारी के विविध रूपों का चित्रण मिलता है। जैसे- कुलवधू, गृहिणी, विरहिणी, वीरांगना, पति- परायण स्त्री, वात्सल्यमयी माँ, जन-सेविका आदि। पति ही पत्नी की गति है कहकर गुप्त जी आदर्श पत्नी का चित्रण करते हैं।

बोध प्रश्न

- गुप्त जी ने नारी के किन-किन रूपों का चित्रण किया है?

8.4 पाठ सार

प्रिय छात्रों, अब तक आपने हिंदी साहित्याकाश में राष्ट्रकवि के रूप में विराजमान मैथिलीशरण गुप्त को पढ़ रहे थे। आपने समझ लिया होगा कि गुप्त जी किस युग के कवि हैं और किसके द्वारा उन्हें संवारा गया। गुप्त जी ने महावीरप्रसाद द्विवेदी की विचारधारा तथा मार्गदर्शन को स्वीकारा तथा उसका अनुपालन किया जिसके फ़लस्वरूप वे हिंदी साहित्य जगत में राष्ट्रकवि

कहलाए। भारत की प्राचीन परंपरा को विषय वस्तु के रूप में स्वीकृत करते हुए गुप्त जी ने नवीन उद्बोधन तथा नूतन संभावनाओं की स्थापना की है। उनकी प्रत्येक रचना अपने आप में मोती के समान है। भारत-भारती में उन्होंने अतीत, वर्तमान एवं भविष्य का चित्रण किया है। साठ से भी अधिक काव्य कृतियों की रचना कर गुप्त जी ने महत्तम कार्य किया है। समाज सुधार, राष्ट्र प्रेम, देश भक्ति की अलख जगाना आदि उनकी रचनाओं का मूल उत्स है। स्त्री-पुरुष, गौरवमय इतिहास, महान पुरुषों आदि सभी का चित्रण आपकी रचनाओं में मिलती हैं।

8.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. मैथिलीशरण गुप्त द्विवेदी युग के प्रमुख रचनाकार हैं। उन्होंने नवजागरण काल के अनुरूप देशवासियों को प्रेरित करने वाले साहित्य की रचना की।
2. मैथिलीशरण गुप्त का काव्य राष्ट्रीय-सांस्कृतिक चेतना से अनुप्राणित है।
3. मैथिलीशरण गुप्त ने भारतीय जनता के मन में राष्ट्रीय स्वाभिमान और स्वाधीनता की भावना जगाने के लिए अतीत का गौरव गान किया है।
4. मैथिलीशरण गुप्त यह मानते थे कि प्राचीन भारतीय जीवन मूल्यों और आदर्शों की पुनः स्थापना करके भारतवासियों को अंग्रेजों की दासता से मुक्ति के लिए प्रेरित किया जा सकता है।

8.6 शब्द संपदा

1. उत्थान = उठाना, उठना, बढती
2. उद्बोधक = जगाने वाला, उठाने वाला, याद दिलाने वाला
3. दुर्भिक्ष = अकाल
4. निष्क्रियता = जो कोई भी कार्य नहीं करता, कोई काम-धाम न करने वाला
5. प्रासंगिक = प्रसंगोचित, प्रसंग के अनुरूप
6. मिथ्या व्यवहार = झूठा व्यवहार करना, झूठ का सहारा लेना

8.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. 'भारत भारती' के मूल उद्देश्य को अपने शब्दों में लिखिए।
2. गुप्त जी की रचनाओं में निहित राष्ट्रीय चेतना पर प्रकाश डालिए।
3. भारत-भारती का सारांश अपने शब्दों में लिखिए।
4. गुप्तजी की राष्ट्रीय भावना पर प्रकाश डालिए ।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. गुप्तजी की नारी भावना पर प्रकाश डालिए।
2. गौतम, वशिष्ठ..................लोक नायक थे यहाँ पद की व्याख्या कीजिए।
3. सर्वस्व करके दान जो चालीस दिन भूखे रहे- इस पद के माध्यम से कवि क्या कहना चाहते हैं?
4. गुप्त जी और नवजागरण विषय पर टिप्पणी लिखिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. रसिकेंद्र उपनाम आपका है- ( )

   क) आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी ख) आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी

   ग) मैथिलीशरण गुप्त घ) उपरोक्त सभी

2. गुप्त की रचना हेमंत को इन्होंने सुधारा ( )

   क) महावीरप्रसाद द्विवेदी ख) हजारीप्रसाद द्विवेदी ग) दोनों घ) इनमें से कोई नहीं

3. "पति ही पत्नी की गति है"- किसकी पंक्ति है? ( )

   क) आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी ख) सोहनलाल द्विवेदी

   ग) माखनलाल चतुर्वेदी घ) मैथिलीशरण गुप्त

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. आपकी कविता पुरानी भाषा में लिखी गई है”, गुप्त के लिए.........................का कथन है।

2. गुप्तजी पहले ....में लिखते थे।

3. भारत-भारती के .... खंड हैं जिन्हें क्रमश: अतीत,................... और भविष्यत कहा जाता है।

4. जयपाणि शब्द का प्रयोग गुप्त जी ने ....के लिए किया है।

III सुमेल कीजिए -

1. पुरु	(अ) सत्य वचन
2. सत्य हरिश्चंद्र	(आ) दे दी जिन्होंने अस्थियाँ
3. शिवि	(इ) आमिष दिया अपना
4. दधीचि	(ई) लोक नायक

8.8 पठनीय पुस्तकें

1. मैथिलीशरण : नंदकिशोर नवल
2. मैथिलीशरण गुप्त - व्यक्ति और काव्य : कमलाकांत पाठक
3. हिंदी के आधुनिक प्रतिनिधि कवि : द्वारिकाप्रसाद सक्सेना

इकाई 9 : जयशंकर प्रसाद : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

रूपरेखा

9.1 प्रस्तावना

9.2 उद्देश्य

9.3 मूल पाठ : जयशंकर प्रसाद: व्यक्तित्व एवं कृतित्व

9.3.1 जीवन परिचय

9.3.2 रचना यात्रा

9.3.3 रचनाओं का परिचय

9.3.4 हिंदी साहित्य में स्थान एवं महत्व

9.4 पाठ-सार

9.5 पाठ की उपलब्धियाँ

9.6 शब्द संपदा

9.7 परीक्षार्थ प्रश्न

9.8 पठनीय पुस्तकें

9.1 प्रस्तावना

हिंदी साहित्य के इतिहास में आधुनिक काल का तीसरा उत्थान छायावाद युग के नाम से जाना जाता है। इसका विकास द्विवेदीयुगीन कविता के बाद हिंदी में हुआ। छायावादी काव्य की समय सीमा मोटे तौर पर 1918 से 1936 ई. तक मानी जा सकती है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने छायावाद का प्रारंभ 1918 ई. से माना है, क्योंकि छायावाद के प्रमुख कवियों पंत, प्रसाद, निराला ने अपनी रचनाएँ लगभग इसी वर्ष के आसपास लिखनी शुरू की थी। 1918 ई. में प्रसाद का झरना तथा 1916ई. में निराला की प्रसिद्ध कविता 'जुही की कली' प्रकाशित हुई थी। पंत के पल्लव की कुछ कविताएँ तथा प्रसाद की कामायनी भी इसी समय प्रकाशित हुई। छायावादी काव्य का जन्म द्विवेदी युगीन काव्य की विशेषताओं को देखते हुए किया गया था। क्योंकि द्विवेदीयुगीन कविता अधिकतर विषयनिष्ठ, वर्णन प्रधान और स्थूल थी जबकि छायावादी कविता को हम देखते हैं कि वह व्यक्तिनिष्ठ, कल्पनाप्रधान एवं सुक्ष्म है। छायावाद के प्रमुख चार कवि हैं - जयशंकर प्रसाद, सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', सुमित्रानंदन पंत तथा

महादेवी वर्मा। इन्हें छायवाद के मुख्य स्तंभ माना जाता है।

9.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई के अध्ययन से आप -

- छायावादी कवि जयशंकर प्रसाद के व्यक्तित्व से परिचित हो सकेंगे।
- प्रसाद की रचनाओं के बारे में जान सकेंगे।
- प्रसाद के काव्यों की विशेषताओं से अवगत हो सकेंगे।
- छायावादी कवियों में जयशंकर प्रसाद के महत्व को जान सकेंगे।

9.3 मूल पाठ : जयशंकर प्रसाद : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

9.3.1 जीवन परिचय

छायावाद के श्रेष्ठ कवि एवं प्रर्वत्तक जयशंकर प्रसाद का जन्म 1890 ई. में काशी के एक संपन्न वैश्य परिवार में हुआ था, जो 'सुँघनी साहु' नाम से प्रसिद्ध था। बचपन से ही इन्हें कविता के प्रति बहुत रुचि थी। इन्होंने आठवीं कक्षा तक शिक्षा प्राप्त की और उसके बाद घर पर ही रहकर वे संस्कृत, हिंदी, उर्दू और अंग्रेज़ी सीखी। अपने साहित्यिक जीवन के प्रारंभ में इन्होंने ब्रजभाषा में 'कलाधर' उपनाम से लिखी, किंतु बाद में खड़ी बोली में कविता करने लगे।

जयशंकर प्रसाद हिंदी के छायावादी युग के चार प्रमुख स्तंभों में से एक है। यह बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। वे एक युगप्रर्वतक लेखक थे, जिन्होंने एक ही साथ कविता, नाटक, कहानी और उपन्यास के क्षेत्र में हिंदी को गौरवान्वित होने वाली कृतियाँ दी। कवि के रूप में निराला, पन्त, महादेवी के साथ छायावाद के प्रमुख स्तंभ के रूप में उनका नाम लिया जाता है तथा नाटक लेखन में भारतेंदु के बाद इनका मुख्य रूप से नाम आता है जो एक अलग धारा बहाने वाले युगप्रर्वत्तक नाटककार माने जाते हैं। इनके नाटकों को पाठक बहुत चाव से पढ़ते हैं तथा उनकी अर्थगंभिरता तथा रंगमंचीय प्रासंगिकता भी दिनों-दिन बढ़ती ही गयी है। इनका रचना काल 26 वर्षों का रहा। ये भारतीय दर्शन, इतिहास और अध्यात्म के अधिकारी विद्वान थे। इनका प्रथम ब्रजभाषा काव्यसंग्रह 'चित्राधार' नाम से सन् 1918 ई. में प्रकाशित हुआ।

प्रसाद जी बहुमुखी प्रतिमा के धनी आधुनिक हिंदी साहित्य जगत के कालजयी कलाकार तथा शिव के उपासक थे। अपने जीवन-संघर्षों, अपने लोगों से बिछड़ना, अर्थाभाव तथा पत्नी का वियोग आदि कष्टपूर्ण जीवन को झेलते हुए भी इन्होंने हिंदी काव्य जगत को अपनी कृति के रूप

में अनमोल रत्न दिए हैं। अत्याधिक श्रम और क्षय रोग से पीड़ित रहने के कारण 15 नवंबर, 1937 को मात्र 48 वर्ष की अल्पायु में ही उनका निधन हो गया।

प्रसाद जी कवि होने के साथ-साथ गंभीर चिंतक भी थे। इनकी कुछ कविताओं में पौराणिक प्रसंगों को विषय बनाया गया है तथा कुछ ऐतिहासिक तथा अन्य प्रसंगों को लेकर लिखी गई है। इनकी काव्य रचनाएं हैं - 'उर्वशी' (1909), 'वनमिलन' (1909), 'प्रेमराज्य' (1909), 'अयोध्या का उद्धार' (1910), 'शोकोच्छ्वास' (1910), 'वभ्रुवाहन' (1911), कानन-कुसुम (1913), 'प्रेमपथिक' (1913), 'करुणालय' (1913), 'महाराणा का महत्व' (1914), 'झरना' (1918), 'आँसू' (1925), 'लहर' (1933) और 'कामायनी' (1935), 'प्रेम पथिक'। प्रेम पथिक की रचना पहले ब्रजभाषा में की गयी थी किन्तु बाद में उसे खड़ी बोली में रूपांतरित कर दिया गया।

जयशंकर प्रसाद छायावादी युग के प्रवर्त्तक के नाम से जाने जाते हैं। उनके साहित्य में भारतीय संस्कृति का चित्रण बहुत ही सुंदर ढंग से किया गया है। इनके काव्य 'झरना' में सबसे पहले छायावादी प्रवृत्तियों के दर्शन होते हैं। इस संग्रह की कविताओं का मुख्य स्वर प्रेम और सौंदर्य से संबद्ध है। इस संबंध में आचार्य नंददुलारे बाजपेयी का मत है, "इसमें एक नई कल्पनाशीलता नूतन जागरूक चेतना, मानव वृत्तियों की सूक्ष्मतर प्रौढ़तर पकड़, एक विलक्षण अवसाद, संशय और कौतूहल, जो नई चिंतन का सूक्ष्म प्रभाव प्रकट हो रहा है।" झरना के बाद उनकी दूसरी कृत्ति 'आँसू' में कवि ने व्यक्तिगत वेदना को विश्व-कल्याण की भावना से जोड़ा है।

प्रसाद जी का एक और काव्य संग्रह 'लहर' प्रकाश में आया। इसमें प्रकृति एवं करुणा की बहुत ही सुंदर अभिव्यक्ति की गई है। 'कामायनी' प्रसाद जी की एक अमर कृति है। इस कृति पर इन्हें 'हिंदी साहित्य सम्मेलन' की ओर से 'मंगलाप्रसाद पारितोषिक' प्राप्त हुआ था। प्रसाद जी के काव्य में मुख्य रूप से प्रेम और सौंदर्य को आधार बनाया गया है। इन्होंने प्रतीकात्मक, चित्रात्मक तथा गीतात्मक काव्य भाषा का प्रयोग किया है। प्रसाद जी ने हिंदी साहित्य की दोनों विधाओं गद्य और पद्य में अपनी कला का प्रदर्शन किया है। इन्होंने 'हंस' तथा 'इन्दु' पत्रिका का प्रकाशन भी कराया।

बोध प्रश्न

- जयशंकर प्रसाद के 'झरना' काव्य संग्रह का मुख्य स्वर क्या है?
- जयशंकर प्रसाद की कालजयी रचनाओं के नाम बताइए।

- जयशंकर प्रसाद की काव्य-भाषा की क्या विशेषताएँ हैं?
- इस कृति पर जयशंकर प्रसाद को मंगलाप्रसाद पारितोषिक प्राप्त हुआ था?

9.3.2 रचना यात्रा

जयशंकर प्रसाद छायावाद युग के प्रमुख कवि, नाटककार, उपन्यासकार तथा निबन्धकार माने जाते हैं। प्रारंभ में वे ब्रजभाषा में काव्य रचना करते थे किंतु धीरे-धीरे खड़ी बोली को अपनाते हुए अग्रसर हुए और उनकी गणना खड़ी बोली के मूर्धन्य कवियों में की जाने लगी। उन्होंने बहुत सारे काव्य कृतियों की रचना की। जिनमें कुछ मुख्य है। 'कामायनी' प्रसाद जी सर्वश्रेष्ठ कृति मानी जाती है। काव्य के क्षेत्र में प्रसाद जी के कीर्ति का मूलाधार कामायनी है। खड़ी बोली का यह अद्वितीय महाकाव्य मनु और श्रद्धा को आधार बनाकर लिखा गया है तथा मानवता को विजयिनी बनाने का संदेश देता है। इनका अगला काव्य संग्रह 'झरना' है, जिसकी रचना 1918 ई में की गई इसमें प्रेम, सौंदर्य तथा प्राकृति का सुंदर वर्णन किया गया है।

'आँसू' जयशंकर प्रसाद द्वारा रचीत एक स्मृति काव्य है। इसकी रचना 1925 ई. में की गई थी कवि की भावुकता इस काव्य में मुख्य रूप से दिखाई पड़ती है।

आँसू के बाद प्रसाद जी ने अपनी महत्वपूर्ण कृति 'लहर' की रचना 1933 में की, यह एक मुक्तक रचना है। प्रसाद जी ने इन सब के अतिरिक्त और भी बहुत सारी कृतियों की रचना की।

कहानी संग्रह:- कहानी के क्षेत्र में भी प्रसाद जी बहुत दक्ष माने जाते हैं। इन्होंने आधुनिक ढंग की बहुत ही कहानियाँ लिखी इनकी पहली कहानी 'ग्राम' मानी जाती है इनके अन्य कहानी संग्रह है छाया, प्रतिध्वनि, आकाशदीप, आंधी और इंद्रजाल।

उपन्यास: प्रसाद जी ने तीन उपन्यासों की रचना की उनके मुख्य उपन्यास हैं - कंकाल, तितली तथा इरावती, इरावती एक अधूरा उपन्यास है।

नाटक: प्रसाद जी हिंदी के सर्वश्रेष्ठ नाटककार माने जाते हैं। इन्होंने 12 नाटकों की रचना की इनके मुख्य नाटक हैं - स्कंद्रगुप्त, चंद्रगुप्त, ध्रूवस्वामिनी आदि।

निबंध: गद्य की अन्य विधाओं की भाँति प्रसाद जी ने निबंध लेखन में भी उत्कृष्ट भूमिका निभाई। 'काव्य कला और अन्य निबंध' में उनके आठ निबंध संकलित है।

बोध प्रश्न

- कामायनी के द्वारा प्रसाद क्या संदेश देना चाहते हैं?
- जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित स्मृति काव्य का नाम बताइए।

• जयशंकर प्रसाद की पहली कहानी का नाम बताइए।

9.3.3 रचनाओं का परिचय

जयशंकर प्रसाद छायावादी युग के प्रर्वत्तक के नाम से जाने जाते हैं। उनके साहित्य में भारतीय संस्कृति का चित्रण बहुत ही सुन्दर ढंग से किया गया है। इनके काव्य में प्रेम और सौंदर्य भी देखने को मिलता है। जयशंकर प्रसाद की रचनाओं का परिचय जानने से पहले उनके साहित्य की कुछ विशेषताओं को जान ले।

1. जयशंकर प्रसाद के साहित्य में हमें वियोग एवं विरह वेदना का निरूपण बहुत अधिक मात्रा में देखने को मिलता है। इनके काव्य आँसू में इसका अच्छा उदाहरण देखने को मिलता है।

    झंझा झकोर गर्जन था बिजली थी नीरद माला।
    पाकर इस शुन्य हृदय को सबने आ घेरा डाला।।

2. प्रसाद जी के काव्य में अतीत के प्रति आकर्षण को दिखाया गया है। उनके साहित्य का मुख्य उद्देश्य धर्म सम्प्रदाय और जातिवाद से ऊपर उठकर एक आदर्श समाज और गौरवशाली राष्ट्र की प्रतिष्ठा करना है।
3. प्रसाद जी के साहित्य में राष्ट्र प्रेम की भावना बहुत अधिक दिखाई देती है। बलिदान, त्याग समर्पण और करुणा जैसे भावों को इनके साहित्य में देखा गया है।
4. कवि जयशंकर प्रसाद मुख्यतः प्रेम और सौंदर्य के कवि माने जाते हैं। इन्होंने कामायनी में श्रद्धा के सौंदर्य का चित्रण इस प्रकार किया हैः

    नील परिधान बीच सुकुमार, खुल रहा मृदुल अधखुला अंग
    खिला है ज्यों बिजली का फूल, मेध बन बीच गुलाबी रंग

5. प्रसाद जी ने सदा मानव का मुल्यांकन गुणों और चरित्रों के आधार पर किया है। इनके अनुसार ऊँच-नीच, जाति-पाति सभी हम मनुष्य द्वारा निर्मित संकीर्ण प्रवृत्तियां हैं जिसका समाज में कोई महत्व नहीं है। उनके लिए मानवता सबसे बड़ा धर्म है। इसका वर्णन यह अपने साहित्य में करते हैं।
6. छायावादी कवियों ने नारी को उदात्त रूप प्रदान करते हुए उसे पुरूष की प्रेरक शक्ति के रूप में स्वीकार किया। नारी, दया, क्षमा, करूणा, प्रेम जैसे गुणों से सम्पन्न है और श्रद्धा की पात्र है।

    नारी तुम केवल श्रद्धा हो

विश्वास रजत नग पग तल में।
पीयूष स्रोत सी बहा करो।
जीवन के सुंदर समतल में।।

भाषा: प्रसाद जी की भाषा के कई रूप उनके काव्य में दिखाई पड़ते हैं। प्रारम्भ में उन्होंने ब्रजभाषा का प्रयोग अपने काव्य में किया किन्तु बाद में खड़ी बोली का प्रयोग करने लगे।

शैली: प्रसाद जी की काव्य शैली में ओज, माधुर्य और प्रसाद तीनों गुणों का मिश्रण पाया जाता है।

अलंकार : प्रसाद जी के प्रिय अलंकार उत्प्रेक्षा, प्रतीक आदि है।

छंद: प्रसाद जी ने अपने काव्यों में विविध छंदों का प्रयोग किया है। विविध छंदों के माध्यम से काव्य को सफल अभिव्यक्ति प्रदान की है।

रचनाएँ: जयशंकर प्रसाद की कुछ प्रमुख रचनाएँ निम्नलिखित हैं।

1. झरना

जयशंकर प्रसाद की रचनाओं में 'झरना' का बहुत अधिक महत्व है। झरना में ही छायावादी प्रवृत्तियों के दर्शन सबसे पहले देखने को मिलते हैं। इस संग्रह की कविताओं का स्वर प्रेम और सौंदर्य से संबद्ध है। इसमें प्रेम, सौंदर्य तथा प्रकृति का सुंदर चित्रण किया गया है।

बोध प्रश्न

- 'झरना' काव्य संग्रह का मूल स्वर क्या है?

2. आँसू

आँसू एक विरह काव्य है। कवि की भावुकता इस काव्य में मुख्य रूप से दिखाई पड़ती है। आँसु में प्रेम की स्मृति सत्यता के साथ अभिव्यक्त की गई है। जीवन में कुछ पाने के लिए संघर्ष करना पड़ता है और उसमें असफल होने पर व्यक्ति चिंता, दुःख, असंतोष और कुंठा से पीड़ित होता है। आँसू एक प्रकार की प्रेम भावनाओं की चरम सीमा है। आँसू में प्रसाद जी ने लौकिक प्रेम को दर्शाया है जिसमें प्रिय के प्रेम पर विश्वास किया और उसकी ओर से प्रवंचना प्राप्त होने पर कवि ने आँसू काव्य के माध्यम से उसकी स्मृति में आँसू बरसाए। इसे 'हिंदी का मेघदूत' कहा जाता है।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने 'आँसू' को जयशंकर प्रसाद की 'पहली विशिष्ट रचना' माना है। इसकी विषय वस्तु और रचना प्रक्रिया के संबंध में उनका विचार है कि इस काव्य में बहाए गए

आँसू शृंगारी विरह के हिन जिनमें अतीत के संयोग सुख की यादें रह-रहकर झलक मारती हैं। लेकिन व्यंजना की प्रधानता के कारण यह शृंगारी विरह आध्यात्मिक विरह में बदल जाता है। कवि ने इसका संकेत यह कहकर दिया है कि प्रेमी की मादकता की बेसुधी में प्रियतम अपने लोक से प्रेमी के लोक में आते हैं और संज्ञा आने पर चले जाते हैं - मादकता से आए तुम संज्ञा से चले गए थे। जिन स्थलों पर कवि ने हृदय की तरंगों के द्वारा किसी अनंत कोने को नहलाने का चित्रण किया है, वहाँ वे आँसू उस अज्ञात प्रियतम के लिए बहते प्रतीत होते हैं। इस अज्ञात प्रियतम के प्रति मिलन की बेचैनी को दर्शाने के कारण यह काव्य लौकिक विरह से आगे बढ़कर अलौकिक अथवा रहस्य भावना को प्रकट करने वाला बन जाता है। ऐसे समय कवि को यह प्रतीत होता है कि शून्य में असीम सुख आकाश तरंग बना रहे हैं। और पृष्ठभूमि में सारा नक्षत्र समाज हँसता सा प्रतीत हो रहा है। इस उच्च आकाश में पहुँचने पर कवि की चेतना जब पृथ्वी को देखती है, तो उसके आँसू उदात्त करुणा के समुद्र में बदल जाते हैं। यथा -

नीचे विपुला धारणी है दुखा भार वहन सी करती।
अपने खारे आँसू से करुणा सागर को भरती।

'आँसू' की इस उदात्त भवभूमि को उजागर करते हुए आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने लिखा है -

> "(कवि जहाँ) इस चीर दग्ध दुखी वसुधा को, इस निर्मम जगती को, अपनी प्रेम वेदना कल्याणी शीतल ज्वाला का मंगलमय उजाला देना चाहता है, वहाँ वे आँसू लोक पीड़ा पर करुणा के आँसू जान पड़ते हैं।" (हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ. 461)

लेकिन इस सच से इनकार नहीं किया जा सकता है कि अलौकिकता की ओर बढ़ते हुए भी जयशंकर प्रसाद के ये आँसू अपने मूल रूप में उनके निजी जीवन की पीड़ा की देन है। इसीलिए उनकी दृष्टि अपनी सदा जलती हुई अखंड ज्वाला की जलन पर जमी रहती है। जयशंकर प्रसाद अपनी इस निजी पीड़ा को जगत की पीड़ा के साथ इस तरह जोड़ते हैं कि संवेदना के धरातल पर जगत उन्हें अपने अधिक समीप प्रतीत होने लगता है। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से इसे आत्म के विस्तार के द्वारा अवसाद से बाहर निकलने का सफल प्रयास माना जा सकता है। कवि निजी पीड़ा में डूबकर भी विश्वजनीन पीड़ा का अहसास करते हुए नई ऊर्जा की खोज करता है। इस प्रकार 'आँसू' काव्य गहन दुख और पीड़ा से परिपूर्ण होने बावजूद एक सकारात्मक प्रेरणा का काव्य बन जाता है। यथा -

तेरे प्रकाश में चेतन संसार वेदना वाला
मेरे समीप होता है पाकर कुछ करूँ उजाला

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने इस काव्य की विवेचना करते हुए लिखा है -

> "प्रसाद जी की यह पहली काव्य रचना है जिसने बहुत लोगों को आकर्षित किया। अभिव्यंजना की प्रगल्भता और विचित्रता के भीतर प्रेम वेदना की दिव्य विभूति का, विश्व में उसके मंगलमय प्रभाव का, सुख और दुख दोनों को अपनाने की उसकी अपार शक्ति का और उसकी छाया में सौंदर्य और मंगल के संगम का भी आभास पाया जाता है।" (हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ. 461)

बोध प्रश्न

- 'आँसू' कैसा काव्य है?

3. लहर

यह काव्य कृति प्रसाद जी की गीत-कला का बहुत अच्छा नमूना है। इन गीतों में कहीं प्राकृति के सौंदर्य का वर्णन है तो कहीं प्रणय की तीव्र अनुभूति का, कहीं करुणा की अभिव्यक्ति है तो कहीं रहस्यवादी संकेत दिखाई देते हैं। मनोरम कल्पना, भावुकता और भाषा शैली में प्रौढ़ता को इनकी रचनाओं में देखा जा सकता है।

'लहर' उस आनंद की लहर का प्रतीक है जो मनुष्य के मन रूपी सरोवर में उठती है और उसके जीवन को रसपूर्ण बनाती है। मनुष्य चाहता है कि आनंद की यह लहर उसके जीवन में सदा के लिए ठहर जाए। ताकि जीवन की तमाम नीरसता असीम सरसता में बदल जाए। कवि व्यक्तिगत जीवन से लेकर संपूर्ण मनुष्यता तक के लिए इस आनंद लहर की कामना करता है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने प्रसाद के इस काव्य को भी रहस्य भावना से युक्त माना है। इसका अर्थ है कि कवि लौकिक प्रेम के माध्यम से अलौकिक प्रेम को व्यक्त करता है। शुक्ल जी के शब्दों में –

> "इसमें भी उस प्रियतम का आँख मिचौनी खेलना, दबे पाँव आना, किरण उँगलियों से आँख मूँदना (या मूँदने की कोशिश करना, क्योंकि उस ज्योतिर्मय का कुछ आभास मिल ही जाता है), प्रियतम की ओर अभिसार इत्यादि रहस्यवाद की सब सामग्री है। (हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ. 462)

छायावाद के कवियों ने अपने अज्ञात प्रियतम का वर्णन अत्यंत सूक्ष्म और उदात्त रूप में किया है। प्रेमी और प्रियतम के संबंध की व्याख्या भी अनेक स्थलों पर की गई है। 'लहर' में

प्रसाद जी कहते हैं -

तुम हो कौन और मैं क्या हूँ?
इसमें क्या है धरा सुनो।
मानस जलधि रहे चिर चुंबित
मेरे क्षितिज उदार बनो

प्रेमी और प्रियतम का यह संबंध बड़ी हद तक अध्यात्म की कोटि का है। आध्यात्मिक दृष्टि से यह कहा जाता है कि सब जीव नदियों की भाँति है जो परमात्मा रूपी समुद्र में मिलने के लिए दौड़ती हैं। 'लहर' के एक गीत 'हे सागर संगम अरुण नील' में इसी धारणा को व्यक्त किया गया है कि सागर ने हिमालय से निकली नदी को कब देखा था, और नदी ने सागर को कब देखा था, पर नदी निकलकर स्वर्ण स्वप्न देखती उसीकी ओर चली और वह सागर भी बड़ी उमंग के साथ उससे मिला। ससीम से असीम का यह मिलन अन्य प्रतीकों के द्वारा भी प्रकट किया गया है। क्षितिज कवि को असीम आकाश और ससीम पृथ्वी के मिलन स्थल जैसा प्रतीत होता है। सारे कोलाहल से परे वह नियति रूपी नाविक से जीवन रूपी नौका को इसी क्षितिज की ओर ले जाने का निवेदन करता है -

ले चल वहाँ बुलावा देकर
मेरे नाविक धीरे धीरे
जिस निर्जन में सागर लहरी
अंबर के कानों में गहरी
निश्छल प्रेम कहती हो
तज कोलाहल की अवनी रे

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने 'लहर' के बारे में यह निष्कर्ष दिया है कि इस रचना में -

"कहीं उस यौवन काल की स्मृतियाँ हैं जिनमें मधु का आदान-प्रदान चलता था, कहीं प्रेम का शुद्ध स्वरूप। यह कहकर बताया गया है कि प्रेम देने की चीज है, लेने की नहीं। पर इस पुस्तक में कवि अपने मधुमय जगत से निकलर जगत और जीवन के कई पक्षों की ओर भी बढ़ा है। वह अपने भीतर इतना अपरिमित अनुराग समझता है कि अपने सान्निध्य से वर्तमान जगत में उसके फैलने की आशा करता है। (हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ. 463)

बोध प्रश्न

- 'लहर' में चित्रित उदात्त तत्व क्या है?

4. कामायनी महाकाव्य

कामायनी प्रसाद जी की तथा छायावाद युग की सर्वश्रेष्ठ कृति मानी जाती है। साहित्य के क्षेत्र में 'कामयानी' महाकाव्य को बहुत उच्च स्थान प्राप्त है। इसमें मनु, श्रद्धा और इड़ा के माध्यम से मानव सभ्यता का क्रमिक विकास बड़े मनोवैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत किया गया। है इसमें पंद्रह सर्ग हैं- चिंता, आशा, श्रद्धा, काम, वासना, लज्जा, कर्म, ईर्ष्या, इड़ा, स्वप्न, संघर्ष, निवेद, दर्शन, रहस्य, आनंद। 'कामयानी' में अभिव्यक्त जीवन दर्शन के माध्यम से आधुनिक मानव को अपना जीवन सुखी बनाने के लिए प्रसाद जी ने कुछ दिशा निर्देश भी दिए हैं। इसके प्रमुख पात्र मनु जल प्लावन की घटना में देव जाति के विनाश के विषय में कहते हैं कि देव जाति अहंकार, अकर्मण्यता और भोग विलास की अधिकता के कारण नष्ट हुई।

'कामायनी' की विषय वस्तु पर विचार करते हुए डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी का यह निष्कर्ष अत्यंत महत्वपूर्ण है कि -

> "प्रसाद का पक्ष है कि देव सृष्टि जहाँ भोगविलास और महज भौतिक सुख साधनों में डूबी हुई थी, वहाँ मनुष्य की सृष्टि कुछ नए मान-मूल्यों का आविष्कार करती हैं। जिनमें सबसे प्रमुख है प्रेम करने की क्षमता। मृत्यु पर विजय पाने के लिए मनुष्य प्रेम की क्षमता विकसित करता है, और उसीसे जुड़ी है सर्जनात्मक शक्ति। मानवीय सृष्टि के वैशिष्ट्य का यह रूप मुख्यतः 'काम' और 'लज्जा' और अंततः 'इडा' सर्ग में चित्रित होता है। देव सृष्टि में जो काम था, वह मानवीय सृष्टि में अनंग होकर सूक्ष्म प्रेम में परिणत हो जाता है। और इसीके समानांतर देवों की तृष्णा को तृप्ति दिखाने वाली रति मानवीय सृष्टि में लज्जा बन जाती है। (हिंदी साहित्य और संवेदना विकास, पृ.118)

'कामायनी' के रूपक की व्याख्या करते हुए यह कहा जाता है कि मनु, श्रद्धा और इडा क्रमशः मानव मन और उसकी दो प्रवृत्तियों भावुकता तथा तर्कशीलता के प्रतीक हैं। इनके माध्यम से कवि ने कवि ने अपने काव्य की प्रासंगिकता को प्राप्त किया है। डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी के शब्दों में -

> "अपने विकास क्रम में मनुष्य की संस्कृति आज जहाँ पहुँची है वहाँ, प्रसाद के

अनुसार, उसकी समस्याएँ हैं अतिभौतिकता, अतिबौद्धिकता और अतियांत्रिकता। इडा के साथ मिलकर मनु ने 'विज्ञान सहज साधन उपाय' स्वीकार करते हुए सारस्वत प्रदेश की जो उद्योग प्रधान सभ्यता बनाई है, वहाँ का जीवन क्रम इन्हें जन्म देता है। इन समस्याओं से उत्पन्न संघर्ष को शमित करने के लिए कवि ने समरसता की भावभूमि संकेतित की है।" (हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास, पृ. 119)

ध्यान देने की बात यह भी है कि 'कामायनी' की यात्रा पहले सर्ग 'चिंता' से आरंभ होकर पंद्रहवें सर्ग 'आनंद' तक पहुँचती है। चिंता अगर द्वंद्व का प्रतीक है तो आनंद समरसता का। समरसता की प्राप्ति ही 'कामायनी' का चरम लक्ष्य और उपलब्धि है -

समरस थे जड़ या चेतन
सुंदर साकार बना था
चेतनता एक विलसती
आनंद अखंड घना था

अंततः डॉ. नगेंद्र के शब्दों में -

"व्यक्तिवादी मनु आधुनिक जीवन के व्यक्तिपरक भौतिक सुखवाद का प्रतीक है, जिसका व्यक्त रूप पूंजीवाद में मिलता है। आज के पूंजीवाद से पीड़ित समाज की विडंबनाओं का समाधान ('कामायनी' में प्रतिपादित) यही माववाद है जिसका भौतिक रूप समाजवाद और आद्यत्मिक रूप गांधीवाद है।"

प्रसाद जी की रचनाओं की इन सब विशेषताओं को देखकर हम कह सकते हैं कि इनके काव्य में भारतीय संस्कृति का चित्रण बहुत ही सुंदर ढंग से किया गया है। 'कामायनी' हिंदी साहित्य की एक अमर कृति है।

बोध प्रश्न

- कमायानी में निहित दर्शन को स्पष्ट कीजिए।

9.3.4 हिंदी साहित्य में स्थान एवं महत्व

कवि जयशंकर प्रसाद का हिंदी साहित्य में एक विशिष्ट स्थान है। ये छायावादी युग के चार प्रमुख स्तंभों में से एक है। वे एक युगप्रर्वतक लेखक के रूप में जाने जाते हैं। इन्होंने गद्य की सभी विधाओं पर अपनी लेखनी चलाई। प्रसाद जी ने कविता, नाटक, कहानी और उपन्यास के

क्षेत्र में हिंदी को गौरवान्वित करने वाली कृत्तियाँ दी। इनका रचनाकाल मात्र 26 वर्षों का रहा। इन्हें भारतीय दर्शन, इतिहास और अध्यात्म का अच्छा ज्ञान था। इनके साहित्य में भारतीय साहित्य और संस्कृति का बहुत ही सुन्दर चित्रण देखने को मिलता है। दरअसल ये कवि होने के साथ-साथ एक गंभीर चिंतक भी थे। इनकी कुछ कविताओं में पौराणिक प्रसंगों को कविता का विषय बनाया गया है। कविता, उपन्यास, नाटक निबन्ध सभी में उनकी गति समान थी किन्तु अपनी हर विद्या में उनका कवि रूप ही मुखरित रहा है। उनके गद्य लिखने की कला भी ऐसी थी की उसमें कविता का पूट पाया जाता है। प्रसाद जी की कल्पनाशीलता ने ही उन्हें साहित्य की अन्य विधाओं में उन्हें विशिष्ट और व्यक्तिगत प्रयोग करने के लिए प्रेरित किया। उनकी कहानियों की विषय वस्तु आम कहानियों से हटकर हुआ करती थी। प्रसाद जी ने अपने साहित्य के माध्यम से पौराणिक, ऐतिहासिक धार्मिक तथा सांस्कृतिक चेतना से लोगों को अवगत कराया है। भारतीय संस्कृति का बहुत ही सुंदर चित्रण इनके साहित्य में पाया जाता है। इनके काव्य संग्रह 'झरना' की बहुत सी कविताओं का मुख्य स्वर प्रेम और सौंदर्य है इस संबंध में आचार्य नन्ददुलारे बाजपेयी का मत है "इसमें एक नई कल्पनाशीलता नूतन जागरूक चेतना, मानव वृत्तियों की सूक्ष्मतर प्रौढ़तर पकड़, एक विलक्षण अवसाद, संशय और कोतूहल, जो नई चिंतन का सूक्ष्म प्रभाव प्रकट हो रहा है।" इनके साहित्य में हमें इतिहास और कल्पना का मिश्रण दिखाई पड़ता है और जिसके माध्यम से गौरवशाली अतीत का चित्रण देखने को मिलता है। इनके साहित्य का मुख्य उद्देश्य धर्म, संप्रदाय और जातिवाद से ऊपर उठकर एक आदर्श समाज और गौरवशाली राष्ट्र की प्रतिष्ठा करना है। वे अतीत की मर्यादाओं का समर्थन करते थे। तथा समाज में फैली बुराइयों का भी बहुत कड़ा विरोध किया।

जयशंकर प्रसाद राष्ट्र प्रेम के लिए व्यक्ति के बलिदान और त्याग के पक्ष में होते थे राष्ट्र का स्थान उनके जीवन में बहुत अहम भूमिका निभाता है। वे मानव को अपने साहित्य के माध्यम से बलिदान, त्याग, समर्पण और करूणा जैसे भाव के महत्व को बताने का प्रयास किया है। प्रसाद जी के साहित्य को पढ़ने के बाद हमें मानवीय मूल्यों के महत्व को भी समझने में आसानी हो गई। इनके लिए मानवता ही सर्वोपरि धर्म है। वे कहते हैं ऊँच-नीच, जाति-पाति सभी मनुष्य द्वारा निर्मित संकीर्ण प्रवृत्तियाँ हैं जिनका मानव के विकास में कोई महत्व नहीं है। अतः इनके लिए मानव, समाज और राष्ट्र सर्वोपरि रहा है। प्रेम और प्रकृति के अनन्त सौंदर्य के इस कवि ने हिंदी साहित्य को झरना, आँसू, लहर और कामायनी जैसी अनमोल काव्य रचनाएँ दी हैं।

विद्वानों के अनुसार प्रसाद जी छायावादी काव्यधारा के प्रवर्तक ही नहीं हैं, बल्कि उसकी प्रौढ़ता, शालीनता एवं गंभीरता के कवि हैं।

हिंदी नाटक के विकास में प्रसाद जी का बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। इनकी तेरह नाट्य-कृतियाँ प्रकाशित हुई हैं। इनके नाटकों में राष्ट्रीय भावना का स्वर बहुत अधिक मुखरित होता है। यह एक युग सृष्टा कवि माने जाते हैं। इनका सारा साहित्य, हिंदी साहित्य का अनमोल रत्न कहा जा सकता है।

अतः हम कह सकते हैं कि हिंदी साहित्य के इतिहास में कवि जयशंकर प्रसाद का स्थान अपने पौराणिक एवं ऐतिहासिक प्रसंगों तथा भारतीय संस्कृति को प्रदर्शित करने वाली रचनाओं के लिए हमेशा याद किया जाएगा।

बोध प्रश्न

- जयशंकर प्रसाद के काव्य का मुख्य उद्देश्य क्या था?

9.4 पाठ सार

जयशंकर प्रसाद 'छायावादी युग के प्रवर्तक' के नाम से जाने जाते हैं। इन्हें हिंदी साहित्य का कालजयी कलाकार माना जाता है। प्रसाद जी युग प्रवर्तक लेखक थे, जिन्होंने साहित्य की सभी विधाओं पर अपनी लेखनी चलाई। इन्होंने कविता, नाटक, कहानी तथा उपन्यास के क्षेत्र में हिंदी को गौरवान्वित करने वाली कृतियाँ दी। छायावाद के प्रमुख स्तम्भ के रूप में उनका नाम लिया जाता है।

प्रसाद जी बहुत ही प्रतिभावान थे। इनके जीवन में बहुत से कष्ट आए किन्तु उन सब को झेलते हुए उन्होंने हिंदी काव्य जगत को काव्य के रूप में बहुमूल्य रत्न दिए हैं। क्षयरोग (टी.बी) से पीड़ित रहने के कारण 15 नवंबर, 1937 को मात्र 48 वर्ष की छोटी सी आयु में ही इनका निधन हो गया।

प्रारंभ में प्रसाद 'कलाधर' उपनाम से ब्रजभाषा में कविताएँ लिखते थे। प्रसाद जी अपने पौराणिक एवं ऐतिहासिक तथा भारतीय संस्कृति का चित्रण करने वाली रचनाएँ हिंदी साहित्य को दी है। इनके द्वारा रचित काव्यकृति 'कामायनी' एक अमर कृति है। इस कृति पर इन्हें हिंदी साहित्य सम्मेलन की ओर से 'मंगलाप्रसाद पारितोषिक' प्राप्त हुआ था। प्रेम और प्रकृति के अनन्त सौंदर्य के इस कवि ने हिंदी साहित्य को झरना, आंसू, लहर जैसी अनमोल रचनाएँ दी हैं। इनके

नाटकों में राष्ट्रीय भावना का स्तर बहुत अधिक देखा जाता है। उनके नाटक स्कंदगुप्त, चंद्रगुप्त आदि में स्वर्णिम अतीत को सामने रखकर मानो एक सोये हुए देश को जगाने की प्रेरणा दी है।

प्रसाद के काव्य का कलापक्ष भी पूर्ण सशक्त और संतुलित है। अतः इस प्रकार कह सकते हैं कि गुप्त जी अपने युग के महान कवि थे तथा अपने साहित्य के माध्यम से भारतीय संस्कृति का चित्रण किया है।

9.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. जयशंकर प्रसाद छायावादी युग के प्रवर्तक कवि हैं।
2. प्रसाद जी ने खड़ी बोली को अपने काव्य का माध्यम बनाया।
3. प्रसाद जी ने हिंदी साहित्य को कामायनी, झरना और आँसू जैसी अमर कृत्तियाँ दी हैं।
4. प्रसाद जी ने काव्य के साथ-साथ गद्य की विविध विधाओं में प्रभूत लेखन किया है।
5. हिंदी नाटक के क्षेत्र में भी प्रसाद को युग प्रवर्तक माना जाता है।

9.6 शब्द संपदा

1. ईर्ष्या	=	जलन, डाल
2. उपाधि	=	सम्मान
3. काम	=	इंद्रिय सुख की इच्छा
4. गौरवपूर्ण	=	सम्मानित
5. घृणा	=	वह मनोवृत्ति जो किसी को बहुत बुरा समझकर सदा
6. निदर्शन	=	नमूना, उदाहरण
7. माध्यम	=	साधन, उपाय
8. वासना	=	भावना
9. वेदना	=	कष्ट
10. श्रद्धा	=	आस्था या विश्वास

9.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. जयशंकर प्रसाद के काव्य की मुख्य विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
2. जयशंकर प्रसाद की रचना यात्रा का वर्णन कीजिए।
3. जयशंकर प्रसाद के व्यक्तित्व एवं कृत्तित्व पर प्रकाश डालिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. कामायनी में निहित मूल चेतना पर प्रकाश डालिए।
2. हिंदी साहित्य में जयशंकर प्रसाद के स्थान को स्पष्ट कीजिए।
3. 'आँसू एक विरह काव्य है।' इस उक्ति को स्पष्ट करें।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए।

1. जयशंकर प्रसाद किस युग के कवि हैं।

(अ) छायावादी (आ) भारतेंदु युग (इ) द्विवेदी युग (ई) प्रगतिवादी युग

2. 'आंसू' काव्य संग्रह का रचना काल क्या है?

(अ) 1914 (आ) 1918 (इ) 1925 (ई) 1933

4. कामायनी के प्रथम सर्ग का नाम क्या है?

(अ) काम (आ) श्रद्धा (इ) आशा (ई) चिंता

4. जयशंकर प्रसाद का अधूरा उपन्यास ..... है?

(अ) तितली (आ) इरावती (इ) कंकाल (ई) झरना

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. झरना काव्य संग्रह का प्रकाशन वर्ष .... है।
2. कामायनी में ..... को विजयिनी बनाने का संदेश है।
3. प्रसाद का प्रथम ब्रजभाषा काव्य संग्रह .... है।

4. प्रसाद के साहित्य में ..... की भावना बहुत अधिक दिखाई देती है।

III. सुमेल कीजिए।

1. झरना	)अ) 1925
2. आँसू	(आ) 1933
3. लहर	(इ) 1935
4. कामायनी	(ई) 1918

9.8 पठनीय पुस्तकें

---

1. जयशंकर प्रसाद रचनावली
2. हिंदी साहित्यक का इतिहास : सं. नगेंद्र
3. हिंदी साहित्यक का सरल इतिहास : विश्वनाथ त्रिपाठी
4. हिंदी साहित्य का इतिहास : रामचंद्र शुक्ल

इकाई 10 : आँसू : जयशंकर प्रसाद

रूपरेखा

10.1 प्रस्तावना

10.2 उद्देश्य

10.3 मूल पाठ : आँसू : जयशंकर प्रसाद

10.3.1 अध्येय कविता का सामान्य परिचय

10.3.2 अध्येय कविता

10.3.3 विस्तृत व्याख्या

10.3.4 काव्यगत विशेषताएँ

10.3.5 समीक्षात्मक अध्ययन

10.4 पाठ सार

10.5 पाठ की उपलब्धियाँ

10.6 शब्द संपदा

10.7 परीक्षार्थ प्रश्न

10.8 पठनीय पुस्तकें

10.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो, आधुनिक हिंदी कविता से संबंधित इस पाठ्यक्रम के अंतर्गत आप छायावाद के प्रसिद्ध कवि जयशंकर प्रसाद (1890-1937ई) की एक विशिष्ट रचना 'आँसू' के कुछ अंशों का भी अध्ययन करेंगे। इस रचना के शीर्षक से ही यदि आपने अंदाजा लगा लिया हो कि यह दु:ख, वेदना, विरह, करुणा भाव से ओत-प्रोत रचना हो सकती है, तो आप बिल्कुल सही सोच रहे हैं। आँसू मूलत: एक विरह काव्य है जिसमें विरही हृदय की गहन पीड़ा एवं वेदना अभिव्यक्त हुई है। कवि अपने व्यक्तिगत जीवन के दुख और वेदना को बडे ही मार्मिक शब्दों में पिरोकर एक सुंदर गुलदस्ता सजाया है। इसके प्रत्येक छंद में विरह वेदना की मार्मिक अभिव्यक्ति हुई है। जीवन के दुखमय क्षणों में कवि के मन में अतीत प्रेम की स्मृति जागृत हो जाती है। इस वेदना को कवि ने लाक्षणिक शब्दावली और छायावादी शैली में व्यक्त किया है।

आँसू की भावभूमि को समझने के लिए छायावाद की रचनाधर्मिता एवम काव्यगत

विशेषताओं की थोडी सी जानकारी अनिवार्य है। आशा है कि आपने हिंदी साहित्य के आधुनिक काल के अंतर्गत छायावाद का अध्ययन किया होगा। साहित्य के विशेषज्ञों का यह मानना है कि छायावाद का जन्म द्विवेदीयुगीन प्रवृत्ति की प्रतिक्रिया का फलस्वरूप है। द्विवेदी युगीन स्थूलता, इतिवृत्तात्मकता, अतिशय नैतिकता के विपरीत छायावाद की रचनाएँ अंतर्जगत की ओर उन्मुख होकर सूक्ष्म, वक्र, सांकेतिक पदावली से संपृक्त दिखाई देती हैं। प्रणयानुभूति की अभिव्यक्ति के साथ-साथ राष्ट्रीय भावना का स्वर इस युग की रचनाओं में मुखरित हुआ है। प्रेम का संयोग एवं वियोग पक्ष, प्रकृति, सौंदर्य, रहस्यवादी प्रवृत्ति, स्वानुभूति की प्रधानता, जीवन दर्शन, दार्शनिकता, मनोवैज्ञानिक तत्व आदि सभी तत्व छायावादीयुगीन रचनाओं में चार चाँद लगाते हैं।

इस दृष्टि से यदि देखा जाए तो प्रस्तुत रचना आँसू प्रेम के विरहानुभूति को दर्शानेवाली एक श्रेष्ठ गीतमाला है जिसमें प्रसाद की व्यक्तिगत जीवनानुभूति झलकती दिखाई देती है। जब आप इस कविता के भावार्थ को पढेंगे तो इसमें निहित विरह वेदना की गहराई को समझ पाएँगे।

10.2 उद्देश्य

जयशंकर प्रसाद की कविता 'आँसू' पर आधारित इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप-

- अध्येय कविता 'आँसू' की व्याख्या कर सकेंगे।
- अध्येय कविता के काव्य सौंदर्य से परिचित हो सकेंगे।
- 'आँसू' काव्य में निहित विरहानुभूति के स्वरूप से अवगत हो सकेंगे।
- 'आँसू' काव्य में निहित लोक कल्याण की भावना को समझ सकेंगे।
- 'आँसू' काव्य के कला पक्ष की विशेषताओं को जाना सकेंगे।

10.3 मूल पाठ : आँसू : जयशंकर प्रसाद

10.3.1 अध्येय कविता का सामान्य परिचय

उपरोक्त कविता आँसू जयशंकर प्रसाद की मुक्तक शैली में रचित विरह काव्य है। इसका रचनाकाल लगभग 1923-24 ई. की है तथा प्रकाशन 1925 ई. में साहित्य-सदन, चिरगाँव, झांसी से हुआ था। इसके प्रथम संस्करण में केवल 252 पंक्तियाँ थीं, किंतु जब इसका द्वितीय संशोधित संस्करण श्रावणी पूर्णिमा सन 1933 में भारती भंडार, प्रयाग से प्रकाशित हुआ, जिसमें पूर्व रचित छंदों के क्रम कुछ बदल दिया गया और कवि ने कुछ अन्य छंद रचकर इसमें जोड़

दिए, इससे आँसू में कुल 680 पंक्तियाँ हो गईं थीं। आजकल यही संस्करण प्रचलित है। इस कविता का मूल भाव करुणा और प्रेम है। करुणा और प्रेम दो ऐसे भाव हैं जिनसे मानवता पनपती है। सहृदयता का प्रतीक है करुणा और प्रेम। कवि यह अच्छे से जानते हैं कि इस पूरे संसार को करुणा और प्रेम की आवश्यकता है, जिससे मानव संवेदनशील होता है और प्रत्येक जीव से प्रेम भाव रख सकता है। अत: प्रत्येक जीव से संवेदनशील भावना की प्रतीति प्रस्तुत कविता का मूल उत्स है। यही भाव मानव को मानव बनाए रखता है। आँसू कामायनी की पूर्व पीठिका है। आँसू में करुणा का संचार है तो कामायनी में मानवता के विकास की कहानी। आँसू के इन छंदों में प्रसाद की व्यक्तिगत जीवनानुभूति का प्रकाशन हुआ है।

क) आँसू की कथावस्तु

इसमें क्रमबद्ध भाव-कथा की योजना है, जिसमें कवि ने यह अंकित किया है कि एक विरही ने किसी अनिद्य सुंदरी से प्रेम किया था। वह प्रेम व्यापार कुछ दिनों तक बडी तीव्रता एवं मादकता के साथ चलता रहा, कुछ काल बाद प्रेम-व्यापार समाप्त हो गया। परंतु उसकी मादक स्मृति एक दिन सहसा जाग्रत हो गई जिससे प्रेमी का हृदय वेदना में तडप उठा और उसे ऐसा आभास हुआ कि उसकी प्रेमिका शशि-मुख पर घूँघट डाले, आँचल में दीप छिपाए गोधूली में उससे मिलने आती हुई जान पडी, परंतु वह बेहोश पडा था, जब होश आया और वह उससे मिलना चाहा तो वह अंतर्धान हो गई थी। उसे अनुभव होने लगा कि यह चराचर जगत वेदना एवं व्यथा से पीडित है। अत: उसके हृदय में इस दुखी वसुधा के प्रति सहानुभूति जाग्रत हुई और वह मंगल कामना करने लगा कि संपूर्ण जगती को विरहानल, संताप, पीड़ा, वेदना एवं व्यथा से जलानेवाली ज्वाला को शांत करने के लिए उसकी आँखों से आसुओं की मंगलमयी वर्षा होती रहे, जिससे यह दुखी एवं सूखी वसुधा फ़िर से हरी-भरी हो जाए। इस प्रकार आँसू काव्य में एक मार्मिक भाव-कथा की योजना की गई है जो व्यष्टि से समष्टि की ओर प्रसारित होती है।

ख) आँसू की विरहानुभूति

आँसू कविता में वियोग की अनुभूति है। अतीत की कोई सुखद अनुभूति कवि के मन में खिन्नता पैदा करती है। कवि अपनी प्रेम वेदना से पृथ्वी को प्रकाशित करना चाहता है। कवि के हृदय की जटिलताओं का प्रतीक है आँसू। परंतु मानव के जीवन में इन जटिलताओं के बीच भी आनंद की अनुभूति होती है। मनुष्य में आनंद की यह अनुभूति वर्तमान को कुछ मीठी स्मृति की बात कहती है। कवि में सृजन की पीड़ा है। जीवन की कोई घनीभूत पीड़ा फ़ंतासी बनकर कवि के

मस्तिष्क में छायी रहती है। वही फ़ंतासी सृजन में नई अनुभूति के रूप में प्रस्तावित होती है। कवि हृदय में जो दर्द और पीड़ा है, यही पीड़ा उसके काव्य में दृष्टिगोचर होती है। कवि में वेदना की आकुलता और तड़प है। यह आकुलता किसी गहन अंधकार के क्षण में भावहीन दशा में कवि हृदय में उपजती है। कवि अपने जीवन में घोर निराशा के क्षणों में भी आशा को नहीं खोता है। इस संघर्ष के बल पर ही सभ्यता को अपनी रचना का सुंदर उपहार प्रस्तुत करता है। वह जीवन के अनुभवों को भूलने नहीं पाता। वह अपने अनुभवों की आत्मालोचन करता है और काव्यानुभूति का निर्माण करता है।

आँसू में प्रेम की स्मृति इतनी सत्यता के साथ अभिव्यक्त हुई है कि हमारा कवि के साथ अविलंब साधारणीकरण हो जाता है। आँसू कवि के जीवन की वास्तविक प्रयोगशाला का आविष्कार है। प्रेमभावना की चरम परिणति है। विप्रलंभ शृंगार के अंतर्गत प्रसाद के युवा-जीवन की वे मादक एवं मोहक स्मृतियाँ संकलित हैं, जो घनीभूत पीड़ा से ओतप्रोत होकर आँसू बनकर बरस पड़ी है।

इस प्रकार आँसू काव्य मानव-विरह की एक ऐसी रचना है, जिसमें कवि अपने वैभवशाली अतीत की स्मृति से व्यथित एवं बेचैन होकर, रो-रो कर तथा सिसकियाँ भर-भरकर अपनी करुणा कथा कहता है।

छात्रो! ऊपर यह बताया जा चुका है कि इस काव्य में कुल 680 पंक्तियाँ हैं, किंतु यहाँ पर आपके अध्ययन के लिए चयनित 40 पंक्तियों अर्थात केवल 10 छंदों को दिया गया है ।

बोध प्रश्न

- आँसू किस प्रकार का काव्य है?
- आँसू किस शैली में रचित काव्य है?
- आँसू का द्वितीय संस्करण कब प्रकाशित हुआ और उसमें कितनी पंक्तियों को जोडा गया?
- आचार्य रामचंद शुक्ल आँसू को किस कोटि में रखकर देखते हैं?

10.3.2 अध्येय कविता : आँसू

जो घनीभूत पीड़ा थी
मस्तक में स्मृति-सी छाई
दुर्दिन में आँसू बनकर
वह आज बरसने आई ।1।

मेरे क्रंदन में बजती
क्या वीणा, जो सुनते हो
धागों से इन आँसू के
निज करुणापट बुनते हो ।2।
रो-रोकर सिसक-सिसककर
कहता मैं करुण कहानी
तुम सुमन नोचते सुनते
करते जानी अनजानी ।3।
मैं बलखाता जाता था
मोहित बेसुध बलिहारी
अंतर के तार खिंचे थे
तीखी थी तान हमारी ।4।
झंझा झकोर गर्जन था
बिजली सी थी नीरद-माला,
पाकर इस शून्य हृदय को
सबने आ डेरा डाला ।5।
घिर जातीं प्रलय घटाएँ
कुटिया पर आकर मेरी
तम चूर्ण बरस जाता था
छा जाती अधिक अँधेरी ।6।
बिजली-माला पहने फ़िर
मुसकाता था आँगन में
हाँ, कौन बरसा जाता था
रस बूँद हमारे मन में ।7।
तुम सत्य रहे चिर सुंदर !
मेरे इस मिथ्या जग के
थे केवल जीवन संगी

कल्याण कलित इस मग के ।8।
कितनी निर्जन रजनी में
तारों के दीप जलाये
स्वर्गांगा की धारा में
उज्ज्वल उपहार चढ़ाये ।9।
गौरव था, नीचे आए
प्रियतम मिलने को मेरे
मैं इठला उठा अकिंचन
देखो ज्यों स्वप्न सवेरे ।10।

निर्देश : 1. इन कविता का सस्वर वाचन कीजिए।
2. इस कविता का मौन वाचन कीजिए।

10.3.3 विस्तृत व्याख्या

जो घनीभूत पीड़ा थी
मस्तक में स्मृति-सी छाई
दुर्दिन में आँसू बनकर
वह आज बरसने आई ।1।

शब्दार्थ : घनीभूत = घना, ठोस। मस्तक = माथा। स्मृति = याद। दुर्दिन = कठिन समय।

संदर्भ : प्रस्तुत छंद को जयशंकर प्रसाद की रचना आँसू प्रबंध काव्य से लिया गया है। जयशंकर प्रसाद छायावाद के प्रख्यात कवि हैं। उनकी पहली विशिष्ट रचना है आँसू जो विप्रलंभ शृंगार का उत्कृष्ट काव्य है। इसमें कवि की जो व्यक्तिगत पीड़ा चित्रित हुई है वह मानवीय पीड़ा का प्रतीक है।

प्रसंग : कवि पहले से ही बहुत दुखी है, क्योंकि संयोग में जो प्रियतम का साथ मिला था वह अब किसी कारणवश उनसे दूर हो चुका है और प्रियतम याद बार-बार उन्हें सता रही है।

व्याख्या : आँसू का मुख्य भाव विरह शृंगार है। आँसू का आधार असीम व्यक्ति है, जिसके मिलन सुख की स्मृति ने कवि के हृदय में वेदना लोक की सृष्टि की है। कवि के हृदय में जो वेदना थी वह अत्यधिक घना था जिसे भुलाने का प्रयत्न करने पर भी बार-बार कवि के हृदय में स्मृति के रूप

में वह छा जाती है और वेदना और गहरी हो जाती है। यही वेदना अब आँसू बनकर बहने लगती है, जो किसी बरसात से कम नहीं है। अर्थात कवि की आँखों से अश्रु की धार बह रही है, आँसू का इस तरह बहना कवि के लिए दुर्दिन के समान है।

विशेषता : आँसू = वेदना, दुख, संघर्ष का प्रतीक। घनीभूत पीड़ा = वेदना का प्रतीक, उपमा अलंकार। स्मृति-सी = उपमा अलंकार। वह = दुख के लिए प्रयुक्त सर्वनाम, ध्वन्यात्मक एवं लाक्षणिक प्रयोग है।

बोध प्रश्न

- आँसू किसका प्रतीक है?

मेरे क्रंदन में बजती
क्या वीणा, जो सुनते हो
धागों से इन आँसू के
निज करुणापट बुनते हो ।2।

शब्दार्थ : क्रंदन = रोना। करुणापट = करुणा रूपी वस्त्र।

संदर्भ : प्रस्तुत छंद को जयशंकर प्रसाद की रचना आँसू से लिया गया है। जयशंकर प्रसाद छायावाद के प्रख्यात कवि हैं। उनकी पहली विशिष्ट रचना है आँसू जो विप्रलंभ शृंगार का उत्कृष्ट काव्य है। कवि के व्यक्तिगत पीड़ा को यह काव्य दर्शाता है। लौकिक विरह को दर्शानेवाली यह श्रेष्ठ रचना है।

प्रसंग : विरह की असीम वेदना जो कवि के मन में पहले से ही धधक रही थी, आज स्मृति के रूप में बार-बार छा गई है और कवि को व्याकुल कर रही है।

व्याख्या : कवि के हृदय में जो वेदना और विरह की पीड़ा जल रही है वह कवि की निजी वेदना है। व्यक्तिगत पीड़ा है। यह वेदना शोक-संतप्त हृदय में बजनेवाली किसी वीणा के झंकार से कम नहीं है। जिस प्रकार दुख के दौरान बजनेवाली वीणा का स्वर दुख को दुगुना कर देता है, ठीक उसी प्रकार कवि का यह व्यक्तिगत दुख उन्हें चीर रहा है। जो भी करुणा से युक्त इस झंकार को सुनते हैं, उनके मन में करुणा भाव अवश्य उत्पन्न हो जाता है।

विशेषता : मेरे क्रंदन- कवि की व्यक्तिगत पीड़ा का प्रतीक, बजती क्या वीणा- अस्पष्ट भाव (अर्थात दुख में कवि को समझ नहीं पा रहे हैं कि उनके ऊपर क्या बीत रही है), धागों से- क्षीण स्वर।

बोध प्रश्न

- इन पक्तियों के माध्यम से कवि क्या समझना चाह रहे हैं?

रो-रोकर सिसक-सिसककर
कहता मैं करुण कहानी
तुम सुमन नोचते सुनते
करते जानी अनजानी ।3।

शब्दार्थ : सुमन = फूल। जानी अजानी = जानबूझकर।

संदर्भ : प्रस्तुत छंद को जयशंकर प्रसाद की रचना आँसू से लिया गया है। जयशंकर प्रसाद छायावाद के प्रख्यात कवि हैं। उनकी पहली विशिष्ट रचना है आँसू जो विप्रलंभ शृंगार का उत्कृष्ट काव्य है। इसमें कवि की जो व्यक्तिगत पीड़ा चित्रित हुई है वह मानवीय पीड़ा का प्रतीक है। लौकिक विरह को दर्शानेवाली यह श्रेष्ठ रचना है।

प्रसंग : कवि के हृदय का दुख अब आँसू का रूप धारण कर बहने लगी है। दुख की गहराई में वीणा का स्वर बजने लगी है। कवि की यह वेदना इतनी गहरी है कि मन में करुणा का संचार करती है।

व्याख्या : विरही प्रेमी रो-रोकर अपनी करुण कहानी सुना रहा है। किंतु कवि को ऐसा लगता है कि सामनेवाले पर उसका कोई भी असर नहीं हो रहा है। विरही प्रेमी के प्रति उसके मन में किसी भी प्रकार की सहानुभूति नहीं है। इसलिए कवि को लगता है कि जिस प्रकार सुमन को नोचा जाता है उसी प्रकार कवि के प्रेम पीड़ा को भी कोई महत्व नहीं दिया जा रहा है। ऐसा नहीं है कि कवि का दुख प्रियतमा से छिपा हुआ है, किंतु सब कुछ जानते हुए भी वह अनजान बनी हुई है। यह उचित नहीं है।

विशेषता: विरही प्रेमी की व्यथा, उपेक्षा की भावना इंगित है। रो-रोकर सिसक-सिसककर- वीप्सा अलंकार, पुनरुक्ति, सुमन- श्लेष अलंकार, फ़ूल का प्रतीक, अच्छे मन का पर्याय, शब्द रूपी फ़ूल, करुणा- विरोधाभास।

बोध प्रश्न

- इस छंद में प्रयुक्त अलंकारों के नाम बताइए।
- इन पंक्तियों का भाव अपने शब्दों में समझाइए।

मैं बलखाता जाता था

मोहित बेसुध बलिहारी
अंतर के तार खिंचे थे
तीखी थी तान हमारी ।4।

शब्दार्थ : बलखाता = लचकाना। मोहित = मुग्ध। बेसुध = बेहोश। अंतर = हृदय।

संदर्भ : प्रस्तुत छंद को जयशंकर प्रसाद की रचना आँसू से लिया गया है। जयशंकर प्रसाद छायावाद के प्रख्यात कवि हैं। उनकी पहली विशिष्ट रचना है आँसू जो विप्रलंभ शृंगार का उत्कृष्ट काव्य है। कवि के व्यक्तिगत पीड़ा को यह काव्य दर्शाता है। लौकिक विरह को दर्शानेवाली यह श्रेष्ठ रचना है।

प्रसंग : प्रेमी अपनी वेदना की पीड़ा को रो-रोकर सुनाता है लेकिन प्रेमिका पर उसका कोई भी असर होते न पाकर वह अपने ही धुन में खोने लगता है।

व्याख्या : विरही प्रेमी कहता है कि मैं मिलन के सुख पर बलखाता था। उसी की याद में मैं मोहित था। मेरा प्रेमी हृदय प्रेम में बेसुध और बलिहारी था। लेकिन मेरा अंतर्मन बेचैन था, इसलिए अंतर्मन के तार खींचे हुए थे और तान में तीखापन दिखाई दे रहा था। इसका तात्पर्य यह है कि व्यक्ति जब शोक में होता है तो वह पुरानी बातों को याद कर अपने मन को शांत रखने का प्रयास करता है, लेकिन दुख में मन की हलचल कम नहीं होती है। इसलिए मेरी वीणा के स्वरों में तीखापम था।

विशेषता: बलखाना- प्रिय के संसर्ग में बिताये पल की याद में खोना, बलिहारी- वियोगजन्य स्थिति पर मोहित, मेरे हृदय के तार खींचे थे- मन अशांत होना, हलचल होना। मोहित- मुग्ध, तार खिंचे थे- हलचल की अवस्था, तीखी थी तान- अनुप्रास अलंकार, अंतर का तार- रूपकातिशयोक्ति अलंकार।

बोध प्रश्न

- इन पंक्तियों के भाव को अपने शब्दों में स्पष्ट कीजिए।

झंझा झकोर गर्जन था
बिजली सी थी नीरद-माला,
पाकर इस शून्य हृदय को
सबने आ डेरा डाला ।5।

शब्दार्थ : झंझा = हवा। नीरद = बादल।

संदर्भ : प्रस्तुत छंद को जयशंकर प्रसाद की रचना आँसू से लिया गया है। जयशंकर प्रसाद छायावाद के प्रख्यात कवि हैं। उनकी पहली विशिष्ट रचना है आँसू जो विप्रलंभ शृंगार का उत्कृष्ट काव्य है। कवि की व्यक्तिगत पीड़ा को यह काव्य दर्शाता है। लौकिक विरह को दर्शानेवाली यह श्रेष्ठ रचना है।

प्रसंग : विरही प्रेमी संयोग सुख को याद करते हुए प्रसन्न रहना चाहता है, लेकिन उसका मन बेचैन है और इस बेचैनी से उसका दुख निरंतर बढ़ता जाता है। अपनी स्थिति का बखान करते हुए कवि मन की व्यथा को सुनाता है।

व्याख्या : कवि ने वियोग की गहराई को दर्शाने के लिए झंझा झकोर, गर्जन, बिजली सी, नीरद माला, शून्य हृदय आदि का प्रयोग करते हुए यह प्रतिपादित किया है कि विरही प्रेमी का हृदय प्रिय के वियोग में इस कदर खाली हो गया है कि उसमें अब अवांछित तत्व धावा बोल गए हैं। इसलिए कवि कहते हैं कि इस वियोग के कारण मेरे हृदय रूपी आकाश में वेदना की कसक उत्पन्न हो गई है, निराशा के बादल छा गए हैं, यादों की बिजलियाँ कौंध रही हैं, मेरा हृदय शून्य हो गया, अर्थात हृदय आकाश के समान शून्य भी हो गया और प्रेमी के बिना मन खाली भी हो गया है।

विशेषता : झंझा झकोर - हवा के झोंके, विक्षोभ का प्रतीक, रूपकातिशयोक्ति अलंकार, नीरद माला- बादलों का समूह, लक्ष्यार्थ प्रयोग, हृदय में घने अंधकार का प्रतीक, रूपकातिशयोक्ति अलंकार। शून्य- श्लेष अलंकार (आकाश, खाली), गर्जन-वेदना की तडप का प्रतीक और बिजली-दुख की टीस के अर्थ में प्रयुक्त हुए हैं। उपरोक्त पंक्तियों में कवि ने ध्वन्यात्मक शब्दों का प्रयोग किया है। दार्शनिकता के साथ-साथ गीतात्मकता है। डेरा डाला- मुहावरा है।

बोध प्रश्न

- नीरद-माला से क्या अभिप्राय है?

घिर जातीं प्रलय घटाएँ
कुटिया पर आकर मेरी
तम चूर्ण बरस जाता था
छा जाती अधिक अँधेरी ।6।

शब्दार्थ : कुटिया = घर।

संदर्भ : प्रस्तुत छंद को जयशंकर प्रसाद की रचना आँसू से लिया गया है। जयशंकर प्रसाद

छायावाद के प्रख्यात कवि हैं। उनकी पहली विशिष्ट रचना है आँसू जो विप्रलंभ शृंगार का उत्कृष्ट काव्य है। कवि की व्यक्तिगत पीड़ा को यह काव्य दर्शाता है। लौकिक विरह को दर्शानेवाली यह श्रेष्ठ रचना है।

प्रसंग : विरही प्रेमी की वेदना की छटपटाहट गहराता जाता है। उसके मन आँगन में आँसू के बादल मंडराने लगते हैं। कवि को ऐसा लगता है कि प्रलय होने वाला है। वेदना के चरमोत्कर्ष दिखाकर कवि ने मानवीय प्रेम की व्याख्या करते हुए विश्वमंगल की भावना को अभिव्यक्त किया है।

व्याख्या : प्रेमिका के विरह में प्रिय को लगता है कि उसके हृदय रूपी आकाश में बादल गरज रहे हैं और उसकी इस छोटी सी कुटिया पर अब प्रलय के बादल मंडरा रहे हैं। इस प्रलय के कारण जो पहले से अंधेरा था, वह और भी अधिक घना हो गया था। प्रलय आने पर विनाश निश्चित है। अत: प्रेमी का मन प्रलय के इस अंधेरे से आहत हो उठा है।

विशेषता : कुटिया - कवि के शांत और पवित्र का प्रतीक, प्रलय- विरह की तीव्रत का प्रतीक।

बोध प्रश्न

- प्रलय घटाएँ किसके प्रतीक हैं?
- कवि का क्या आशय है?

बिजली-माला पहने फ़िर
मुसकाता था आँगन में
हाँ, कौन बरसा जाता था
रस बूँद हमारे मन में ।7।

शब्दार्थ : मुस्काता = मुसकुराता।

संदर्भ : प्रस्तुत छंद को जयशंकर प्रसाद की रचना आँसू से लिया गया है। जयशंकर प्रसाद छायावाद के प्रख्यात कवि हैं। उनकी पहली विशिष्ट रचना है आँसू जो विप्रलंभ शृंगार का उत्कृष्ट काव्य है। कवि की व्यक्तिगत पीड़ा को यह काव्य दर्शाता है। लौकिक विरह को दर्शानेवाली यह श्रेष्ठ रचना है।

प्रसंग : वेदना की अनुभूति कवि प्रेमी के मन में प्रबल होने पर भी कवि आशावादी है। मानवीय प्रेम का प्रतिपादन करते हुए मानव समुदाय को संवेदनशील बनाने में कवि तत्पर है। इसलिए निराशा के बीच कवि आशा के स्वर को मुखरित करते दिखाई देते हैं।

व्याख्या : कवि हृदय में स्मृति के रूप में प्रियतम की छवि बसी हुई है और वह यादों की शृंखला बनकर कवि को तड़पा रही है। किंतु इस वेदना में घिरकर भी कवि के अंतर्मन से एक आशावादी स्वर उमड़ पड़ती है। प्रियतम की बिजली सी अंग कांति के मुस्कराकर आनंद वर्षा करने का निरूपण किया है, यहाँ व्यंग्यार्थ यह है कि जिस समय प्रेमी प्रियतम की याद में हताश और निराश होकर बेचैन एवं व्यग्र होता है, उस समय उसका प्रिय स्मृति के रूप में आकर अपने रूप-सौंदर्य की छटा से प्रेमी के मन को आनंद विभोर कर देता है।

विशेषता: बिजली-माला: समासोक्ति, वेदना का प्रतीक, बिजली-माला पहने: मानवीकरण अलंकार, कौन- प्रश्नार्थक, अस्पष्ट और अनिश्चयवाचक।

बोध प्रश्न

- इन पंक्तियों की विशेषता को अपने शब्दों में निरूपित कीजिए।

तुम सत्य रहे चिर सुंदर !
मेरे इस मिथ्या जग के
थे केवल जीवन संगी
कल्याण कलित इस मग के ।8।

शब्दार्थ : चिर = नित्य।

संदर्भ : प्रस्तुत छंद को जयशंकर प्रसाद की रचना आँसू से लिया गया है। जयशंकर प्रसाद छायावाद के प्रख्यात कवि हैं। उनकी पहली विशिष्ट रचना है आँसू जो विप्रलंभ शृंगार का उत्कृष्ट काव्य है। कवि की व्यक्तिगत पीड़ा को यह काव्य दर्शाता है। लौकिक विरह को दर्शानेवाली यह श्रेष्ठ रचना है।

प्रसंग : सुख और दुख इस जीवन में दिन और रात के समान हैं। संयोग है तो वियोग भी अवश्य ही होगा, इस बात को कवि स्वीकृत करते हैं। इसीलिए असीम दुख से ग्रसित होने पर भी उनके मन से प्रेम की भावना और प्रेम के प्रति श्रद्धा भाव कम नहीं होती है। प्रेम मानव समुदाय का चिर सत्य है।

व्याख्या : कवि कहता है कि यह संसार मिथ्या है और इस मिथ्या जगत में तुम्हारा चिर सौंदर्य ही एक मात्र सत्य है। हे प्रिय तुम मेरे जीवन मार्ग की एक मात्र संगिनी रही हो जिससे मेरे जीवन का मार्ग कल्याणकारी रहा है। तुम ने ही मेरे जग को कल्याण से परिपूरित किया है।

विशेषता: तत्सम शब्दों का प्रयोग, ध्वन्यात्मक एवं प्रतीकात्मकता की व्यंजना हुई है।

बोध प्रश्न

- इस संसार को कवि ने किस तरह चित्रित किया?

कितनी निर्जन रजनी में
तारों के दीप जलाये
स्वर्गंगा की धारा में
उज्ज्वल उपहार चढाये ।9।

शब्दार्थ : रजनी = रात।

संदर्भ : प्रस्तुत छंद को जयशंकर प्रसाद की रचना आँसू से लिया गया है। जयशंकर प्रसाद छायावाद के प्रख्यात कवि हैं। उनकी पहली विशिष्ट रचना है आँसू जो विप्रलंभ शृंगार का उत्कृष्ट काव्य है। कवि की व्यक्तिगत पीड़ा को यह काव्य दर्शाता है। लौकिक विरह को दर्शानेवाली यह श्रेष्ठ रचना है।

प्रसंग : अपनी प्रियतम को कवि चिर सुंदर कहते हुए उसकी यादों का दीपक जलाता है। स्वप्न में प्रियतम का आने से प्रेमी का हृदय प्रफ़ुल्लित हो उठा है।

व्याख्या : जब प्रेमी अपनी प्रियतम की प्रतीक्षा कर रहा है, तब उस प्रियतम के आगमन से प्रेमी के हृदय में जो उल्लास हुआ है, उसका कवि ने इस छंद में चित्रण किया है। कवि कहते हैं कि कितनी ही निर्जन रातों में मैंने तारों के दीपक जलाए, अर्थात तुम्हारे आगमन की कामना करते हुए मैंने न जाने कितनी ही रातें तारों के दीप जलाकर व्यतीत किए हैं और कितने ही आकाश गंगा के मैंने उपहार चढ़ाए हैं। तात्पर्य यह कि कवि ने प्रियतम के आगमन की कामना में रातों की नींद गंवाई हैं।

विशेषता : कितनी निर्जन- अकेलेपन का प्रतीक, तारों के दीप जलाना- तारे गिनकर रात बिताना (रात की नींद गंवाना)

बोध प्रश्न

- 'तारों के दीप जलाना' का क्या आशय है?

गौरव था, नीचे आए
प्रियतम मिलने को मेरे
मैं इठला उठा अकिंचन
देखो ज्यों स्वप्न सवेरे ।10।

शब्दार्थ : अकिंचन = दरिद्र

संदर्भ : प्रस्तुत छंद को जयशंकर प्रसाद की रचना आँसू से लिया गया है। जयशंकर प्रसाद छायावाद के प्रख्यात कवि हैं। उनकी पहली विशिष्ट रचना है आँसू जो विप्रलंभ शृंगार का उत्कृष्ट काव्य है। कवि की व्यक्तिगत पीड़ा को यह काव्य दर्शाता है। लौकिक विरह को दर्शानेवाली यह श्रेष्ठ रचना है।

प्रसंग : रातों की नींद गंवाकर जब प्रेमी अपनी प्रियतम का राह ताकता है तब स्वप्न के रूप में प्रियतम का आना प्रेमी हृदय के लिए गौरव की बात है।

व्याख्या : मुझे वास्तव में इस चीज से गौरव की प्रतीत हुई कि मुझसे मिलने के लिए मुझ जैसे अकिंचन से मिलने के लिए नीचे उतरकर आए हैं, यह मेरे लिए सुबह के स्वप्न के समान था जो मेरे प्रियतम मेरे लिए आए हो इससे मुझे गौरव की अनुभूति हो रही है। इस स्वप्न से ही कवि इठला जाते हैं कि प्रियतम स्वप्ना में ही मिलने के लिए आ जाते हैं।

विशेषता : इठला उठा- पुलकित होना, कोई भी व्यक्ति जब प्रेम के मार्ग पर चलता है, तब अपनी प्रियतम के सामने अपने आप को अकिंचन ही मानता है। अकिंचन-अपने आप को तुच्छ मानना।

बोध प्रश्न

- 'सुबह का स्वप्न' से क्या आशय है?

10.3.4 काव्यगत विशेषताएँ

आँसू प्रसाद की सर्वाधिक लोकप्रिय रचना है। इसकी ध्वन्यात्मकता, संगीतात्मकता एवं गीति तत्व ने न जाने कितने ही काव्य-प्रेमियों को आकर्षित किया है। इसके अतिरिक्त यह मानवीय करुणा, व्यथा एवं वेदना का काव्य है। यह एक ऐसी प्रबंधात्मक रचना है जिसमें से केवल कुछ छंदों का अध्ययन आप अपने पाठ्यक्रम के अंतर्गत करेंगे। किंतु काव्यगत विशेषताओं के बारे में जानने के लिए हमें पूरी काव्य के भाव को समझना होगा। अत: यहाँ आपके अध्ययन की सुविधा के लिए सामान्य रूप से इस कृति की विशेषताओं का विश्लेषण किया गया है। काव्यसौंदर्य को उसके भावपक्ष एवं कलापक्ष के अध्ययन से ही समझा जा सकता है। अत: यहाँ पर संक्षिप्त में इस कविता के भावपक्ष और कलापक्ष पर प्रकाश डाला गया है।

इस काव्य रचना में कवि ने संयोग-सुख की मादक स्मृतियों का वर्णन किया है, फ़िर अपने प्रियतम के रूप-सौंदर्य की मनोरम झाँकियाँ अंकित की हैं, तदुपरांत व्यथा एवं वेदना का

मर्मस्पर्शी निरूपण किया है। इसके साथ ही इस काव्य में 'चिरदग्धदु:खी वसुधा' के प्रति अत्यंत भावपूर्ण सहानुभूति व्यक्त की है। इस दृष्टि से देखा जाय तो इस मादक विरह के काव्य का जो भावपक्ष है उसके चार भाग गोचर होते हैं, (हिंदी के आधुनिक प्रतिनिधि कवि, पृ.सं 158), तो चलिए, आँसू के भावपक्ष का आस्वाद लेते हैं। यथा-

1. अतीत के संयोग सुखों की मादक स्मृति से उत्पन्न प्रेमी की मनोदशा का चित्रण : इस काव्य में प्रेमी की हृदयद्रावक मनोदशा का मार्मिक चित्र अंकित किये गये हैं जो अतीत के संयोग सुखों की मार्मिक स्मृति से उत्पन्न हुई हैं। यही कारण है कि प्रेमी के करुणा-कलित हृदय में विकल रागिनी बज रही है और हाहाकार स्वरों में असीम वेदना गरज रही है। शीतल ज्वाला जलकर ईंधन का काम करते हैं और साँस चल चलकर हवा का काम कर रही हैं। इससे कवि के हृदय में वेदना घनीभूत होती जाती है। वह अपनी प्रियतमा के रूप सौंदर्य को याद करने लगता है। अतीत में जिसके प्रेम और लालित्य से मन बहल जाता था, अब वही स्मृति पीड़ा बनकर उसके हृदय को हिला देती है। वह रो-रोकर, सिसक-सिसककर अपनी करुण गाथा सुनाता है। उसके मन में बसे करुण भाव एवं संवेदनशील भावुकता से दुख आँसू बनकर बहने लगती है। संयोग सुख की याद जैसे-जैसे गहरी होती जाती है, वैसे वैसे दुख की परिधि भी घनीभूत होती जाती है। इस अज्ञात प्रियतम की स्मृति उसके 'सुमन' को नोचने लगती है। इतना ही नहीं, स्मृति के उदय होते ही उसके शून्य हृदय में झंझाझकोरें लेने लगती हैं। बिजली चमकने लगती है और नीरदमाला आकर घेरा डालती है। उसकी जीवन रूपी कुटिया पर प्रलय की घटायें घिर जाती हैं, सघन अंधकार छा जाता है। इस दशा में प्रेमी को ऐसा आभास होने लगता है कि उसकी प्रियतमा अब उसके आँखों के सामने उपस्थित है। स्मृति-जन्य विरह दशा की यही मानसिक स्थिति होती है, जिसमें अतीत के सुखों की मादक एवं रंगीन कल्पनाएँ प्रेमी हृदय को बेचैन कर झकझोर डालती हैं। आँसू के प्रथम भाग में इसी का वर्णन है।

2. प्रियतम के अलौकिक रूप-सौंदर्य का निरूपण : आँसू के द्वितीय भाग में प्रियतम की अनुपम एवं अद्वितीय रूप-छटा का वर्णन किया गया है, जिसकी मादक स्मृति ने प्रेमी को विचलित कर दिया है। प्रलय की घटायें उसके जीवन रूपी कुटिया पर आक्रमण करने लगते हैं और घना अंधकार घिरा हुआ है। इसी घटाटोप अंधकार में स्मृति के पथ से आया हुआ उसका जीवन-संगी बिजली माला पहनकर मुस्कुराता-सा आँगन में दिखाई देने लगता है, जो प्रेमी के मन में रस की बूँदें बरसाने लगता है। प्रेमी उसके सत्य एवं चिर सुंदर स्वरूप को देखकर आनंद विभोर हो

उठता है क्योंकि प्रियतम का दर्शन करने के लिए प्रेमी ने न जाने कितनी निर्जन रातों में तारों के दीपक जलाए हैं और आकाश-गंगा की धारा में न जाने कितने उज्ज्वल उपहार चढाये हैं। उसके प्रियतम का रूप-सौंदर्य अद्भुत एवं अलौकिक है, क्योंकि प्रथम साक्षात्कार के समय ही प्रेमी को अपनी प्रियतमा मधु राका (पूर्णिमा का चंद्र) प्रतीत हो रही थी। आज वही प्रियतमा पतझड में सूखी हुई जीवन फ़ुलवाडी पर कुसुम बिछाता हुआ आया है। उसके शशि-मुख पर घूँघट है, अंचल में दीपक छिपाए हुए हैं, उसकी काली-काली पुतलियाँ घन में सुंदर बिजली सी धमक रही हैं। उसकी कमनीयता, मोतियों से मंडित माँग, सुसज्जित केशराशि, मानो लगता है कि चंद्रमा को काली जंजीरों से बाँध रखा हो और काले-काले फणियों का मुख हीरों से भरा हुआ हो। उसके कोमल कपोलों में मधुर मुस्कुराहट के कारण गड्ढे बन जाते हैं। उसके लाला होंठ, चमकते दाँत, मोहित नासिका, कामदेव के समान उसकी भुजाएँ आदि का मार्मिक वर्णन कवि ने इस कविता में किया है।

3. प्रेम-वेदना की मर्मस्पर्शी अभिव्यक्ति : आसूँ के तीसरे भाग में प्रेमी की उस मार्मिक विरहानुभूति अथवा प्रेम-वेदना की अभिव्यक्ति हुई है, जो उस प्रियतम की अलौकिक छटा के सहसा लुप्त हो जाने पर प्रेमी के हृदय में जाग्रत होती है, क्योंकि जब तक प्रेमी प्रियतम के अलौकिक रूप-सौंदर्य की मोहमयी छटा में उलझा रहता था, तब तक तो उसे सर्वत्र आनंद उल्लास की वर्षा होती हुई जान पडती थी। चारों ओर शांति बिंहसंतीं थीं। यहाँ तक कि प्रकृति भी उसे सुरम्य लगने लगती थी। परंतु अब प्रियतम के के कहीं ओझल हो जाने से वे मधुमय संयोग के दिन न जाने कहाँ तिरोहित हो गये । उसके जीवन-सिंधु की लहरें प्यासी हैं, और उसके मानस का सब रस पीकर उसकी जीवन-प्याली को लुढका दिया गया है। उसके जीवन की बगिया उजड चुकी है, कलियाँ बिखर गई हैं, चारों ओर रूखा पराग उड रहा है। संयोग का वह क्षण अब कल्पना लगने लगती है। उसके जीवन में आज मुरली नीरव है, सारे कलरव चुप हैं, कमल के भौरें बंद हैं, मलयानिल भी मधु सौरभ से व्याकुल होकर विरह-तरंगिनी के किनारे विश्वास छोडता जान पडता है। सर्वत्र केवल निराशा और शून्य है। आज प्रेमी आँसुओं की धारा बहाकर उसके मन की नौका को सूखे सिकता-सागर में रस्सी के बिना खींच रहा है । वह आहें भरता हुआ कराह रहा है और उसे आशा है कि उसकी शिथिल आह से खिंचकर उसका प्रियतम अवश्य आयेगा और वह भी रो-रोकर विरही प्रेमी के प्रेम को अपनायेगा।

4. व्यथित विश्व के प्रति हार्दिक सहानुभूति का वर्णन : आँसू के चतुर्थ भाग में वेदना से व्यथित

एवं पीडित चिर दग्ध दुखी वसुधा के प्रति हार्दिक सहानुभूति व्यक्त की गई है। प्रेमी जानता है कि आज प्रियतम के वियोग में वह अकेला ही संतृप्त एवं दुखी नहीं है, अपितु पूरा ब्रह्मांड पीडित एवं व्यथित है। जगत के सभी प्राणी व्यथित एवं व्याकुल हैं और इस जीवन में कहीं भी शांति एवं विश्राम नहीं है, यह वसुधा तो चिर दुख से दग्ध है और यहाँ के नभ के आँगन में दुख की नीलिमा शयन कर रही है, इसीलिए कवि इस चिर-दग्ध दुखी वसुधा के प्रति सहानुभूति व्यक्त करता हुआ जगती के समस्त सजग व्यथाओं को चुनने की इच्छा प्रकट करता है। वह कहता है कि तेरा प्रकाश पाकर ही वेदना से व्यथित संसार चेतन होता है। अत: इस निर्मम जगती को अपना मंगलमय उजाला प्रदान करो। तुमसे मेरा विनम्र निवेदन है कि तुम सबका निचोड़ लेकर दुख से सूखे जीवन में हरियाली लाने के लिए वह प्रात:कालीन ओस की बूँदें जैसे आँसू लेकर विश्व सदन में बरसाती रहो। कवि की विश्व के प्रति यही सहानुभूति है जो चिरदग्धदुखी वसुधा को देख आँसू के रूप में अभिव्यक्त हुई है।

इस प्रकार 'आँसू' काव्य में मानवीय विरह-वेदना का मनोवैज्ञानिक निरूपण हुआ है। यह एक ऐसा विरह काव्य जिसमें करुणा, व्यथा,वेदना, एवं दुख का सजीव चित्रण हुआ है। लौकिक प्रेम को जीवन, मृत्यु, और अमरता का मुख्य आधार बताकर चिरदग्धदुखी वसुधा को आनंदमयी नवचेतन प्रदान करने वाला सिद्ध किया है । संयोग सुख की मादक स्मृति से उत्पन्न अंत:करण की तडप एवं छटपटाहट की मनोरंजक झांकियाँ अंकित की हैं। प्रेम-वेदना को व्यष्टि कल्याण करने वाली सिद्ध करते हुए समष्टि कल्याण के लिए भी परमावश्यक घोषित किया है। इस प्रकार आँसू काव्य में एक निश्चित कथा का विस्तार सुनियोजित रूप में हुआ है, जिससे इसमें प्रबंधात्मकता, धारवाहिकता दृष्टिगोचर होती है जो मानवीय विरह का सर्वोत्कृष्ट प्रबंधकाव्य है।

बोध प्रश्न

- आँसू में प्रियतम का वर्णन किन शब्दों में किया गया है?
- प्रेमी के करुणा कलित हृदय में कैसी रागिनी बज रही है?
- आँसू के कथावस्तु का अध्ययन हम कितने भागों में कर सकते हैं?
- आँसू के भावपक्ष का अध्ययन करते हुए आपने क्या महसूस किया है? अपने शब्दों में उत्तर दीजिए ।

10.3.5 समीक्षात्मक अध्ययन

प्रस्तुत काव्य में कवि ने मानवीय विरह प्रेम को मनोवैज्ञानिक ढंग से योजनाबद्ध निरूपण

करते हुए करुणा, व्यथा, वेदना एवं पीड़ा के सजीव चित्र अंकित किए हैं तथा रूप-सौंदर्य एवं प्रकृति सौंदर्य की अप्रतिम झाँकी उपस्थित है। आँसू का मुख्य भाव विरह शृंगार है। आँसू का आधार असीम व्यक्ति है, जिसके मिलन सुख की स्मृति ने कवि के हृदय में वेदना लोक की सृष्टि की है। कवि के हृदय में जो वेदना थी वह अत्यधिक घना था जिसे भुलाने का प्रयत्न करने पर भी बार-बार कवि के हृदय में स्मृति के रूप में वह छा जाती है और वेदना और गहरी हो जाती है। यही वेदना अब आँसू बनकर बहने लगती है, जो किसी बरसात से कम नहीं है। अर्थात कवि की आँखों से अश्रु की धार बह रही है, आँसू का इस तरह बहना कवि के लिए दुर्दिन के समान है।

इस काव्य रचना में सौंदर्य की अद्‍भुत छटा विद्यमान है। प्रियतम के रूप-सौंदर्य का मार्मिक एवं चित्ताकर्षक चित्र उपस्थित है। उस अनुपम सुंदरी के मुख की झाँकी अंकित करते हुए कवि ने लिखा है कि चंद्रमा को न जाने किसने काली जंजीरों से बाँध रखा है और मणि वाले सर्प का मुख न जाने क्यों हीरों से भरा हुआ है। उसकी काली-काली आँखों में जीवन के मद की लालिमा ऐसी छलक रही है, जैसे मानो नीलम की प्याली में लाल मदिरा भरी हो। काजल से भरी उसकी आँखें ऐसी लग रही हैं, मानो अतृप्ति के सागर में नीलम की नाव तैर रही है। उसके कपोलों की सीधी सादी स्मित रेखा और भौहों की कुटिलता दर्शनीय है। उसके रक्तिम होठों में दाँत ऐसे चमकते हैं जैसे विद्रुम सीपी के सम्पुट में मोती के दाने रखे हुए हों और नासिका तोते के समान हैं। उसकी हँसी विकसित कमलों का भी उपहास करने वाली हैं। उसके दोनों कान पुरइन के किसलय तुल्य हैं, जिन पर जल-बिंदु के समान किसी के भी दुख की बातें कभी नहीं ठहरतीं। उसकी अलबेली एवं लचीली भुजाएँ या तो कामदेव के धनुष की दुहरी शिथिल डोरियाँ हैं या छवि-सरोवर की दो नवीन लहरें हैं। उसकी शरीर की शोभा इतनी आलोक-मधुर है, मानो बिजली चंद्रिका-पर्व में स्नान करके आई हो। इस प्रकार कवि ने आँसू में प्रियतम के रूप-सौंदर्य की अद्‍भुत झाँकी प्रस्तुत की है।

10.4 पाठ सार

आँसू एक ऐसा गीतिकाव्य है, जिसमें व्यक्तिगत अनुभूति, आत्मा की संकल्पना एवं दार्शनिक चिंतन आदि का मर्मस्पर्शी चित्रण हुआ है। अतीत-प्रेम की स्मृतियों की पीड़ा द्रविभूत होकर कवि के आँसुओं के रूप में बह निकली है। आँसू कविता की मूल प्रेरणा कोई निजी आंतरिक व्यथा है। निजी व्यथा और आत्मानुभूति की प्रधानता के कारण भाषा की भंगिमा बदल गई है।

भाषा लाक्षणिक, प्रतीकात्मक, ध्वन्यात्मक और चित्रात्मक हैं । मानवीय भावों की व्यंजना हुई है।

10.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. प्रसाद की मान्यता है कि आँसू हमारे भावों की उपज है। मनुष्य का हृदय भाव के बिना अधूरा है। भाव हमारे दर्द को जगाते हैं।
2. वेदना में भी एक प्रकार का आनंद होता है। सूने हृदय में गहन अंधकार के क्षणों में भी करुणा के भाव मौजूद रहते हैं। यही भाव मानव को निराशा से जूझने की शक्ति प्रदान करते हैं।
3. जीवन की जटिल समस्याओं के बीच उदात्त और कोमल भाव खो गए हैं। यह कवि की चिंता का विषय है।
4. 'आँसू' में व्यष्टि पीड़ा का प्रसार समष्टि पीड़ा तक हुआ है। प्रकृति के विषाद का चित्रण लोकमंगल की भावना से ओतप्रोत है।

10.6 शब्द संपदा

1. अंतर्धान	= अपने में ही लीन रहना, खुद में खोये रहना
2. इतिवृत्तात्मकता	= वस्तु वर्णन या आख्यान की प्रधानता
3. चिरदग्धदुखी वसुधा	= धरती की वेदना
4. फंतासी	= कोरी कल्पना, कपोल कल्पना, दिवास्वप्न
5. मनोदशा	= मन की दशा, मन की स्थिति
6. वसुधा	= पृथ्वी, धरती, धरा
7. विक्षोभ	= उद्विग्नता, मन का आवेग
8. विरहानल	= विरह की ज्वाला, विरह की पीड़ा का प्रतीक
9. स्वानुभूति	= स्व अनुभूति

10.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. आँसू किस प्रकार की रचना है? अपने शब्दों में लिखिए।
2. आँसू छायावाद युगीन विशिष्ट रचना है, पाठ के आधार पर चर्चा कीजिए।
3. आँसू की विरहानुभूति पर प्रकाश डालिए।
4. आँसू कविता की काव्यगत विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. आँसू काव्य से आपने क्या समझा, अपने शब्दों में लिखिए।
2. पठित पाठ के आधार पर आँसू का सारांश लिखिए।
3.कितनी निर्जन रजनी में.........उपहार चढ़ाये पंक्ति का संदर्भ सहित व्याख्या लिखिए।
4. प्रियतम के अलौकिक सौंदर्य का निरूपण आँसू में किस प्रकार किया है?
5. आँसू में प्रयुक्त प्रतीकों पर प्रकाश डालिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1 'आँसू' का प्रथम प्रकाशन वर्ष कब माना जाता है ? ( )

(अ) 1923 (आ) 1924 (इ) 1925

2. जयशंकर प्रसाद किस युग के कवि थे ? ( )

(अ) द्विवेदी युग (आ) छायावादी युग (इ) दोनों

3. 'आँसू' की रचना हुई है- ( )

(अ) संयोग शृंगार (आ) विप्रलंभ शृंगार (इ) दोनों

4. 'आँसू' में कितनी पंक्तियाँ हैं ? ( )

(अ) 680 (आ) 681 (इ) 682

5. जयशंकर प्रसाद का समय कब माना जाता है ? ( )

(अ) 1890-1938 (आ) 1891-1937 (इ) 1890-1937

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. "प्रसाद की पहली विशिष्ट रचना है आँसू"....................................का कथन है।
2. 'आँसू' में ....का संचार हुआ है।
3. आँसू व्यष्टि चेतना से ....की ओर अग्रसर होता है।
4. 'आँसू' में कवि के ....जीवनानुभूति का प्रकाशन हुआ है ।
5. 'आँसू' काव्य में ....के माध्यम से प्रियतम का आगमन हुआ है।

III. सुमेल कीजिए -

1. इतिवृत्तात्मकता	(अ) वेदना का प्रतीक
2. 'आँसू' का प्रथम संस्करण	)आ) 252 पंक्ति
3. घनीभूत पीड़ा	(इ) द्विवेदी युग
4. नीरद माला	(ई) बादलों का समूह

10.8 पठनीय पुस्तकें

1. आँसू काव्य की समीक्षा : कृष्णदेव अग्रवाल
2. प्रसाद - आँसू तथा अन्य कृतियाँ : विनयमोहन शर्मा
3. प्रसाद की काव्य-प्रतिभा : दुर्गाशंकर मिश्र
4. हिंदी साहित्य का इतिहास : रामचंद्र शुक्ल
5. छायावाद : नामवर सिंह

इकाई 11 : सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

रूपरेखा

11.1 प्रस्तावना

11.2 उद्देश्य

11.3 मूल पाठ : सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

11.3.1 जीवन परिचय

11.3.2 रचना यात्रा

11.3.3 रचनाओं का परिचय

11.3.4 हिंदी साहित्य में स्थान एवं महत्व

11.4 पाठ सार

11.5 पाठ की उपलब्धियाँ

11.6 शब्द संपदा

11.7 परीक्षार्थ प्रश्न

11.8 पठनीय पुस्तकें

11.1 प्रस्तावना

आधुनिक हिंदी साहित्य में 1915 के आस-पास एक नए मोड़ का आरंभ हो गया था। यह पुरानी काव्य पद्धति को छोड़कर एक नई पद्धति के निर्माण का सूचक था। "स्थूल और सरल पदावली की भी प्रतिक्रिया हुई और कविता अंतर्जगत की ओर उन्मुख होकर सूक्ष्म, वक्र तथा सांकेतिक पदावली में अवतरित होने लगी।" (सं. नगेंद्र, हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ. 517)। इसे छायावाद कहा गया। इस काव्य पद्धति में यथार्थ के चित्रण का प्रबल आग्रह दिखाई देता है। जयशंकर प्रसाद, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, सुमित्रानंदन पंत और महादेवी वर्मा को छायावाद के चार प्रमुख स्तंभों के रूप में जाना जाता है। आधुनिक हिंदी कविता के विकास में इस युग का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। छायावाद ने हिंदी कविता को अंतर्वस्तु और शिल्प के स्तर पर उत्कर्ष प्रदान किया। छायावादी कवियों में निराला का अपना एक महत्वपूर्ण स्थान है। छात्रो! इस इकाई के अंतर्गत आप सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' के व्यक्तित्व और कृतित्व का अध्ययन करेंगे।

11.2 उद्देश्य

इस इकाई के अंतर्गत आप सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' के व्यक्तित्व और कृतित्व का अध्ययन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन से आप -

- सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' की वैयक्तिक, पारिवारिक और साहित्यिक पृष्ठभूमि को समझ सकेंगे।
- निराला के कृतित्व की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- निराला के युगीन परिवेश को समझ कर उनकी रचनाओं की प्रासंगिकता से अवगत हो सकेंगे।
- निराला की रचना प्रक्रिया और उनके काव्य की विशेषताओं से परिचित हो सकेंगे।
- हिंदी साहित्य में निराला के स्थान और उनके महत्व को समझ सकेंगे।

11.3 मूल पाठ : सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

छायावाद युग दो विश्वयुद्धों के बीच का काल है। 1917 में हुई रूसी क्रांति ने संसार पर गहरा असर डाला। भारत के परिप्रेक्ष्य में यह गांधी युग था। महात्मा गांधी ने स्वाधीनता संघर्ष को जन आंदोलन बनाया। गुलामी से मुक्ति की आकांक्षा व्यापक हुई। कीट्स, बायरन, शेली, वर्ड्सवर्थ और कॉलरिज आदि रोमांटिक कवियों के लेखन ने भी भारतीय साहित्यकारों को प्रभावित और प्रेरित किया। निराला भी इन सबसे प्रेरित थे। निराला के काव्य में आप छायावादी कोमलता के साथ-साथ कठोरता को भी देख सकते हैं। आइए, उनके जीवन और रचना यात्रा से संबंधित पहलुओं पर दृष्टि केंद्रित करेंगे।

11.3.1 जीवन परिचय

सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' का जन्म 21 फरवरी, 1896 को बंगाल की रियासत महिषादल में हुआ और मृत्यु 1961 में हुई। बसंत पंचमी के दिन उनका जन्मदिन मनाने की परंपरा 1930 में प्रारंभ हुई। उनका जन्म रविवार को होने के कारण उनके पिता पं. रामसहाय त्रिपाठी ने उनका नामकरण सुर्जकुमार रखा था। रामसहाय बैसवाड़ा क्षेत्र के गढ़कोला ग्राम के निवासी थे।

तीन वर्ष की अवस्था में ही सुर्जकुमार को माँ का अभाव सहना पड़ा। 1919 में देश में अकाल पड़ा। उसमें उनके अनेक स्वजन - पिता, पत्नी, चाचा सभी उन्हें छोड़कर चले गए लेकिन

वे इसे भी बर्दाश्त कर गए। बचपन से उनके व्यक्तित्व में मस्ती और अक्खड़ता जैसे गुण विद्यमान थे। “प्रतिकूल परिस्थितियों में भी बालक पिता से पाए हुए उद्धत स्वभाव के कारण अपने जीवन के सभी काम निर्भीक भाव से करता रहा।” (रामविलास शर्मा, निराला, पृ. 2)।

निराला के व्यक्तित्व निर्माण में परिवेश का महत्वपूर्ण स्थान है। 1943 में डॉ. रामविलास शर्मा के एक प्रश्न पर उन्होनें कहा कि “बैसवाड़े का वातावरण मुझे बहुत पसंद है, कविता के लिए कलकत्ते का।” निराला के स्वभाव के संबंध में महादेवी वर्मा का कहना है कि “निराला किसी से भयभीत नहीं, अतः किसी के प्रति क्रूर होना उनके लिए संभव नहीं। उनके तीखे व्यंग्य की विद्युत-रेखा के पीछे सद्भाव के जल से भरा बादल रहा है।” (पथ के साथी, पृ. 57)।

निराला की कद-काठी के संबंध में विश्वंभर मानव कहते हैं कि “निराला जी स्वस्थ और सुंदर व्यक्ति थे। उनके ललाट, नेत्र, नासिका, अधर, केश, स्कन्ध, वक्ष, भुजाओं, जंघाओं और हाथ की उंगलियों की प्रशंसा में लेखकों ने श्रेष्ठतम विशेषणों का प्रयोग किया है। किसी ने पठान और किसी ने ग्रीक-देवता कहा है। देखने में वे प्रागैतिहासिक काल के आर्य जैसे लगते थे। 5 फुट 11 इंच लंबे आदमी ने जब महिलाओं जैसे लंबे केश रख लिए तो दृष्टि विवश होकर उस पर पड़ने लगी। उन दिनों किसी ने निराला को ‘मिस फैशन’ कहा, किसी ने ‘मेम’।” (काव्य का देवता : निराला, पृ. 17)

निराला जी मिलनसार व्यक्ति थे। वे बड़े-छोटे का ख्याल बहुत कम करते थे। इस संबंध में रामविलस शर्मा का यह कथन उल्लेखनीय है - “निराला जी के लिए यह जरूरी नहीं है कि मिलने-बोलने के लिए बड़े साहित्यकार ही हों। स्कूल, कालेज जाने वाले लड़कों से भी वह बड़े स्नेह से मिलते हैं। वास्तव में वह बड़े-छोटे का ख्याल बहुत कम करते हैं। गाँव के किसानों और चमारों से वह बड़े अपनपौ से मिलते हैं।” (निराला, पृ. 25)। वे यह भी स्पष्ट करते हैं कि निराला निर्भीक और उद्दंड थे। वे बनावटी शिष्टाचार को तोड़ते हुए निर्द्वंद्व भाव से बात करते थे।

1920 में सुर्जकुमार का कवि जीवन प्रारंभ हुआ तब उन्होंने अपना नाम सूर्यकांत त्रिपाठी रख लिया। उनकी पहली नियुक्ति महिषादल राज्य में ही हुई। 1922 से 1923 के दौरान उन्होंने कोलकाता से प्रकाशित ‘समन्वय’ का संपादन किया, 1923 के अगस्त से ‘मतवाला’ के संपादक मंडल में कार्य किया। इसके बाद लखनऊ में गंगा पुस्तक माला कार्यालय में उनकी नियुक्ति हुई जहाँ वे संस्था की मासिक पत्रिका ‘सुधा’ से 1935 के मध्य तक संबद्ध रहे। 1942 से मृत्यु पर्यंत इलाहाबाद में रह कर स्वतंत्र लेखन और अनुवाद कार्य किया। ‘निराला’ उपनाम उन्हें ‘मतवाला’

के अनुप्रास में ही मिला। इस संबंध में स्वयं निराला का कथन देखें - “मेरा उपनाम ‘निराला’ ‘मतवाला’ के ही अनुप्रास पर आया था।” (अनामिका, प्राक्कथन)

बोध प्रश्न

- निराला का स्वभाव कैसा था?
- निराला के व्यक्तित्व निर्माण के घटकों के बारे में बताइए।
- ‘निराला’ उपनाम कैसे आया?

11.3.2 रचना यात्रा

1920 से निराला की साहित्यिक यात्रा शुरू हुई थी। उनकी पहली कविता ‘जन्मभूमि’ प्रभा नामक मासिक पत्र में जून 1920 में प्रकाशित हुई थी। पहला कविता संग्रह ‘अनामिका’ 1923 में प्रकाशित हुआ था। उनका पहला निबंध ‘बंग भाषा का उच्चारण’ अक्टूबर 1920 में मासिक पत्रिका ‘सरस्वती’ में प्रकाशित हुआ। उन्होंने कहानियाँ, उपन्यास और निबंध भी लिखे हैं किंतु उनकी ख्याति विशेष रूप से कविता के कारण ही है। जुही की कली (1916), अनामिका (1923), परिमल (1930), गीतिका (1936), द्वितीय अनामिका (1938) [अनामिका के दूसरे भाग में सरोज सम़ृति और राम की शक्ति पूजा जैसे प्रसिद्ध कविताओं का संकलन है], तुलसीदास (1938), कुकुरमुत्ता, अणिमा, बेला, नए पत्ते, अर्चना, आराधना, गीत कुंज, सांध्य काकली, अपरा आदि उनके प्रसिद्ध काव्य संग्रह हैं। अप्सरा, अलका, प्रभावती, निरुपमा, कुल्ली भाट, बिल्लेसुर बकरिहा आदि उपन्यास हैं। लिली, चतुरी चमार, सुकुल की बीवी, सखी, देवी आदि कहानी संग्रह हैं तो रवींद्र कविता कानन, प्रबंध पद्म, प्रबंध प्रतिमा, चाबुक, चयन आदि निबंध संग्रह हैं। महाभारत पुराण कथा है तो आनंद मठ, विष वृक्ष, कृष्णकांत का वसीयतनामा, कपालकुंडला, दुर्गेश नंदिनी, राज सिंह, राजरानी, देवी चौधरानी, युगलांगुल्य, चंद्रशेखर, रजनी, श्री रामकृष्ण वचनामृत आदि बांग्ला से हिंदी में अनूदित रचनाएँ हैं।

निराला के संपूर्ण जीवन को दूधनाथ सिंह ने ‘आत्महंता आस्था’ की संज्ञा दी है। उनका मानना है कि यदि निराला को समझना हो तो उनकी रचनाओं को समझना आवश्यक है। रामविलास शर्मा ने अपनी पुस्तक ‘निराला की साहित्य साधना’ की भूमिका में यह स्पष्ट किया है कि निराला की रचना यात्रा का स्रोत उनका भावबोध है। और यह भावबोध उनकी विचारधारा से संबद्ध है किंतु उसका प्रतिबिंब नहीं। रामविलास शर्मा इस बात की पुष्टि करते हैं कि “निराला अपने साहित्य में जिस कवि को प्रतिष्ठित करते हैं, वह समग्र जीवन को व्यापक

दृष्टि से देखता, एक ही पक्ष लेकर नहीं चलता" (पृ. 170)। रामविलास शर्मा के अनुसार निराला सौंदर्य और उल्लास के कवि के साथ-साथ दुख और मृत्यु के कवि भी हैं। 'जन्मभूमि' निराला की पहली कविता है तथा 'पत्रोत्कंठित जीवन का विष बुझा हुआ है' उनकी अंतिम कविता है।

निराला की कविताओं को पढ़ने से ऐसा लगता है कि वे कविता के लिए अपने व्यक्तिगत जीवन पर ज्यादा निर्भरत करते थे। इसलिए व्यक्तिगत जीवन उनकी कविता का स्रोत बनकर प्रवाहित होता है। आगे उनकी कुछ प्रमुख रचनाओं पर दृष्टि केंद्रित करेंगे।

बोध प्रश्न

- दूधनाथ सिंह ने निराला के जीवन के संबंध में क्या कहा?
- निराला की कविता का स्रोत क्या है?

11.3.3 रचनाओं का परिचय

निराला के व्यक्तित्व से परिचित होने के बाद अब आप उनकी प्रमुख रचनाओं की जानकारी प्राप्त करेंगे।

प्रथम अनामिका (1923) : यह उनकी रचनाओं का पहला संग्रह है। इसके प्रकाशन के संबंध में निराला का वक्तव द्रष्टव्य है - "आदरणीय मित्र स्वर्गीय श्री बाबू महादेवप्रसाद जी सेठ ने प्रकाशित की थी। वे मेरी रचनाओं के पहले प्रशंसक हैं। (अनामिका, प्राक्कथन। इस संग्रह में कुल नौ कविताएँ संग्रहीत थीं - अध्यात्म फल, माया, जलद, अधिवास, तुम और मैं, जुही की कली, पंचवटी प्रसंग, सच्चा प्यार और लज्जित।

परिमल (1929-30) : इसमें निराला की प्राथमिक अधिकांश चुनी हुई कविताएँ हैं। तीन खंडों में विभाजित यह संग्रह निराला की नई भावभूमि का प्रतिनिधित्व करता है। इन कविताओं में ओज गुण दिखाई देता है। उदाहरण के लिए -

> भीतर नग्न रूप था घोर दमन का,
> बाहर अचल धैर्य था उनके उस दुखमय जीवन का;
> भीतर ज्वाला धधक रही थी सिन्धु अनल की,
> बाहर थीं दो बूँदें- पर थीं शांत भाव में निश्चल-
> विकल जलधि के जर्जर मर्मस्थल की। (स्वप्न स्मृति)

'परिमल' की भूमिका में निराला ने लिखा है कि "मनुष्यों की मुक्ति की तरह कविता की भी मुक्ति होती है। मनुष्य की मुक्ति कर्म के बंधन से छुटकारा पाना है और कविता की मुक्ति छंदों

के शासन से अलग हो जाना है। जिस तरह मुक्त मनुष्य कभी किसी तरह दूसरों के प्रतिकूल आचरण नहीं करता, उसके तमाम कार्य औरों को प्रसन्न करने के लिए होते हैं, फिर भी स्वतंत्र। इसी तरह कविता का भी हाल है।"

'परिमल' के प्रथम खंड में सममात्रिक तुकांत कविताएँ हैं। द्वितीय खंड की रचनाएँ स्वच्छंद छंद में रची गई हैं। इन्हें निराला मुक्त गीत कहते हैं। इन गीतों में तुक का आग्रह है पर मात्राओं का नहीं। शेफालिका, जागो फिर एक बार, महाराज जयसिंह को शिवाजी का पत्र, पंचवटी प्रसंग आदि रचनाएँ कवित्त छंद में लिखी गई हैं। ये रचनाएँ 'परिमल' के तृतीय खंड में सम्मिलित हैं। इस संग्रह की कविताओं में सड़ीगली मान्यताओं के प्रति विद्रोह तथा निम्नवर्ग के प्रति सहानुभूति दखाई देती हैं।

बोध प्रश्न

- कविता के संबंध में निराला का क्या विचार है?
- 'परिमल' में संग्रहीत कविताओं की विशेषताओं के बारे में बताइए।
- कविता की मुक्ति से निराला का क्या आशय है?

गीतिका (1936) : यह कृति मनोहरा देवी को समर्पित है। इसकी भूमिका में जयशंकर प्रसाद लिखते हैं कि "उनमें केवल पिक की पंचम पुकार ही नहीं; कनेरी की-सी एक ही मीठी तान नहीं; अपितु उनकी गीतिका में सब स्वरों का समारोह है।" (गीतिका)। इस संग्रह की मूल भावना शृंगारिकता है फिर भी बहुत से गीतों में कवि का आत्मनिवेदन देखा जा सकता है। प्रकृति वर्णन के साथ-साथ देश प्रेम का चित्रण भी है। उदाहरण के लिए-

वर दे, वीणावादिनि वर दे!
प्रिय स्वतंत्र-रव अमृत-मंत्र नव
भारत में भर दे! (वीणावादिनी वर दे)
सखि वसन्त आया।
भरा हर्ष वन के मन,
नवोत्कर्ष छाया।
किसलय-वसना नव-वय-लतिका
मिली मधुर प्रिय-उर तरु-पतिका,
मधुप-वृन्द बन्दी-

पिक-स्वर नभ सरसाया। (वसंत आया)

बोध प्रश्न

- 'गीतिका' का मूल स्वर क्या है?

अणिमा : इस संग्रह के गीतों में विषाद को रेखांकित किया जा सकता है। कवि के निराश मन को चारों ओर अंधकार दिखाई देता है। इसलिए तो वे कहते हैं -

गगन है यह अन्ध कारा;
स्वार्थ के अवगुंठन से
हुआ है लुंठन हमारा
खड़ी है दीवार जड़ की घेरकर
बोलते हैं लोग ज्यों मुँह फेरकर
इस गगन में नहीं दिनकर
नहीं शशधर, नहीं तारा

कवि की वैयक्तिक निराशा वातावरण में भी दिखाई दे रहा है। इसीलिए वे कहते हैं -

स्नेह-निर्झर बह गया है।
रेत ज्यों तन रह गया है।
आम की यह डाल जो सूखी दिखी
कह रही है - अब यहाँ पिक या शिखी
नहीं आते - पंक्ति मैं वह हूँ लिखी
नहीं जिसका अर्थ-
जीवन दह गया है।

कवि याचना करते हुए दिखाई देते हैं -

दलित जन पर करो करुणा
दीनता पर उतर आए
प्रभु, तुम्हारी शक्ति अरुणा।

बोध प्रश्न

- 'अणिमा' में ज्यादातर किस प्रकार के गीत अंकित हैं?

नए पत्ते : इस संग्रह की कविताओं में जीवन को यथार्थ का आकलन नए प्रतीकों और प्रतिमानों

के माध्यम से हुआ है। इन कविताओं में जनवादी परिवेश को देखा जा सकता है। "नए पत्ते में निराला की चेतना सामाजिक है, बाह्योन्मुखी है और समाजशास्त्रीय है। जो कला (wit) पर आधारित होकर व्यंग्य-सृष्टि करती है वही नए पत्ते की है।" (धनंजय वर्मा, निराला काव्य और व्यक्तित्व, पृ. 181)। निम्नवर्ग के प्रति निराला की सहानुभूति को इन कविताओं में देखा जा सकता है।

बोध प्रश्न

- 'नए पत्ते' की कविताओं का मूल स्वर क्या है?

कुकुरमुत्ता (1942) : यह वस्तुतः एक लंबी प्रगतिवादी कविता है। इस कविता में गुलाब पूँजीवाद का प्रतीक है तो कुकुरमुत्ता सर्वहारा का। कुकुरमुत्ता गुलाब को संबोधित करते हुए कहता है -

पहाड़ी से उठे-सर ऐंठकर बोला कुकुरमुत्ता-
अब, सुन बे, गुलाब,
भूल मत जो पायी खुशबु, रंग-ओ-आब,
खून चूसा खाद का तूने अशिष्ट,
डाल पर इतरा रहा है केपीटलिस्ट!

नंददुलारे वाजपेयी के शब्दों में "प्रगतिशील आदर्श इसमें यह है कि सामंतवादी प्रतीक गुलाब के उपहास के साथ कुकुरमुत्ता की प्रशंसा की गई है, इस आधार पर कुछ समीक्षक इसे प्रगतिवादी कविता मानते हैं। किंतु यह भी देखना चाहिए कि इसमें गुलाब का ही परिहास नहीं, स्वयं कुकुरमुता का भी परिहास है। वह अपने मुँह से अपनी जिन विशेषताओं का उल्लेख करता है और जिस पद्धति से स्वयं को संसार की श्रेष्ठतम वस्तुओं का जनक कहता है, वे व्यंजना के द्वारा उसे उपहास के केंद्र में उपस्थित कर देती हैं।" (कवि निराला)

बोध प्रश्न

- गुलाब और कुकुरमुत्ता किसके प्रतीक हैं?

राम की शक्ति पूजा : यह 312 पंक्तियों की लंबी कविता है। कहा जाता है कि इलाहाबाद से प्रकाशित दैनिक समाचार पत्र 'भारत' में पहली बार 26 अक्टूबर, 1936 को उसका प्रकाशन हुआ था। "इस कविता की सामग्री निराला ने वस्तुतः बंगला के ही एक मध्ययुगीन कवि कृतिवास की रामायण से ली है, जो कि तुलसीदास से सौ वर्ष पहल हुए थे।" (धनंजय वर्मा,

निराला काव्य और व्यक्तित्व, पृ. 198)। अपनी पुस्तक 'हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास' में रामस्वरूप चतुर्वेदी लिखते हैं कि "मौलिकता कथानक में नहीं है, उस कथानक से सिरजा क्या गया है, उसमें है। इस दृष्टि से 'शक्ति-पूजा' में शक्ति-संधान की रचनात्मक व्याख्या है और इसका मूल सूत्र उस परामर्श में है, जो जाम्बवान पराजय की मनःस्थिति में डूबे राम को देते हैं" (पृ. 123) -

शक्ति की करो मौलिक कल्पना, करो पूजन।
छोड़ दो समर जब तक न सिद्धि हो, रघुनन्दन!

इससे स्पष्ट है कि शक्ति की आराधना मौलिक रूप से ही संभव है, अनुकरण से नहीं। राम शक्ति पूजा हेतु नीलकमल लाने के लिए हनुमान को भेजते हैं। पूजा करते समय उन कमलों में से एक कमल को स्वयं शक्ति गायब कर देती हैं। आराधना करते समय शक्ति के चरणों में अंतिम कमल चढ़ाने उद्यत राम को जब कमल नहीं मिलता तो असफलता उनके सामने आती है और वे सोचते हैं -

धिक् जीवन जो पाता ही आया है विरोध
धिक् साधन जिसके लिए सदा ही किया शोध!

हताश स्थिति में राम को यह याद आता है कि -

'यह है उपाय कह उठे राम ज्यों मंद्रित घन
कहती थीं माता मुझे सदा राजीवनयन।'

जब राम अपनी आँख निकालकर शक्ति को अर्पित करने के लिए तैयार हो जाते हैं तो शक्ति राम का हाथ पकड़ लेती हैं और कहती हैं -

साधु, साधु, साधक धीर, धर्म-धन धन्य राम
कह, लिया भगवती ने राघव का हस्त थाम।

'होगी जय, होगी जय, हे पुरूषोत्तम नवीन' - कहकर महाशक्ति राम के वदन में लीन हो जाती हैं।

इस कविता में राम का अंकन पूरी तरह से मानवीय धरातल पर हुआ है। इस कविता में तत्सम शब्दावली का प्रयोग है।

बोध प्रश्न

- महाशक्ति राम से क्या कहती हैं?

- इस कविता में राम का अंकन किस तरह हुआ है?

सरोज स्मृति : यह आत्मकथात्मक काव्य है। उनकी पुत्री सरोज के बचपन, विवाह और मृत्यु की घटनाएँ इस कविता में अंकित है। यह शोक गीत है। संपूर्ण कविता स्मृति आधारित है। इस कविता की केंद्रीय पंक्तियाँ हैं -

दुख ही जीवन की कथा रही
क्या कहूँ, आज जो नहीं कही

इन पंक्तियों में कवि का जीवन संघर्ष व्यंजित है। निराला की आर्थिक परिस्थिति निराशाजनक थी। इसलिए वे कहते हैं -

धन्ये, मैं पिता निरर्थक था
कुछ भी तेरे हित में न कर सका।
जाना तो अर्थागमोपाय
पर रहा सदा सकुचित काय
लखकर अनर्थ आर्थिक पाठ पर
हारता रहा मैं स्वार्थ-समर

बोध प्रश्न

- 'सरोज स्मृति' कैसे रचना है?
- इस कविता की केंद्रीय पंक्तियाँ क्या हैं?

तोड़ती पत्थर : इस कविता में कवि ने मजदूर स्त्री का चित्रण किया है जो गर्मी की भारी दोपहरी में सड़क के किनारे बैठकर पत्थर तोड़ रही है। इस कविता के माध्यम से उन्होंने शोषित वर्ग की विषमताओं का चित्रण किया है। इस कविता मैं कवि ने 'मैं' और 'वह' का प्रयोग किया है। कवि ने अपने लिए 'मैं' आर मजदूर स्त्री के लिए 'वह' का प्रयोग किया है। इस कविता की आरंभिक पंक्तियाँ इस प्रकार हैं -

वह तोड़ती पत्थर
देखा उसे मैंने इलाहाबाद के पथ पर
वह तोड़ती पत्थर।

इस कविता का रचनाकल 1937 है। उस समय देश गुलाम था और इलाहाबाद राजनैतिक चिंतन का केंद्र बना हुआ था। कवि लिखते हैं कि उसने इलाहाबाद के पथ पर एक

मजदूरिन को देखा जो सड़क पर पत्थर तोड़ रही थी। वहाँ कोई छायादार पेड़ भी नहीं थी। वह तपती दोपहरी में सड़क पर पत्थर तोड़ रही थी। यहाँ 'वह तोड़ती पत्थर' की आवृत्ति दो बार हुई है और तीसरी बार कुछ परिवर्तन के साथ 'मैं तोड़ती पत्थर' का प्रयोग अंत में हुआ है। किंतु संदर्भ अलग है -

गुरु हथौड़ा हाथ,
करती बार-बार प्रहार -
सामने तरु मालिका अट्टालिका, प्राकार

××××

एक क्षण के बाद वह काँपी सुघर,
ढुलक माथे से गिरे सीकर
लीं होते कर्म में फिर ज्यों कहा -
मैं तोड़ती पत्थर

"संदर्भ के अनुसार तीनों जगह पत्थर का अर्थ क्रमशः बदलता गया है। पहले सड़क का पत्थर, फिर अट्टालिका का पत्थर और अंत में अपने हृदय का पत्थर।' (कविता के ने प्रतिमान, नामवर सिंह, पृ. 134)। हथौड़ा एक ही है। पहले वह सड़क पर पड़ता है, फिर अट्टालिका पर और अंत में हृदय पर। इस कविता में महनेतकश के जीवन संघर्ष को कवि ने चित्रित किया है। इस कविता के माध्यम से समाज-आर्थिक परिस्थिति को भी समझा जा सकता है।

बोध प्रश्न

- 'तोड़ती पत्थर' कविता में किस वर्ग का चित्रण है?
- इस कविता के माध्यम से कवि क्या कहना चाहते हैं?

11.3.4 हिंदी साहित्य में स्थान एवं महत्व

सूर्यकांत त्रिपाठी निराला हिंदी साहित्य के छायावाद के प्रमुख चार स्तंभों में से एक हैं। वे हिंदी साहित्य जगत में मुक्त छंद के प्रवर्तक के रूप में जाने जाते हैं। (जुही की काली)। निराला का काव्य वस्तु और शिल्प दोनों दृष्टियों से अनुपम है। रामस्वरूप चतुर्वेदी कहते हैं कि "निराला का संपूर्ण काव्य-व्यक्तित्व 'विरुद्धों का सामंजस्य' की उस अवधारणा में से जैसे विकसित हुआ है, जिसे कवि के समकालीन और प्रसिद्ध समीक्षक रामचन्द्र शुक्ल ने आनंद की साधनावस्था की उच्चतम रचना-भूमि का कारक तत्व स्वीकार किया है।" (हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास,

पृ. 124)।

निराला अपने ओज गुण के लिए प्रसिद्ध हैं। उनके काव्य का सहज स्वर उदात्त है। अपने लकड़पन में निराला ने बंगभंग आंदोलन, स्वदेशी आंदोलन, किसान आंदोलन आदि देखा और अनेक संघर्षों का नेतृत्व भी किया। अतः इनका प्रभाव उनके व्यक्तित्व और साहित्य पर पड़ना स्वाभाविक है। भारतीय और विश्व राजनीति से वे भलीभाँति परिचित थे। अतः उनकी रचनाओं में युगीन परिस्थितियों को देखा जा सकता है।

निराला ने अपने काव्य और कथा साहित्य में क्रांतिकारियों का चित्रण किया है। उनके क्रांतिकारियों का कार्यक्षेत्र हमेशा ही गाँव रहा क्योंकि वे यह मानते थे कि क्रांति की सार्थकता किसानों की मुक्ति में है। उन्होंने अपनी कविता 'बादल राग' में किसान और विप्लवी वीर के संबंध पर इस तरह लिखा है -

जीर्ण बाहु, है शीर्ण शरीर,
तुझे बुलाता कृषक अधीर,
ऐ विप्लव के वीर!

निराला यह मानते हैं कि गाँवों की उन्नति में देश की उन्नति निहित है। इसीलिए वे कहते हैं कि "गाँवों में अभी तक कोई स्वराज्य का नाम भी नहीं जानता, इसका हमें व्यक्तिगत अनुभव है। ग्राम-प्रचार और ग्राम-संगठन की इसीलिए सख्त जरूरत है।" (सुधा, संपादकीय, अक्टूबर 1929)। किसानों को जागरूक करना निराला का उद्देश्य था। 'नए पत्ते' की कविताओं में गाँव का संघर्ष तेज हो जाता है -

मन्नी कुम्हार, कुल्ली तेली, भकुआ चमार,
लुच्छू नाई, बली कहार, कुल टूट पड़े,
कुछ नहीं हुआ, कुछ नहीं हुआ, होने लगा। (डिप्टी साहब आए)

निराला यह कहने में नहीं हिचकते कि -

आज अमीरों की हवेली
किसानों की होगी पाठशाला,
धोबी, पासी, चमार, तेली,
खोलेंगे अँधेरे का ताला (बेला)

समाज में जाति-पाँति, ऊँच-नीच का भेदभाव सामंती व्यवस्था की देन है। निराला इस

जाति-प्रथा के विनाश को अपना राजनैतिक कर्तव्य समझते थे क्योंकि वे यह मानते थे कि इस कर्तव्य को पूरा किए बिना राष्ट्रीयता का विकास असंभव था। 'महाराज जयसिंह को शिवाजी का पत्र' शीर्षक कविता में कवि कहते हैं कि-

फैले संवेदना
एक ओर हिन्दू एक ओर मुसलमान हों
व्यक्ति का खिंचाव यदि जातिगत हो जाय
देखो परिणाम फिर
स्थिर न रहेंगे पैर यौवनों के
पस्त होगा हौसला
ध्वस्त होगा साम्राज्य

सामाजिक रूढ़ियों के कारण जिस तरह शूद्र दास बने उसी तरह स्त्री पराधीनता के कारण दासी बनी। स्त्रियों के संबंध में निराला लिखते हैं कि "प्राचीन शीर्णता ने नवीन भारत की शक्ति को मृत्यु की ही तरह घेर रखा है। घर की छोटी-सी सीमा में बंधी हुई स्त्रियाँ आज अपने अधिकार, अपना गौरव, देश तथा समाज के प्रति अपना कर्तव्य सब कुछ भूली हुई हैं।" (प्रबंध प्रतिमा, पृ. 77)। प्राचीन शीर्णता अर्थात प्राचीन सामाजिक व्यवस्था की रूढ़ियाँ। ये रूढ़ियाँ स्त्री की पराधीनता का कारण हैं। निराला जिस तरह समाज से ऊँच-नीच और जाति-प्रथा को मिटाना अपना राजनैतिक कर्तव्य समझते थे उसी प्रकार स्त्री के समान अधिकारों का संघर्ष स्वाधीनता आंदोलन का अभिन्न अंग मानते थे। 'विधवा', 'दीन', 'भिक्षुक' और 'तोड़ती पत्थर' शीर्षक कवितों में स्त्री का चित्रण देखें -

वह इष्टदेव के मंदिर की पूजा-सी
वह दीपशिखा-सी शांत भाव में लीन
वह क्रूर काल-तांडव की स्मृति-रेखा-सी (विधवा)

श्याम तन, भर बंधा यौवन
नत नयन, प्रिय कर्म रत मन (तोड़ती पत्थर)
सह जाते हो
उत्पीड़न की क्रीड़ा सदा निरंकुश नग्न,

हृदय तुम्हारा दुबला होता नग्न,
अन्तिम आशा के कानों में
स्पन्दित हम - सबके प्राणों में
अपने उर की तप्त व्यथाएँ,
क्षीण कण्ठ की करुण कथाएँ
कह जाते हो
और जगत की ओर ताककर
दुःख हृदय का क्षोभ त्यागकर,
सह जाते हो। (दीन)

कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि निराला का दृष्टिकोण अलग है। परमानंद श्रीवास्तव का मानना है कि "निराला ने कविता के यथार्थ को यथातथ्यता की सीमा से बाहर व्यापक जीवनसमृद्धि के रूप में उपलब्ध किया।" (शब्द और मनुष्य, पृ. 12)। निराला की काव्य संवेदना के बारे में उनकी मान्यता है कि वह अधिक विषम, तीखी और उद्वेगकारी है। "निराला पहले महत्वपूर्ण आधुनिक कवि हैं, जिन्होंने कविता की मुक्ति को मनुष्य की मुक्ति का पर्याय माना।" (शब्द और मनुष्य, पृ. 12)। उन्होंने कविता के लिए 'मैं' शैली अपनाई -

मैंने 'मैं'- शैली अपनाई
देखा दुखी एक निज भाई
दुःख की छाया पड़ी हृदय में मेरे
झट उमड़ वेदना आई।

भारतीय जनता का दुख-दर्द और सामंती पूँजीवादी उत्पीड़न से वे इस कदर प्रचलित थे कि समाजवादी व्यवस्था को कायम करने का सपना देखा। इसीलिए वे मनुष्य मात्र के बंधुत्व की घोषणा करते हैं -

मानव मानव से नहीं भिन्न
निश्चय, हो श्वेत, कृष्ण अथवा
वह नहीं क्लिन्न
भेद कर पंक
निकलता कमल जो मानव का

वह निष्कलंक

हो कोई सर (सम्राट अष्टम एड्वर्ड के प्रति)

निराला भारत के स्वाधीनता संग्राम से बंधे हुए थे। अतः वे सरस्वती से प्रार्थना करते हैं -

वर दे, वीणावादिनी वरदे

प्रिय स्वतंत्र रव, अमृत मंत्र नव

भारत में भर दे

वीणावादिनी वर दे

निराला की काव्य के संबंध में रामविलास शर्मा का कथन है कि "निराला के काव्य की विशेषता है, विरोधी तत्वों का संतुलन, उदात्त एवं अनुदात्त का समन्वय।" (निराला, पृ. 131)। उनकी काव्यभाषा में तत्समनिष्ठ शब्दों से लेकर बोलचाल के शब्द, अंग्रेजी और अरबी-फारसी के शब्दों को देखा जा सकता है। उनकी कविताओं में संगीतात्मकता को भी देखा जा सकता है। निराला को रामविलास शर्मा संघर्षों का कवि, क्रांतिकारी और युग-प्रवर्तक मानते हैं। 'सामाजिक यथार्थ और कविता का आत्मसंघर्ष' (पूर्वाग्रह 63-64) शीर्षक लेख में कुँवर नारायण लिखते हैं कि "निराला का निजी संसार उनकी कविता का उतना ही आवश्यक हिस्सा है जितना वह समाज जिसमें वे जी रहे हैं। खास बात है कि निराला की समझ और संवेदना का विस्तार उनकी कविताओं की रीढ़ है।" (शब्द और मनुष्य, पृ. 14 से उद्धृत)

बोध प्रश्न

- निराला के काव्य का सहज स्वर क्या है?
- निराला किसानों को क्यों जागृत करना चाहते थे?
- स्त्रियों के प्रति निराला की क्या दृष्टि थी?
- जाति-प्रथा के बारे में निराला का क्या मत था?

11.4 पाठ सार

हिंदी साहित्य में निराला का महत्वपूर्ण स्थान है। वे छायावाद के चार प्रमुख स्तंभों में से एक हैं। निराला के व्यक्तित्व एवं कृतित्व के निर्माण में वस्तुतः तत्कालीन परिवेश की महत्वपूर्ण भूमिका है। निराला भारतीय एवं विश्व राजनीति से भलीभाँति परिचित थे। उन्हें यह पता था कि जातिगत भेदभाव को समाज से दूर किए बिना राष्ट्रीयता का विकास नहीं किया जा सकता।

वे मनुष्यता के पक्षधर थे। इसीलिए वे कविता की मुक्ति और मनुष्य की मुक्ति को पर्याय मानते थे। उनकी रचना प्रक्रिया का स्रोत उनकी भावबोध है जो उनकी विचारधारा से संबद्ध है। निराला की रचनाओं का फलक विस्तृत है। उन्हें किसी कटघरे में बाँधना कठिन है।

11.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. निराला छायावाद के एक प्रमुख स्तंभ हैं।
2. निराला ने छायावाद का अतिक्रमण करके युग के अनुरूप प्रगतिवाद के आंदोलन को पुष्ट किया।
3. निराला उल्लास और सौंदर्य के कवि के साथ-साथ दुख और मृत्यु के कवि हैं।
4. निराला की कविता का स्रोत उनका व्यक्तिगत जीवन है।
5. निराला की रचना प्रक्रिया का स्रोत उनका भावबोध है। यह भावबोध उनकी वैचारिकता से संबद्ध है।
6. निराला का स्वाधीनता प्रेम उनके साहित्य में नए-नए रूपों में व्यक्त होता है।
7. निराला अपने ओज गुण के लिए प्रसिद्ध हैं। उनके काव्य का सहज स्वर उदात्त है।
8. निराला ने कविता की मुक्ति को मनुष्य की मुक्ति का पर्याय माना।

11.6 शब्द संपदा

1. अंतर्वस्तु	=	मूल विषय
2. उत्कर्ष	=	उन्नति, विकास
3. उद्धत	=	प्रचंड
4. परिवेश	=	वातावरण
5. पूँजीवाद	=	ऐसी आर्थिक व्यवस्था जिसमें निजी उद्योगों को बढ़ावा दिया जाता है
6. प्रतिकूल	=	विपरीत
7. प्रतिमान	=	आदर्श
8. प्रतीक	=	चिह्न
9. प्रागैतिहासिक	=	इतिहास में वर्णित और निश्चित काल से पहले का

10. यथार्थ = उचित, जैसा होना चाहिए ठीक वैसा

11. विचारधारा = सिद्धांत, मत

12. शिल्प = किसी कथाकार द्वारा अपनी रचनाओं में प्रयुक्त किया जाने वाला भाव्यभिव्यक्ति का विशिष्ट ढंग

13. सर्वहारा = समाज का वह वर्ग जो मजदूरी करके जीवन निर्वाह करता है

11.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. निराला के व्यक्तित्व पर प्रकाश डालिए।
2. निराला की रचना यात्रा को स्पष्ट कीजिए।
3. निराला के काव्यागत विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
4. अध्ययन के आधार पर निराला के प्रमुख रचनाओं की विशेषताओं के बारे में बताइए।
5. निराला की युगीन परिवेश पर प्रकाश डालते हुए उनकी रचनाओं की प्रासंगिकता को स्पष्ट कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. सामाजिक रूढ़ियों के संबंध में निराला के विचार स्पष्ट कीजिए।
2. हिंदी साहित्य में निराला का क्या स्थान है?
3. 'तोडती पत्थर' कविता का आशय समझाइए।
4. 'राम की शक्ति पूजा' कविता के माध्यम से कवि क्या समझाने का प्रयास किया है।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. वसंत पंचमी के दिन निराला का जन्मदिन मनाने की परंपरा कब से प्रारंभ हुई? ( )

 (अ) 1896 (आ) 1919 (इ) 1930 (ई) 1943

2. निराला की साहित्यिक यात्रा कब से शुरू हुई? ( )

(अ) 1919 (आ) 1920 (इ) 1923 (ई) 1936

3. निराला की पहली कविता का नाम क्या है? ( )

(अ) अनामिका (आ) जन्मभूमि (इ) बेला (ई) तोड़ती पत्थर

4. इनमें से एक निराला की रचना नहीं है। ( )

(अ) बादल राग (आ) कुकुरमुत्ता (इ) कामायनी (ई) तुलसीदास

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. निराला की रचना यात्रा का स्रोत .... है।
2. निराला का उपनाम .... के ही अनुप्रास पर आया था।
3. निराला ने कविता की मुक्ति को .... का पर्याय माना।
4. पंचवटी प्रसंग .... छंद में में लिखी गई रचना है।

III. सुमेल कीजिए -

1. कुकुरमुत्ता	(अ) शोक गीत
2. निराला	(आ) मुक्त छंद
3. जुही की कली	(इ) जनवादी परिवेश
4. सरोज स्मृति	(ई) युग प्रवर्तक
5. नए पत्ते	(उ) सर्वहारा

11.8 पठनीय पुस्तकें

1. क्रांतिकारी कवि निराला : बच्चन सिंह
2. निराला : रामविलास शर्मा
3. हिंदी साहित्य का इतिहास : रामचंद्र शुक्ल
4. हिंदी साहित्य का इतिहास : सं. नगेंद्र
5. निराला - आत्महंता आस्था : दूधनाथ सिंह
6. निराला की साहित्य साधना : रामविलास शर्मा
7. काव्य का देवता - निराला : विश्वंभर मानव
8. कवि निराला : नंददुलारे वाजपेयी

इकाई 12 : सरोज स्मृति : सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'

रूपरेखा

12.1 प्रस्तावना

12.2 उद्देश्य

12.3 मूल पाठ : सरोज स्मृति : सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'

12.3.1 अध्येय कविता का सामान्य परिचय

12.3.2 अध्येय कविता

12.3.3 विस्तृत व्याख्या

12.3.4 समीक्षात्मक अध्ययन

12.4 पाठ सार

12.5 पाठ की उपलब्धियाँ

12.6 शब्द संपदा

12.7 परीक्षार्थ प्रश्न

12.8 पठनीय पुस्तकें

12.1 प्रस्तावना

छायावादी कवियों में सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' का अपना एक महत्वपूर्ण स्थान है। उन्होंने अनेक गद्य और पद्य रचनाओं के माध्यम से हिंदी साहित्य को समृद्ध किया है। उनकी रचनाओं में उनके जीवन संघर्ष को भलीभाँति देखा जा सकता है। छायावादी कविता की विशेषता है वैयक्तिकता। यह वैयक्तिकता जयशंकर प्रसाद के यहाँ 'जो घनीभूत पीड़ा थी, मस्तक में स्मृति-सी छाई, दुर्दिन में आँसू बनकर, वह आज बरसने आई' के रूप में अभिव्यक्त हुआ तो पंत के यहाँ 'वियोगी होगा पहला कवि, आह से उपजा होगा गान, निकलकर आँखों से चुपचाप, बही होगी कविता अनजान' के रूप में और महादेवी वर्मा के यहाँ 'मैं नीर-भरी दुख की बदली, स्पंदन में चिर निस्पंद बसा' के रूप में अभिव्यक्ति पाई। निराला के यहाँ यही वैयक्तिकता 'दुख ही जीवन की कथा रही, क्या कहूँ आज जो नहीं कही' के रूप में अभिव्यक्त हुआ है। छात्रो! अब तक आप निराला के व्यक्तित्व और कृतित्व से परिचित हो ही चुके हैं। अब आप इस इकाई में निराला द्वारा रचित लंबी कविता 'सरोज स्मृति' का अध्ययन करेंगे।

12.2 उद्देश्य

इस इकाई के अंतर्गत आप सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' की कविता 'सरोज स्मृति' के अंश का अध्ययन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन से आप -

- 'सरोज स्मृति' की सप्रसंग व्याख्या कर सकेंगे।
- 'सरोज स्मृति' की विशेषताओं को समझ सकेंगे।
- पठित कविता के आधार पर निराला के जीवन संघर्ष को समझ सकेंगे।
- 'सरोज स्मृति' में वर्णित निराला के आत्मसंघर्ष को निरूपित कर सकेंगे।

12.3 मूल पाठ : सरोज स्मृति : सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'

12.3.1 अध्येय कविता का सामान्य परिचय

निराला की आत्मकथात्मक कविता है 'सरोज स्मृति'। यह कविता निराला की दिवंगत पुत्री सरोज की स्मृति पर केंद्रित है। यह बेटी के दिवंगत होने पर एक पिता का विलाप है। इस कविता में एक भाग्यविहीन पिता का संघर्ष, समाज से उनके संबंध, पुत्री के प्रति बहुत कुछ न कर पाने का अकर्मण्यता बोध भी प्रकट हुआ है। इस कविता के माध्यम से कवि का जीवन संघर्ष भी प्रकट हुआ है।

निराला का जीवन आर्थिक विषमताओं के कारण अभावपूर्ण रहा। निराला की पत्नी का स्वर्गवास होने के बाद नन्ही सरोज अपने ननिहाल चली जाती है। आर्थिक अभावों के कारण निराला अपनी बेटी से मिलने के लिए भी नहीं जा पाते। वे अपनी असमर्थता को न केवल कोसते हैं बल्कि अपने आज तक के कर्ममय जीवन को भी अभिशाप देते हैं।

कवि निराला आजीवन साहित्य साधना में लगे रहे। लेकिन प्रकाशक और संपादक उनकी रचनाओं को किसी न किसी बहाने लौटा देते थे। हिंदी क्षेत्र के इस व्यवहार से कवि के स्वाभिमान को आहत पहुँचता है। इसके बावजूद वे किसी के सामने झुकते नहीं। धन कमाने की राह वे भी जानते थे लेकिन उस राह पर अत्याचार और भ्रष्टाचार को देखकर विचलित हो जाते थे। अतः वे कहते हैं कि अपने स्वार्थ पूर्ति के संघर्ष में वे हमेशा हारते ही रहे। वे सृजन कार्य को पेट पालने का साधन नहीं बनाना चाहते। यह उनकी विवशता है। अभावों की जिंदगी जीने के बावजूद कवि ने कभी भी किसी गरीब की रोटी नहीं छीनी। वे किसी के आँखों में आँसू नहीं दे सकते थे।

12.3.2 अध्येय कविता : सरोज स्मृति

धन्ये, मैं पिता निरर्थक था,
कुछ भी तेरे हित न कर सका!
जाना तो अर्थागमोपाय,
पर रहा सदा संकुचित-काय
लखकर अनर्थ आर्थिक पथ पर
हारता रहा मैं स्वार्थ-समर।
शुचिते, पहनाकर चीनांशुक
रख सका न तुझे अत: दधिमुख।
क्षीण का न छीना कभी अन्न,
मैं लख न सका वे दृग विपन्न;
अपने आँसुओं अत: बिम्बित
देखे हैं अपने ही मुख-चित। (1)
सोचा है नत हो बार बार --
"यह हिंदी का स्नेहोपहार,
यह नहीं हार मेरी, भास्वर
यह रत्नहार-लोकोत्तर वर!" --
अन्यथा, जहाँ है भाव शुद्ध
साहित्य-कला-कौशल प्रबुद्ध,
हैं दिये हुए मेरे प्रमाण
कुछ वहाँ, प्राप्ति को समाधान (2)

> **निर्देश** : 1. इस कविता का सस्वर वाचन कीजिए।
> 2. इस कविता का मौन वाचन कीजिए।

12.3.3 विस्तृत व्याख्या

[1]

धन्ये, मैं पिता निरर्थक था,
कुछ भी तेरे हित न कर सका!

जाना तो अर्थागमोपाय,
पर रहा सदा संकुचित-काय
लखकर अनर्थ आर्थिक पथ पर
हारता रहा मैं स्वार्थ-समर।
शुचिते, पहनाकर चीनांशुक
रख सका न तुझे अत: दधिमुख।
क्षीण का न छीना कभी अन्न,
मैं लख न सका वे दृग विपन्न;
अपने आँसुओं अत: बिम्बित
देखे हैं अपने ही मुख-चित।

शब्दार्थ : निरर्थक = व्यर्थ, धनहीन। अर्थागमोपाय = घन कमाने का ढंग। संकुचित काय = दुर्बल शरीर, संकोची स्वभाव, असमर्थ। लखकर = देखकर। स्वार्थ-समर = अपने लाभ का युद्ध। शुचिते= पावित्रे। चीनांशुक = चीन के रेशमी कपड़े। दधिमुख = प्रसन्न मुख। क्षीण = कमजोर। विपन्न = दुखी। बिम्बित = जिस पर बिंब पड़ा हो।

संदर्भ : प्रस्तुत काव्यांश सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' कृत 'सरोज स्मृति' से उद्धृत है।

प्रसंग : इस कविता में कवि बड़े ही करुण स्वर में अपनी बेटी सरोज की मृत्यु पर आँसू बहाते हैं और जीवन तथा समाज के कठोर परिस्थितियों पर तीखा प्रहार करते हैं। बेटी सरोज की 19 वर्ष की आयु में मृत्यु की चर्चा करते हुए कहते हैं -

व्याख्या : ओ धन्य भागिनी पुत्री! मैं, तुम्हारा पिता धनहीन होने के कारण असमर्थ और व्यर्थ ही था। आह! तुम्हारे लिए जीवन में कुछ भी नहीं कर सका। मैं पूरी तरह से असमर्थ था। धन कमाने के अनेक उपाय जानते हुए भी मैं उस रास्ते पर चल ही नहीं पाया। उस राह पर चलने के लिए मेरा संकोची स्वभाव हमेशा ही बाधक बना रहा।

धन कमाने की राह पर अनेक प्रकार के अनर्थ अर्थात अन्याय, अत्याचार और भ्रष्टाचार देखकर मैं उस राह पर चल ही नहीं पाया और सदा अपने स्वार्थ पूर्ति के संघर्ष में हारता ही रहा। इसीलिए मैं तुझे न तो रेशमी कपड़े ही पहना सका और न ही तुझे प्रसन्न ही रख सका।

अपने जीवन में मैंने कभी भी किसी गरीब के हाथों से अन्न छीनने की कोशिश नहीं की। किसी भी दुखी व्यक्ति की आँखों में विपन्नता या दुख का भाव देखकर मैं सहन भी नहीं कर

सका। स्वयं के आँसुओं से छाया हुआ इस जीवन-दर्पण में मैं अपने ही मुख और हृदय को बिंबित होता हुआ देख रहा था।

विशेष :

1. स्वयं कवि अभावों की जिंदगी जी रहे थे लेकिन कभी भी किसी दूसरे का हक नहीं छीना। और तो और वह दूसरों के दुखों को सहन नहीं कर सकते थे। यह इन पंक्तियों से द्रष्टव्य है - क्षीण का न छीना कभी अन्न/ मैं लख न सका वे दृग विपन्न
2. कवि के व्यक्तित्व, स्वभाव और दुर्बलताओं का स्पष्ट चित्र।
3. धन्ये, शुचिते जैसे संबोधन शब्दावली का प्रयोग।
4. तत्समनिष्ठ शब्दावली का प्रयोग - अर्थागमोपाय, चीनांशुक, दधिमुख, क्षीण, दृग आदि।
5. स्वार्थ-समर - नूतन शब्द प्रयोग
6. चीनांशुक - चीन से आया हुआ रेशमी कपड़ा जो विशेष अवसरों पर संपन्न लोग पहनते हैं।
7. इस अंश में पितृ धर्म का निर्वाह न करने की व्यथा अंकित है।

बोध प्रश्न

- पठित अंश के आधार पर निराला के स्वभाव पर प्रकाश डालिए।
- इन पंक्तियों में निराला का जीवन संघर्ष कैसे मुखरित हुआ है? स्पष्ट कीजिए।
- 'जाना तो अर्थागमोपाय, / पर रहा सदा संकुचित-काय' - इन पंक्तियों का अर्थ समझाइए।

[2]

सोचा है नत हो बार बार --
"यह हिंदी का स्नेहोपहार,
यह नहीं हार मेरी, भास्वर
यह रत्नहार-लोकोत्तर वर!" --

अन्यथा, जहाँ है भाव शुद्ध
साहित्य-कला-कौशल प्रबुद्ध,
हैं दिये हुए मेरे प्रमाण
कुछ वहाँ, प्राप्ति को समाधान

शब्दार्थ : नत हो = झुककर, नम्रतापूर्वक। स्नेहोपहार = प्रेम भरी भेंट। भास्वर = उज्ज्वल। लोकोत्तर वर = अलौकिक वरदान।

संदर्भ : प्रस्तुत काव्यांश सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' कृत 'सरोज स्मृति' से उद्धृत है।

प्रसंग : कवि हिंदी प्रेमी हैं। हिंदी साहित्य के क्षेत्र में मिलने वाले अनादर का वर्णन करते हुए कवि कह रहे हैं कि -

व्याख्या : मैंने अनेक बार झुककर अर्थात नम्रतापूर्वक सोचने का प्रयत्न किया है कि हिंदी में साहित्य सर्जक बनकर जो उपेक्षा, अपमान, आदि भेंट के रूप में जो गए हैं, वे सब मेरे हार के परिचायक नहीं हैं, बल्कि एक उज्ज्वल अलौकिक रत्न-हार के समान हैं। इन्हें पाकर मैं इस विषमता में भी प्रसन्ना का अनुभव कर रहा हूँ।

जहाँ साहित्य और कला के शुद्ध भाव विद्यमान है, वहाँ मेरा भी कुछ देन है - योगदान है। गद्य और पद्य दोनों क्षेत्रों में अभ्यस्त कवि की लेखनी की कुशल कला जीवन में धन प्राप्ति का मध्यम बन सकती है। ऐसा करके कवि अपनी दीनता का समाधान भी कर सकता है, पर उन्होंने सृजन कार्य को पेट पालने का साधन नहीं बनाना चाहा। इसे कवि अपनी विवशता मानते हैं, कुछ और नहीं।

विशेष :

1. इन पंक्तियों में आत्मविश्लेषण का भाव झलकता है। निराला आजीवन साहित्य की सेवा में लीन रहे। लेकिन कुछ तथाकथित प्रकाशक और संपादक उनकी रचनाओं को जटिल, क्लिष्ट, निरर्थक आदि कहकर अस्वीकार कर देते थे। हिंदी क्षेत्र का यह व्यवहार कवि के स्वाभिमान को आहत करने वाला था। इसके बावजूद कवि का स्वाभिमानी व्यक्तित्व किसी के समक्ष नहीं झुका। उसने इसे व्यवहार को भी सकारात्मक रूप से अपनाया और एक उज्ज्वल अलौकिक रत्न-हार के समान स्वीकार किया।
2. अपनी असमर्थता की अभिव्यक्ति।
3. तत्समनिष्ठ शब्दावली का प्रयोग।

बोध प्रश्न

- अपने शब्दों में कवि की असमर्थता का चित्रण कीजिए।
- 'साहित्य-कला-कौशल प्रबुद्ध/ हैं दिये हुए मेरे प्रमाण' इन पंक्तियों का आशय स्पष्ट कीजिए।
- साहित्य के क्षेत्र में जो उपेक्षा और अपमान कवि को सहना पड़ा उसे कवि ने किस रूप में स्वीकार किया?

12.3.4 समीक्षात्मक अध्ययन

'सरोज स्मृति' को हिंदी में 'एलेजी' कहा जाता है। एलेजी वस्तुतः एक यूरोपीय काव्य-विधा है। यूनानी भाषा में आरंभिक काल में एलेजी का विषय मृत्यु नहीं बल्कि युद्ध और प्रेम होता था। सोलहवीं शताब्दी में अंग्रेजी में आकार 'एलेजी' शोक गीत बन गई। अर्थात उसका विषय हुआ किसी व्यक्ति विशेष की मृत्यु पर किया जानेवाला आलाप। कहा जाता है कि 16 वीं सदी से शोक गीत के लिए 'एलेजी' का प्रयोग रूढ़ हो गया। ग्रे की प्रसिद्ध कविता 'रिटन इन ए कंट्री चर्चयार्ड' को कुछ विद्वानों ने एलेजी माना पर यह कविता किसी व्यक्ति की मृत्यु पर केंद्रित नहीं है बल्कि यह संपूर्ण जीवन पद्धति पर लिखा गया एक शोक गीत है। एलेजी में कथातत्व के साथ-साथ स्मृतियाँ और संस्मरण भी होते हैं।

'सरोज स्मृति' को हिंदी में शोक गीता की संज्ञा से अभिहित किया गया है क्योंकि कवि ने यह कविता अपनी पुत्री सरोज की मृत्यु पर लिखी थी। इस कविता का आधार स्मृति है। अंग्रेजी के प्रसिद्ध कवि विलियम वड्र्सवर्थ की कविता 'सर्पराइसड़ बाइ जाय' का याद आना स्वाभाविक है क्योंकि यह कविता उन्होंने अपनी पुत्री कैतरीन की मृत्यु पर लिखी थी। उनकी पुत्री का निधन 1812 में तीन वर्ष की आयु में हुआ था।

'सरोज स्मृति' आत्मकथात्मक कविता है। भले ही अंतर्वस्तु के धरातल पर इसे एलेजी/ शोक गीत कहा जा सकता है लेकिन संपूर्ण कविता मूलतः स्मृति है। कविता बार-बार कवि की आर्थिक विपन्नता से उत्पन्न विवशता की ओर संकेत करती है। 'स्मृति' इस कविता की रचना का केंद्रबिंदु है। यह स्मृति कवि के अतीत से वर्तमान की ओर यात्रा करती है। इस कविता में निराला का जीवन संघर्ष अलग रूप में अभिव्यक्त हुआ है। निराला ने कविता के लिए अपनी निजी काव्यात्मक शैली प्रस्तुत की है। इस कविता का एक सामाजिक पक्ष भी है जो वर्ण व्यवस्था और दहेज से जुड़ा हुआ है।

बोध प्रश्न

- 'सरोज स्मृति' किस प्रकार की रचना है?
- 'एलेजी' किसे कहते हैं?
- 'सरोज स्मृति' में निहित सामाजिक पक्ष क्या है?
- इस कविता का केंद्रबिंदु क्या है?

'सरोज' स्मृति' शीर्षक कविता की कलात्मक सौंदर्य को समझने के लिए कविता की

संरचना पर दृष्टि केंद्रित करना आवश्यक है। शीर्षक में जो 'स्मृति' शब्द है यह केवल एक काव्य विधा की सूचक नहीं है बल्कि उसमें कविता की संरचना से संबंधित तथ्य निहित है। संपूर्ण कविता एक स्मृति है। इसमें क्रमबद्ध रूप से मृत व्यक्ति सरोज की कथा कही गई है। रामविलास शर्मा 'निराला की साहित्य साधना' में कहते हैं कि 'सरोज स्मृति' में सपनों का बिखराव अपेक्षाकृत ज्यादा है। एक सपना साहित्य संग्राम का है, दूसरा सपना सरोज के शैशवकाल का, तीसरा सपना वापस आई रचनाओं को लेकर घास नोचने का, चौथा सपना सरोज द्वारा कुंडली को फाड़ देने का, पाँचवा सपना कान्यकुब्ज कुलाँगों का, छठा सपना सरोज के विवाह का, सातवाँ सपना पुत्री के तर्पण का। (कविता : पहचान का संकट, नंदकिशोर नवल पृ. 132-133)।

बोध प्रश्न

- 'सरोज स्मृति' शीर्षक में प्रयुक्त 'स्मृति' शब्द किसका सूचक है?
- 'सरोज स्मृति' में किन सपनों का बिखराव है?

निराला के जीवन की सबसे त्रासद घटना अर्थात बेटी की मृत्यु इस कविता का मुख्य आधार है। रामविलास शर्मा ने लिखा है कि उस समय निराला लखनऊ में थे और विकट आर्थिक संघर्ष में पड़े थे। 'निराला की साहित्यिक साधना' के तृतीय भाग में रामविलास शर्मा ने निराला के पत्र संकलित किए हैं। उन्हीं के आधार पर निराला की पुत्री सरोज की बीमारी और मृत्यु संबंधी तथ्य उपलब्ध होते हैं।

'सरोज स्मृति' के प्रतिपाद्य को समझने के लिए निराला की मनःस्थिति और तत्कालीन परिस्थितियों को जानना आवश्यक है। इस कविता का आरंभ सरोज की मृत्यु पर कवि की स्मृति से होता है। कहा जा सकता है कि इन पंक्तियों में कवि ने सार रूप में सारा दुखद प्रसंग प्रस्तुत कर दिया है -

ऊनविंश पर जो प्रथम चरण
तेरा वह जीवन-सिन्धु-तरण;
तनये, ली कर दृक्पात तरुण
जनक से जन्म की विदा अरुण!
गीते मेरी, तज रूप-नाम
वर लिया अमर शाश्वत विराम

सरोज की मृत्यु की घटना को निराला अलौकिक रूप प्रदान करते हैं। कहते हैं कि सरोज

मरी नहीं है, उसने तो पूर्ण आलोक का वर्ण किया है। वे आगे कहते हैं कि अट्ठारह अध्यायों वाली जीवन-गीत पूरा होने क बाद सरोज ने नाम रूप को त्याग कर अमर शाश्वत विराम प्राप्त किया है। अतः इसे मरण नहीं कहा जाता। कवि कहते हैं कि ज्योति से खिलनेवाले सरोज ज्योति में ही लीन हो गई। वे यह भी कहते हैं कि वृद्धावस्था में जब कवि अशक्त हो जाएँगे तब सरोज उन्हें सहारा प्रदान करके अँधेरे से भरा हुआ इस भवसागर को पार करा सकेगी -

पूरे कर शुचितर सपर्याय
जीवन के अष्टादशाध्याय,
चढ़ मृत्यु-तरणि पर तूर्ण-चरण
कह - "पित:, पूर्ण आलोक-वरण
करती हूँ मैं, यह नहीं मरण,
'सरोज' का ज्योति: शरण - तरण!"

सरोज की मृत्यु के समय कवि की आर्थिक परिस्थिति निराशाजनक थी। अतः सरोज की देख-रेख न कर पाने की वेदना कवि को कचोटती रही -

धन्ये, मैं पिता निरर्थक था,
कुछ भी तेरे हित न कर सका!
जाना तो अर्थागमोपाय,
पर रहा सदा संकुचित-काय
लखकर अनर्थ आर्थिक पथ पर
हारता रहा मैं स्वार्थ-समर।

सरोज जब सवा साल की थी तब उनकी माँ की मृत्यु हुई और नन्ही सरोज नानी की गोद में पलने लगी -

तू सवा साल की जब कोमल
पहचान रही ज्ञान में चपल
माँ का मुख, हो चुम्बित क्षण-क्षण
भरती जीवन में नव जीवन,
वह चरित पूर्ण कर गई चली
तू नानी की गोद जा पली।

कवि का जीवन आर्थिक विषमताओं के कारण अभावपूर्ण रहा। इसी करण वह अपनी पुत्री का भार भी वहन नहीं कर सका। कवि पर दूसरा विवाह कर लेने का दबाव था लेकिन किसी भी रूप में वह तैयार नहीं था -

इससे पहिले आत्मीय स्वजन
सस्नेह कह चुके थे जीवन
सुखमय होगा, विवाह कर लो

सरोज बड़ी होती गई -

धीरे-धीरे फिर बढ़ा चरण,
बाल्य की केलियों का प्रांगण
कर पार, कुंज-तारुण्य सुघर
आई, लावण्य-भार थर-थर

तो सरोज की नानी उसके किशोरवय को भाँपकर कवि को सलाह देती हैं कि सुयोग्य वर ढूँढ़कर उसका कन्यादान करें। विवाह की स्वाभाविक चिंता और आर्थिक विपन्नता ने कवि के माथे की लकीरों को और भी गहरी कर दीं। कवि को परंपरागत रूढ़ियों के प्रति कोई आस्था न थी। लेकिन कवि का यह सपना अवश्य था कि अपनी पुत्री के लिए सुयोग्य वर ढूँढ़ सके। वे दहेज के विरोधी थे। इतना ही नहीं उन्होंने सभी प्रकार की परंपराओं को तोड़कर सरोज का विवाह कर दिया -

तुम करो ब्याह, तोड़ता नियम
मैं सामाजिक योग के प्रथम,
लग्न के; पढूंगा स्वयं मंत्र
यदि पंडितजी होंगे स्वतन्त्र।
जो कुछ मेरे, वह कन्या का,
निश्चय समझो, कुल धन्या का

अपने ससुराल में कुछ दिन रहकर सरोज नानी के घर वापस आ जाती है। वहीं बीमार पड़ती है और अस्वस्थता के कारण उसका निधन हो जाता है। आर्थिक अभाव के कारण पुत्री का ठीक इलाज न करा सकने की असमर्थता ने कवि को तोड़कर रखा दिया था। यह दुख कवि के अंतःकरण को सालता रहा।

सरोज का विवाह बारह-तेरह वर्ष की आयु में 1929 की जुलाई में हुआ। शिवपूजन सहाय को अप्रैल 1932 में लिखे गए निराला के दो पत्रों से यह पता चलता है कि सरोज विवाह के दो वर्ष बाद बीमार पड़ी। ये दोनों पत्र निराला ने अपने गाँव गढ़कोला से लिखा था। पहले पत्र में उन्होंने लिखा था - "मेरी लड़की सख्त बीमार है। 4 महीने से रायबरेली अस्पताल में पड़ी है। बड़ी संकटमय अवस्था है।" (निराला और मुक्तिबोध : चार लंबी कविताएँ, पृ.10 से उद्धृत)। दूसरे पत्र में उन्होंने इस तरह लिखा है - "मैं इस समय विषादग्रस्त रहता हूँ। मेरी लड़की तीन महीने से रायबरेली-अस्पताल-दाखिल है। बहुत बड़ा operation हुआ था। जीने की आशा नहीं थी, हुई, अब फिर जा रही है। बाएँ स्तन की बगल से अस्त्रक्रिया हुई है। घाव अच्छा नहीं हो रहा है। दो रोज हुए खून परीक्षा के लिए लखनऊ भेजा गया।" (वही)। बचपन से नानी की गोद में पली सरोज उन्हीं की गोद में अपनी अंतिम साँस ली -

वह लता वहीं की, जहाँ कली
तू खिली, स्नेह से हिली, पली,
अंत भी उसी गोद में शरण
ली, मूंदे दृग वर महामरण!

बेटी की आवश्यक सेवा-सुश्रुषा न कर पाने की एक पिता कि चिंता 'सरोज स्मृति' में ढली। इस कविता की केंद्रीय पंक्तियाँ हैं -

दुख ही जीवन की कथा रही
क्या कहूँ, आज जो नहीं कही

ये पंक्तियाँ कवि की पीड़ा और जीवन संघर्ष को व्यंजित करती हैं।

बोध प्रश्न

- निराला के जीवन की सबसे त्रासद घटना क्या है?
- "पित:, पूर्ण आलोक-वरण/ करती हूँ मैं, यह नहीं मरण,/ 'सरोज' का ज्योति: शरण - तरण!" इन पंक्तियों का अर्थ स्पष्ट कीजिए।
- 'सरोज स्मृति' की केंद्रीय पंक्तियाँ क्या हैं?
- अपने शब्दों में कवि के जीवन संघर्ष को व्यक्त कीजिए।

'सरोज स्मृति' में सरोज के बाल्यकाल, विवाह और मृत्यु का चित्रण तो है ही साथ ही निराला का जीवन संघर्ष भी अंकित है। अपनी असमर्थता को कवि कोसते हैं -

हो इसी कर्म पर वज्रपात
यदि धर्म, रहे नत सदा माथ
इस पथ पर, मेरे कार्य सकल
हो भ्रष्ट शीत के-से शतदल!
कन्ये, गत कर्मों का अर्पण
कर, करता मैं तेरा तर्पण

'सरोज स्मृति' में अंधकार है, युद्ध है। और कवि का यह युद्ध संपादकों, आलोचकों, प्रकाशकों और कान्यकुब्ज कुलकुलंगारों से है। तथाकथित संपादक और प्रकाशक उनकी रचनाओं को वापस लौटा देते थे। इससे वे अत्यंत विचलित हो जाते हैं। 12.8.37 को आचार्य जानकीवल्लभ शास्त्री को लिखे हुए पत्र में सूचित किया है कि "मैं जो कुछ लिखता हूँ साहित्य समझ कर। नहीं बन पड़ता, मेरे कमजोरी है। लोग क्या चाहते हैं लोग जाने। में क्या देता हूँ मैं समझता हूँ।" (जानकीवल्लभ शास्त्री, निराला के पत्र, पृ.120)।

'सरोज स्मृति' में कवि पूर्वदीप्ति शैली को अपनाया है। एक स्मरण चित्र के भीतर अनेक स्मरण चित्रों को नाटकीय ढंग से प्रस्तुत किया गया है। डॉ बच्चन सिंह का कथन है कि "सरोज एवं शकुंतला की विदाई की तुलना करके कवि ने सामाजिक अव्यवस्था का चित्रण किया है। शकुंतला की विदाई के समय कण्व ऋषि भी अकेले थे और सरोज की विदाई के समय निराला भी। कवि दहेज जैसी सामाजिक विभीषिका का विरोध करते हैं -

जो कुछ है मेरा अपना धन
पूर्वज से मिला, करूँ अर्पण
यदि महाजनों को तो विवाह
कर सकता हूँ, पर नहीं चाह
मेरी ऐसी, दहेज देकर
मैं मूर्ख बनूं यह नहीं सुघर,
बारात बुला कर मिथ्या व्यय
मैं करूँ नहीं ऐसा सुसमय।

निराला ने धर्म की पाखंडी प्रवृत्तियों का भी खुलकर विरोध किया है -

ये कान्यकुब्ज-कुल कुलांगार,

खाकर पत्तल में करें छेद,
इनके कर कन्या, अर्थ खेद,
इस विषय-बेलि में विष ही फल,
यह दग्ध मरुस्थल - नहीं सुजल।

सूर्यप्रसाद दीक्षित लिखते हैं कि 'सरोज स्मृति' इस बात का भी प्रमाण है कि व्यक्ति की पीड़ा सामाजिकता का स्पर्श करते हुए युग की पीड़ा बन जाती है। "सरोज स्मृति केवल आत्मकथा नहीं है, लेकिन अपनी कहानी के माध्यम से एक-एक कर सामाजिक रूढ़ियों के पोषकों और अर्थ पिशाचों पर किए गए प्रहार का घोषणा पत्र है।' (निराला समग्र, पृ. 54)

बोध प्रश्न

- 'सरोज स्मृति' में कवि ने किन रूढ़ियों पर प्रहार किया?

12.4 पाठ सार

छात्रो! इस इकाई के अध्ययन से आपको यह स्पष्ट हो ही चुका है कि 'सरोज स्मृति' निराला ने अपनी दिवंगत पुत्री सरोज की स्मृति में लिखी थी। यह आत्मकथात्मक शैली में लिखा गया शोक गीत है। इस कविता के आरंभ में ही कवि ने सार रूप में सारा दुखद प्रस्तुत कर दिया है। 19 वें वर्ष में प्रवेश करते ही अस्वस्थता के कारण सरोज का निधन हो गया। कवि इसे मृत्यु नहीं मानते बल्कि वे कहते हैं कि बुढ़ापे में अशक्त पिता को इस भवसागर से पार कराने के लिए उनकी बेटी आलोक को वरण किया है। उनकी आर्थिक परिस्थिति निराशाजनक थी। अतः अपनी बेटी की देख-रेख न कर पाने की वेदना उन्हें जीवन भर कचोटती रही।

निराला अपनी आर्थिक विषमता को कोसते रहे। वे धन कमाने के उपाय जानते थे लेकिन उनका स्वाभिमानी मन उस राह पर चलने के लिए तैयार नहीं था। क्योंकि उस राह पर भ्रष्टाचार और अन्याय का साम्राज्य था। वे विषम परिस्थितियों में भी घुटने नहीं ठेके।

निराला आजीवन साहित्य सृजन में ही लीन रहे। लेकिन साहित्य सृजन को उन्होंने कभी भी पेट पालने का साधन नहीं बनाया। हिंदी साहित्यिक क्षेत्र के संपादक और प्रकाशक उनकी रचनाओं को लौटा देते हैं। उन्हें अपमान और तिरस्कार झेलना पड़ा था। लेकिन निराला इसे अपने योगदान के लिए उपहार माना था। इससे उनकी सकारात्मक दृष्टि का परिचय मिलता है। इस कविता में एक ओर कवि की बेटी की स्मृतियाँ अंकित है तो दूसरी ओर कवि की विवशता।

12.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. 'सरोज स्मृति' आत्मकथात्मक शैली में लिखी गई एक लंबी कविता है जो मूलतः एक 'शोक गीत' है।
2. 'शोक गीत' या 'एलेजी' एक यूरोपीय काव्य विधा है। इसमें किसी व्यक्ति विशेष की मृत्यु पर किया जाने वाला विलाप शामिल होता है।
3. 'सरोज स्मृति' का आधार कवि की दिवंगत पुत्री की 'स्मृति' है। यह स्मृति कवि के अतीत से लेकर वर्तमान की ओर यात्रा करती है।
4. निराला का जीवन संघर्ष भी इस कविता में व्यक्त हुआ है।
5. इस कविता से यह भी पता चलता है कि आर्थिक परिस्थिति निराशाजनक होने पर भी निराला ने कभी हार नहीं मानी।
6. आर्थिक अभावों के बावजूद निराला का स्वाभिमानी मन कभी भी भ्रष्ट पथ पर जाने के लिए तैयार नहीं हुआ।
7. निराला जड़ रूढ़ियों के घोर विरोधी थे।

12.6 शब्द संपदा

1. अंतर्वस्तु	=	अंतः सार, किसी कृति का कथ्य या विषय वस्तु
2. अकर्मण्यता	=	आलस, निरुत्साह, निक्म्मापन
3. अभिशाप	=	शाप, दोषारोपण
4. अलौकिक	=	जो इस लोक का न हो, दिव्य
5. अव्यवस्था	=	व्यवस्था का अभाव, अनुशासनहीनता
6. अशक्त	=	कमजोर, शक्तिविहीन
7. आहत	=	चोट खाया हुआ, घायल
8. कान्यकुब्ज	=	कान्यकुब्ज क्षेत्र का निवासी, उक्त क्षेत्र में रहने वाले ब्राह्मणों का एक वर्ग
9. कुंडली	=	जन्मपत्री
10. तर्पण	=	तृप्त करने की क्रिया, देवताओं और पितरों को तिल या चावल

मिला हुआ जल देने की क्रिया

11. दिवंगत	=	मृत, स्वर्गवासी
12. विभीषिका	=	त्रास, भय, डर दिखाना
13. विलाप	=	रोना
14. विषमता	=	कठिनाई
15. वृद्धावस्था	=	बुढ़ापा
16. संघर्ष	=	प्रतियोगिता, स्पर्धा
17. स्मृति	=	अतीत की घटनाओं को याद करना
18. स्वाभिमान	=	आत्मगौरव, आत्मसम्मान

12.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. 'सरोज समृति' कविता का सारांश अपने शब्दों में लिखिए।
2. पठित अंशों के आधार पर 'सरोज स्मृति' में वर्णित निराला के आत्मसंघर्ष को निरूपित कीजिए।
3. 'सरोज समृति' निराला के जीवन की त्रासदी की कथा कहती है। इस उक्ति को पठित कविता के आधार पर समझाइए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. कवि निराला के जीवन संघर्ष पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
2. धन्ये, मैं पिता निरर्थक था,
   कुछ भी तेरे हित न कर सका!
   जाना तो अर्थागमोपाय,
   पर रहा सदा संकुचित-काय

इस अंश की सप्रसंग व्याख्या कीजिए।

3. सोचा है नत हो बार बार --

"यह हिंदी का स्नेहोपहार,

यह नहीं हार मेरी, भास्वर

यह रत्नहार-लोकोत्तर वर!" - इस अंश की सप्रसंग व्याख्या कीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. 'सरोज स्मृति' में कवि ने किस शैली को अपनाया है? ( )

(अ) विवरण (आ) संवाद (इ) पूर्वदीप्ति (ई) पत्रात्मक

2. धन्ये, मैं पिता .... था ( )

(अ) आर्थिक (आ) सार्थक (इ) निरर्थक (ई) व्यर्थ

3. निराला किस सामाजिक विभीषिका का अविरोध करते हैं? ( )

(अ) घूसखोरी (आ) दहेज़ (इ) भ्रूणहत्या (ई) बाल विवाह

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. निराला .... को पेट पालने का साधन नहीं बनाना चाहते।

2. सरोज स्मृति' की केंद्रिबिंदु .... है।

3. निराला का .... स्वभाव हमेशा ही बाधक रहा।

4. निराला के जीवन की सबसे त्रासद घटना .... है।

5. निराला को .... के प्रति कोइ आस्था न थी।

III. सुमेल कीजिए -

1. अर्थागमोपाय (अ) अलौकिक

2. चीनांशुक (आ) दुखी

3. विपन्न (इ) कमजोर

4. क्षीण (ई) हीन के रेशमी कपडे

5. लोकोत्तर (उ) **धन** कमाने का ढंग

12.8 पठनीय पुस्तकें

1. निराला की साहित्य साधना : रामविलास शर्मा
2. निराला और मुक्तिबोध - चार लंबी कविताएँ : नंदकिशोर नवल
3. निराला : रामविलास शर्मा
4. राग-विराग : निराला
5. निराला - कृति से साक्षातकार : नंदकिशोर नवल
6. कविता - पहचान का संकट : नंदकिशोर नवल
7. जानकीवल्लभ शास्त्री : निराला के पत्र
8. निराला समग्र : सूर्यप्रसाद दीक्षित

इकाई 13 : सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

रूपरेखा

13.1 प्रस्तावना

13.2 उद्देश्य

13.3 मूल पाठ : सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

13.3.1 जन्म एवं शिक्षा

13.3.2 अज्ञेय की साहित्यिक यात्रा

13.3.3 अज्ञेय का व्यक्तित्व एवं जीवन दर्शन

13.3.4 अज्ञेय का समकालीन परिवेश और उसका अज्ञेय पर प्रभाव

13.3.5 अज्ञेय का कृतित्व

13.4 पाठ सार

13.5 पाठ की उपलब्धियाँ

13.6 शब्द संपदा

13.7 परीक्षार्थ प्रश्न

13.8 पठनीय पुस्तकें

13.1 प्रस्तावना

सन् 1943 में अज्ञेय के नेतृत्व में हिंदी कविता में एक नए आंदोलन का जन्म हुआ। जिसे प्रयोगवाद के नाम से जाना जाता है। प्रयोगवाद के जन्मदाता अज्ञेय ने 'प्रतीक' प्रत्रिका के माध्यम से इस काव्य आंदोलन का प्रचार-प्रसार किया। इस काव्य आंदोलन पर फ्रायड, युंग, एडलर आदि मनोवैज्ञानिकों के प्रभाव को स्पष्ट रूप में देखा जा सकता है। साहित्य और जीवन दोनों में परिवर्तन की आकांक्षा लेकर ही अज्ञेय आगे बढ़े और दोनों जगह उन्होंने पुराने साँचों को तोड़ा। अज्ञेय साहित्य और जीवन दोनों ही क्षेत्रों में व्यक्ति को स्वतंत्र देखना चाहते थे। परतंत्रता चाहे धार्मिक, सामाजिक रूढ़ियों का हो या फिर सरकारी नियमों का, किसी भी प्रकार की परतंत्रता व्यक्ति के व्यक्तित्व के विकास के लिए बाधक ही बनेगी और अज्ञेय इस परंतत्रता रूपी बाधक का विरोध लगातार करते रहे।

13.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई के माध्यम से आप-

- प्रयोगवाद और नई कविता के प्रवर्तक अज्ञेय के संपूर्ण जीवन को जान सकेंगे।
- अज्ञेय के व्यक्तित्व को समझ सकेंगे।
- अज्ञेय की रचनाओं की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- अज्ञेय की रचनाओं की विशेषताओं से परिचित हो सकेंगे।

13.3 मूल पाठ : सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

13.3.1 जन्म एवं शिक्षा

जन्म एवं शिक्षा आधुनिक हिंदी कविता के नए पथ के खोजकर्ता, प्रयोगवाद के जन्मदाता सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' का जन्म सन् 1911 को उत्तर प्रदेश में गोरखपुर के पास देवरिया जिले के कसिया नामक गाँव में हुआ था। उनके पिता का नाम हीरानंद वात्स्यायन था। माता का नाम व्यन्ती देवी था। पिता पुरातत्ववेत्ता थे जिस कारण से अज्ञेय को संपूर्ण भारत को घूमने का अवसर प्राप्त हुआ। श्रीनगर, नालंदा, पटना, लखनऊ, बड़ौदा, मद्रास आदि स्थानों में आरंभिक जीवनकाल को व्यतीत किया। उनकी शिक्षा का आरंभ घर पर ही संस्कृत, फारसी और अंग्रेजी के अध्ययन से हुआ। उन्होंने लाहौर से बी.एस.सी. की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। इसके पश्चात् अंग्रेजी में एम.ए. की उपाधि को भी प्राप्त किया। सन् 1929 में वे हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन पार्टी के सदस्य बने। स्वतंत्रता सेनानी के रूप में उन्होंने चार वर्ष कारावास भोगा और दो वर्ष घर में नजरबंद रहे। अज्ञेय की मृत्यु सन् 1987 में हुई।

बोध प्रश्न

- अज्ञेय किस वाद के जन्मदाता थे?
- अज्ञेय के पिता क्या काम करते थे?
- अज्ञेय के पिता का नाम क्या था?
- सन् 1929 में अज्ञेय किस पार्टी के सदस्य बने?

13.3.2 अज्ञेय की साहित्यिक यात्रा

अज्ञेय ने विविध क्षेत्रों में रहकर जीवन का बहुविध अनुभव प्राप्त किया। अज्ञेय प्रयोगवादी कविता के जन्मदाता माने जाते हैं। संवेदनशीलता के साथ चिंतनप्रधान

विचारात्मकता को केवल इनकी कविताओं में ही नहीं इनके उपन्यासों, कहानियों में भी देखा जा सकता है। उनका साहित्य अहं से लेकर समाज तक, प्रेम से लेकर दर्शन तक, यंत्र सभ्यता से लेकर लोक-परिवेश तक तथा प्रकृति सौंदर्य से लेकर मानव सौंदर्य तक फैला हुआ था। उनकी रचनाओं में प्रतीक विधान, बिम्ब विधान, भाषागत प्रयोगशीलता तथा बौद्धिकता को देखा जा सकता है।

अज्ञेय की रचनाओं में बोलचाल की भाषा से लेकर अंग्रेजी के शब्दों तक को देखा जा सकता है। उनकी प्रमुख रचनाएँ- भग्नदूत, चिंता, इत्यल्म, आँगन के पार द्वार, **शेखर : एक जीवन** (दो भाग), अपने-अपने अजनबी, एक बूँद सहसा उछली, रूपांबरा, तार सप्तक (तीन भाग), उत्तर प्रियदर्शी आदि। अज्ञेय साहित्यकार होने के साथ-साथ संपादक भी रहे। संपादन के क्षेत्र में सैनिक, विशाल भारत, प्रतीक, दिनमान आदि पत्र-पत्रिकाओं के संपादन में उनका महत्वपूर्ण योगदान रहा।

13.3.3 अज्ञेय का व्यक्तित्व एवं जीवन दर्शन

हिंदी साहित्य के किसी भी पाठक के लिए अज्ञेय का नाम नया नहीं है। अज्ञेय का संपूर्ण साहित्य और जीवन स्वतंत्रता की ही खोज है। इसके दो प्रमख कारण हैं। पहला यह कि उनका जन्म पराधीन भारत में हुआ था। उन्होंने पराधीन देश की विकृति और दयनीयता को महसूस किया और केवल महसूस ही नहीं किया था, देश को स्वाधीन बनाने का प्रयास करने के लिए वे चंद्रशेखर और भगतसिंह के दल में शामिल भी हो गए। अज्ञेय क्रांतिकारी होकर न केवल ब्रिटिश साम्राज्य का विरोध करते रहे बल्कि भारतीय समाज में फैली विभिन्न प्रकार की रूढ़ियों का भी वे विरोध करते रहे क्योंकि उनका मानना यह भी था कि भारत का शत्रु केवल अंग्रेज नहीं है भारतीय समाज में फैली रूढ़ियाँ भारत का असली शत्रु है। अज्ञेय जैसे-जैसे जीवन में आगे बढ़ते रहे पुरानी रूढ़ियों को भी पूर्ण आत्मविश्वास के साथ तोड़ते रहे।

अज्ञेय स्वतंत्रता की खोज इसलिए भी करते रहे क्योंकि इनका परिवार बहुत सारी मान्यताओं को लेकर पुरातनपंथी था। अज्ञेय का बालमन चीज़ों को ठीक उसी रूप में कभी स्वीकार नहीं कर पाता था जिस रूप में वह पहले से होती थीं। उनकी यह मनोवैज्ञानिकता उन्हें बचपन से ही परिवार से भी अलग-थलग कर देता है। बालक अज्ञेय अपने परिवार से विद्रोह करके स्वाधीन होने की तलाश में घर से भाग जाते हैं। यह विद्रोह आगे चलकर उन्हें क्रांतिकारी बना देता है। यही पर आकर उनकी स्वाधीनता बोध की कहानी समाप्त नहीं हुई है। उनकी यह

स्वाधीनता बोध आगे चलकर उन्हें कवि, उपन्यासकार, कहानीकार, पत्रकार के रूप में स्थापित की है। अज्ञेय के संपूर्ण साहित्य में क्षण को जीने की महत्वपूर्ण अवधारणा दिखाई देती है।

बोध प्रश्न

- अज्ञेय ने स्वतंत्रता की खोज इतनी गहराई में जाकर क्यों की?
- अज्ञेय का परिवार किस प्रकार की मान्यताओं को लेकर चलता था?
- बालक अज्ञेय के मनोविज्ञान पर प्रकाश डालिए।
- अज्ञेय की स्वाधीनता बोध ने उन्हें क्या बनाया?

13.3.4 अज्ञेय का समकालीन परिवेश और उसका अज्ञेय पर प्रभाव

अज्ञेय हिंदी साहित्य के एक ऐसे साहित्यकार हैं जिन्होंने साहित्य और पत्रकारिता दोनों ही क्षेत्रों में लगातार प्रयोग करते हुए इन दोनों क्षेत्रों को उस शिखर तक पहुँचाया जहाँ तक पहुँचना अज्ञेय के बिना इन दोनों के लिए संभव नहीं था। अज्ञेय मानते रहे: प्रयोग का कोई वाद नहीं है। तथापि वे प्रयोगवाद के जन्मदाता रहे हैं। हिंदी साहित्य का पूरा छायावादोत्तर दौर उनकी प्रयोगधर्मी अवधारणाओं से बहुत दूर तक प्रभावित रहा है।

वत्सल निधि के अध्यक्ष, कर्ण सिंह का कहना है, 'तारसप्तक' की भूमिका हिंदी-साहित्य में नवीन अवधारणाओं का घोषणा-पत्र कही जा सकती है जिसने परंपरा, आधुनिकता, प्रयोग-प्रगति, काव्य-सत्य, कवि का सामाजिक दायित्व, काव्य-शिल्प, काव्य-भाषा, छंद आदि तमाम बहसों को पहली बार उठाकर साहित्यालोचन को मौलिक स्वरूप दिया। पहले 'प्रतीक' फिर 'नया प्रतीक' तथा 'वाक्' संपादन करते हुए उन्होंने अनेक नई, प्रतिभाओं को आगे आने का अवसर दिया। अपने परवर्ती अनेक रचनाकारों पर उनका अमिट प्रभाव देखा जा सकता है। अज्ञेय के साहित्य-चिंतन की सार्थकता इस विचार में है कि वह समकालीन चिंताओं, प्रश्नकुलताओं और चुनौतियों को ही नहीं, नई सर्जनात्मक संभावनाओं की ओर हमें उन्मुख करता है। भारत और पश्चिम के साहित्य-चिंतन की परंपराओं पर गहन चिंतन करनेवाले अज्ञेय में एक उजली आधुनिक भारतीयता का निवास है- एक ऐसी भारतीयता जो मानव को स्वाधीन-चिंतन और मानव-मुक्ति का संदेश देती है।

अज्ञेय साहित्य, साहित्यकार और समाज के पारस्परिक संबंध को लेकर हमेशा विचारशील रहे। अज्ञेय इस बात को मानते थे कि, "साहित्य और साहित्यकार का संबंध उन परिस्थितियों में निर्मित होता है जो उन्हें चाहे-अनचाहे मिली होती है।" साहित्यकार तो चाहेगा

कि उसके साहित्य को सहज स्वीकृति प्राप्त हो लेकिन यह इतना आसान नहीं होता। समाज अपनी मान्यताओं, विचारों को किसी हालत में बदलते हुए नहीं देखना चाहता ऐसे में लेखक की रचना-प्रतिभा को संघर्ष का सामना तो करना ही पड़ता है। साहित्य किसके लिए? अज्ञेय में स्वयं ही इस प्रश्न को उठाया था। भारत की स्वतंत्रता के बाद जिस प्रकार का बदलाव भारत में आ रहा था, उन बदलावों को देखते हुए अज्ञेय जैसे साहित्यकार के मन में यह प्रश्न आना तो स्वाभाविक ही था। उन्होंने विश्लेषण करके पहले तो यह पाया कि साहित्य रचना के कार्य को हमेशा ही साहित्यकार के लिए एक दायित्व के रूप में देखा गया। लेकिन जैसे-जैसे समय बदलता गया लेखक भी नई सोच को लेकर लिखने को प्रेरित होता रहा ऐसा होना आवश्यक भी रहा परंतु इस आवश्यकता को पूर्ण करते हुए साहित्यकार को तीव्र विरोध भी सहना पड़ा। ऐसा विरोध अज्ञेय को भी सहना पड़ा।

अज्ञेय ने विश्लेषण करके दूसरा विचार यह प्रस्तुत किया कि साहित्य साहित्यकार के लिए जहाँ आत्माभिव्यक्ति होता है वहीं वह पाठक के लिए भी एक आवश्यकता बनता है। पाठक के बिना साहित्यकार का कोई अस्तित्व नहीं रहता। अज्ञेय कहते हैं कि कला को दो दृष्टि बिंदुओं से देखा जा सकता है- कलाकार के और रसिक के। रसिक की ओर से देखें तो हम इस परिणाम पर पहुँचेंगे कि रसिक साहित्य से धर्म, नीति, शिक्षा, विज्ञान, प्रोपेगेण्डा, कुछ नहीं माँगता; उसके लिए कला का उद्देश्य है जीवन को उन लोगों के लिए सहनीय बनाना जिनके लिए संसार एक विवश होकर स्वीकार करने की चीज़ है।

साहित्य और राजनीति का आपस में कैसा संबंध होना चाहिए? इस प्रश्न पर अज्ञेय लगातार चर्चा करना चाहते थे। अज्ञेय ने साफ शब्दों में कहा था, "साहित्य और राजनीति का असर एक-दूसरे पर होने से रोका भी नहीं जा सकता- चाहे राजनीति का युग हो, चाहे साहित्य का। नीत्से साहित्यिक था लेकिन आधुनिक राजनीति पर उसके प्रभाव की उपेक्षा नहीं हो सकती। लेनिन को कोई भी साहित्यिक नहीं कहता, फिर भी आधुनिक साहित्य पर उसकी गहरी छाप है।" यह सही बात है कि राजनीति और साहित्य के बीच में सबसे बड़ा अंतर यह है कि राजनीति में जो दलबंदियों देखने को मिलती है वह स्थायी नहीं होती और साहित्य में वैचारिकता दिखाई पड़ती है वह हमेशा स्थायी ही बनी रहती है। इस अंतर के बाद भी राजनीति और साहित्य दोनों को साथ चलना चाहिए क्योंकि दोनों ही समाज, परिवार, देश, राष्ट्र आदि को आधुनिकीकरण के साथ जोड़ सकते हैं। अज्ञेय का मत यह रहा कि, साहित्यिक

और राजनीतिक को दो पृथक और विरोधी तत्व मान लेना किसी प्राचीन युग में भी उचित न होता, आज के से संघर्ष-युग में तो वह मूर्खतापूर्ण-सा ही है। आधुनिक युग में व्यक्ति के लिए बिल्कुल संभव है कि वह एक साथ दोनों हो सकें।

अज्ञेय ने जिस प्रकार से साहित्य, समाज और साहित्यकार के बीच के संबंध विचार व्यक्त किया है, जिस प्रकार से उन्होंने साहित्य और राजनीति से पारस्परिक संबंध। पर विचार प्रस्तुत किया है ठीक उसी प्रकार से उन्होंने साहित्य और प्रयोग किस प्रकार से एक-दूसरे के परिपूरक है इस विषय पर भी गहन विचार किया है तथा अपने मंतव्यों को व्यक्त भी किया है।

अज्ञेय की प्रयोगशील मानसिकता हिंदी साहित्य के क्षेत्र में चर्चित विषय रहा। अज्ञेय की प्रयोगशील मानसिकता का ही परिणाम रहा कि हिंदी साहित्य में प्रयोगवाद नाम से एक वाद ही शुरू हो गया। प्रयोग करने की आवश्यकता साहित्यकार को तब पड़ती है जब पुरानी भाव प्रणाली में रूढ़ियों का समावेश अधिक हो जाता है और नवीन मान्यताओं को स्वीकार कर लेना ही एकमात्र उपाए बनकर सामने आता है। जैसा कि हम सबको पता है अज्ञेय स्वाधीन विचारधारा पर विश्वास रखनेवाले साहित्यकार थे तो नवीन रास्तों को खोज निकालने के लिए उन्होंने अनेक प्रकार के प्रयोगों का भी सहारा लिया। प्रयोग एक मानसिकता है और दृष्टिकोण दोनों थे तभी तो भारतेन्दु के बाद हिंदी साहित्य में अज्ञेय ने ही सर्वाधिक प्रयोग किए हैं इन प्रयोगों के माध्यम से उन्होंने हिंदी साहित्य का बहुत विकास किया। परंतु प्रयोग के प्रति अज्ञेय के मन में कोई दुराग्रह नहीं है। एक रचनाकार होने के नाते प्रयोग उनके लिए एक अनिवार्य स्थिति है जैसे किसी अन्य रचनाकार के लिए हो सकती है।

बोध प्रश्न

- साहित्य और राजनीति के आपसी संबंध के बारे में अज्ञेय का क्या मत था?

13.3.5 अज्ञेय का कृतित्व

अज्ञेय की साहित्य यात्रा और उनकी रचनाओं को समझने के लिए सबसे पहले आप विद्यार्थियों को अज्ञेय के उपर्युक्त विचारधारा को समझना होगा। यही विचारधारा अज्ञेय की साहित्य यात्रा का प्राणतत्व है। प्रस्तुत इकाई में हम अज्ञेय के उपन्यासों, कविताओं तथा कहानियों के चेतनात्मक संदर्भ को उनकी विचारधारा ने कैसे प्रभावित किया है तथ इससे साहित्य, समाज और पाठकों को क्या लाभ मिला है इसी का अध्ययन करेंगे।

अज्ञेय की कविताएँ : चेतनात्मक संदर्भ

अज्ञेय की कविताओं को जब हम पढ़ते हैं तब हम पाते हैं कि उनकी कविताओं में आवेग की जगह सर्जनात्मकता, खरी अनुभूति, लोक संस्कृति, रहस्यात्मकता, मौन, विराट तथा साधारण का मेल आदि विभिन्न प्रकार के विषयों को देखा जा सकता है।

प्रकृति चित्रण

अज्ञेय का जन्म खंडहरों में एक खुदाई शिविर में हुआ था। उनका बचपन भी वनों और पर्वतों में बिखरे हुए पुरात्वावशेषों के मध्य बीता और इन्हीं के बीच उन्होंने आरंभिक शिक्षा ग्रहण की। इस कारण से अज्ञेय में शुरू से ही प्रकृति के प्रति गहरा लगाव रहा है। प्रकृति चित्रण उनके लेखन का विशेष आकर्षण रहा है। अज्ञेय नगर के कोलाहल से भागकर प्रकृति की शरण में ही रहना चाहते थे। वे कृत्रिमता से मुक्त सहज जीवन के आकांक्षी थे। उनकी चर्चित कविता 'हरी घास पर क्षण भर' में उन्होंने लिखा है-

हो प्रकृतस्थः तनो मत कटी-छँटी उस बाड़ सरीखी,
नमो, खुल लिखो, सहज मिलो
अंतःस्मित, अंत-संयत हरी घास-सी।
क्षण भर भुला सकें हम
नगर की बेचैन बुदकती गड्ड-मड्ड अकुलाहट
और न मानें उसे पलायन,
क्षण भर देख सकें आकाश, धरा, दूर्वा, मेघाली,
पौधे, लता दोलती, फूल, झरे पत्ते, तितली-भुनगे,
फुनगी पर पूँछ उठाकर
इतराती छोटी सी चिड़िया-
और न सहसा चोर कह उठे मन में-
प्रकृतिवाद है स्खलन
क्योंकि युग जनवादी है। क्षण भर हम न रहे रहकर भी;
सुने गूँज भीतर के सूने सन्नाटे में किसी दूर सागर लोल लहर की
जिसे सीपी सदा सुना करती है।

केवल यही एक कविता नहीं अज्ञेय की दूसरी कविताओं में भी प्रकृति के रंगबोध,

गंधबोध, ध्वनिबोध को हम देख सकते हैं।

अज्ञेय ने प्रकृति को सिर्फ देखा नहीं वरन् वे प्रकृति के साथ पलते-बढ़ते भी रहे। इसलिए उन्होंने प्रकृति के सूक्ष्म से सूक्ष्मतर सौंदर्य को विश्लेषित किया है-

सूप-सूप भर धूप कनक
यह सूने नभ में गई बिखर
चैंधाया बीन रहा है
उसे अकेला एक कुरर।

सूरज की किरणों का कैसा सुंदर चित्र अज्ञेय ने उपर्युक्त कविता के द्वारा हम तक पहुँचाया है। अज्ञेय के प्रकृति काव्य के बारे में रमेश चंद्र शाह की टिप्पणी है, 'पंत के बाद शायद ही किसी कवि का प्रकृति संवेदन इतना प्रगाढ़, इतना भरा-पूरा और फिर भी इतने जोखिम से निखरा हुआ हो, जितना अज्ञेय का।' एलियट के साथ अज्ञेय की तुलना करते हुए शाह ने लिखा है, "एलियट के विपरीत अज्ञेय का संबंध प्रकृति के साथ अधिक सहज और घनिष्ठ है और प्रकृति पक्ष उनकी रचनाओं में ही नहीं, चिंतन के स्तर पर भी बराबर अभिव्यक्ति होता रहा है।"

रमेशचंद्र शाह की उपर्युक्त वक्तव्य को पढ़ने के बाद अज्ञेय की प्रकृति चित्रण को और स्पष्ट रूप में आप विद्यार्थियों को समझाने के लिए आपके सामने 12 जुलाई 1947 को लिखी गई उनकी 'पावस-प्रात, शिलाङ' कविता को रखना आवश्यक हो जाता है। कविता की पंक्तियों को देखिए-

भोर बेला, सिंची छत से ओस की टिप-टिप्। पहाड़ी काक
की विजन को पकड़ती-सी क्लोत बेसुर डाक-
हाक्! हाक्! हाक्!
मत सँजो यह सिग्ध सपनों का लस सोना-
रहेगी बस एक मुट्ठी खाक्!
धाक्! धाक्! धाक्!
पाश्र्व गिरि का नम्र, चीड़ों में
डगर चढ़ती उमंगों-सी
बिछी पैरों में नदी ज्यों दर्द की रेखा।
बिहग-शिशु मौन नीड़ों में

स्वाधीनताबोध

साहित्यकार में स्वाधीनताबोध का रहना बहुत आवश्यक है। अज्ञेय और स्वाधीनताबोध बने ही थे एक-दूसरे के लिए। बहुत दुखद बात है कि इस स्वाधीनताबोध के कारण से अज्ञेय को अनेक आलोचनाओं का सामना भी करना पड़ा। परंतु इन आलोचनाओं ने अज्ञेय को और मजबूत बनाया। वे बराबर कुंठाओं, जड़ताओं का विरोध करते रहे। उनके इस विरोध और विरोधजन्य स्वाधीनताबोध की भावना 'सागर-मुद्रा-2' कविता में सहज ही दिखाई देती है। सागर और व्यक्ति के रोमांचक संबंध को प्रतीक बनाकर कवि अज्ञेय ने समाज और व्यक्ति के बीच कैसा संबंध बनना चाहिए इस तथ्य पर प्रकाश डाला है। सागर जिस प्रकार से अपने अंदर आए व्यक्ति के साथ क्या कुछ नहीं करता? वह उसे अपनी संपूर्ण शक्ति के साथ घेरता है लेकिन व्यक्ति को अपनी शक्ति से बाहर निकलने का सामर्थ्य भी प्रदान करता है। अगर सागर यह कर सकता है तो समाज को क्या करना चाहिए?

काल चिंतन

प्राचीनकाल में मनुष्य उतना अधिक काल के अधीन नहीं था जितना आज है। यह अधीनता अज्ञेय के समय में भी था। अज्ञेय ने इस काल चिंतन को न केवल समझा उसे अपनी कविताओं के द्वारा व्यक्त भी किया। अज्ञेय ने इस बारे में लिखा है कि, 'यों तो काल और उसकी प्रतीति की समस्या तत्व चिंतन और तर्क की सनातन समस्या, मैं न तत्व-चिंतक हूँ, न तार्किक। यद्यपि दोंनों क्षेत्रों में मेरी रूचि बराबर रही है और इस विषय को मैंने न उठाया होता, अगर वर्षों से इस बात का तीव्र बोध मुझे न होता कि आज का साहित्य इस समस्या से विकट रूप से आक्रांत है।" अज्ञेय ने वर्तमान के प्रत्येक क्षण को बहुत अधिक महत्व प्रदान किया। अज्ञेय को इसलिए कुछ विद्वानों ने क्षणवादी भी कहा लेकिन यहाँ इस बात को ध्यान में रखना आवश्यक है कि भले ही अज्ञेय वर्तमान के प्रति क्षण को महत्व देते थे लेकिन वर्तमान भूत और भविष्य का स्रष्टा है। इस तरह से अज्ञेय का संपूर्ण साहित्य तीनों कालों को ही अभिव्यक्ति करता दिखाई पड़ता है।

शाब्दिक स्वाधीनताबोध

अज्ञेय केवल मनुष्य को स्वतंत्र करने में विश्वास नहीं रखते थे इसके विपरीत उन्होंने साहित्य को भी शब्दमुक्त करने की बात सोची, है न ये अजीब बात पर यह अजीबता अज्ञेय को और अधिक साहित्यकार के रूप में उत्कृष्ट बनाता है। अज्ञेय का मानना है कि, कवि संप्रेषण के

लिए सिर्फ शब्दों से ही अर्थ की उत्पत्ति नहीं करता बल्कि वह कई बार कविता में शब्दों का उपयोग न करके भी कविता में अर्थ को जन्म देता है। अज्ञेय क्या कहना चाह रहे हैं इसे प्रस्तुत कविता के द्वारा हम समझ सकते हैं। निम्न पंक्तियों को देखिए-

मुझे तीन दो शब्द
कि मैं कविता कह पाऊँ।
एक शब्द वह :
जो न कभी जिह्वा पर लाऊँ।
और दूसरा
जिसे कह सकूँ
किंतु दर्द मेरे से
जो ओछा पड़ता हो।
और तीसरा, खरा धातु
पर जिसको पाकर पूछूँ
क्या न बिना इसके भी काम चलेगा?
और मौन रह जाऊँ।
मुझे तीन दो शब्द
कि मैं कविता कह पाऊँ।

परंपरा: आधुनिकता के संदर्भ में

अज्ञेय के लिए परंपरा को आधुनिकता के साथ कैसे जोड़ा जाए यह सदैव विचारणीय विषय रहा। उन्होंने परंपरा पर कई ढंग से विचार किया। अज्ञेय परंपरावादी साहित्यकार नहीं थे लेकिन केवल फैशन या दिखावे के लिए भी वे परंपरा का विरोध नहीं करते थे। अज्ञेय की माँग यही थी कि इतिहास और परंपरा को हमारे नए प्रश्नों के प्रति उत्तरदायी होना पड़ेगा। अज्ञेय ने परंपरा को आधुनिकता के साथ जोड़ने की माँग की लेकिन इसके लिए उन्होंने कभी पाश्चात्य अवधारणाओं को स्वीकार नहीं किया। अज्ञेय जानते थे कि "पश्चिम का ठेठ इतिहासबोध प्रकृति के समयबोध को खंडित करके ही आधुनिकताबोध तक पहुँचता है जहाँ व्यक्ति न तो अपने लिए सही मायने में आधुनिकताबोध को हासिल कर पाता है और न ही अपनी स्मृति से ही जुड़ पाता है।" अपनी इसी विचारधारा को उन्होंने अपनी कविताओं में भी

अभिव्यक्त किया है-

ओ भीरत के छटपटाते प्राण!
पहचान
सच-सच बता
जो कुछ हमें याद है
उसमें कितनी है परंपरा
और कितनी बस अर्से से पड़ा
रास्ते का रोड़ा

अज्ञेय के 'छटपटाते प्राण' इसी बात की ओर सावधान करते हैं, और कहते हैं कि पहचान और परंपरा में से कितना स्वीकार करना चाहिए और कितना छोड़ देना चाहिए। रूढ़ियाँ, भ्रांतियाँ किसी भी व्यक्ति को, कवि को, कलाकार को अपने जाल में फँसा सकती है यदि वह समय रहते सावधान और विवेकशील नहीं बना तो, अज्ञेय ने अपनी कविताओं के द्वारा बार-बार इस प्रकार से चेताया है-

राही, चैराहों से बचना!
वहाँ ठूँठ पेड़ों की ओट
घात बैठी रहती है
जीर्ण रूढ़ियाँ
हवा में मँडराते संचित अनिष्ट, उन्माद, भ्रांतियाँ-
जो सब, जो सब
राही के पद-रव से ही बल पा
सहसा कस आती हैं
बिछे, तने, झूले फन्दों-सी बेपनाह!
रासी, चैराहों पर
बचन।

अज्ञेय ने अपनी कविताओं के द्वारा दो प्रकार के दायित्वों का पालन किया। रमेश ऋषिकल्प जी अज्ञेय के द्वारा निभाए गए दायित्वों की की बात करते हुए कहते हैं, 'अज्ञेय ने एक ओर प्राचीनता को वर्तमान के संदर्भ में पाया है और उसके साथ आधुनिकता का रिश्ता कायम

किया। दूसरी ओर वर्तमान की पहचान करके आनेवाली पीढ़ी को नया वर्तमान सौंपा।' अज्ञेय ने हिंदी साहित्य के लिए नया रास्ता बनाया लेकिन उन्होंने हमेशा नए साहित्यकारों को नए रास्तों की खोज करने के लिए प्रेरित किया। इस बात का प्रमाण है नए कवियों को सम्बोधित करके लिखी गई उनकी प्रस्तुत कविता-

पर आ तू
सभी कहीं, सब चिह्न रौंदता
अपने से आगे जाने वाले के
आ, तू, आ,
रखता पैरों पर पैर,
गालियाँ देता,
ठोकर मार मिटाता अनगढ़
(और अवांछित रखे गए) इन
मर्यादा-चिह्नों को
आ तू आ

निष्कर्षतः रमेश ऋषिकल्प जी की बात को मानना ही पड़ेगा कि, अज्ञेय ने भारतीय साहित्य के हाइवे तैयार किए। उन्हीं हाइवेज़ पर आज हिंदी साहित्य का ट्रेफिक दिखाई दे रहा है। हिंदी साहित्य को उनके प्रति कृतज्ञ होना चाहिए।

बोध प्रश्न

- अज्ञेय की कविताओं में प्रकृति को क्या स्थान मिला? संक्षेप में समझाइए।
- 12 जुलाई 1947 को अज्ञेय ने कौन सी कविता लिखी थी?
- अज्ञेय की कविताओं में काल चिंतन की व्याख्या किस प्रकार से की गई है?
- 'शाब्दिक स्वाधीनता बोध' से अज्ञेय का क्या अभिप्राय था?

अज्ञेय की कहानियाँ : चेतनात्मक संदर्भ

अज्ञेय ने कविता के क्षेत्र में जितना काम किया उतना ही काम उन्होंने कहानी के क्षेत्र में भी किया। अज्ञेय ने कहानी रचना के क्षेत्र में आमूलचूल परिवर्तन ला दिया था। अज्ञेय की पहली कहानी 1929 में 'जिज्ञासा' शीर्षक से लिखी गई जिसका प्रकाशन 1935 में हुआ। कहानी लेखन में अज्ञेय का मन काफी सक्रिय रहा है। डॉ. देवराज ने 'आधुनिक हिंदी कथा-साहित्य और

मनोविज्ञान' में अज्ञेय की कहानियों की तीन श्रेणियाँ मानी है- 1. क्रांतिकारी जीवन से संबंधित 2. प्रेम से संबंधित और 3. मनोवैज्ञानिक कहानियाँ

क्रांतिकारी जीवन से संबंधित कहानियाँ

विद्यार्थियों जैसा कि पहले आप पढ़ चुके हैं कि अज्ञेय का जन्म पराधीन भारत में हुआ था और फिर उन्होंने स्वाधीनता संग्राम में भाग लिया और जेल भी गए इसी कारण से हिंदी के दूसरे कहानीकारों की अपेक्षा वे क्रांतिकारी जीवन से संबंधित कहानियों या फिर देश विभाजन से संबंधित कहानियों में अधिक सजीवता ला सके थे। लेटर-बॉक्स शरणदाता, मुस्लिम हिंदू भाई-भाई, रमंते तत्र देवता आदि देश विभाजन तथा क्रांतिकारी जीवन से संबंधित कहानियाँ हैं। अज्ञेय के ही शब्दों में, 'ये कहानियाँ आहत मानवीय संवेदनशीलता की और मानव-मूल्यों के आग्रह की कहानियाँ है और मैं अभी तक आश्वस्त हूँ कि जिन मूल्यों पर मैंने बल दिया था, जिनके घर्षण के विरूद्ध आक्रोश व्यक्त करना चाहा था, वे सही मूल्य थे और उनकी प्रतिष्ठा आज भी हमें उन्नतर बना सकती है। निःसंदेह मेरा यह मानवतावाद एक प्रकार का आदर्शवाद है, जिसके लिए मैं लज्जित नहीं हूँ, न दीन-हीन होने का कोई कारण देखता हूँ।' अपने सैनिक जीवन एवं युद्ध विषयक अनुभवों को उन्होंने मेजर चौधरी की वापसी और नागा पर्वत की एक घटना नामक कहानियों में व्यक्त किया है। इसी प्रकार से 'लेटर बॉक्स' कहानी को पढ़ने के बाद विभाजन का असर बालकों पर कैसे पड़ा इस कारूणीक सत्य से हम अवगत होते हैं। लेटर-बॉक्स कहानी की इन पंक्तियों को देखिए-

'मैंने लेटर-बॉक्स से हाथ निकाला और जाने को हुआ कि लड़के ने जैसे साहस बटोर कर पूछा, "जी, इसमें कहाँ की चिट्ठी जाती है?"

मैंने कहा, "सब जगह की। तुझे कहाँ भेजनी है चिट्ठी?"

"बाबूजी को।"

"हाँ, मगर कहाँ-कोई जगह भी तो हो?" कहते हुए मैंने देखा उसके हाथ में एक कुचला-मुचला पोस्टकार्ड है भी है। मैंने उसके लिए हाथ बढ़ाकर कहा, "देखूँ?"

उसने कुछ अनाश्वस्त भाव से पोस्टकार्ड मेरी ओर बढ़ाया। मैंने उसे हथेली पर बिल्कुल सीधा किया, देखा कि पोस्टकार्ड पर तो मोटे-मोटे अक्षरों में कुछ लिखा है पर पते की जगह खाली है। मैंने हँसकर, कहा पता, "पता भी तो लिखना होगा, पगले! क्या पता है?"

"सो तो बाबूजी बताएँगे- मुझे क्या मालूम- "आवाज रूआँसी हो गई और मैंने देखा, ओठों

की कोर काँप रही है। मैंने तनिक नरम होकर पूछा, "तुम्हारा घर कहाँ है?"

"शेखपुरे-"

स्वाधीनता का अर्थ समझने से पहले, स्वाधीनता का सुख भोगने से पहले ही छोटे-छोटे बच्चे कैसे अपने ही घर-परिवार से बिछड़ गए इसका सजीव चित्र अज्ञेय की कहानी के इस छोटे से बच्चे की मनोभावना के द्वारा हम तक आया है।

ऐसी ही एक कहानी है- शरणदाता। शरणदाता कहानी का प्रारंभ ही लाहौर में रह रहे दो मित्रों- देविन्दरलाल और रफीकुद्दीन के वार्तालाप से शुरू होता है। सन् 1947 का भारत-पाकिस्तान के विभाजन का समय है। लाहौर पाकिस्तान में शामिल होने जा रहा है इसलिए यहाँ के हिन्दू अल्पसंख्यक संप्रदाय के हो गए हैं। जान माल की रक्षा के लिए वे भारत की ओर भाग रहे हैं। रफीकुद्दीन उदारवादी मुसलमान है इसलिए वह अपने मित्र देविन्दरलाल की रक्षा हर हालत में करना चाहते हैं। वे गुपचुप तरीके से अपने एक मित्र शेख अताउल्लाह के तालेबंद अहाते में देविन्दरलाल को छुपाने की व्यावस्था कर लेते हैं। इस अहाते में देविन्दरलाल कैदी जैसा जीवन बिता रहे थे लेकिन जीवित थे यही बड़ी बात थी लेकिन एक दिन छोटे-छोटे फुलकों को उंगलियों से टटोलते हुए वे अपने घर की याद में डूब जाते हैं। अचानक उनकी नज़र तीन-चार फुलकों की तह में छुपी कागज की एक पुड़िया पर पड़ती है। उस पर केवल एक पंक्ति लिखी थी- 'खाना कुत्ते को खिला कर खाइएगा।' शरणदाता ही शत्रु बन चुका है यह देविन्दरलाल विश्वास ही नहीं कर पा रहे थें इसके बाद लेखक डेढ़ महीने बाद की कथा कहता है। अब देविन्दरलाल सुरक्षित दिल्ली में है। एक दिन उन्हें शेख साहब की बेटी जैबुन्निसा का पत्र मिलता है। वह उनसे प्रार्थना करती है कि यदि वे जान बचाने के लिए उसका ज़रा भी अहसान मानते है तो हिन्दुस्तान में फँसे अल्पसंख्यक मुसलमानों की रक्षा करें। उसका विश्वास है कि धर्म से बढ़कर पहले इंसान होता है।

तो विद्यार्थियों आपने देखा किस प्रकार से अज्ञेय ने अपनी कहानियों में क्रांति, बँटवारा, मानवता आदि का संगम करवाया है।

प्रेम से संबंधित कहानियाँ

अज्ञेय की कहानियों में स्त्री पुरुष संबंधों के विविध स्वरूप देखने को मिलते हैं। इन संबंधों में समाज एवं उससे मिलनेवाले सम्मान के खोखलेपने का अनुभव उन्होंने अपनी कुछ कहानियों के माध्यम से स्पष्ट रूप से चित्रित किया है। जिजीविषा, चिड़ियाघर, पहाड़ी जीवन,

राधा का नाच ऐसी ही कुछ कहानियाँ है।

'चिड़ियाघर' कहानी में अज्ञेय ने सामन्ती मूल्यों को चित्रित करके उसका प्रभाव स्त्री-पुरुष संबंधों पर दर्शाने का प्रयास किया है। चिड़ियाघर का घाघ बुड्ढा जो अपने को चिड़ियाघर की आत्मा मानता है गाइड के रूप में 'रमा' को चिड़ियाघर दिखाने ले जाता है वह रमा को क्रमशः बंदर, हाथी, शेर, तोते, ऊदविलाव और बाघ के बच्चे दिखाता हुआ अंत में चिड़ियाघर के साहब के पास ले जाता है और कहता है- 'साहब हमारे राजा के चचेरे भाई की संतान है एक वेश्या से। यह कहानी बहुत कम लोग जानते हैं क्योंकि वह वेश्या बहुत देर तक कुँवर साहब की चहेती रही और वे उसके लड़के को कुमार की तरह पालते रहे। उसे भी अपनी माँ का पता नहीं लगा। एक बार राजकुमार से कॉलेज में किसी दूसरे कुमार से लड़ाई हो गई और उसने उसे वेश्या पुत्र कह दिया। जब पूछने पर सच्चाई का पता चला, तब वह दुःख और ग्लानि से पागल हो गया। जब पागलपन कुछ ठीक हुआ तब उसने कॉलेज जाने से इंकार कर दिया और यही रहने लगा। अब भी उसका पागलपन मिटा नहीं, लेकिन अब यह हाल हुई कि जब कोई उसका नाम लेकर या कुँवर साहब कहकर बुलाता, तब उसे दौरा हो जाता और वह हत्या करने को तैयार हो जाता। जानवरों में उसे विशेष दिलचस्पी थी। इसीलिए राजा साहब ने उसे यहाँ नियुक्त करके इस बंगले में रख दिया और बाहर से बोर्ड लगवा दिया कि कोई भूलकर उधर न चला जाए।"

भारतीय सामाजिक पारिवारिक परिप्रेक्ष्य में स्त्री जीवन का महत्वपूर्ण प्रश्न दाम्पत्य जीवन से संबंधित है। पति-पत्नी का यह दाम्पत्य संबंध भारतीय धर्म और संस्कृति में पवित्रता के उच्च शिखर पर बैठा हुआ है। पति का रूप यहाँ ईश्वर के समान है और पत्नी उस ईश्वर की सेवा करने को बाध्य है। यह एक प्रकार की विसंगति ही तो है। अज्ञेय ने अपनी कहानियों के माध्यम से स्त्री पुरुष संबंधों की इन विसंगतियों को उजागरित किया। उनकी कहानियों में स्त्री अपनी दयनीय दशा को साथ-साथ सबल स्वरूप में भी दिखाई देती है।

'हरसिंगार' कहानी में स्त्री-पुरुष संबंधों के प्रेममयी वतावरण को देखा जा सकता है। इसमें गोविन्द एक अनाथ है जो अपने जैसे अन्य साथियों के साथ भजन गा-गाकर भीख माँगता है, गोविन्द एवं उसके साथियों द्वारा गीत गाए जाते हैं। इसके बाद गोविन्द को बड़ी युवती ने हरसिंगार की माला भेंट की। इस माला ने गोविन्द के जीवन को जैसे कुछ सोचने पर विवश कर दिया। वह अब इस अजायालय से भिखारियों के झुंड से अपने आपको अलग कर देना चाहता था। वह सोच रहा था-"स्त्री के बिना कुछ भी अच्छा नहीं है, कुछ भी मधुर नहीं है, कुछ भी

मृदुल नहीं है, कुछ भी सुंदर नहीं है, स्त्री जो केवल स्त्री ही नहीं संसार की कुल सुंदर और मधुर वस्तुओं की प्रतिनिधि है।"

अज्ञेय की कहानियों में स्त्री-पुरुष संबंध एक आवश्यकता बनकर सामने आया है उनका आदर्शस्वरूप प्रेम 'पठार का धीरज' कहानी में उस समय देखने को मिलता है, जब राजकुमार हेमा कुबेर से प्रेम तो करती है किंतु अपने राज्यों की शांति व्यवस्था के साथ समझौता नहीं करती है। वह अपनी सामाजिक सीमाओं को लांघना नहीं चाहती है। वह कुँवर के साथ भागना नहीं चाहती क्योंकि वह अपने देश को शांति का धरोहर भी मानती है। वह दो राज्यों के बीच शांति को लांघना नहीं चाहती है। वह कुँवर से पूछती है 'क्या तुम मुझे ऐसे ही प्यार नहीं कर सकते।' किंतु कुँवर तो हेमा को चाँदनी की तरह नहीं अपनी छाया की तरह हर समय साथ देखना चाहता है। आत्मदान आत्म निछावर की चेतना 'पगोड़ा वृक्ष' नामक कहानी में भी देखा जा सकता है।

इस प्रकार से हम पाते है कि अज्ञेय ने अपनी कहानियों में स्त्री पुरुष के विभिन्न पक्षों को भलीभाँति प्रस्तुत किया है।

मनोवैज्ञानिक कहानियाँ

अज्ञेय ने भारतीय और पाश्चात्य अनेक साहित्यकारों को पढ़ा लेकिन किसी को भी अपना 'रोल मॉडल' नहीं बनाया। उनका आदर्श 'उड़ चल हरिल लिए हाथ में एक अकेला ओछा' था। इसी आदर्श को पकड़कर उन्होंने मनोवैज्ञानिक कहानियों की एक अलग ही श्रेणी बनाई। उन्होंने खितिन बाबू कहानी को लिखा। एक साधारण क्लर्क हैं- खितीन बाबू। एक आँख नहीं, ऑपरेशन में अपेंडिक्स काटा गया। फिर टांसिल का ऑपरेशन, दुर्घटना में एक बाँह कटी फिर दूसरी काटी गई, पैर भी कटे। बाँह के अवशेष कंधे भी निकाल दिए गए। पर वे इस बार शरीर में विष फैल जाने के कारण बचे नहीं। जब तक जीए जीवन में रस लेकर जिए अदम्य जिजीविषा के साथ। कहानी के अंत में अज्ञेय ने लिखा, केवल दीप्ति, केवल संकल्पशक्ति, रोटी, कपड़ा, आसरा हम चिल्लाते हैं ये सभी जरूरी है निसंदेह जीवन के एक स्तर पर निहायत जरूरी है लेकिन मानव जीवन की मौलिक प्रतिज्ञा यह नहीं है। यह है केवल मानव का अदम्य, अटूट संकल्प। अज्ञेय की कहानियों में मानव मन को छूने की अदम्य ऊर्जा थी। अज्ञेय की कहानियों के मूल में बाह्य यथार्थ कम और आंतरिक यथार्थ अधिक दिखाई पड़ता है। मुंशी प्रेमचंद ने भी कहा है कि 'सबसे उत्तम कहानी वह होती है जिसका आधार कोई मनोवैज्ञानिक सत्य हो।' मनोवैज्ञानिक कहानीकार के

रूप में अज्ञेय ने भी इस बात पर बल दिया है कि किसी भी घटना के घटित होने के पीछे किन-किन कारणों पर अधिक हाथ है उनका सही आकलन वे कर सके। उनके द्वारा लिखित 'रोज' एक उत्कृष्ट मनोवैज्ञानिक कहानी है। मालती के जीवन की एकरसता ने उसे किस प्रकार से यंत्रनुमा बना दिया है इसका सजीव चित्र लेखक ने उभारा है। अज्ञेय ने मध्यवर्गीय स्त्री की घुटन, पीड़ा, एकरसता ऊब और परिवर्तनहीनता को उघाड़ा है। डॉ. सुरेन्द्र चौधरी 'रोज' की मालती पर दृष्टिपात करते हुए कहते हैं, "वह दमघुट जिंदगी का भार ढोने वाली नारियों का प्रतिनिधित्व करती है इस कहानी में पति और परिवार के द्वारा निरंतर व्यस्त बनाई जाकर कोमल भावों और सौंदर्य के सूक्ष्म संवेदनों में निस्पंद हो जाने वाली नारी के जीवन की भावोल्लासविहीन यांत्रिकता का अंकन है।" हीलीबोन की बत्तखें' अज्ञेय के द्वारा लिखित और एक उत्कृष्ट मनोवैज्ञानिक कहानी है। इसमें उन्होंने नारी मनोविज्ञान को प्रस्तुत किया है। कहानी की पात्र हीली उम्र 34वें वर्ष में भी अकेली है। उसकी मनोव्यथा और मनोभावों को अज्ञेय ने कुशल शिल्पकार की भाँति दृश्यात्मक बनाया है। 'संतान का अभाव जीवन की सार्थकता पर ही प्रश्नचिह्न खड़ा कर देता है।' हीली अपने अकेलेपन को दूर करने के लिए बत्तखें पालती है। आए दिन लोमड़ी बत्तखों का शिकार कर लेती है। शिकार करनेवाली लोमड़ी जब कैप्टन दयाल की गोली का शिकार हो जाती है तब हीली सोचती है- "शिकार कर परिवार पालन उसका कर्म है, गीता में भी कर्म को सर्वोपरी माना है। 'जंगली पारिवारिकता के तहत अगर वह बत्तखें खाती है तो वह डाकू नहीं हो जाती।' लेकिन कैप्टन दयाल अपने शौक के लिए शिकार करते हैं इसलिए डाकू तो कैप्टन दयाल ही है। हीली की यह चिंतनधारा ही उसे सर्वोपरी बनाती है और अज्ञेय की मनोवैज्ञानिक लेखनी को भी। पुरुष का भाग्य अज्ञेय द्वारा लिखित अैर एक अप्रतिम मनोवैज्ञानिक कहानी है। अज्ञेय ने कहानी की पात्र प्रतिमा के मानस पटल की द्वंद्वात्मकता को बड़े ही कलात्मक और मनोवैज्ञानिक रूप में प्रस्तुत किया है। प्रतिमा का पति एक षड्यंत्र के केस में फँस गया और उसे फाँसी की सजा मिली। अब वह माँ बनी। दोनों घटनाएँ इतने पास-पास घाटी कि वह अपने मानसिक संतुलन को ही खो बैठी। जब उसके पुत्र को भी छील लिया गया तब तो वह एक ग्रंथी की शिकार हो गई यह ग्रंथी उसकी अभिव्यक्ति और विक्षिप्त क्रियाओं के द्वारा समझ आने लगी।.....

बोध प्रश्न

- अज्ञेय की पहली कहानी कौन सी है?

- डॉ. देवराज का अज्ञेय की कहानियों के संबंध में क्या कहना है?
- अज्ञेय द्वारा लिखित कुछ क्रांतिकारियों कहानियों के नाम बताइए।
- अज्ञेय द्वारा लिखित कुछ प्रेम संबंधी कहानियों के नाम बताइए।
- अज्ञेय की मनोवैज्ञानिक कहानियों की विशेषताओं पर संक्षेप में प्रकाश डालिए।

फ्रायड का यह मानना था कि प्रेम और वासना में बहुत निकट संबंध है। फ्रायड के अनुसार बिना वासना के प्रेम का अस्तित्व संभव नहीं है। शेखर के चरित्र में यह गुण देखा गया है। वह अपने संपर्क में आनेवाले सभी स्त्रियों के साथ घोर मैत्रीपूर्ण संबंध बनाता है। प्रेम और वासना ही वे मूल संवेदना है जो शेखर के व्यक्तित्व को बार-बार प्रभावित करते हैं। शेखर एक रोमैन्टिक विद्रोही है। मनुष्य जीवन के प्रारंभ से ही भय, काम और अहं किस प्रकार से उसके जीवन को प्रभावित करते हैं इसका यथार्थ चित्रण प्रस्तुत उपन्यास में किया गया है।

'नदी के द्वीप' अज्ञेय के द्वारा लिखा गया एक ऐसा उपन्यास है जिसमें प्रेम की एक नई अवधारणा को प्रस्तुत किया गया है। नदी के द्वीप के दो प्रमुख पात्र हैं रेखा और भुवन। इस उपन्यास के सभी पात्र प्रेम के बारे में सोचते हैं न केवल सोचते हैं बल्कि सेक्स के द्वारा उस प्रेम को प्राप्त करने का प्रयास भी करते हैं। 'नदी के द्वीप' में विवाह साधना, जीवन में परिवार का सीमा तक महत्व, परिवार और व्यक्ति का संबंध, युद्ध और विज्ञान की नैतिकता, प्रेम, ईर्ष्या, मित्रता, सभ्यता इत्यादि जीवन के महत्वपूर्ण प्रश्नों को उठाया गया है और अज्ञेय ने अपनी अत्यंत स्वस्थ और भारतीय दृष्टि का परिचय दिया है।"

अपने-अपने अजनबी अज्ञेय के द्वारा लिखित अपने आप में एक अलग प्रकार का उपन्यास है। जीवन और मृत्यु से संबंधित दार्शनिकता को प्रायोगिक ढंग से पाठकों तक पहुँचाना ही उपन्यासकार का उद्देश्य रहा है। अज्ञेय के इस उपन्यास की कथा अत्यंत संक्षिप्त है। इसका कथानक तीन खंडों में विभक्त है। वृद्धा सेल्मा और तरूणी योके हिमाच्छादित पर्वत की चोटी में बने एक कठघर में भीषण हिमपात के कारण दो महिने की लंबी अवधि के लिए कैद हो जाती है। सेल्मा वृद्ध होने के साथ-साथ कैंसर पीड़ित होने के कारण चिड़चिड़ी तथा कंजूस है। सेल्मा के साथ योके अपना जीवन व्यतीत करने को बाध्य है। उपन्यास के दूसरे खंड में सेल्मा के पूर्व जीवन का चित्रण हुआ है। अंतिम खंड में योके के जीवनांत का मार्मिक चित्रण प्रस्तुत किया गया है। इस उपन्यास में यान एकलोक, पॉल फोटोग्राफर एवं जगन्नाथ आदि कुछ गौण पात्र भी है। यह उपन्यास दुखांत होकर भी जीवन के प्रति प्रेम की भावना को व्यक्त करनेवाला उपन्यास है।

'मृत्यु जीवन का सबसे बड़ा अंतिम सत्य है। इस सत्य का अनुभव अज्ञेय ने स्वयं किया जिससे अपने-अपने अजनवी जीवंत हो गया।'

अंत में मुझे पूर्ण विश्वास है उपर्युक्त विश्लेषण के द्वारा आप विद्यार्थियों को अज्ञेय की रचनाओं का चेतनात्मक संदर्भ समझ में आ गया है।

बोध प्रश्न

- शेखर : एक जीवनी किस मनोवैज्ञानिक के विचारधारा से प्रभावित है?
- नदी के द्वीप में किस भावना की अवधारणा को प्रस्तुत किया गया है।
- अपने-अपने अजनबी उपन्यास के प्रमुख और गौण पात्र कौन से है?

13.4 पाठ सार

विद्यार्थियो, प्रस्तुत इकाई में हमने देखा कि किस प्रकार से बालक अज्ञेय का बचपन अपने पुरात्ववेत्ता पिता के साथ स्थान-स्थान पर घूमकर बीता। पराधीन भारत में जन्में अज्ञेय ने पराधीनता को बहुत करीब से देखा था जिस कारण स्वाधीनता का स्वाद चखने की ललक अज्ञेय में बचपन से ही इतनी अधिक थी कि बचपन से ही उन्होंने स्वयं को रूढ़ियों, कुप्रथाओं आदि से मुक्त कराने का प्रयास किया। यह प्रयास लगातार जारी रहा। देश को स्वाधीन कराने के प्रयास में जहाँ उन्हें चार वर्ष कारावास भोगना पड़ा और दो वर्ष घर में नजरबंद रहना पड़ा, वहीं समाज को रूढ़िमुक्त करने के प्रयास में उन्हें अनेक सामाजिक विरोधों का सामना करना पड़ा लेकिन किसी भी प्रकार की बाँधा अज्ञेय की स्वंतत्र चिंतनधारा को रोक नहीं सकी। अज्ञेय अपने प्रयोगों को लेकर आगे बढ़ते-बढ़ते इतना आगे बढ़ गए जहाँ उन्हें प्रयोगवाद का प्रवर्तक मान लिया गया। उन्होंने हिंदी साहित्य को एक नई दिशा प्रदान की। वैसे तो अज्ञेय ने कभी स्वयं को प्रयोगवादी नहीं माना उन्होंने तो प्रयोग को साहित्य का आवश्यक अंग माना। अज्ञेय अकेले चलते रहने के इच्छुक भी नहीं थे। तार सप्तक के प्रकाशन के साथ ही उन्होंने नवीन साहित्यकारों को आगे आने का रास्ता दिखाया। अज्ञेय साहित्य, साहित्यकार और समाज के पारस्परिक संबंध को लेकर हमेशा विचारशील रहें। अज्ञेय मानते थे कि "साहित्य और साहित्यकार का संबंध उन परिस्थितियों में निर्मित होता है जो उन्हें चाहे-अनचाहे मिली होती है।" साहित्य किसके लिए? इस प्रश्न को भी अज्ञेय ने उठाया था और इसका जवाब भी उन्होंने विस्तार से दिया। हमने प्रस्तुत इकाई में विस्तार से देखा कि किस प्रकार से अज्ञेय ने अपनी हरेक रचना के द्वारा नवीन

विचारधाराओं को समाज में तथा साहित्य में जोड़ा फिर चाहे वह साहित्य और राजनीति को एक-दूसरे के जोड़ने की बात हो या फिर साहित्य और प्रयोग के सह संबध पर विचार व्यक्त करने की बात जहाँ अज्ञेय ने एक तरफ यह कहा कि, साहित्य और राजनीति को दो पृथक और विरोधी तत्व मान लेना किसी प्राचीन युग में भी उचित न होता, आज के संघर्षपूर्ण-युग में तो मूर्खतापूर्ण-सा ही है। आधुनिक युग में व्यक्ति के लिए बिल्कुल संभव है कि दोनों एक साथ हो सके।" वहीं दूसरी तरफ उन्होंने प्रयोग को कभी इष्ट नहीं माना। उसे उन्होंने सदैव सत्य को जानने और पहचानने का साध्य नही माना।" तभी तो अज्ञेय की रचनाओं में कहीं भी एकरसता दिखाई नहीं पड़ती है। प्रकृति चित्रण, क्रांतिकारी विचारधारा, प्रेमपूर्ण संबंध, मनोवैज्ञानिक चिंतन, स्त्री-पुरुष संबंध, जीवन-मृत्यु का दर्शन आदि विभिन्न विचारों को अज्ञेय की रचनाओं में देखा जा सकता है। अज्ञेय द्वारा लिखित शेखर : एक जीवनी तो संपूर्ण हिंदी साहित्य को नई दिशा प्रदान करने वाली रचना है। लेटर बॉक्स, शरणदाता आदि कहानियों विभाजन की त्रासदी को दर्शानेवाली कहानी होने के साथ ही साथ मजहबी दंगों से भी कहीं अधीक महान है मानवता। इस मानवता को शरणदाता कहानी की पात्र जैवुन्निसा ने विजयी बनाया है।

13.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. छायावादोत्तर काल में विभिन्न नई विचारधाराओं को आत्मसात करके हिंदी साहित्य को नई चेतना से अनुप्राणित करने वाले रचनाकारों में अज्ञेय अग्रणी हैं।
2. अज्ञेय ने 'प्रयोगवाद' और 'नई कविता' जैसे दो आंदोलनों को नेतृत्व प्रदान किया।
3. 'तार सप्तक' और उसकी परंपरा में प्रकाशित दूसरा, तीसरा और चौथा सप्तक के माध्यम से अज्ञेय ने तत्कालीन हिंदी कविता की प्रवृत्तियों को निर्धारित करने का महत्वपूर्ण काम किया।
4. कविता की भाँति ही कहानी और उपन्यास सहित अन्य विधाओं में भी 'नवलेखन' के सूत्रपात का श्रेय अज्ञेय को प्राप्त है।

13.6 शब्द संपदा

1. अकुलाहट = व्याकुलता
2. अवधारणा = मान्यता
3. परिप्रेक्ष्य = संबंध

4. पुरातत्वावशेषों = पुरानी खंडहरों के अवशेष

5. प्रकृतस्थ = प्रकृति के साथ जुड़ा हुआ।

6. प्रवर्तक = जन्मदाता

7. यथास्थितिवादी = एक जैसी परिस्थिति जिसमें बदलाव न आया हो

8. विक्षिप्त = पागल

9. हिमाच्छादित = बर्फ से ढका हुआ

13.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. अज्ञेय के जन्म, शिक्षा तथा साहित्य यात्रा पर प्रकाश डालिए।
2. अज्ञेय के व्यक्तित्व एवं जीवन दर्शन पर प्रकाश डालिए।
3. अज्ञेय पर उनके समकालीन परिस्थितियों का क्या प्रभाव पड़ा?
4. अज्ञेय की कविताओं में प्रकृति को कैसे प्रस्तुत किया गया?

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. 'शेखर : एक जीवनी' के बारे में संक्षेप में बताइए।
2. परंपरा और आधुनिकता को लेकर अज्ञेय के क्या विचार थे?
3. अज्ञेय की मनोवैज्ञानिक कहानियों पर प्रकाश डालिए।
4. अज्ञेय की प्रेम संबंधी कहानियों पर प्रकाश डालिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. अज्ञेय का जन्म किस सन् में हुआ? ( )

(अ) सन् 1910 (आ) सन् 1911 (इ) सन 1914 (ई) सन् 1920

2. अज्ञेय की माता का नाम क्या था? ( )

(अ) सरस्वती देवी (आ) सीता देवी (इ) व्यन्ती देवी (ई) शीला देवी

3. अज्ञेय के पिता पेशे से क्या थे? ( )

(अ) पुरातत्ववेत्ता (आ) श्रमिक (इ) कृषक (ई) सलाहकार

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. नई कविता आंदोलन का जन्म सन्...................................... में हुआ।
2. अज्ञेय .... वाद के जन्मदाता थे।
3. अज्ञेय की मृत्यु सन् .... में हुई।
4. अज्ञेय की पहली कहानी................................... है।

III. सुमेल कीजिए -

1. हीरानंद वात्स्यायन	(अ) मालती
2. प्रतीक	(आ) उपन्यास
3. अपने-अपने अजनबी	(इ) पिता
4. रोज	(ई) नई कविता

13.8 पठनीय पुस्तकें

1. अज्ञेय का चिंतन : रमेश ऋषिकल्प
2. अज्ञेय और आधुनिक रचना की समस्याएँ : रामस्वरूप चतुर्वेदी
3. 'शेखर - एक जीवनी' की भूमिका : अज्ञेय
4. आधुनिक हिंदी साहित्य : अज्ञेय

इकाई 14 : बना दे, चितेरे : अज्ञेय

रूपरेखा

14.1 प्रस्तावना

14.2 उद्देश्य

14.3 मूल पाठ : बना दे, चितेरे : अज्ञेय

14.3.1 अध्येय कविता का सामान्य परिचय

14.3.2 अध्येय कविता

14.3.3 कविता की विस्तृत व्याख्या

14.3.4 समीक्षात्मक अध्ययन

14.4 पाठ सार

14.5 पाठ की उपलब्धियाँ

14.6 शब्द संपदा

14.7 परीक्षार्थ प्रश्न

14.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

14.9 पठनीय पुस्तकें

14.1 प्रस्तावना

अज्ञेय प्रगतिवादी रचनाकारों में अति महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। 7 मार्च, 1911 को अज्ञेय का जन्म हुआ और उनका का पूरा नाम सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय है। अज्ञेय जी को शैलीकार, कथाकार, निबंधकार, संपादक और अध्यापक के रूप में जाना जाता है। प्रयोगवाद एवं नई कविता के सशक्त हस्ताक्षर अज्ञेय जी ने अनेक जापानी हाइकु कविताओं का अनुवाद किया। अज्ञेय के काव्य में बिंब और प्रतीक, मिथक विधान अनुपम है। उनकी कविता की भाषा संरचना में इन दोनों का एक महत्वपूर्ण स्थान है तभी अपनी अनुभूतियों के संप्रेषण के लिए प्रतीक का सहारा लेते हैं। वह प्रतीक को ज्ञान का साधन मानते हैं। अपनी अमूर्त भावनाओं के मूर्तिकरण के लिए अथवा प्रत्यक्षीकरण के लिए कवि जब प्रतीकों का सहारा लेते हैं तो भाषा की अभिधात्मक शक्ति बढ़ जाती है।

कविता के बदलते हुए परिवेश के साथ तादात्म्य करने के लिए कवि ने नए प्रतीकों के

प्रयोगों पर बल दिया है। दूसरे तार सप्तक की भूमिका में उनका कहना था- 'राग वहीं रहने पर भी रागात्मक संबंधों की प्रणालियां बदल गई हैं और कवि का क्षेत्र रागात्मक संबंधों का क्षेत्र होने के कारण इस परिवर्तन का कवि कर्म पर बहुत गहरा असर पड़ा है।' सभी अपने परिवेश के प्रति सदैव सतर्क रहते हैं। पद्य के साथ-साथ गद्य लेखन का उनका अपना विराट संसार है। 'नदी के द्वीप', 'अपने-अपने अजनबी' जैसी रचनाएँ देने वाले कविवर 'कांच के पीछे मछलियाँ' जैसी रचना भी लिखते हैं और अपनी प्रयोगशीलता का परिचय देते हैं। इनके कला और भाव संबंधी विचारों तथा भाषिक दृष्टि से काव्य में निहित विभिन्न सौंदर्य पर प्रकाश पड़ता है। कविताओं में नई संवेदनाएँ परिलक्षित हैं।

कवि के विचार अपनी परंपरा से ग्रहण करते हुए आधुनिकता में प्रवेश करते हैं और कवि की कविताएँ उनकी कला दृष्टि का अनुपम सौंदर्य बनकर बिखर जाती हैं। आपका कार्यक्षेत्र काफी व्यापक रहा। 'आंगन के पार द्वार' रचना पर उन्हें साहित्य अकादमी का पुरस्कार और 'कितनी नावों में कितनी बार' पर भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार मिला।

14.2 उद्देश्य

इस इकाई में आप अज्ञेय की कविता 'बना दे, चितेरे' का अध्ययन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन से आप -

- अज्ञेय की कविता 'बना दे, चितेरे' की व्याख्या कर सकेंगे।
- इस कविता के काव्यागत सौंदर्य से परिचित हो सकेंगे।
- अज्ञेय के आधुनिकता बोध को समझ सकेंगे।
- अज्ञेय के काव्य की अंतर्वस्तु का विवेचन कर सकेंगे।
- अज्ञेय के भाषिक सौंदर्य को समझ सकेंगे।
- अज्ञेय के काव्य में निहित प्रयोगवादी तत्वों को जान सकेंगे।

14.3 मूल पाठ : बना दे, चितेरे : अज्ञेय

14.3.1 अध्येय कविता का सामान्य परिचय

अज्ञेय प्रयोगशील कवि हैं। अपनी भाषा की विविधता के कारण ही अज्ञेय की कविताओं में ताजगी और नवीनता के दर्शन होते हैं। उनकी विचार दृष्टि गहरे अर्थ की अभिव्यक्ति देती है। उनका मानना है कि भाषा भावों की अभिव्यक्ति का माध्यम ना होकर अपनी स्वतंत्र

रचनात्मकता रखती है। कवि भाषा को जीवन में सबसे अधिक महत्वपूर्ण मानते हैं।

14.3.2 अध्येय कविता : बना दे, चितेरे

बना दे चितेरे
मेरे लिए एक चित्र बना दे।
पहले सागर आँक:
विस्तीर्ण प्रगाढ़ नीला,
ऊपर हलचल से भरा,
पवन के थपेड़ों से आहत,
शत-शत तरंगों से उद्वेलित,
फेनोर्मियों से टूटा हुआ,
किंतु प्रत्येक टूटन में
अपार शोभा लिए हुए,
चंचल उत्कृष्ट,
- जैसे जीव
हाँ, पहले सागर आंक:
नीचे अगाध, अथाह,
असंख्य दबावों, तनावों,
खींचो और मरोड़ों को
अपनी द्रव एकरूपता में समेटे हुए,
असंख्य गतियाँ और प्रवाहों को
अपने अखंड स्थैर्य में समाहित किए हुए
स्वायत्त
अचंचल
- जैसे जीवन.....
सागर आंक कर फिर आंक एक उछली हुई मछली
ऊपर अधर में
सफाईजहाँ ऊपर भी अगाध नीलिमा है

तरंगोर्मियाँ हैं, हलचल और टूटन है,
द्रव है, दबाव है
और उसे घेरे हुए वह अविकल सूक्ष्मता है
जिसमें सब आंदोलन स्थिर और समाहित होते हैं;
ऊपर अधर में
हवा का एक बुलबुला- भर पीने को
उछली हुई मछली
जिसकी मरोड़ी हुई देह वल्लीमें
उसकी जिजीविषा की उत्कट आतुरता मुखर है
जैसे तडिल्लता में दो बादलों के बीच के खिंचाव सब कौंध जाते हैं
वज्र अनजाने, अप्रसूत असंधीत सब
गल जाते हैं।
उस प्राणों का एक बुलबुला-भर पी लेने को-
उस अनंत नीलिमा पर छाए रहते ही
जिसमें वह जनमी है, जियी है, पली है, जिएगी,
उस दूसरी अनंत प्रगाढ़ नीलिमा की ओर
विद्युल्लता की कौंध की तरह
अपनी इयत्ता की सारी आकुल तड़प के साथ उछली हुई
एक अकेली मछली।
बना दे, चितेरे,
यह चित्र मेरे लिए आंक दे।
मिट्टी की बनी, पानी से सिंची, प्राणाकाश की प्यासी
उस अंतहीन उदीषा को
तू अंतहीन काल के लिए फलक पर टांक दे-
क्योंकि यह मांग मेरी, मेरी, मेरी है कि प्राणों के
एक जिस बुलबुले की ओर मैं हुआ हूँ उदग्र, वह
अंतहीन काल तक मुझे खींचता रहे:

मैं उदग्र ही बना रहा हूँ कि
- जाने कब-
वह मुझे सोख ले।

> **निर्देश** : 1. इस कविता का सस्वर वाचन कीजिए।
> 2. इस कविता का मौन वाचन कीजिए।

14.3.3 कविता की विस्तृत व्याख्या

बना दे चितेरे
मेरे लिए एक चित्र बना दे।
पहले सागर आँक:
विस्तीर्ण प्रगाढ़ नीला,
ऊपर हलचल से भरा,
पवन के थपेड़ों से आहत,
शत-शत तरंगों से उद्वेलित,
फेनोर्मियों से टूटा हुआ,
किंतु प्रत्येक टूटन में
अपार शोभा लिए हुए,
चंचल उत्कृष्ट,
- जैसे जीव
हाँ, पहले सागर आंक:
नीचे अगाध, अथाह,
असंख्य दबावों, तनावों,
खींचो और मरोड़ों को
अपनी द्रव एकरूपता में समेटे हुए,
असंख्य गतियाँ और प्रवाहों को
अपने अखंड स्थैर्य में समाहित किए हुए
स्वायत्त

अचंचल

- जैसे जीवन.....

शब्दार्थ : स्थैर्य = स्थिरता। अखंड = संपूर्ण।

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियाँ 'अंतः सलिला' से उद्‌धृत हैं। कविवर अज्ञेय द्वारा लिखित 'आंगन के पार द्वार' काव्य संग्रह को तीन भागों में बांटा गया है - अंतः सलिला, चक्रांतशिला और साध्य वीणा। अज्ञेय प्रयोगवाद एवं नई कविता को साहित्य जगत में प्रतिष्ठित करने वाले कवि हैं। बहुआयामी व्यक्तित्व के एकांतमुखी प्रखर कवि होने के साथ-साथ वे एक अच्छे फोटोग्राफर और सत्यान्वेषण पर्यटक भी रहे। इनकी प्रसिद्ध काव्य कृतियों में बावरा अहेरी, आंगन के पार द्वार, कितनी नावों में कितनी बार, सागर मुद्रा, महावृक्ष के नीचे आदि हैं।

प्रसंग : प्रस्तुत कविता में कवि ने प्राकृतिक उपादानों को लेकर मानवीय चिंतन का रूप व्यक्त किया है। सागर, झील, संध्या आदि प्राकृतिक उपादानों को लेते हुए कवि किसी व्याकुलता या यादों की उलझन में उलझे दिखाई देते हैं। इस कविता में कवि का प्रकृति प्रेम झलकता दिखाई देता है और दूसरी ओर मानव स्वभाव से भी गहरा परिचय दिखाई देता है। प्रकृति कवि के लिए प्रेरणा के प्रतीक है। यह कविता आत्मान्वेषण और आत्मानुभूति की कविता है। मानव मन की जिजीविषा को केंद्र में रखते हुए कवि मानव जीवन की विषमताओं को चित्रित करते हैं।

व्याख्या : कवि कहते हैं कि ए! चित्रकार मेरे लिए एक चित्र बना दे किंतु उस चित्र को बनाने से पहले सागर की व्यापकता, गहराई और उसकी सीमा को आंक ले। दूर तक फैला हुआ नीला सागर भले ही अंदर से शांत दिखाई देता हो किंतु यह हलचल से भरा हुआ है। चलने वाली मंद पवन के थपेड़े मानो इसको आहत कर लहरियाँ उठाते हैं। सैकड़ों तरंगों से यह आकुल-व्याकुल दिखाई देता है और अपने उद्वेलन को फेनिल लहरियों से व्यक्त करता है।

सागर के अंतस्थल में उठने वाली यह फेनिल लहरियाँ जब टूटे रूप में किनारों से टकराती हैं तो उस टूटन में भी एक सुंदरता है। यह चंचल लहरें बहुत ही उत्कृष्ट और उतनी ही सुंदर हैं जैसे मानव का जीवन होता है। मनुष्य अनेक दबाओं और विषमताओं में जीता है फिर भी अपनी जीवन जीने की इच्छाओं को नहीं छोड़ता और यही जीवन का सच्चा अर्थ है। चित्रकार पहले सागर की अथाह गहराई, उसके दबावों, तनावों, खिंचाव और मरोड़ों को आंक ले। यह सागर इतनी विषमताओं के बावजूद अपने में एकरूपता समेटे हुए है। इसमें असंख्य गतियां और प्रवाह हैं। यह अखंड है, स्थिर है और सारे गुणों को अपने स्थैर्य में समाहित किए है। यह अचंचल

और स्वायत्त है अर्थात यह स्वयं पर अधिकार रखता है वैसे ही जैसे जीवन होता है।

विशेष :

- क्षणिक अनुभूति को विशेष महत्व दिया गया है।
- जिजीविषा की तीव्र आकांक्षा दृष्टिगत होती है।
- जिजीविषा को व्यक्त करने के लिए मछली को प्रतीक बनाया गया है।
- उपमा अलंकार।
- अनुप्रास अलंकार।
- सागर का मानवीकरण कर दिया गया है।

बोध प्रश्न

- सागर कैसा है?
- सागर किससे आहत है?
- सागर की तुलना किससे की गई है?
- सागर की विशेषता क्या है?

सागर आंक कर फिर आंक एक उछली हुई मछली
ऊपर अधर में
सफाईजहाँ ऊपर भी अगाध नीलिमा है
तरंगोर्मियाँ हैं, हलचल और टूटनहै,
द्रव है, दबाव है
और उसे घेरे हुए वह अविकल सूक्ष्मता है
जिसमें सब आंदोलन स्थिर और समाहित होते हैं;
ऊपर अधर में
हवा का एक बुलबुला- भर पीने को
उछली हुई मछली
जिसकी मरोड़ी हुई देह वल्लीमें
उसकी जिजीविषा की उत्कट आतुरता मुखर है
जैसे तडिल्लता में दो बादलों के बीच के खिंचाव सब कौंध जाते हैं
वज्र अनजाने, अप्रसूत असंधीत सब

गल जाते हैं।
उस प्राणों का एक बुलबुला-भर पी लेने को-
उस अनंत नीलिमा पर छाए रहते ही
जिसमें वह जनमी है, जियी है, पली है, जिएगी,
उस दूसरी अनंत प्रगाढ़ नीलिमा की ओर
विद्युल्लता की कौंध की तरह
अपनी इयत्ता की सारी आकुल तड़प के साथ उछली हुई
एक अकेली मछली।

शब्दार्थ : नीलिमा = नीलापन। विद्युल्लता – बिजली। इयत्ता = सीमा।

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियाँ अज्ञेय द्वारा लिखे काव्य संग्रह 'आंगन के पार द्वार' में संग्रहित 'अंतःसलिला' खंड से ली गई हैं। तार सप्तक, दूसरा सप्तक और तीसरा सप्तक जैसे युगांतकारी काव्य संकलनों का संपादन करने वाले कवि ने पुष्करिणी और रूपाम्बरा जैसे काव्य संकलनों का भी संपादन किया है। कविता के साथ-साथ कहानी, उपन्यास, यात्रावृत्तान्त, निबंध, आलोचना, संस्मरण, डायरी, विचार गद्य, नाटक, जीवनी आदि पर अपनी लेखनी चलाने वाले अज्ञेय जी ने कई ग्रंथों का संपादन भी किया है।

प्रसंग : कवि अज्ञेय आधुनिक साहित्य के शलाका पुरुष माने जाते हैं जिन्होंने हिंदी साहित्य में भारतेंदु के पश्चात एक दूसरे आधुनिक युग का प्रवर्तन किया। सागर और सागर में पलने वाली मछली दोनों ही कवि के मन में संवेदना जगाते हैं और वह अपनी इस संवेदना को समाज में जीने वाले एक ऐसे व्यक्ति से जोड़ते हैं जो निराशा, बेबसी और घुटन में जीते हुए अपनी जीने की आशा नहीं छोड़ता।

व्याख्या : कवि कहते हैं कि पहले सागर की गहराई और विस्तार को आँक लो फिर एक उछली हुई मछली जो अंदर में है उसको आंको और चित्र बनाओ। एक तरफ सागर में फेनिल लहरें हैं हलचल है दूसरी ओर नीला विस्तृत आकाश है, वहाँ भी हलचल, दबाव और टूटन दिखाई देती है। आकाश भले ही सुखभरा और शांत दिखाई देता हो लेकिन वहाँ भी एक हलचल है, एक विषमता है और उछली हुई मछली हवा का एक बुलबुला पीकर जीवन जी लेती है। उसकी मुड़ी हुई देह वल्लरी में जीने उत्कट आकांक्षा है। मछली के जीवन जीने की उत्कट आतुरता मुखर रूप में दिखाई देती है। जैसे दो बादलों के बीच में चमकने वाली चपला में पूरी प्रकृति साफ साफ

दिखाई दे जाती है कुछ ऐसी ही स्थिति इस समय है। यह मछली जहाँ जन्मी है, जी है, पली है और आगे भी जिएगी, वह भले ही एक क्षण के लिए उछलकर अपनी सीमा में रहते हुए अपनी आकुल तड़प के साथ अपने जीवन जीने की ऑकुलता को व्यक्त कर देती है पर उसकी परवशता का अंदाजा लगाया जा सकता है। वास्तव में यह मछली समाज में रहने वाले एक ऐसे व्यक्ति के प्रतीक के रूप में हमारे सामने आती है जो विकट परिस्थितियों में जीते हुए भी अपने जीने की इच्छा को नहीं छोड़ता। भले ही जीवन की उलझनें हैं फिर भी वह अपने मन के किसी कोने में जीवन जीने की अभिलाषा रखता है।

विशेष :

- मुहावरों का प्रयोग।
- मानव मन का मनोविश्लेषणात्मक चित्रण।
- प्रतीक शब्दों का प्रयोग।
- रूपक अलंकार।
- लाक्षणिक भाषा प्रयोग।

बोध प्रश्न

- मछली किसकी प्रतीक है?
- 'कांच के पीछे मछलियां' किसकी कविता है?
- प्रयोगवाद का प्रारंभ कब हुआ?
- इस कविता में किस प्रकार की भाषा का प्रयोग हुआ है?

बना दे,चितेरे,
यह चित्र मेरे लिए आंक दे।
मिट्टी की बनी, पानी से सिंची, प्राणाकाश की प्यासी
उस अंतहीन उदीषा को
तू अंतहीन काल के लिए फलक पर टांक दे-
क्योंकि यह माँग मेरी, मेरी, मेरी है कि प्राणों के
एक जिस बुलबुले की ओर मैं हुआ हूँ उदग्र, वह
अंतहीन काल तक मुझे खींचता रहे:

मैं उदग्र ही बना रहा हूं कि

- जाने कब-

वह मुझे सोख ले।

शब्दार्थ : अंतहीन = जो कभी समाप्त न हो।

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियाँ प्रयोगवादी कवि अज्ञेय के प्रसिद्ध काव्यसंग्रह 'आंगन के पार द्वार' में संग्रहीत 'अंतः सलिला' खंड से ली गई हैं। कवि ने सदैव क्षण की अनुभूति को महत्व दिया है। उनकी दृष्टि में प्रत्येक क्षण अमोघ है अजेय है और स्वतंत्र है। नदी के द्वीप जैसी कविता कवि के विराट व्यक्तित्व का रूपायन करती है। असाध्य वीणा एक अलग तरह के मनोविज्ञान को पाठकों के समक्ष लाती है। इसी परंपरा में यह कविता एक अलग तरह की प्रयोगशीलता के दर्शन कराती है।

प्रसंग : उपर्युक्त पंक्तियों में जीवित रहने की इच्छा अधिक तीव्रता और शिद्दत के साथ व्यक्त हुई है। आज मानव एक ऐसे चक्रवात में फंसा हुआ है कि उसका जीवन दूभर हो गया है। अनगिनत समस्याओं के घेरे में घिरा हुआ व्यक्ति जीवन की अनेक उलझनों से कुंठित है और इसी आकुल अवस्था को कवि मछली और सागर के प्रतीक के द्वारा अभिव्यक्ति देते हैं। परेशान एवं असहाय परिस्थिति में भी वह अपनी जिजीविषा को नहीं छोड़ता और हर स्थिति में संघर्ष करते हुए एक बीच का रास्ता निकाल लेता है।

व्याख्या : चित्रकार तू मेरे लिए एक चित्र बना दे। मिट्टी की बनी, पानी से सिंचित, प्राण रूपी आकाश की प्यासी उस अंतहीन उदीषा की प्रतीक नई सुबह की पहली किरण को वहीं अंतहीन काल के लिए आकाश रूपी फलक पर टांक दे क्योंकि यही मेरी मांग है और मेरी यह भी मांग है कि प्राणों के जिस एक बुलबुले की ओर मैं ऊर्ध्व हो चला हूं वह अंतहीन काल तक मुझे खींचता रहे और मैं ऊर्ध्व ही बना रहूँ। ना जाने कब वह मुझे स्वयं में समाहित कर ले।

विशेष :

1. अनुप्रास अलंकार
2. आशावादी स्वर
3. रूपक अलंकार
4. संस्कृतनिष्ठ शब्दावली
5. प्रतीकों के प्रयोग से सुंदर अभिव्यक्ति

मानव की यह विशेषता होती है कि वह भले ही कितनी भी विकट परिस्थितियों में जीता रहे और कठिनाइयों से जूझता रहे फिर भी जीने की इच्छा नहीं छोड़ता। यही जिजीविषा उसे जीवन में आगे बढ़ने की ताकत देती है।

बोध प्रश्न

- अज्ञेय ने किस भाषा की कविताओं का अनुवाद किया?
- मछली कहाँ जन्मी और कहाँ जियी?
- 'आंगन के पार द्वार' को किस पुरस्कार से सम्मानित किया गया?
- कवि अंतहीन उदीसा को कहाँ टांकने की बात करते हैं?
- कभी अंततः कैसे बने रहना चाहते हैं?

14.3.4 समीक्षात्मक अध्ययन

अज्ञेय प्रेम और सौंदर्य के कवि हैं। वह भावुकता से बचते हैं और बौद्धिक अनुभूति के निकट अपनी काव्य संवेदना निर्मित करते हैं। इस कविता में कवि के अंतर्विरोध उनकी विशेषताएँ बनकर उभरे हैं। यह कविता केवल प्रकृति की कविता नहीं है बल्कि कवि संवेदना को प्रकट करती है। अलंकार, बिंब, प्रतीक, मिथक आदि के सहारे कवि अपनी बात को कह देते हैं। भाषा और शिल्प की विशेषता इस कविता की अलग पहचान है। जहाँ एक ओर छायावाद ने आने वाले नए काल के लिए स्वयं आधार तैयार किया वहीं दूसरी ओर प्रगतिशील कवियों ने सामाजिक संघर्ष को कविता के माध्यम से व्यक्त किया किंतु कवि अज्ञेय प्रयोगवाद के प्रवर्तक के रूप में आए और काव्य भाषा तथा शिल्प की समस्या को प्रयोगशीलता की समस्या के रूप में देखने का प्रयास किया।

इस कविता में नई काव्यभाषा का प्रयोग दिखाई पड़ता है जो उनकी प्रयोगशीलता में सहायक है। यह कविता वाचिक से अधिक मुद्रित रूप का सौंदर्य समेटे हुए है। इस कविता में जीवित रहने की इच्छा अधिक तीव्रता के साथ व्यक्त हुई है। आज मानव अनेक विषमताओं से घिरा है, उसका जीना मुश्किल हो रहा है; जीवन दूभर होता जा रहा है। जीवन की अनेक उलझनों ने उसे अत्यंत जटिल जाल में फंस लिया है। उसको अनगिनत समस्याओं ने घेरा हुआ है। मानव की व्याकुलता, उलझनों और जिजीविषा को व्यक्त करने के लिए मछली को प्रतीक के रूप में लिया गया है। जहाँ एक ओर कवि सामाजिक जीवन में व्याप्त कुंठा, निराशा, घुटन, बेबसी के गीत गाते हैं, वहीं दूसरी ओर नूतन सौंदर्य की सृष्टि करते हैं। प्रकृति उनके लिए सचेतन

है तभी तो वह सागर को भी चेतन कह देते हैं। कवि ने प्रकृति के साथ तादात्म्य स्थापित किया है। इस कविता में कुरूपता भी सौंदर्य में ढल गई है। प्रकृति उनके लिए प्रेरणा की प्रतीक है। यह कविता आत्मान्वेषण व आत्मानुभूति की कविता है।

बोध प्रश्न

- अज्ञेय की काव्य-भाषा की क्या विशेषताएँ?

14.4 पाठ सार

मानव की जिजीविषा को केंद्र में रखते हुए मछली के द्वारा इस बात की ओर संकेत किया गया है कि मनुष्य जिन विषमताओं और मुश्किलों में जी रहा है यदि उनसे पार पाना हो तो उसे इन उलझनों और समस्याओं से बाहर निकलना होगा। यहाँ एक चित्रकार को संबोधन करते हुए मछली के माध्यम से एक आहत और व्यथित व्यक्ति अपने मन की व्यथा को व्यक्त करते हुए कहता है कि ऐ! चित्रकार मेरे लिए एक चित्र बना दे। उसके पहले सागर को आंकना होगा। इस सागर का विस्तार है। इसका गाढ़ा नीला जल ऊपर से ही हलचलों से भरा दिखाई देता है। जब हवा मंद होकर चलती है तो उसके थपेड़ों से मानो यह सागर आहत हो जाता है और उसकी सैकड़ों तरंगे मानो उसके हृदय के उद्वेलन को व्यक्त करती हैं। सागर में उठने वाली फेनिल लहरों को देखकर ऐसा लगता है मानो वह उसके हृदय की टूटन को व्यक्त करती हैं, किंतु इनमें भी एक सौंदर्य है। वह बड़ी ही चंचल और उत्कृष्ट दिखाई देती हैं, वैसे ही जैसे जीवन होता है। हाँ पहले सागर को आंकना होगा। नीचे अथाह जल है जिसमें अनेक विषमताएँ, दबाव और तनाव हैं, फिर भी सागर इन सबको अपने में समेटे हुए है। इस सागर में गति है, प्रवाह है किंतु फिर भी वह अखंड है और स्थिर है। यही इस सागर की विशेषता है। वह स्वायत्त है चंचल है, उसी प्रकार जैसे जीवन होता है।

चित्रकार पहले सागर की गहराई को आंक ले और फिर जो उछली हुई मछली है, जो अपने लक्ष्य को प्राप्त करना चाहती है, वह ऊपर अधर में है। वहाँ नीलिमा से परिपूर्ण आसमान है। वहाँ भी तरंगित लहरें हैं, हलचल, टूटन है और दबाव है लेकिन वहाँ एक अविकल सूक्ष्मता है। सब आंदोलन स्थिर हैं। समाहित हैं। किंतु यह सारी प्रक्रिया ऊपर अधर में चल रही है। यह उछली हुई मछली हवा का केवल एक बुलबुला पीकर जीवित रहना चाहती है। उसकी मुड़ी हुई देह में जिजीविषा की उत्कट व्याकुलता दिखाई देती है। उसको देख कर ऐसा लगता है मानो

बादलों के बीच में बिजली चमक गई हो और सब कुछ खो गया हो। यह मछली स्वयं को जीवित रखने के लिए प्राणों का एक बुलबुला पी लेना चाहती है। वह उसी नीलिमा में रहना चाहती है जहाँ उसने जन्म लिया है, जहाँ उसने जीवन जिया है। जहाँ वह पली-बढ़ी है वहीं वह जीना चाहती है। यह मछली अकेली है। ऐ! चित्रकार मेरे लिए भी एक चित्र बना दे। मनुष्य भले ही कितनी भी विषमताओं में जीता हो, आकुल-व्याकुल हो, फिर भी मन में व्याप्त जिजीविषा हमेशा उसे जीवन की ओर मोड़ देती है और अनेक विषमताओं में जीते हुए भी वह जीवन में आगे बढ़ने की ललक रखता है। वह सदैव उन्नति की ओर अग्रसर रहता है।

14.5 पाठ की उपलब्धियाँ

अज्ञेय की कविता 'बना दे, चितेरे' के गहन अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. अज्ञेय एक प्रयोगशील रचनाकार हैं।
2. अज्ञेय कलाकार की संवेदनशीलता का सम्मान करते हैं।
3. मानव की जिजीविषा और अस्तित्व के संघर्ष को व्यक्त करने के लिए अज्ञेय ने अछूते प्रतीकों का प्रयोग किया है।
4. अस्तित्ववाद की मान्यताओं के अनुरूप अज्ञेय क्षण की महत्ता का प्रतिपादन करते हैं।
5. अज्ञेय मानव चेतना की यात्रा को ऊर्ध्वगामी मानते हैं जिसमें निरंतर उदात्तता की संभावना बनी रहती है।

14.6 शब्द संपदा

1. अंतहीन = जिसका अंत ना हो/ अनंत
2. अखंड = जिसे खंडित ना किया जा सके
3. अगाध = अथाह
4. अचंचल = चंचल रहित
5. अथाह = थाहहीन
6. अपार = असीम
7. अविकल = पूरा का पूरा
8. असंख्य = अनेकों
9. आँक = आँकना/ बनाना

10. आकुल = व्याकुल
11. आतुरता = व्याकुलता
12. उत्कट = तीव्र
13. उत्कृष्ट = अति उत्तम
14. उदग्र = ऊर्ध्व
15. उदीषा = नई सुबह की पहली किरण
16. उद्वेलित = अशांत/आलोड़ित
17. कौंजाना = चमक जाना
18. चितेरे = चित्रकार
19. जिजीविषा = जीने की इच्छा
20. टांक दे = जड़ देना या लगा देना
21. तडिल्लता = तड़ित रूपी लता
22. तरंगोर्मियाँ = रंग रूपी लहरें
23. थपेड़ों = धक्कों
24. देहवल्ली = देह रूपी लता
25. प्रगाढ़ = गाढ़ा/घना
26. प्रवाह = बहना
27. प्राणाकाश = प्राण रूपी आकाश
28. फलक = आसमान
29. फेनोर्मियों = फेनिल लहरें
30. मुखर = धृष्ट
31. विस्तीर्ण = फैला हुआ
32. समाहित = मिला लेना/ व्यवस्थित कर लेना
33. सूक्ष्मता = सूक्ष्म या बारीकी
34. स्वायत्त = जिस पर अपना अधिकार हो
35. हट = पदचाप

14.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. अज्ञेय की साहित्यिक पृष्ठभूमि का परिचय दीजिए।
2. आधुनिक भाव बोध के कवि के रूप में अज्ञेय की क्या विशेषताएँ हैं?
3. बना दे, चितेरे' कविता का कला सौंदर्य उदाहरण देते हुए स्पष्ट कीजिए।
4. अज्ञेय की काव्य भाषा का परिचय दें।
5. प्रयोगवाद और नई कविता की चर्चा कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. अज्ञेय की कविता में कौन सा भावबोध है?
2. इस कविता का प्रमुख उपजीव्य क्या है?
3. प्रयोगशीलता के प्रति अज्ञेय का दृष्टिकोण दें।
4. अज्ञेय जी के काव्य संग्रहों के नाम लिखिए।
5. कवि के व्यक्तित्व का रूपायन कीजिये।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. 'आंगन के पार' द्वार रचना है – ( )

   (अ) महादेवी (ब) निराला (स) अज्ञेय

2. प्रयोगवाद के प्रवर्तक कवि हैं - ( )

   (अ) अज्ञेय (ब) जयशंकर प्रसाद (स) सुमित्रानंदन पन्त

3. तार सप्तक में कवि हैं – ( )

   (अ) चार (ब) सात (स) पांच

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. सन् साठ के बाद की कविता .... कविता कहलाती है ।

2. प्रयोगवाद के जनक.................. हैं।

3. 'कितनी नावों में कितनी बार' को .... पुरस्कार मिला है।

4. मेरे लिए एक……………..बना दे।

5. 1943 में .... प्रारंभ हुआ।

III. सुमेल कीजिए -

1. असाध्य वीणा	(अ) कसया
2. शेखर-एक जीवनी	(ब) लंबी कविता
3. अज्ञेय का जन्मस्थान	(स) सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन
4. अज्ञेय का पूरा नाम	(द) उपन्यास

14.8 पठनीय पुस्तकें

1. हिंदी साहित्य का इतिहास : सं. नगेंद्र

2. अज्ञेय - कवि और काव्य : राजेंद्र प्रसाद

3. हिंदी साहित्य का अद्यतन इतिहास : सं. मोहन अवस्थी

4. अज्ञेय - कवि कर्म का संकट : कृष्णदत्त पालीवाल

5. अज्ञेय - प्रतिनिधि कविताएँ एवं जीवन परिचय : विद्यानिवास मिश्र

6. अज्ञेय की चिंतन दृष्टि : नंद कुमार राय

7. अज्ञेय - विचार और कविता : राजेंद्र मिश्र

इकाई 15 : हमारा देश : अज्ञेय

रूपरेखा

15.1 प्रस्तावना

15.2 उद्देश्य

15.3 मूल पाठ : हमारा देश : अज्ञेय

15.3.1 अध्येय कविता का सामान्य परिचय

15.3.2 अध्येय कविता

15.3.3 विस्तृत व्याख्या

15.3.4 काव्यगत विशेषताएँ

15.3.5 समीक्षात्मक अध्ययन

15.4 पाठ सार

15.5 पाठ की उपलब्धियाँ

15.6 शब्द संपदा

15.7 परीक्षार्थ प्रश्न

15.8 पठनीय पुस्तकें

15.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियो! हिंदी साहित्य सृजन के ऐतिहासिक पड़ावों पर दृष्टि डालें तो आधुनिककालीन विधाओं में अत्यधिक विविधता देखी जा सकती है। साहित्यिक विविधताओं के अनेक कारण रहे हैं। बीसवीं सदी के आरंभ में नित नए यंत्रों का अविष्कार जहाँ एक ओर मानव का जीवन सरल बना रहा था, तो दूसरी ओर कुछ देशों की विस्तारवादी नीतियों के कारण दो बार हुए विश्व युध्दों ने मानव सभ्यता की प्रगति पर प्रश्नचिन्ह खड़े कर दिए। यद्यपि साहित्य का अर्थ सबका हित होता है तथापि साहित्य में जब-जब परिवर्तन होता है, उसकी राह किसी न किसी साहित्यकार की लेखनी से ही निकलती है। हिंदी साहित्य में बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय का नाम ऐसे ही साहित्य सर्जकों में अंकित है। अज्ञेय का जन्म 7 मार्च, 1911 को उत्तर प्रदेश के कसया नामक गाँव में हुआ। आरंभिक जीवन स्वतंत्रता सेनानियों के साथ क्रान्तिकारी गतिविधियों में देश की आजादी के पथ पर बीता।

आकाशवाणी, देश-विदेश भ्रमण के साथ ही आपने 'सैनिक', 'विशाल भारत', 'दिनमान', 'वाक्', 'नवभारत टाइम्स' आदि पत्र-पत्रिकाओं का कुशलतापूर्वक सम्पादन किया। 'आँगन के पार द्वार' कृति पर आपको साहित्य अकादमी (1964 में) पुरस्कार प्राप्त हुआ। 'कितनी नावों में कितनी बार' कृति पर भारतीय ज्ञानपीठ (1978 में) पुरस्कार से सम्मानित किया गया। इत्यलम, हरी घास पर क्षण भर, बावरा अहेरी, इंद्र धनुष रौंदे हुए ये, अरी ओ करुणा प्रभामय, सागर मुद्रा आदि काव्य संग्रह तथा गद्य विधाओं में विपथगा, जयदोल, शरणार्थी, (कहानी) शेखर एक जीवनी : प्रथम एवं द्वितीय भाग, नदी के द्वीप, अपने-अपने अजनबी (उपन्यास), अरे यायावर रहेगा याद?, एक बूँद सहसा उछली (यात्रा वृत्तान्त), सबरंग, त्रिशंकु, आत्मनेपद, आलवाल (निबंध), स्मृति रेखा (संस्मरण), भवंती, अन्तरा, शाश्वती (डायरियां), उत्तर प्रियदर्शी (नाटक), तारसप्तकों के तीन महत्वपूर्ण काव्य संकलनों का सफल सम्पादन अज्ञेय की साहित्यिक प्रकाण्डता का परिचायक है। हिंदी साहित्य के प्रयोगवादी एवं नई कविता की शृंखला को प्रतिष्ठित करने वाले साहित्यकार अज्ञेय का काव्यसंग्रह 'हरी घास पर क्षण भर' की कविता 'हमारा देश' इसी नई दृष्टि का परिचायक है। 4 अप्रैल 1987 को हिंदी साहित्य का दिनमान का अस्त हो गया अर्थात अज्ञेय का देहावसान हो गया। आत्मलीन कवि, कथाकार, निबंधकार, शैलीकार, सम्पादक एवं अध्यापक के रूप में सदैव नये प्रयोगों को बढ़ावा देने वाले अज्ञेय की कविताओं में भारत दर्शन किया जा सकता है। 'हमारा देश' कविता के माध्यम से कवि ने भारतीय संस्कृति में ग्रामीण एवं आदिवासी जीवन के महत्त्व को रूपायित किया है। जीवन को सुर-ताल में साधने की परंपरा को कवि ने प्रस्तुत कविता में चित्रित किया है। कवि ने शहर के विकास को लोलुपता से आकंठ डूबा हुआ बताया है ।

15.2 उद्देश्य

इस इकाई में आप अज्ञेय की कविता 'हमारा देश' का अध्ययन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन से आप -

- 'हमारा देश' कविता की व्याख्या कर सकेंगे।
- 'हमारा देश' कविता के काव्य सौंदर्य से परिचित हो सकेंगे।
- अज्ञेय की राष्ट्रीय और सांस्कृतिक चेतना से अवगत हो सकेंगे।
- भारतीय आदिवासी संस्कृति की विशेषताओं को समझ सकेंगे।

- शहरी सभ्यता की लोलुपता से परिचित हो सकेंगे।

15.3 मूल पाठ : हमारा देश : अज्ञेय

15.3.1 अध्येय कविता का सामान्य परिचय

अज्ञेय कृत 'हमारा देश' कविता में गाँव की जीवन पध्दति को चित्रित किया गया है। ग्रामीण जीवन शैली के बारे में बताया गया है। भारत की वास्तविक छबि गांवों में ही देखी जा सकती है। जीवन में प्रकृति के साथ सुर-ताल मिलाकर जीने की कला के कारण ही ग्रामीण परिवेश में सदैव उल्लास छाया रहता है। कवि ने आरंभिक दो काव्यबन्दों में ग्रामीण जीवन को रूपायित किया है तथा अंतिम तीन काव्यबन्दों में कवि ने शहरी विकास की लोलुप दृष्टि का मर्मस्पर्शी चित्रण किया है। आदिवासी संस्कृति एवं शहरी सभ्यता के द्वंद्वात्मक चित्र को पाठक बड़ी सूक्ष्मता के साथ समझ सकेंगे। जीवन के उमगते सुर को समझकर ही मानव जीवन के सार को समझ सकते हैं। भारत देश को कवि द्वारा 'हमारा देश' कहकर यह बताने का प्रयत्न किया गया है कि भारत की विविधरंगी संस्कृति की छटा निराली है। भारत के हर राज्य की अलग-अलग संस्कृतियों की बहुरंगी छटा को 'मेरा देश' कहकर नहीं अपितु 'हमारा देश' कहकर कवि ने सम्बोधित किया है। भारत की स्वतंत्रता के बाद तेजी से शहरी सभ्यता का विकास हुआ, जिसमें भारत के मूल स्वरूप को गहन चोट पहुंची। प्रस्तुत कविता को अज्ञेय ने झारखंड के आदिवासी जीवन की प्रेरणा से अभिभूत होकर लिखा था। कवि को आदिवासी जीवन की सरलता ने उनकी उस राज्य से गुजरते हुए इतना आंदोलित किया कि वे संभवतः अपनी बस यात्रा के दौरान ही अपने सर्जनशील मन को रोक न सकें और प्रस्तुत कविता का प्रणयन किया।

15.3.2 अध्येय कविता : हमारा देश

इन्हीं तृण-फूस-छप्पर से
ढंके ढुलमुल गँवारू
झोपड़ों में ही हमारा देश बसता है
इन्हीं के ढोल-मादल-बांसुरी के
उमगते सुर में
हमारी साधना का रस बरसता है।
इन्हीं के मर्म को अनजान

शहरों की ढँकी लोलुप
विषैली वासना का साँप डँसता है।
इन्हीं में लहरती अल्हड
अयानी संस्कृति की दुर्दशा पर
सभ्यता का भूत हँसता है।

निर्देश : 1. इस कविता का सस्वर वाचन कीजिए।
2. इस कविता का मौन वाचन कीजिए।

15.3.3 विस्तृत व्याख्या

इन्हीं तृण-फूस-छप्पर से
ढंके ढुलमुल गँवारू
झोपड़ों में ही हमारा देश बसता है
इन्हीं के ढोल-मादल-बांसुरी के
उमगते सुर में
हमारी साधना का रस बरसता है।
इन्हीं के मर्म को अनजान
शहरों की ढँकी लोलुप
विषैली वासना का सांप डंसता है ।
इन्हीं में लहरती अल्हड
अयानी संस्कृति की दुर्दशा पर
सभ्यता का भूत हँसता है।

शब्दार्थ : तृण = तिनका, घास। फूस = सूखी घास। छप्पर = पर्णकुटी। बांस-फूस तथा घास से बनी झोंपड़ी। ढुलमुल = ढीला, शिथिल। गंवारू = गाँव के लोग। मादल = एक प्रकार का बाजा। उमगते = उत्साहित होना। साधना = ध्यान करना, एकांतवास। मर्म = भेद, रहस्य, तत्व। लोलुप = लालची, लोभी। वासना = इच्छा, कामना, इच्छा। अल्हड़ = दुनियादारी से दूर, भोला, मनमौजी। अयानी = अज्ञानी, नासमझ। दुर्दशा = दुर्गति, दुरावस्था।

संदर्भ : प्रस्तुत कविता 'हमारा देश' का प्रणयन हिंदी साहित्य के प्रयोगवादी कवि सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय द्वारा किया गया है। यह कविता उनके 'हरी घास पर क्षण भर' नामक

काव्य संग्रह में संकलित है। हिंदी साहित्य में नई काव्य दृष्टि के साथ नई कविता धारा के प्रतिष्ठापक अज्ञेय को माना जाता है। देश की स्वतंत्रता के बाद भारतीय जनमानस की विकास दृष्टि को संवारने का कार्य तद् युगीन साहित्यकारों ने बड़े ही मनोयोग से किया है। इस कविता में कवि ने ग्रामीण एवं शहरी जीवन के कुछ विशेष तथ्यात्मक चित्र को प्रस्तुत करते हुए सभ्यता एवं संस्कृति के व्यापक संदर्भ का संवेदनात्मक अंकन किया है। भारतीय अध्यात्म की संस्कृति को विकास के भौतिकतावादी सभ्यता के समक्ष कवि ने उत्तम माना है।

प्रसंग : सचिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय ने 'हमारा देश' कविता की रचना भारत देश की आज़ादी के दो वर्ष के उपरान्त की थी। उन्होंने अपनी झारखण्ड की बस यात्रा के समय वहाँ की ग्रामीण एवं आदिवासी संस्कृति की सरलता से प्रभावित होकर इस कविता का प्रणयन किया था। शहरी सभ्यता के विकास हेतु अनगिनत ग्रामीण संस्कृतियों की चढ़ती बलि देखकर कवि का मन बरबस ही ग्रामीण संस्कृति की सरलता हेतु लालायित हो उठा। इसीलिए कवि ने 'मेरा देश' शब्द का प्रयोग न करते हुए 'हमारा देश' शब्द का प्रयोग किया है। ग्रामीण संस्कृति की सरलता में जीवन के सुर-ताल का मधुर सामंजस्य देख कर कवि का मन मुदित हो उठता है, जिसे वे इस कविता के माध्यम से व्यक्त करते हैं ।

व्याख्या : विश्व भर में भारत देश 'सोने की चिड़िया' के नाम से अभिहित किया जाता था। किंतु दुर्भाग्यवश भारत के इसी वैभवशील संस्कृति से आकृष्ट होकर कभी किसी देश ने उसे लूटा तो किसी ने आधिपत्य जमाकर शासन किया। भारत की सांस्कृतिक सामंजस्यता ने उसे ज्ञान एवं आध्यात्मिकता की पराकाष्ठा तक पहुँचाया, जिससे आकृष्ट होकर धरती के अलग-अलग देशों के लोगों ने भारत में प्रवेश किया, कोई ज्ञान प्राप्त करने भारत में आया तो कोई व्यापार करने, कोई-कोई आध्यात्म, दर्शन सीखने तो कोई शासन करने के लिए। भारतीय कृषक संस्कृति में सादगी का जीवन दर्शन व्याप्त होता है। घास-फूस के, मिटटी के घरों में प्रकृति के साथ तालमेल रखते हुए ग्रामीण जन सुखपूर्वक रहते हैं। जबकि शहरी संस्कृति के चकाचौंध में मानव जीवन दृष्टि धूमिल होती जा रही है। यही कारण है कि ग्रामीण की जीवन दृष्टि उदार होती है जबकि शहरी संस्कृति प्रायः स्वयंकेंद्रित होती है।

बोध प्रश्न

- विश्व में भारत देश को किस नाम से अभिहित किया जाता है?
- भारत देश को ज्ञान की पराकाष्ठा तक किसने पहुँचाया?

- भारतीय कृषक संस्कृति में कौन सी जीवन दृष्टि व्याप्त है?

कवि ने साधना शब्द के द्वारा देश में खुशहाली के रसधार की कल्पना की है। साधना मात्र योग साधना ही नहीं होती है, जो साधक द्वारा अपने एकांतवास में साधा जाता हो। कवि भारत की आज़ादी के बाद के चहुँमुखी विकास के लिए सभी देशवासियों से साधक दृष्टि के साथ आगे बढ़ने की परिकल्पना करते हैं। देश के लोगों का जीवन इतना उन्नत हो कि स्वतः ही मनतरंगवत हो उठे, क्योंकि जीवन में जब खुशहाली होती है तो मानव स्वतः ही गायन करने लगता है। ग्रामीणजनों के जीवन में महत्वाकांक्षाओं का अम्बार नहीं होता है, अतः सादा जीवन उच्च विचार को धारण करते हुए वे जीवन साधना का आनंदमय होकर आस्वादन करते हैं। वे अपने आनंद को ढोल, मादल, बांसुरी जैसे विविध वाद्ययंत्र के माध्यम से अभिव्यक्त करते हैं।

बोध प्रश्न

- कवि ने साधना शब्द के द्वारा किस रसधार की परिकल्पना की है?
- देश के चहुंमुखी विकास हेतु किस दृष्टि की आवश्यकता है?
- ग्रामीणजनों के जीवन में किसका अम्बार नहीं होता है?
- ग्रामीण अपने आनंद को किन वाद्ययंत्रों के माध्यम से व्यक्त करते हैं?

शहरी सभ्यता ग्रामीण जीवन के मर्म को समझने में असमर्थ है। उन्हें ग्रामीण जीवन व्यर्थ प्रतीत होता है। ग्रामीणों के जीवन पर शहरी संस्कृति अपना प्रबल छाप जमाते हुए उन्हें भी शहरी जीवन के रंग में रंग देना चाहता है। जीवन की साधना प्राणिमात्र की खुशहाली में ही मुखर होती है। शहरी भौतिकतावादी दृष्टि दिखावे में ही समाप्त हो जाती है। किंतु कवि यहाँ यह कहना चाहते हैं कि जीवन का मर्म आत्मशांति की साधना में व्याप्त होती है न कि भौतिक सुख-सम्पन्नता में। शहरी लिप्सा, लालच को कवि ने वासनायुक्त एवं विषैली कहा है। क्योंकि अधिक से अधिक भौतिक सुख-सुविधाओं की चाहत में शहरी सभ्यता अपने ही आस-पास के वातावरण को दूषित करता जा रहा है। कवि शहरी सभ्यता के इस लोलुप दृष्टिकोण के गाँव तक पहुँचने को विकास नहीं अपितु विनाश का प्रतीक मानते हैं। ग्रामीण जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं के पूरा न होने का कारण कवि ने शहरी सभ्यता को बताया है। अज्ञेय की यह कविता भारत की आज़ादी के दो वर्ष पश्चात् की है जो अब विकराल रूप धारण कर चुकी है। देश के विकास के नाम पर शहरों द्वारा आए दिन ग्रामीण संस्कृति को डंसा गया है। यदि यह कहा जाय कि ग्रामीण संस्कृतियों को लीलकर शहरी सभ्यता पनपी है, तो इसमें कोई अतिशयोक्ति वाली बात न

होगी।

बोध प्रश्न

- शहरी सभ्यता ग्रामीणों के जीवन का क्या समझने में असमर्थ है?
- ग्रामीण संस्कृति पर किसकी छाप पड़ रही है?
- कवि शहरी सभ्यता के किस दृष्टिकोण को विनाश का प्रतीक मानते हैं?

कवि का हृदय भारतीय जीवन मूल्य से आकंठ आवेष्टित है। यही कारण है कि कवि ने संस्कृति और सभ्यता को सदैव केंद्र में रखा है। वे कहते हैं आदिवासी, ग्रामीण संस्कृति की नैसर्गिकता के समक्ष विकास के सोपान धुंधले प्रतीत होते हैं। ग्रामीण जीवन की सरलता, सहजता के समक्ष शहरी जीवन का बनावटीपन, क्लिष्टता, जटिलता अपने विषैलेपन को सर्वत्र प्रसारित करता जा रहा है । कवि ने अपनी इसी मनःवेदना को 'सांप' नामक कविता में भी प्रकट किया है। जियो और जीने दो की जगह शहरी सभ्यता गाँव को लीलती जा रही है। ग्रामीण जीवन की अल्हड़ता, उत्साह, सरलता को लील कर जिस सभ्यता का उदय होता है तो मिटी हुई सभ्यता, जिनका अस्तित्व समाप्त हो गया है, उनका भूत हँसता है। शहरी जीवन यापन की विकासधारा को कवि ने सभ्यता की संज्ञा दी है, जबकि ग्रामीण जीवन के सहज पड़ाव को संस्कृति की गरिमा से युक्त बताया है। सभ्यता के अंतर्गत विविध संस्कृतियों का सम्मिलन होता है। सृष्टि की विकास यात्रा ने अब तक क्या-क्या प्राप्त किए हैं, यह श्रेष्ठता की भावना सभ्यता को परिभाषित करता है जबकि स्वयं को जानने की प्रक्रिया संस्कृति का मूल तत्व होता है। कवि ने भारतीय संस्कृति को समझने के लिए सभ्यतावादी वाह्यदृष्टि की नहीं वरन संस्कृतिवादी आतंरिक दृष्टि को आवश्यक माना है। हमारे देश के बहुरंगी संस्कृति को समझने के लिए हमें विविध संस्कृतियों को अति निकटता से समझना होगा।

बोध प्रश्न

- कवि ने सदैव अपनी कविता में किसे केंद्र में रखा है?
- जियो और जीने दो की सभ्यता को कौन लील रहा है?
- श्रेष्ठता की भावना किसके द्वारा परिभाषित होता है?

15.3.4 काव्यगत विशेषताएँ : प्रयोगवादी एवं नई कविता की विशेषताओं के साथ अज्ञेय अपनी कृतियों में नवीन भारत की परिकल्पना लिए हुए सर्जनारत होते हैं। अज्ञेय की कविताओं में वैयक्तिकता की प्रतिष्ठापना के साथ ही समग्रता का भी आदर पर्याप्त देखा जा सकता है। वे नए

भारत को उसकी पुरातनता की विशेषताओं के साथ ही अपनाने की प्रेरणा दी गयी है। विकास की अवधारणाओं में अमूल्य तत्वों को साथ ही लेने की बात करते हुए वे 'हमारा देश' कविता का सर्जन करते हैं। अज्ञेय भी भाषा सहज, सुष्ठु होने के साथ ही प्रगल्भता से परिपूर्ण है। वे भौतिकता की अति का सदैव ही विरोध करते हैं। उनकी कविताओं में समाज का यथार्थ चित्रण होने के साथ ही बौद्धिकता का प्राचुर्य भी देखा जा सकता है। उनकी कविताओं में उनकी जीवन की तरह ही विविधता एवं नये प्रयोग देखे जा सकते है।

अज्ञेय की कविताएँ 'नई कविता' के उस आत्मसंघर्ष का उदाहरण हैं जिसकी जड़ में रोमानियत से मुक्त होकर यथार्थ को स्वीकार करने का आग्रह विद्यमान है। प्रो. देवराज के अनुसार -

> "जिस आधार पर सही बात को पहचानने और अभिव्यक्त करने को यथार्थवादी काव्य का लक्षण माना जा सकता है, उस अर्थ में उन (अज्ञेय) की कविता में यथार्थवादी मूल्य उपलब्ध हैं। यथार्थवाद की जो उनकी अपनी मान्यता है उसमें किसी पूर्व निश्चित अवधारणा के लिए कोई स्थान नहीं है।" (नई कविता की परख, पृ. 146)

दीर्घ काल तक स्वतंत्रता सेनानियों के लिए बम बनाने के कार्य करते समय देश की आज़ादी का स्वप्न देखने के साथ ही शांति पथ का अन्वेषक कवि अज्ञेय 'हमारा देश' में विचलित हो उठता है जब विकास के नाम पर आज़ाद भारत की आत्मा शहरी सभ्यता में चोटिल होने लगती है। व्यक्तिवादिता, अस्तित्ववादिता में मानवता का सहज प्रस्फुटन अज्ञेय की कविताओं की विशेष पहचान है। अज्ञेय की कविताओं में प्राकृतिक उपमानों को नई अभिव्यक्ति के साथ प्रस्तुत किया गया है। भारत एवं भारतीयता को वे अपनी कृतियों में तो वे प्रस्तुत करते ही थे साथ ही वे जिस देश में जाते थे, वहाँ भी भारतीय दृष्टि का प्रचार-प्रसार करते थे। नदी, समुद्र, द्वीप, पशु, पक्षी, जीव तथा प्राणी के उपमानों को कविता में प्रस्तुत करते हुए समकालीन अस्वीकार के भी शिकार भी हुए। देश के विकास हेतु औद्योगिक व्यामोह में आदिवासी एवं प्राचीन भारतीय स्वनिर्भर ग्रामीण समाज व्यवस्था के उच्छेदन को वे सिरे से अस्वीकार करते थे। लोकगीत, लोकसंस्कृति को वे सदैव सर्वोपरि स्थान देते थे। 'हमारा देश' कविता में कवि की इन्हीं विशेषताओं के दर्शन किया जा सकते हैं। वर्तमान परिवेश में कवि की उक्त कविता की प्रासंगिकता यथावत है। महाविनाश के क्षणों में ग्रामीणों के पलायन को देख कर भी कवि के

काव्य भाव को अनुभूत किया जा सकता है।

15.3.5 समीक्षात्मक अध्ययन

भारत के ग्रामीण जीवन की सहजता को प्रस्तुत करने में कवि अज्ञेय का नाम अनुपमेय है। 'हमारा देश' कविता उनके 'हरी घास पर क्षण भर' नामक काव्य संग्रह में संकलित है। जब तक भारत देश अंग्रेजों द्वारा शासित था, तब तक भारत के जन-जन का एक ही स्वप्न होता था कि किस प्रकार देश को आज़ादी मिले। जब देश आजाद हुआ तो एक ऐसे मानसिक गुलामी से जकड़ता चला गया, जिससे भारतीय आज भी आजाद नहीं हो पाए हैं। देश के विकास के नाम पर एक ऐसी सभ्यता का विकास होने लगा, जिसका भारतीय संस्कृति से कहीं भी मेल नहीं होता है। यही कारण है कि भारतीय संस्कृति में व्याप्त मानवता के पुरातन स्वरूप को पुनः स्थापित करने की कामना लिए हुए कवि अज्ञेय जैसे साहित्यकार सर्जनारत होकर जन मन को जगाने का प्रयत्न करते हैं। जीवन में आत्मशांति का बहुत अधिक महत्त्व होता है। इसी सुख की खोज में बुध्द ने बुध्दत्व की राह पकड़ी थी। कवि अज्ञेय की मनःवेदना भी इसी आत्मशांति की ओर पाठकों को प्रेरित करती है। जब मन में सुख शांति का सागर उमड़ता है तो मस्तिष्क स्वतः ही स्वर संधान करने लगता है। कवि ने 'हमारा देश' को 'मेरा देश' इसीलिए नहीं कहा, क्योंकि स्वतन्त्र भारत में व्यक्तित्व विकास की पुरातनता की कामना के साथ ही विकास पथ पर चलने की प्रेरणा कवि द्वारा दी गयी है। कवि के कहने का यह अर्थ नहीं कि नवीनता को न अपनाया जाय, बल्कि वे तो प्रत्येक पुरातन को नई दृष्टि से अपनाने के पक्षधर थे, जो मानवता को उन्मुक्त गगनोंमुख बना सके। भारतीय संस्कृति की विश्व कल्याणकारी दृष्टि को कवि अपने विश्व पर्यटन में भी साथ लेकर चलते थे। कवि की मान्यता थी कि विकास अपनी संस्कृतियों के साथ आगे बढ़ने में ही है। वे भारत देश की विविधता में एकता की संस्कृति को सबसे उत्तम समझकर विकास पथ पर बढ़ने का आग्रह करते हैं। 'हमारा देश' कविता कवि के उन्हीं भावों का प्रतिफलन है।

अज्ञेय की काव्यदृष्टि के संदर्भ में विद्वानों के विचार

आधुनिक हिंदी साहित्य में बौध्दिक परंपरा की शुरूआत करने वाले कवि सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय को माना जाता है। अज्ञेय ने आधुनिकता के साथ ही उनके सामाजिक दायित्व, काव्य शिल्प, छंद को मौलिक स्वरूप प्रदान किया है। कृष्णदत्त पालीवाल ने अज्ञेय को विविध विचारधाराओं से मुक्त नवीन दृष्टि का प्रतिष्ठापक कहा है। विविध विद्वान् उन्हें

रचनाकर्म में विचारधाराओं के अतिक्रमणकारी के रूप में चित्रित करते हैं। उनकी दृष्टि में सत्य का संधान स्वाधीन दृष्टि से ही संभव है। प्रतीक, नया प्रतीक, वाक् आदि पत्रिकाओं के माध्यम से उन्होंने कई नए साहित्यकारों का मार्ग प्रशस्त किया। तारसप्तक के द्वारा नव्यतम काव्यदृष्टि को हिंदी साहित्य की ओर ले आने में इनका महत्वपूर्ण स्थान है। विद्वानों के अनुसार अज्ञेय की आरंभिक कृतियों में व्यक्तिवादिता अधिक देखी जा सकती है। आगे चलकर प्राकृतिक, सांस्कृतिक, मानवतावादी दृष्टि का प्राचुर्य रहा। अज्ञेय की भाषा कई बार व्याकरण की परिधि को लांघ कर भावोंमुखी हो उठती है। समग्रतः विद्वानों के विचार में अज्ञेय कला एवं भाव दोनों ही स्तरों पर प्रयोग करते हुए अपनी सर्जना में नव्यता को समाविष्ट करने वाले कवि हैं।

15.4 पाठ सार

कवि अज्ञेय अपनी कृतियों में भारत एवं भारतीयता को सांस्कृतिक चेतना के साथ जोड़ कर प्रस्तुत किया है। वे जिस देश में जाते थे, वहाँ भी भारतीय दृष्टि का प्रचार-प्रसार करते थे। देश के विकास की अंधाधुंध औद्योगिक दौड़ में पड़ कर आदिवासी एवं प्राचीन भारतीय स्वनिर्भर ग्रामीण समाज व्यवस्था के उच्छेदन को वे सिरे से अस्वीकार करते थे। लोकगीत, लोकसंस्कृति को वे सदैव सर्वोपरि स्थान देते थे।'हमारा देश' शीर्षक कविता में उन्होने दर्शाया है कि भारत की सांस्कृतिक सामंजस्यता ने उसे ज्ञान एवं आध्यात्मिकता की उंचाई तक पहुँचाया, जिस पर मुग्ध होकर धरती के अलग-अलग देशों के लोगों ने भारत में प्रवेश किया। दुनिया भर से कोई ज्ञान प्राप्त करने भारत में आया तो कोई व्यापार करने, कोई-कोई आध्यात्म, दर्शन सीखने तो कोई शासन करने के लिए।

भारतीय कृषक संस्कृति में सादगी का जीवन दर्शन सदैव व्याप्त रहा है। घास-फूस के, मिटटी के घरों में प्रकृति के साथ तालमेल रखते हुए ग्रामीण जन आनंद पूर्वक रहते हैं। जबकि शहरी संस्कृति के चकाचौंध में मानव जीवन दृष्टि धूमिल होती जा रही है। कवि ने साधना शब्द के द्वारा देश में खुशहाली की कल्पना की है। साधना मात्र योग साधना ही नहीं होती है, जो साधक द्वारा अपने एकांतवास में साधा जाता हो। कवि भारत की आज़ादी के बाद के तीव्रगामी विकास के लिए सभी देशवासियों से साधक दृष्टि के साथ आगे बढ़ने की परिकल्पना करते हैं। 'जियो और जीने दो' की जगह शहरी सभ्यता गाँव को लीलती जा रही है।

ग्रामीण जीवन की अल्हड़ता, उत्साह, सरलता को लील कर जब शहरी सभ्यता का उदय

होता है तो मिटी हुई संस्कृति, जिनका अस्तित्व समाप्त हो गया है, उनका भूत हँसता है। शहरी जीवन यापन की विकासधारा को कवि ने सभ्यता की संज्ञा दी है, जबकि ग्रामीण जीवन के सहज पड़ाव को संस्कृति की गरिमा से युक्त बताया है। अंततः कवि ने 'हमारा देश' कविता के माध्यम से भारतीय संस्कृति की आध्यात्मिकता, आत्मिक शांति की भावना को प्रमुखता से स्थापित करने का प्रयास किया है। सभ्यता का भूत सरलता को न निगले इसी प्रयास में वे सदैव अग्रसर रहें।

15.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. अज्ञेय भारतीय समाज और संस्कृति के प्रति अत्यंत संवेदनशील रचनाकार हैं।
2. अज्ञेय ने बहुत पहले यह समझ लिया था कि असमान विकास प्रकृति और संस्कृति दोनों का विनाश करता है।
3. अज्ञेय का विश्वास था कि भारतीय संस्कृति का अपनापन ग्राम्य जीवन और लोक संस्कृति में निखरता है।
4. शहरी सभ्यता किस प्रकार भोले-भाले ग्रामीण और आदिवासी समाज का शोषण करता है, अज्ञेय की कविता 'हमारा देश' इस विडंबना को भली प्रकार उभारती है।

15.6 शब्द संपदा

1. अभिभूत = भाव विभोर
2. अभिहित = कहा गया
3. अल्हड़ = बाधारहित
4. आकंठ = गले तक
5. आधिपत्य = स्वामित्व
6. आवेष्टित = घिरा हुआ
7. नैसर्गिक = प्राकृतिक
8. परिधि = वृत्त रेखा
9. परिपक्व = अनुभवी
10. प्रगल्भता = होशियार

11. प्रणयन = साहित्यिक सर्जना

12. प्रशस्त = विस्तृत करना

13. प्रस्फुटन = व्यक्त होना

14. प्राचुर्य = आधिक्य

15. बरबस = बलपूर्वक

16. बहुआयामी = अनेक स्तरों वाला

17. रूपायित = रूप दिया गया

18. वाद्ययंत्र = बाजा

19. विधाओं = किस्म

20. व्यापक = फैला हुआ

21. शृंखला = क्रम

22. संधान = निशाना बैठाना

23. सामंजस्य = अनुकूलता

24. सुष्ठु = अच्छी तरह

25. सृजन = रचना

15.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. अज्ञेय की काव्यदृष्टि का परिचय दीजिए।

2. 'हमारा देश' कविता का भावपक्ष अपने शब्दों में चित्रित कीजिए।

3. विकास के पथ पर संस्कृतियों का संरक्षण कैसे किया जा सकता है?

4. प्रयोगवादी, नई कविता की विशेषता को अज्ञेय की कविता के माध्यम से बताइए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. अज्ञेय 'झोपड़ों में ही हमारा देश बसता है' क्यों कहते हैं?
2. कवि के अनुसार वासना का सांप किसको डँसता है?
3. अज्ञेय शहरी सभ्यता को किसका मर्म समझने के लिए कहते हैं?
4. हमारा देश कविता की प्रासंगिकता का उल्लेख कीजिए?

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. अज्ञेय का जन्म किस स्थान पर हुआ था? ( )

   (अ) कसया (आ) कानपुर (इ) मेरठ

2. 'जयदोल' किसकी रचना है? ( )

   (अ) अज्ञेय (आ) विष्णु प्रभाकर (इ) दिनकर

3. अज्ञेय को साहित्य अकादमी से किस सन् में सम्मानित किया गया? ( )

   (अ) 1972 (आ) 1964 (इ) 1953

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. 'आँगन के पार द्वार' कृति पर अज्ञेय को…………… पुरस्कार प्राप्त हुआ।
2. 'कितनी नावों में कितनी बार' कृति पर अज्ञेय को ……… सम्मान प्राप्त हुआ।
3. 'वाक्' पत्रिका के संपादक ……………. है।
4. हमारा देश……………. में बसता है।
5. शहरों की सभ्यता…………… होती है।

III. सुमेल कीजिए -

1. हमारा देश	(अ) यात्रा वृत्तांत
2. एक बूँद सहसा उछली	(आ) हरी घास पर क्षण भर
3. आत्मनेपद	(इ) उपन्यास
4. शेखर : एक जीवनी	(ई) निबंध

15.8 पठनीय पुस्तकें

1. आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ : नामवर सिंह

2. अज्ञेय कवि और काव्य : राजेंद्र प्रसाद

3. तार सप्तक : अज्ञेय

4. अज्ञेय और उनकी काव्य चेतना : कृष्ण भावुक

5. आधुनिक साहित्य : नंददुलारे बाजपेयी

6. नई कविता की परख : देवराज

इकाई 16 : मैं वहाँ हूँ : 'अज्ञेय'

रूपरेखा

16.1 प्रस्तावना

16.2 उद्देश्य

16.3 मूल पाठ : मैं वहाँ हूँ : अज्ञेय

16.3.1 अध्येय कविता का सामान्य परिचय

16.3.2 अध्येय कविता

16.3.3 विस्तृत व्याख्या

16.3.4 काव्यगत विशेषताएँ

16.3.5 समीक्षात्मक अध्ययन

16.4 पाठ सार

16.5 पाठ की उपलब्धियाँ

16.6 शब्द संपदा

16.7 परीक्षार्थ प्रश्न

16.8 पठनीय पुस्तकें

16.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियो! हिंदी साहित्य की आधुनिककालीन विधाओं में पर्याप्त विविधता देखी जा सकती है। साहित्यिक विविधताओं के अनेक कारण रहे हैं। बीसवीं सदी के आरम्भ में नित नए यंत्रों के अविष्कार ने जहाँ एक ओर मानव का जीवन सरल बनाया, वहीं दूसरी ओर कुछ देशों की साम्राज्यवादी नीतियों के कारण दो बार हुए विश्व युद्धों ने मानव सभ्यता की प्रगति को शतकों पीछे ढकेल दिया। साहित्य का सर्जन सबके हित हेतु होता है। मानव समाज में जब-जब परिवर्तन होता है) उसका मार्ग किसी न किसी साहित्यकार की लेखनी से ही प्रशस्त होता है। हिंदी साहित्य में विविधमुखी प्रतिभा के धनी सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' का नाम ऐसे ही साहित्य सर्जकों में अंकित है। अज्ञेय का जन्म 7 मार्च, 1911 को उत्तर प्रदेश के कसया नामक गाँव में हुआ। आरंभिक जीवन स्वतंत्रता सेनानियों के साथ क्रांतिकारी गतिविधियों में देश की आजादी की राह में व्यतीत हुआ। अज्ञेय के पिता पंडित हीरानंद शास्त्री पुरातत्ववेत्ता थे,

जिससे उनकी आरंभिक शिक्षा घर पर ही हुई। अज्ञेय ने जीवन यापन हेतु आगे चल कर आकाशवाणी में नौकरी की। द्वितीय महायुद्ध के बाद देश-विदेश भ्रमण के साथ ही उन्होंने भारत ही नहीं अपितु विश्व में भी भारतीय भाष, संस्कृति की प्रतिष्ठा बढ़ाई। अज्ञेय ने सैनिक, विशाल भारत, दिनमान, वाक्, नवभारत टाइम्स आदि पत्र-पत्रिकाओं का कुशलतापूर्वक सम्पादन किया। 'आँगन के पार द्वार' कृति पर आपको साहित्य अकादमी (1964 में) पुरस्कार प्राप्त हुआ। 'कितनी नावों में कितनी बार' कृति पर भारतीय ज्ञानपीठ (1978 में) पुरस्कार से सम्मानित किया गया। इत्यलम, हरी घास पर क्षण भर, बावरा अहेरी, इंद्र धनुष रौंदे हुए ये, अरी ओ करुणा प्रभामय, सागर मुद्रा आदि काव्य संग्रह तथा गद्य विधाओं में विपथगा, जयदोल, शरणार्थी, (कहानी) शेखर एक जीवनी : प्रथम एवं द्वितीय भाग, नदी के द्वीप, अपने-अपने अजनबी (उपन्यास), अरे यायावर रहेगा याद?, एक बूँद सहसा उछली (यात्रा वृत्तान्त), सबरंग, त्रिशंकु, आत्मनेपद, आलवाल (निबंध), स्मृति रेखा (संस्मरण), भवंती, अन्तरा, शाश्वती (डायरियां), उत्तर प्रियदर्शी (नाटक) तथा तारसप्तकों के तीन महत्वपूर्ण काव्य संकलनों का सफल संपादन अज्ञेय की साहित्यिक निष्णातता का परिचायक है। हिंदी साहित्य के प्रयोगवादी एवं नई कविता की शृंखला को प्रतिष्ठित करने वाले साहित्यकार अज्ञेय का 4 अप्रैल 1987 को देहावसान हो गया। देशभक्त, स्वतंत्रता सेनानी, क्रान्तिकारी विचारयुक्त, आत्मलीन कवि, कथाकार, निबंधकार, शैलीकार, संपादक, पत्रकार एवं अध्यापक के रूप में सदैव नए प्रयोगों को बढ़ावा देने वाले अज्ञेय की कविताओं में भारत के आम जन-जीवन का दर्शन किया जा सकता है। 'मैं वहाँ हूँ' (इंद्रधनुष रौंदे हुए ये) कविता के माध्यम से कवि ने भारत की संस्कृति एवं सभ्यता के सर्जकों की श्रमशीलता को चित्रित किया है। द्वितीय विश्व युध्द के बाद समस्त विश्व में अलग-अलग विचारों के साथ दुनिया आगे बढ़ रही थी, जिनमें मार्क्सवादी विचारों की ओर समस्त विश्व अधिक झुका हुआ था। हिंदी साहित्य में यह समय साहित्य में नए-नए प्रयोगों का काल था। ऐसी ही नई दृष्टि एवं प्रयोगों के साथ अज्ञेय ने प्रस्तुत कविता का प्रणयन किया है।

16.2 उद्देश्य

इस इकाई के अंतर्गत आप अज्ञेय की कविता 'मैं वहाँ हूँ' का अध्ययन करेंगे। प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आप -

1. 'मैं वहाँ हूँ' की व्याख्या कर सकेंगे।

2. इस कविता के काव्यागत सौंदर्य से परिचित हो सकेंगे।
3. प्रयोगवाद एवं नई कविता की विचारधारा से परिचित हो सकेंगे।
4. अज्ञेय की सर्जनात्मक विशेषताओं की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
5. भारतीय श्रमजीवी संस्कृति की विशेषताओं को जान पाएँगे।

16.3 मूल पाठ : मैं वहाँ हूँ : अज्ञेय

16.3.1 अध्येय कविता का सामान्य परिचय

अज्ञेय की कविता 'मैं वहाँ हूँ' उनके काव्य संग्रह 'इंद्र धनुष रौंदे हुए ये' से उध्दृत है। द्वितीय विश्व युध्द की विभीषिका से समस्त विश्व त्राहि-त्राहि कर रहा था। ऐसे में सृष्टि की परिवर्तनशीलता को अपने लेखन कर्म में समाहित करते हुए साहित्यकार सर्जनरत हो रहे थे। उत्तर छायावादी विद्रोही कवियों में अज्ञेय अग्रणी कवि हैं। कवि के संकोची स्वभाव में तद्युगीन समाज, राजनीति, धर्म, दर्शन, साहित्य, नैतिक मूल्यबोध, कर्म की सराहना का भावबोध प्रायः ही दृष्टिगत हुआ है। उनका अंतर्मुखी मन समाज में शांति के सामंजस्य का दूत बनकर उनकी सर्जनाओं में व्यक्त होता रहा है। आधुनिकता को अपनाने के साथ ही वे अपने देश के चिरंतन मानवीय मूल्यों को साथ लेकर चलने की प्रेरणा भी देते हैं। 'मैं वहाँ हूँ' अज्ञेय के करुण भावों की कसमसाहट युक्त कविता है। इसमें नगरीय सभ्यता की मार्मिक वेदना की प्रस्तुति करते हुए कवि अपने आक्रोश को व्यक्त करते हैं। समाज में व्याप्त असमानता को उद्घाटित करते हुए वे शोषण का प्रबल विरोध करते हैं। समाज के श्रमशील व्यक्तियों के श्रम को पूजनीय मानते हुए कवि ने मानव सत्य का उद्घाटन किया है। वर्गबद्ध समाज में कवि की संवेदना पूर्ण रूप से शोषितों के साथ है। इस कविता में कवि ने शोषक वर्ग पर अपनी तिलमिलाहट को प्रकट किया है। समाज में व्याप्त आर्थिक असमानता के फलस्वरूप उत्पन्न वर्ग भेद को वे सर्वथा अनुचित मानते हैं। शोषित वर्ग को अपनी कविता में प्रतिष्ठापित करते हुए कवि ने मेहनत करने वालों के साथ स्वयं को पाया है। कवि का मानवतावादी दृष्टिकोण कचरा ढोने वाले तथा कचरे के ढेर पर सोने वाले, गधा हाँकने वाले, कीचड़ उलीचने वाली, शृंगार के सामान बेचने वाले के साथ गहरे जुड़ा हुआ है। वे दूसरों के कपड़े साफ़ करने वाली, रद्दी बटोरने वाले, पापड़ बेलने वाले, बीड़ी बनाने वाले, वर्क कूटने वाले के प्रति आर्द्र होते हुए कहते हैं कि लोहे के औजार बनाने वाले, बर्तन तथा सामानों पर कलई चढाने वाले, रेढ़ी ढकेलने वाले, चौक साफ़ करने वाले, दूसरों के घरों के बर्तन

धुलने वाले, ईंटे बनाने वाले, रूई धुनने वाले, गारा सानने वाले, खटिया बुनने वाले जहाँ हैं, मैं वहाँ हूँ। वे कहते हैं कि दूसरे के लिए रास्ते पर मशक लेकर पानी छिड़कने वाले, अपने जैसे ही मानव को रिक्शे पर बैठा कर उनके गंतव्य तक पहुँचाने वाले मानव के साथ मैं सदैव हूँ। जो भी मानव पीड़ित हैं, ऐसे अविजित, अमर मानव के श्रम को श्रध्दावनत होकर कवि दूर-दूर तक उन्हें वर्तमान और भविष्य के सेतु के रूप में जोड़ते हैं। वे ऐसे श्रमशील मानव की जीवटता को दुर्जेय मानते हैं। वे अपनी कविता को एक सेतु मानते हैं।

16.3.2 अध्येय कविता : मैं वहाँ हूँ

यह जो कचरा ढोता है,
यह झल्ली लिए फिरता है और बेघर घूरे पर सोता है,
यह जो गदहे हाँकता है, यह तो तंदूर झोंकता है,
यह जो कीचड़ उलीचती है,
यह जो मनियार सजाती है,
यह जो कंधे पर चूड़ियों की पोटली लिए गली-गली झांकती है,
यह जो दूसरों का उतरन फींचती है,
यह जो रद्दी बटोरता है,
यह जो पापड़ बेलता है, बीड़ी लपेटता है, वर्क कूटता है,
धौंकनी फूंकता है, कलई गलाता है, ईंटें उछालता है,
रूई धुनता है, गारा सानता है, खटिया बुनता है
मशक से सड़क सींचता है,
रिक्शा में अपना प्रतिरूप लादे खींचता है,
जो भी जहाँ भी पिसता पर हारता नहीं, न मरता है-
पीड़ित श्रमरत मानव
अविजित दुर्जेय मानव
कमकर, श्रमकर, शिल्पी, स्रष्टा -
उस की मैं कथा हूँ।
दूर दूर दूर .... मैं वहाँ हूँ -
यह नहीं कि मैं भागता हूँ :

मैं सेतु हूँ इस लिए
दूर दूर दूर .... मैं वहाँ हूँ।

> **निर्देश** : 1. इस कविता का सस्वर वाचन कीजिए।
> 2. इस कविता का मौन वाचन कीजिए।

16.3.3 विस्तृत व्याख्या

यह जो कचरा ढोता है,
यह झल्ली लिए फिरता है और बेघर घूरे पर सोता है,
यह जो गदहे हाँकता है, यह तो तंदूर झोंकता है,
यह जो कीचड़ उलीचती है,
यह जो मनियार सजाती है,
यह जो कंधे पर चूड़ियों की पोटली लिए गली-गली झाँकती है,
यह जो दूसरों का उतरन फींचती है,
यह जो रद्दी बटोरता है,
यह जो पापड़ बेलता है, बीड़ी लपेटता है, वर्क कूटता है,
धौंकनी फूँकता है, कलई गलाता है, ईंटें उछालता है,
रूई धुनता है, गारा सानता है, खटिया बुनता है
मशक से सड़क सींचता है,
रिक्शा में अपना प्रतिरूप लादे खींचता है,
जो भी जहाँ भी पिसता पर हारता नहीं, न मरता है-
पीड़ित श्रमरत मानव
अविजित दुर्जेय मानव
कमकर, श्रमकर, शिल्पी, स्रष्टा -
उस की मैं कथा हूँ।
दूर दूर दूर .... मैं वहाँ हूँ -
यह नहीं कि मैं भागता हूँ :

मैं सेतु हूँ इस लिए

दूर दूर दूर .... मैं वहाँ हूँ।

शब्दार्थ : झल्ली = पतली रस्सी से बनी टोकरी। घूरे = कूड़े-करकट का ढेर। गदहे = गधा। हाँकना = पशुओं को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाना। उलीचना = जल के बर्तन को हाथ या किसी पात्र से खाली करना। मनियार = स्त्रियों के सिंगार का सामान। झाँकना = झुककर देखना। पोटली = छोटी गठरी। फींचना = कपड़ों को पटक कर साफ करना। बटोरना = इकठ्ठा करना। वर्क = चमक। कूंटना = पीटना या पटकना। धौंकनी = आग दहकाने का यंत्र या फूंकनी। कलई = बर्तन पर चढ़ाया हुआ धातु का पर्त। धुनना = खूब पीटना। गारा = मिटटी एवं पानी का लसदार घोल। सानना = मिलाना। मशक = पशु खाल का बना पानी भरने का थैला। लादे = किसी प्राणी के पीठ पर सामान रखना। दुर्जेय = जिस पर विजय पाना कठिन हो। शिल्पी = हस्तकला या दस्तकारी।

सन्दर्भ : प्रस्तुत कविता 'मैं वहाँ हूँ' अज्ञेय के काव्यसंग्रह 'इंद्र धनुष रौंदे हुए ये' से अवतरित है। मार्क्सवादी विचारधारा से युक्त इस कविता में कवि श्रमशील, कर्मरत मानव की कर्मठता की कथा प्रस्तुत करते हुए सामाजिक, आर्थिक असमानता के प्रति अपना आक्रोश व्यक्त करते हैं। कवि ऐसे समाज की परिकल्पना करते हैं, जहाँ विषमता का, अमानवीयता का अस्तित्व न हो। समाज को विकास के पथ पर सदा आगे बढ़ाने वाले श्रमिक वर्ग को पीड़ा में देख कर कवि का हृदय द्रवित हो उठता है। जिनके जीवन में पीड़ा, संघर्ष का कोई अंत न हो, ऐसे मानव के साथ वे स्वयं को पाते हैं। जिन श्रमिक, शिल्पी, स्रष्टा मानव के मन, मस्तिष्क, जीवन का आरंभ और अंत दूसरों के लिए हो, कवि ऐसे मानव की कथा अपनी कविता में कहते हैं। ऐसे दुर्जेय, अविजित मानव को इतिहास के पन्नों में प्रतिष्ठित करते हुए कवि की कविता सेतु की भूमिका में आ जाती है, क्योंकि सेतु का कार्य जोड़ना होता है। कवि व्यक्ति स्वतंत्रता के प्रबल पक्षधर थे, इसीलिए श्रमशील मानव के श्रम को अपनी प्रस्तुत कविता के माध्यम से अमर बना कर उनके कष्टों को उजागर करते हैं।

प्रसंग : 'मैं वहाँ हूँ' कविता के माध्यम से कवि ने स्वयं को सर्वहारा वर्ग के साथ जोड़ते हुए उनकी कथा बनकर प्रकट होते हैं। मानवतावादी रचनाकार के रूप में वे सदैव सर्वहारा वर्ग के प्रति करुणामय रहते हुए अपनी कविता को सेतु की उपमा दी है। श्रमशील मानव कवि को अपने भाई-बन्धु से अधिक प्रिय लगते हैं। अज्ञेय वर्गभेद को अमानवीय तथा अन्यायपूर्ण मानते हुए

अपनी कविता में सर्वहारा वर्ग के श्रम को प्रतिष्ठित करते हैं। कवि समाज के दुखी , पीड़ित तथा अन्याय सहन करने के लिए विवश व्यक्ति की पीड़ा को अति संवेदनशीलता के साथ प्रकट करते हैं। समाज के सुचारू संचालन के लिए सामाजिक, आर्थिक व्यवस्था का समानता के स्तर पर स्थापित होना एक स्वस्थ समाज की पहचान होती है। जब किसी देश की सामाजिक, आर्थिक खाई अधिक हो जाती है तो विद्रोह की भावना प्रबल हो जाती है। इसीलिए कवि मानव समाज की विषमता के प्रति क्षुब्ध होकर उन विषमताओं के साथ खड़े दिखाई देते हैं। अपनी कविता के माध्यम से सेतु बनकर संतुलन स्थापित करने का प्रयत्न करते हैं।

व्याख्या : अज्ञेय की कविता संग्रह 'इंद्र धनुष रौंदे हुए ये' 1957 में प्रकाशित हुई। इस संग्रह की कविता 'मैं वहाँ हूँ' में आधुनिक पूँजीवादी सभ्यता की शोषक प्रवृत्तियों को उजागर किया गया है। पूँजीवादी सभ्यता किस तरह श्रमिक वर्ग के सृजन कौशल, श्रम के सौन्दर्य को रौंदकर नष्ट कर रही है, इसे प्रस्तुत कविता में व्यक्त किया गया है। 'मैं वहाँ हूँ' कविता में कवि कविता के सामाजिक सरोकार को उद्धाटित करने के साथ ही साथ अपने कलावादी और अस्तित्ववादी विचारों को रेखांकित करने से भी नहीं चूकते हैं। कवि और कवि की कविता जो है और जो होगा के बीच, वर्तमान और भविष्य के बीच सेतु की भूमिका निभाते हुए भी उससे 'दूर-दूर-दूर' है। कविता में श्रमशीलों की साधना है तो साथ ही कर्मवीरों की आस्था भी चित्रित है। कविता कहीं मेहनत कशों की व्यथा को शब्द देती है, तो कहीं शोषित-पीड़ित वर्ग की कथा भी कहती है। कवि अपने अस्तित्ववादी चिंतन को विलीन नहीं होने देता है। इसीलिए वहाँ और यहाँ होते हुए भी दूर रहता है। इसीलिए न तो जो है, उसे स्वीकारता है और न जो होगा उसके प्रति मोहग्रस्त है। वह तो बस 'है' और 'होगा' के बीच सेतु का काम करता है। कविता आस्था के साथ-साथ निरन्तर उठने की शक्ति का भी प्रतीक है। व्यथा है तो व्यथा से मुक्ति का श्वांस और प्रयास भी है। कविता कर्मवीरों की गाथा भी है और उनका अव्यक्त इतिहास भी है। किंतु यह सब होते हुए भी इनसे दूर रहकर अपने अलग अस्तित्व का अहसास दिलाती है। वह दूर रहकर भी शून्य में बनने वाला सेतु न होकर मानव से मानव को जोड़ने वाले सेतु की भूमिका निभाता है। वे कल्पना के पंख से कल्पना के पंख को जोड़ने वाले सेतु है। लेकिन स्मरण रहे यह मात्र सेतु है। मानव को एक करने वाले समूह के अनुभव के नदी पर खड़ा हुआ सेतु है। यह चिर परिवर्तनशीलता का गीत गाती, किनारे तोड़ती, मुड़ती, बलखाती नदी को समेटने वाली सेतु हैं। अपने सम्पूर्ण अस्तित्व की अलग पहचान बनाती हुई कविता सब में होते हुए भी सबसे दूर-दूर-

दूर है।

बोध प्रश्न

- कवि की कविता वर्तमान और भविष्य के बीच में कौन सी भूमिका निभाती है?
- कविता आस्था के साथ-साथ निरंतर किस भूमिका की प्रतीक है?
- मानव को मानव से जोड़ने की भूमिका कौन निभाता है?

वे कहते हैं कि कचरा ढोने वाला व्यक्ति पतली रस्सी से बने टोकरे लिए थक कर कचरे के ढेर पर ही सो जाता है। उसके पास अपना कोई घर नहीं है आसमान उसका छत और धरती उसके लिए बिछौना बन जाता है। श्रमशील मानव दूसरों के घूरे को गधे के पीठ पर रख कर दूर ले जाता है। श्रमशील मानव स्वयं भूखा रहकर दूसरों के लिए तंदूर झोंकता है। समाज के सभ्य कहे जाने वाले लोगों की गन्दी नालियाँ उलीचने वाले तथा स्वयं कर्म सौन्दर्य से सजकर दूसरों के लिए प्रसाधन सामग्री सजाने वाले निरीह लोग सदा अपने कर्म में निमग्न रहते हैं।

बोध प्रश्न

- श्रमशील के सौंदर्य को कौन रौंदता है?
- कचरा ढोने वाले कहाँ सो जाते हैं?
- नगरीय लोगों के वस्त्र कौन साफ़ करते हैं?

कवि कहते हैं कि अपने कंधे पर चूड़ियों के बोझ को उठाए हुए हर घर में इस आशा से वह झांकती है कि कोई उसे खरीद ले तो वे अपना और अपनों का पेट भर सकें। स्वयं गंदे वस्त्र पहनकर दूसरों के मलीन वस्त्र को स्वच्छ करने वाले तथा घर-घर से रद्दी बटोरकर, पापड़ बेल कर ये श्रमिक जन मात्र नगरीय लोगों के घर, वस्त्र की ही सफाई नहीं करते अपितु उनके स्वाद और शौक को भी पूरा करने में सदैव तत्पर रहते हैं। बीड़ी लपेटना हो अथवा वर्क कूटना हो वे बड़े मनोयोग से कर्मशील बने रहते हैं। कवि कहते हैं आग की भट्टी में धौकनी फूंक कर औजार, हथियार बनाने से लेकर बर्तनों पर कलई चढ़ाने तथा भारी भरकम रेढ़ी ढकेलने का कार्य कर्मशील मानव पूरे मनोयोग से करते हैं।

बोध प्रश्न

- दूसरों के मलीन वस्त्र कौन साफ़ करते हैं?
- दूसरों के शौक और स्वाद पूरा करने के लिए सर्वहारा वर्ग क्या करते हैं?
- समाज के सम्पूर्ण कार्य को पूर्ण मनोयोग से करने वाले व्यक्ति को कवि ने क्या नाम दिया है?

श्रमिक वर्ग सामुदायिक चौक को लीपकर, दूसरों के घरों के बर्तन साफ़ करके, ईंटें बनाने वाले हमारे समाज के शिल्पी वर्ग के कार्यों का कोई छोर नहीं होता है। अंतहीन कर्मपथ के स्रष्टा ये मानव दूसरो के लिए रूई धुनने, चारपाई बनाने के साथ ही घरों का निर्माण करते हुए भी मशक लेकर पानी का छिडकाव करते हैं ताकि संपन्न वर्ग पर धूल के कण भी न पड़े। अपने ही जैसे मानव को रिक्शे पर बिठाकर उनके गंतव्य तक पहुँचाने के बाद भी ये श्रमरत, कर्मरत, शिल्पी, स्रष्टा मानव न टूटते हैं न हारते हैं और न ही कर्म की चक्की में पीसकर मरते ही हैं। कवि ऐसे अविजित, दुर्जेय मानव की कथा एक सेतु के समान व्यक्त करते हैं। वे स्वयं को दो किनारों से मिलाने वाले सेतु की भूमिका में रखकर ही उनकी व्यथा की वाणी को जन-जन तक पहुंचाते हैं। अज्ञेय की रचनाएं उनके संवेदनशील कवि व्यक्तित्व और वैचारिक मानस को समाहित किए हुए है। उनका चिन्तन पक्ष समृध्द और मौलिकतापूर्ण है। उन्होंने अपने साहित्य के माध्यम से आम जनता में जागरूकता फ़ैलाने के साथ-साथ भारतीय संस्कृति और सभ्यता को भी प्रत्यक्ष किया है। मानवीय मूल्यों की कसौटी पर वे सदा व्यक्ति, समाज, संस्कृति और साहित्य को कसते रहते थे। 'मैं वहाँ हूँ' कविता के माध्यम से भी उन्होंने इन सारे रूपों को समेटा है।

बोध प्रश्न

- मशक से क्या सींचा जाता है?
- श्रमिक वर्ग रिक्शे में किसे लेकर जाते हैं?
- कवि ने किसे दुर्जेय मानव कहा है?

16.3.4 काव्यगत विशेषताएँ

प्रयोगवादी एवं नई कविता की विशेषताओं के साथ अज्ञेय अपनी कृतियों में नवीन भारत की परिकल्पना लिए हुए सर्जनारत होते हैं। अज्ञेय की कविताओं में वैयक्तिकता की प्रतिष्ठापना के साथ ही समग्रता का भी आदर पर्याप्त देखा जा सकता है। व्यक्तिवादिता, अस्तित्ववादिता में मानवता का सहज प्रस्फुटन अज्ञेय की कविताओं की विशेष पहचान है। अज्ञेय की कविताओं में प्राकृतिक उपमानों को नई अभिव्यक्ति के साथ प्रस्तुत किया गया है। भारत एवं भारतीयता को वे अपनी कृतियों में तो प्रस्तुत करते ही थे साथ ही वे जिस देश में जाते थे, वहाँ भी भारतीय दृष्टि का प्रचार-प्रसार करते थे। नदी, समुद्र, द्वीप, पशु, पक्षी, जीव तथा प्राणी के उपमानों को कविता में प्रस्तुत करते हुए भी वे समकालीन अस्वीकार के भी शिकार भी हुए। देश के विकास हेतु औद्योगिक व्यामोह में आदिवासी एवं प्राचीन भारतीय

स्वनिर्भर ग्रामीण समाज व्यवस्था के उच्छेदन को वे सिरे से अस्वीकार करते थे। अज्ञेय ऐसे समाज के प्रति क्षोभ व्यक्त करते हैं, जहाँ मानव से मानव की दूरी जमीन और आसमान की तरह हो। कवि मानवता के धरातल पर स्थापित समाज व्यवस्था का स्वागत करते हैं। वे पूँजीवादी व्यवस्था के प्रबल विरोधी थे, यही कारण है कि उनकी पूरी सम्वेदना और सहानुभूति सर्वहारा वर्ग के साथ देखी जा सकती है। यद्यपि कवि न वर्तमान को बदलने के लिए आगे बढ़ रहा है न भविष्य को बनाने के लिए, क्योंकि कवि को सर्वहारा वर्ग की दुर्जेयता पर अटूट विश्वास है। समाज के कर्मशील, सर्जक वर्ग की संघर्षशीलता की कथा बनकर वह मात्र सेतु की भूमिका में स्थितप्रज्ञ बना हुआ है। कवि ने प्रस्तुत कविता में देशज भाषा का प्रचुर प्रयोग किया है। इस प्रकार 'मैं वहाँ हूँ' कविता का काव्य एवं भाव दोनों ही पक्ष सशक्त है। मार्क्सवादी विचारधारा के साथ ही कवि यथास्थितिवादी दृष्टिकोण को अपनाए हुए है।

16.3.5 समीक्षात्मक अध्ययन

भारतीय संस्कृति में व्याप्त मानवता के पुरातन स्वरूप को पुनः स्थापित करने की कामना लिए हुए कवि अज्ञेय जैसे साहित्यकार सर्जनारत होकर जन मन को जगाने का प्रयत्न करते हैं। जीवन में आत्मशांति का बहुत अधिक महत्त्व होता है। इसी सुख की खोज में बुध्द ने बुध्दत्व की राह पकड़ी थी। कवि अज्ञेय की मनःवेदना भी इसी आत्मशांति की ओर पाठकों को प्रेरित करती है। भारतीय संस्कृति की विश्व कल्याणकारी दृष्टि को कवि अपने विश्व पर्यटन में भी साथ लेकर चलते थे। कवि की मान्यता थी कि विकास अपनी संस्कृतियों के साथ आगे बढ़ने में ही है। अज्ञेय मानव को मानवता के पथ पर चलने की प्रेरणा देते हैं। अज्ञेय छायावादोत्तर युग में प्रगतिशीलता के नाम पर सर्वहारा वर्ग के शोषण को समाज व्यवस्था का प्रतिकूल प्रारूप मानते हैं। उनके काव्य में प्रकृति, लोकजीवन, दर्शन, आध्यात्मिक पक्ष सहज ही देखे जा सकते हैं। वे मनोवैज्ञानिक धरातल पर वैयक्तिक गरिमा की प्रतिष्ठापना अपने रचना संसार के माध्यम से करते हैं। समाज और व्यक्ति के पारस्परिक सम्बन्धों को मनोवैज्ञानिक दृष्टि से कवि ने परिभाषित किया है। इसीलिए सामाजिक विषमता, शोषण, अन्याय का वे खुलकर प्रतिकार करते हैं। यही कारण है कि स्वतंत्रता, सहयोग एवं बंधुत्व पर आधारित वर्गहीन, विषमतारहित समाज की परिकल्पना के साथ वे सेतु बनकर सर्वहारा वर्ग को आगे ले जाने की कामना करते हैं। मानव द्वारा मानव शोषण को कवि ने पूर्णतः अस्वीकार किया है। अज्ञेय मार्क्सवादी लोक कल्याणकारी दृष्टि के पोषक कवि हैं। यही कारण है कि पीड़ित, दमित वर्ग के संघर्षमय जीवन के

प्रति कवि करुणा से भर उठते हैं। यही नहीं उन्हें सर्वहारा वर्ग की योग्यता, संघर्षशीलता, अजेयता पर भी अखंड विश्वास है। इसीलिए वे सेतु की भूमिका में रहकर वहाँ होने की बात करते हैं।

अज्ञेय की काव्यदृष्टि के संदर्भ में विद्वानों के विचार

आधुनिक हिंदी साहित्य में बौध्दिक परंपरा के कवि सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय ने आधुनिकता के साथ ही उनके सामाजिक दायित्व, काव्य शिल्प, छंद को मौलिक स्वरूप प्रदान किया है। कृष्णदत्त पालीवाल ने अज्ञेय को विविध विचारधाराओं से युक्त नवीन दृष्टि का प्रतिष्ठापक कहा है। विविध विद्वान् उन्हें रचनाकर्म में विचारधाराओं के अतिक्रमणकारी के रूप में चित्रित करते हैं। उनकी दृष्टि में सत्य का संधान स्वाधीन दृष्टि से ही संभव है। 'प्रतीक', 'नया प्रतीक', 'वाक्' आदि पत्रिकाओं के माध्यम से उन्होंने कई नए साहित्यकारों का मार्ग प्रशस्त किया। 'तारसप्तक' के द्वारा नव्यतम काव्यदृष्टि को हिंदी साहित्य की ओर ले आने में इनका महत्वपूर्ण स्थान है। विद्वानों के अनुसार अज्ञेय की आरंभिक कृतियों में व्यक्तिवादिता अधिक देखी जा सकती है। आगे चलकर प्राकृतिक, सांस्कृतिक, मानवतावादी दृष्टि का प्राचुर्य रहा। अज्ञेय की भाषा कई बार व्याकरण की परिधि को लांघ कर भावोन्मुखी हो उठती है। समग्रतः विद्वानों के विचार में अज्ञेय कला एवं भाव दोनों ही स्तरों पर प्रयोग करते हुए अपनी सर्जना में नव्यता को समाविष्ट करने वाले कवि हैं। वर्तमान पूँजीवादी सभ्यता के लिए मार्क्सवादी विचारधारा किसी रामबाण से कम नहीं है। अज्ञेय समाज में सभी के समान जीवनाधिकार की परिकल्पना के साथ 'मैं वहाँ हूँ' कविता में दूर-दूर तक शोषित वर्ग के पक्ष में खड़े दिखाई देते हैं। शिवकुमार मिश्र ने अज्ञेय के मार्क्सवाद को मानव मुक्ति का दर्शन माना है। समाज और व्यक्ति के पारस्परिक सम्बन्धों की सम्यक अभिव्यक्ति अज्ञेय की रचनाओं में देखी जा सकती है। भारतीय एवं पाश्चात्य दर्शन को अज्ञेय के रचना कर्म में सहज ही अनुभूत किया जा सकता है।

16.4 पाठ सार

अज्ञेय 'मैं वहाँ हूँ' कविता के माध्यम से अपने समाजिक सरोकार की दृष्टि को प्रकट करते हैं। अज्ञेय की कलावादी दृष्टि उनकी अस्तित्ववादी विचारधारा को धार देती है। कवि की कविता वर्तमान और भविष्य के मध्य सेतु की भूमिका में होते हुए भी दूर-दूर है। कवि ने श्रमशीलों की साधना को बड़ी आस्था के साथ चित्रित किया है। सर्वहारा वर्ग के कठोर परिश्रम की करुण

अभिव्यक्ति के साथ ही कविता उनकी पीड़ा की कथा बनकर व्यक्त होती है। अस्तित्ववादी कवि अपने अस्तित्व को कहीं भी विलीन नहीं होने देते हैं। इसीलिए वहाँ और यहाँ होते हुए भी दूर रहते हैं। इसीलिए वे न तो जो है उसे स्वीकार करते हैं और न जो होगा उसके प्रति मोहग्रस्त हैं। वे तो बस 'है' और 'होगा' के बीच सेतु का काम करते हैं। कविता आस्था के साथ-साथ निरन्तर उठने की शक्ति का भी प्रतीक है। व्यथा है तो व्यथा से मुक्ति की उत्कंठा भी है। अपने सम्पूर्ण अस्तित्व की अलग पहचान बनाती हुई कविता सब में होते हुए भी सबसे दूर-दूर-दूर है।

16.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. अज्ञेय का काव्य फ़लक विराट है।
2. अज्ञेय वैचारिक स्तर पर स्वयं को श्रम संस्कृति का अंग मानते हैं।
3. अज्ञेय का विश्वास है कि निरंतर अस्तित्व के संघर्ष में रत आम आदमी की जीवनीशक्ति अपराजेय है।
4. अज्ञेय व्यक्ति स्वातंत्र्य के प्रबल पक्षधर हैं।

16.6 शब्द संपदा

1. अग्रणी = आगे चलने वाला
2. अनुभूत = आजमाया या अनुभव किया हुआ
3. आक्रोश = रोषपूर्ण भावना
4. उजागर = प्रकट करना
5. कर्मठ = काम में कुशल
6. क्षुब्ध = विकल या परेशान
7. गंतव्य = मंजिल या लक्ष्य
8. तत्पर = उद्यत या मुस्तैद
9. त्राहि = रक्षा के लिए पुकारना
10. दृष्टिगत = स्पष्ट दिखाई पड़ना
11. द्रवित = पसीजना या पिघलना
12. निमग्न = लीन या मग्न

13. निरंतर = लगातार

14. परिकल्पना = अनुमान करना

15. प्रबल = उग्र या तेज

16. प्रस्फुटन = व्यक्त होना

17. मनोयोग = मन लगाना

18. रौंदना = दबाना या कुचलना

19. विभीषिका = भय या डर

20. व्यामोह = मोह या अज्ञान

21. समग्रतः = संपूर्ण रूप से

22. सम्यक = भली तरह से

23. सामंजस्य = अनुकूल या उपयुक्त

16.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. अज्ञेय की मार्क्सवादी दृष्टि का परिचय दीजिए।
2. 'मैं वहाँ हूँ' कविता का भाव अपने शब्दों में व्यक्त कीजिए।
3. पूँजीवादी व्यवस्था में श्रमिकों की जीवटता को चित्रित कीजिए।
4. मार्क्सवादी विचारधारा की विशेषता को अज्ञेय की कविता के माध्यम से बताइए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. अज्ञेय ने कर्मशीलों की वंदना किन शब्दों में की है?
2. कवि के अनुसार दूसरों के लिए आजीवन कठिन श्रम करने वाले का जीवन कैसा होता है?
3. अज्ञेय पूँजीवादी सभ्यता के किस रूप का चित्रण करते हैं?
4. 'मैं वहाँ हूँ' कविता के केन्द्रीय भाव को प्रकट कीजिए?

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. अज्ञेय का जन्म किस वर्ष हुआ? ( )

(अ) 1911 (आ) 1907 (इ) 1903

2. 'शेखर एक जीवनी' अज्ञेय की किस विधा में लिखी गयी रचना है? ( )

(अ) जीवनी (आ) कहानी (इ) उपन्यास

3. 'मैं वहाँ हूँ' कविता अज्ञेय के किस संग्रह से उध्दृत है? ( )

(अ) हरी घास पर क्षण भर (आ) इंद्र धनुष रौंदे हुए ये (इ) आंगन के पार द्वार

4. अज्ञेय को साहित्य अकादमी से किस रचना के लिए सम्मानित किया गया? ( )

(अ) आँगन के पार द्वार (आ) इंद्र धनुष रौंदे हुए ये (इ) कितनी नावों में कितनी बार

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. 'आँगन के पार द्वार' कृति पर अज्ञेय को.................... पुरस्कार प्राप्त हुआ।

2. 'कितनी नावों में कितनी बार' कृति पर अज्ञेय को................. सम्मान प्राप्त हुआ।

3. 'सैनिक' पत्रिका के संपादक ....है।

4. अज्ञेय आर्थिक असमानता को .... मानते थे।

III. सुमेल कीजिए -

1. मैं वहाँ हूँ	(अ) यात्रा वृतांत
2. नदी के द्वीप	(आ) इंद्र धनुष रौंदे हुए ये
3. अरे यायावार रहेगा याद	(इ) उपन्यास

16.8 पठनीय पुस्तकें

1. अज्ञेय रचनावली (भाग - 9) : कृष्णदत्त पालीवाल

2. आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ : नामवर सिंह

3. अज्ञेय कवि और काव्य : राजेंद्र प्रसाद

4. तार सप्तक : अज्ञेय

5. अज्ञेय और उनकी काव्य चेतना : कृष्ण भावुक

6. अज्ञेय - एक अध्ययन : भोला भाई पटेल

इकाई 17 : नागार्जुन : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

रूपरेखा

17.1 प्रस्तावना

17.2 उद्देश्य

17.3 मूल पाठ : नागार्जुन : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

17.3.1 जन्म एवं शिक्षा

17.3.2 साहित्य यात्रा तथा गृहस्थ से बौद्ध धर्मानुयायी बनने की यात्रा

17.3.3 नागार्जुन का व्यक्तित्व एवं जीवन दर्शन

17.3.4 नागार्जुन का समकालीन परिवेश और उसका नागार्जुन पर प्रभाव

17.3.5 नागार्जुन का कृतित्व

17.3.6 नागार्जुन के काव्य में संवेदना रूप

17.4 पाठ सार

17.5 पाठ की उपलब्धियाँ

17.6 शब्द संपदा

17.7 परीक्षार्थ प्रश्न

17.8 पठनीय पुस्तकें

17.1 प्रस्तावना

प्रेमचंदोत्तर साहित्यकारों में नागार्जुन एक ऐसे विलक्षण उपन्यासकार हैं, जिन्होंने पूरी ईमानदारी और निर्भीकता के साथ अपने समय की विभिन्न समस्याओं की सार्थक अभिव्यक्ति की है। नागार्जुन का नाम विशेष रूप से एक व्यंग्यकारी साहित्यकार के रूप में लिया जाता है। उन्होंने प्रायः सभी सामयिक विसंगतियों और विडम्बनाओं को आधार बनाकर सामाजिक क्रांति की इच्छा रखते हुए अपनी रचनाओं के द्वारा तीव्र व्यंग्य किया है। नागार्जुन समाज तथा देश के प्रति जागरूक एवं समर्पित कवि रहे हैं। उनकी कविता में सर्वहारा वर्ग के संघर्ष का स्वर अधिक तीव्र है। देश की वर्ग भेद नीति तथा नेताओं की स्वार्थपरकता से उनका हृदय आहत हुआ। प्रगतिशील कवि होने के नाते उन्होंने क्रांति का रास्ता अपनाया और जनभाषा को अपना शस्त्र बनाया।

17.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप -

- कवि नागार्जुन के संपूर्ण जीवन को जान सकेंगे।
- नागार्जुन के व्यक्तित्व को समझ सकेंगे।
- नागार्जुन की रचनाओं की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- नागार्जुन की रचनाओं की विशेषताओं को समझ सकेंगे।

17.3 मूल पाठ : नागार्जुन : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

17.3.1 जन्म एवं शिक्षा

नागार्जुन के पूर्वज बिहार के दरभंगा जिले में स्थित तर्रानी के वत्स गोत्र के ब्राह्मण थे। पिता श्री गोकुल मिश्र तथा उससे पूर्व की तीन-चार पीढ़ियों के पूर्वज कम पढ़े-लिखे थे। वे गाँव में खेती-बाड़ी करते थे तथा अंग्रेजों के परिवार की देखभाल करते थे। नागार्जुन के पिता लापरवाह, मस्तमौला, घुमक्कड़ और दायित्व-भार से पलायन करनेवाले थे। नागार्जुन की माँ उमा देवी सीधी-सादी ग्रामीण महिला थीं। नागार्जुन का जन्म उनके ननिहाल में हुआ था। चार वर्ष की अवस्था में ही उनके सिर से माँ का साया उठ गया था इसलिए बचपन में कुछ साल उन्हें ननिहाल में ही रहना पड़ा। उन दिनों उच्च तथा निम्न वर्गों में शिक्षा के प्रति विशेष रूचि नहीं थी तथापि ब्राह्म वर्ग अपने बच्चों को हर स्थिति में पढ़वाने के लिए प्रयत्नशील रहते थे। नागार्जुन के पिता उन्हें अंग्रेजी स्कूल में पढ़ाने में सक्षम नहीं थे। अतः उनका दाखिला संस्कृत पाठशाला में करवाया गया। उन्होंने संस्कृत में आचार्य (साहित्य शास्त्र) की परीक्षा सम्मानपूर्ण श्रेणी में उत्तीण की। इसके बाद 13 साल की आयु में वे घर छोड़कर अध्ययन के लिए निकल पड़े। ये जो यात्रा उन्होंने 13 साल की आयु में शुरू की थी जीवनपर्यंत अब उनके 'यात्री' बनने की आधारशिला ही थी।

बोध प्रश्न

- नागार्जुन के पिता का नाम क्या था?
- नागार्जुन के माता का नाम क्या था?
- नागार्जुन ने कौन-सी परीक्षा पास की थी?
- किस आयु में नागार्जुन घर छोड़कर निकले थे?

17.3.2 साहित्य यात्रा तथा गृहस्थ से बौद्ध धर्मानुयायी बनने की यात्रा

वैद्यनाथ मिश्र 'नागार्जुन' का असली नाम है। वैद्यनाथ ने सन् 1930 ई. के आसपास सर्वप्रथम मैथिली में कविताएँ लिखना प्रारंभ किया। मैथिली की प्रथम रचना 'लहरिया सराय' से प्रकाशित 'मासिक पत्रिका मिथिला' में प्रकाशित हुई थी। काशी पहुँचने से पहले ही संस्कृत भाषा में अनुष्टुप, बसंततिलका, शिखरिणी आदि छंदों की रचना प्रारंभ कर दी थी। काशी में कविरत्न सीमाराम झा से परिचित होने पर भाषा, छंद आदि का अभ्यास उनके लिए सहज हो गया था। हिंदी में सर्वप्रथम सन् 1935 ई. उनकी कविता 'राम के प्रति' लाहौर से प्रकाशित विश्व-बंधुत्व में छपी थी। वैद्य ने मैथिली में 'यात्री', हिंदी में 'नागार्जुन' नाम से साहित्य सृजन किया है।

नागार्जुन का विवाह अपराजिता देवी के साथ हुआ था। उस समय वे कलकत्ता में अध्ययन कर रहे थे। सन् 1934 में वे घर छोड़कर बाहर चले गये। लगभग ढाई वर्ष तक राजस्थान, हिमाचल प्रदेश, गुजरात आदि प्रदेशों में घुमक्कड़ के रूप में रहे। भारत में भ्रमण करते समय उनका परिचय जैन-मुनियों से भी हुआ। उन्होंने प्राकृत भाषा को सीखने का प्रयास किया साथ ही बौद्ध ग्रंथों के अवलोकन और अध्ययन से नागार्जुन की जिज्ञासा बढ़ उठी वे बौद्ध धर्म को समझने के लिए व्याकुल हो उठे। सन् 1936 में वे सिंहलद्वीप जा पहुँचे। कोलंबो के निकट कोलंबिया के विद्यालंकार परिवेश में आचार्य वैद्यनाथ ने बौद्धधर्म की दीक्षा ग्रहण की। राहुल सांस्कृत्यायन, भदंत कौशल्यायन्, आचार्य जगदीश कश्यप आदि भारतीय विद्वान नागार्जुन के गुरूभाई थे। वे स्वयं भी पालि के माध्यम से बौद्धदर्शन का अध्ययन करने लगे। सन् 1938 में बिहार सरकार ने राहुल सांस्कृत्यायन की प्रेरणा से तिब्बत में अनुसंधान कार्यों के लिए नागार्जुन को ल्हासा भेजने के लिए बुलाया। नागार्जुन 'विद्यालंकार परिवेश' में आचार्यों के रोकने पर भी भारत लौट आये। इस प्रकार वे वैद्यनाथ मिश्र से भिक्षु नागार्जुन बनकर लौटे।

बोध प्रश्न

- नागार्जुन का असली नाम क्या है?
- वैद्यनाथ मिश्र किस नाम से मैथिली में लिखा करते थे?
- नागार्जुन का विवाह किनके साथ हुआ था?नागार्जुन सिंहलद्वीप कब पहुँचे?

17.3.3 नागार्जुन का व्यक्तित्व एवं जीवन दर्शन

व्यक्तित्व शब्द अंग्रेजी भाषा के पर्सनलिटी शब्द का पर्यायवाची माना गया है, जिसकी

उत्पत्ति लैटिन के पर्सीना शब्द से मानी गयी है। पर्सीना शब्द का प्रयोग मूलतः नाटक के पात्रों द्वारा प्रयुक्त मुखौटे (नकली चेहरे) से होता है। अब व्यक्तित्व से तात्पर्य व्यक्ति के ब बाह्य आभास एवं अंतर्मन से लिया जाने लगा है।

पोर्ट के शब्दों में, "व्यक्ति का विशेष गुण ही उसका व्यक्तित्व है। इस विशेष गुण से उसके सोचने, विचारने, लिखने तथा जीवनयापन का रंग-ढंग आता है। शरीर की बनावट, जीवन मूल्य, मनोवृत्तियाँ, आदतें आदि भी इसी में सम्मिलित होते हैं।"

मन के शब्दों में, "व्यक्तित्व एक व्यक्ति के गठन, व्यवहार के तरीकों, रूचियाँ, दृष्टिकोण, योग्यताओं और तरीकों का सबसे विशिष्ट संगठन है।"

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि 'व्यक्तित्व' एक ऐसा ढाँचा है जो एक व्यक्ति को दूसरे व्यक्ति से पृथक करता हैं अतः 'व्यक्तित्व' शारीरिक एवं मानसिक प्रवृत्तियों का पुंज है। जनसाधारण में व्यक्ति के व्यक्तित्व का अर्थ बाह्य गुणों से लगाया जाता है। दर्शन में व्यक्तित्व का अर्थ किसी स्थिर अवस्था से न होकर गतिशील क्रियाकलापों से लिया जाता है। किसी भी साहित्यकार के व्यक्तित्व को समझने के लिए उसके आंतरिक, बाह्यिक और दार्शनिक विचारधाराओं को समझना आवश्यक हो जाता है। इस दृष्टि से नागार्जुन के व्यक्तित्व को समझने के लिए उसे तीन भागों में बाँटा जा सकता है -

नागार्जुन का आंतरिक व्यक्तित्व

दरभंगा-मधुबनी, उत्तरी बिहार का राजनैतिक और सांस्कृतिक केंद्र है। दीवालों पर अल्पना रचने से लेकर महीने खादी तक की छपाई 'मधुबनी शैली' के नाम से प्रसिद्ध है। नागार्जुन इसी धरती के लहलहाते बाबा बटेसरनाथ थे, जो अपने लेखन से मिथिलांचल ही नहीं, संपूर्ण भारत की नई पीढ़ी को संघर्ष की प्रेरणा देते रहे। वे अपने प्रति उदासीन रहकर लोक-कल्याण, साहित्य-सेवा में तल्लीन रहे हैं। अपनी जन्मतिथि के विषय में वे स्वयं भी भली प्रकार से नहीं जानते थे, क्योंकि उन्होंने अपनी आत्मकथा को लिपिबद्ध करने का कोई प्रयास नहीं किया। नागार्जुन उन साहित्यकारों में से नहीं है जिनके साहित्य और वास्तविक जीवन में तालमेल दिखाई नहीं देता है। नागार्जुन का विद्रोही, आस्थावादी, दृढ़ विश्वास से पूर्ण आंतरिक व्यक्तित्व उनके साहित्य में भी दिखाई पड़ता है।

डॉ. शिवकुमार मिश्र के शब्दों में, "नागार्जुन स्वभाव से ही विद्रोही थे। उनकी लेखनी आडम्बरों, रूढ़ियों और विषमताओं के विरूद्ध जमकर चली है। विद्रोह उनके स्वभाव में

मूर्तिमान है। यह विद्रोह उस परिवेश की देन है, जिसके बीच उन्होंने जीवन जिया है। अपने इस अंतर की विद्रोह-वृत्ति को उन्होंने सदैव रचनात्मक क्रियाओं की ओर सक्रिय किया है। हँसमुख इतने हैं कि उनके जीवन-संघर्षों से अपरिचित व्यक्ति शायद ही जान पाए कि जीवन का इतना विष पीने और पचाने के बाद उन्हें यह हँसी सौगात के रूप में मिली है।"

नागार्जुन का बाह्य व्यक्तित्व

नागार्जुन का बाह्य व्यक्तित्व सरल एवं साधारण है। वे मझोले कद, श्यामवर्ण के हैं। फक्कड़ लेखकों की भाँति उन्हें अपने स्वास्थ्य को लेकर बहुत सोचने की आदत नहीं थी। वे खद्दर का कुर्ता और पजामा पहनते थे। दिखावे में विश्वास न रखनेवाले नागार्जुन का रहन-सहन सामान्य था।

डॉ. प्रकाश चंद्र भट्ट के शब्दों में, "दुबला पतला शरीर, मोटी खद्दर का कुर्ता-पजामा, मझौला कद, आँखों पर ऐनक, पैरो में चप्पलें, चेहरे पर उत्साह तथा पीड़ित वर्ग के प्रति व्यथा की मिली जुली प्रतिक्रिया के भाव, यही नागार्जुन हैं।"

रहन-सहन और वेशभूषा के संबंध में नागार्जुन ने स्वयं लिखा है, "आदमी हो तो आदमी की तरह रहो, यह क्या दशा बना रखी है तुमने अपनी, छोटे-छोटे बाल उगाए हो चंचल माथे पर, कपड़े का यह हाल है कि भद्देपन और कंजूसी का सनातन इश्तिहार बने घूमते हो, चर्च गेट हो या चैरंगी, कनाट प्लेस हो या हजरतगंज, सर्वत्र यही भूमिका रहती है, आधुनिकता और मॉडर्निटी दिखाने को। खाँस दिखाने में तुम्हारे को जाने कौन-कौन सी परिवृत्ति मिलती है। आंचलिक कलाकार तुम्हारी आँखें सचमुच फूटी हुई है क्या? अपने अन्य आंचलिक अनुजों से तुम्हें इतना तो सीखना ही चाहिए था कि रहन-सहन का अल्ट्रामार्डन तरीका क्या होता है?"

नागार्जुन का जीवन दर्शन

नागार्जुन की धर्म के प्रति अटूट निष्ठा रही। वे ईश्वर में विश्वास रखते थे लेकिन ढोंग, पाखंड, रूढ़िवादी, अंधविश्वास के घोर विरोधी थे। वे सभी धर्मों के अनुयायी, आस्थावादी, स्वभाव से विद्रोही, दृढ़ विश्वासी और आशावादी साहित्यकार रहें। नागार्जुन की बौद्ध धर्म में विशेष निष्ठा रही। नागार्जुन समाजवाद के प्रबल समर्थक साहित्यकार रहें। नागार्जुन मानते थे कि युवा वर्गा की शक्ति का यथोचित उपयोग होना चाहिए। रचनाकार नागार्जुन भारतीय संस्कृति के पोषक थे। प्रारंभ में नागार्जुन भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य भी थे। किंतु इस पार्टी से उनका संबंध सांस्कृतिक रूप से रहा है, चीनी आक्रमण के बाद वे इस पार्टी से विमुख

हुए और मूल रूप से मजदूर, किसानों जैसे पतित, दलित वर्ग के साहित्यकार बनकर उभरे।

बोध प्रश्न

- व्यक्तित्व शब्द की उत्पत्ति पर प्रकाश डालिए।
- 'मधुबनी शैली' क्या है?
- नागार्जुन के बाह्य व्यक्तित्व पर प्रकाश डालिए।
- नागार्जुन किस विचारधारा के समर्थक रहें?

नागार्जुन का समकालीन परिवेश और उसका नागार्जुन पर प्रभाव

नागार्जुन ने जिन दिनों लिखना प्रारंभ किया था, उन्हीं दिनों (1930-1935) मार्क्सवाद, जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को प्रभावित कर रहा था, सन् 1935 में प्रगतिशील लेखक संघ की स्थापना हुई। जिसका प्रथम अधिवेशन भारत में मुंशी प्रेमचंद के सभापतित्व में 1936 में लखनऊ में हुआ था। कोई भी साहित्यकार अपने चारों ओर के अच्छे-बुरे प्रभावों से न चाहते हुए भी अछूता नहीं रह सकता। वह जिस वातावरण में रहता है उसी की सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक आदि परिस्थितियाँ, प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप में उसके चिंतक को प्रभावित करती है।

"साहित्यकार बहुधा अपने देशकाल की परिस्थितियों से प्रभावित होता है। जब कोई लहर देश में उठती है और उस तीव्र लहर में वह रो उठता है, लेकिन उसके रूदन में भी व्यापकता होती है। वह स्वदेश का होकर सार्वभौमिक रहता है।"

नागार्जुन जैसा साहित्यकार फिर कैसे अपने समय की परिस्थितियों से अनुछुए रह जाते? ऐतिहासिक दृष्टि से नागार्जुन का साहित्य-सृजनात्मक काल, भारत की स्वाधीनता के लिए किए जा रहे विभिन्न प्रयासों और गाँधी जी के नेतृत्व में हो रहे अहिंसक आंदोलनों का काल रहा। अंग्रेजों ने किसानों को बेदखल करके जमीदारों को जमीन का स्थायी भू-स्वामी बना दिया।

किसी भी देशकाल की परिस्थितियाँ एक-दूसरे को प्रभावित करती हैं। राजनीतिक उथल-पुथल के उस युग में समाज में स्त्रियों की दशा सोचनीय थी। कम उम्र की कुमारी-कन्याओं को किसी भी विधुर अथवा पहले से दो-चार पत्नियोंवाले व्यक्ति के साथ वैवाहिक रूप में बाँध दिया जाता था। परिणामस्वरूप युवतियाँ विवाह के कुछ वर्ष बाद ही विधवा होकर या फिर पारिवारिक, शारीरिक यंत्रणाओं से तंग आकर अनैतिक यौन संबंधों के जाल में फँसकर नरक से भी बदतर जीवन जीने को मजबूर होती थी। मिथिला सौराठ के मेले में धार्मिकता के नाम पर इसी नरक का निर्माण होता था। जिसमें लड़कियों की 'बिकौआ प्रथा' प्रचलित थी। ऐसी स्थिति

में नागार्जुन जैसे दलितों और पतितों का हिमायती कलाकार कैसे शांत रह सकता था। यशपाल, रांगेय राघव, भैरव प्रसाद गुप्त आदि फ्रायड से प्रभावित होने के कारण नारी विषयक स्वस्थ दृष्टिकोण नहीं अपना सके। नागार्जुन के उपन्यासों में उच्छृंखल काम भावना और नारी स्वच्छंदता का समर्थन नहीं है। नागार्जुन की रचनाओं की नारी, पुरुष की प्रेरणादायी शक्ति है।

बोध प्रश्न

- नागार्जुन ने कब लिखना शुरू किया?
- 'बिकौआ प्रथा' कहाँ प्रचलित थी?
- फ्रायड की विचारधारा से कौन से लेखक प्रभावित थे?
- नागार्जुन ने अपनी रचनाओं में स्त्री को कैसे प्रस्तुत किया?

17.3.5 नागार्जुन का कृतित्व

स्वतंत्रता पूर्व जिन आदर्शों एवं जीवन मूल्यों के स्वप्न संजोए थे वे स्वतंत्र्योत्तर काल में भंग हो गए। देश को सांप्रदायिकता, पाशविक क्रूरता और जाति वर्ण-वर्ग पर आधारित असमानता एवं विद्वेष ताण्डव का उपहार प्राप्त हुआ। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भी देश की इस दुर्व्यवस्था को देखकर नागार्जुन और उनके जैसे दूसरे और भी साहित्यकार सजग हो उठे। नागार्जुन ने अपनी व्यंग्यात्मक शैली के द्वारा कुप्रथाओं, दुर्व्यवस्थाओं आदि पर कठोर प्रहार किया।

युगधारा, खिचड़ी विप्लव देखा हमने, पत्रहीन नग्न गाछ, इमरतिया, वरुण के बेटे, बाबा बटेसरनाथ आदि जाने कितनी ही रचनाएँ हैं जिनके द्वारा नागार्जुन ने सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक, धार्मिक कुप्रथाओं, दुर्व्यवस्थाओं पर न केवल प्रहार किया बल्कि उनको रोकने का भी प्रयास किया।

प्रस्तुत इकाई में नागार्जुन के उपन्यासों, कविताओं और कहानियों में चेतनात्मक स्तर का गहन अध्ययन हम करेंगे।

नागार्जुन के उपन्यास : चेतनात्मक संदर्भ

आधुनिक उपन्यास लेखकों में नागार्जुन का विशिष्ट स्थान है। नागार्जुन जी का मिथिला के ग्रामीण जीवन से निकटवत परिचय है। मध्यम वर्ग, निम्न वर्ग जिन समस्याओं को झेलता है उन समस्याओं को उन्होंने जीवनभर झेला। इसी कारण से उन समस्याओं का सजीव चित्र वे अपने उपन्यासों के माध्यम में प्रस्तुत कर सके। इस इकाई में नागार्जुन द्वारा लिखित निम्न

उपन्यासों को देखना तर्क संगत होगा-

रतिनाथ की चाची : यह नागार्जुन की प्रथम कृति है। रतिनाथ का चरित्र लेखक के व्यक्तिगत चरित्र से काफी मिलता-जुलता है। प्रस्तुत उपन्यास में तरकुलवा नामक स्थान में प्रचलित बिकौआ प्रथा, धार्मिक अंधविश्वास, जातिगत जटिलता आदि का सजीव चित्र प्रस्तुत किया गया है। प्रस्तुत उपन्यास की प्रमुख स्त्री पात्र है - गौरी, असमय वैधव्य से ग्रसित गौरी किस प्रकार से अपनी ही इच्छा से नारी सुलभ कोमलता के वश में आकर विधुर देवर जयनाथ के साथ अवैध संबंध में फँस जाती हे। जयनाथ तो पुरुष होने के कारण बेदाग बच जाता है लेकिन गौरी तो अपमान और तिरस्कार सहने को बाध्य होती है। भला हो रतिनाथ का, जो चाची के जीवन के कष्ट को समझ पाता है। वही गौरी के जीवन की आशा ज्योति है जो उसे देवत्व की श्रेणी में बिठाता है। चाची की मृत्यु के बाद उसकी अस्थियों को गंगा में प्रवाहित करके लौटते समय उसके शील-शालीनता के बारे में सोचता है।

"अस्थियाँ गंगा में प्रवाहित करके लौटते समय रतिनाथ के हृदय में बार-बार यही बात उठ रही थी कि अमावस की उस रात को वह कौन था चाची? एक घनी अंधेरी छाया तुम्हारे बिस्तर की तरफ बढ़ आयी, वह क्या थी चाची? सदा के लिए तुम्हारे सिर पर कलंक का टीका लगा गया, वह कौन था चाची? शील और शालीनता के प्रतिमें! तुमने क्यों उस धूर्त का नाम नहीं बतला दिया।"

यह इस उपन्यास का 'क्लाइमेक्स' है। यही ट्रेजडी है, जिसमें गौरी का संघर्ष निहित है, जो हार नहीं मानती, परिस्थितियों और दायित्वों से पलायन नहीं करती। नागार्जुन के सभी पात्र की यही तो विशेषता है।

बलचनमा : यह नागार्जुन का द्वितीय सामाजिक उपन्यास है। उपन्यासकार ने इसमें दरभंगा के समीपवर्ती के अंचल की कथा को आधार बनाकर सामंती जमींदारी प्रथा में घिसते हुए ग्रामीण ईमानदार श्रमिक किसानों के प्रतिनिधि पात्र बलचनमा के संपूर्ण चरित्र को प्रस्तुत किया है। यह उपन्यास आत्मकथात्मक शैली में लिखा गया है।

डॉ. बेचन शर्मा 'उग्र' ने प्रस्तुत उपन्यास की श्रेष्ठता को निम्नवत् व्यक्त किया है -"यदि नागार्जुन ने 'बलचनमा' को लिखकर कुछ और न लिखा होता तो भी विश्व के कथाकारों की पंक्ति में आ जाते?"

नागार्जुन ने बलचनमा को विभिन्न परिस्थितियों में रखकर जमींदारों, राजनीतिक

मध्यमवर्गीय युवकों के स्वभाव, राजनीतिक मध्यमवर्गीय युवकों के स्वभाव, संस्कार, स्वार्थ, संघर्ष और त्याग के विभिन्न चित्र प्रस्तुत किए हैं। तथाकथित स्वराजी नेताओं के खानपान, रहन-सहन, व्यवहार-बर्ताव का वर्णन 'बलचनमा' में व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर रेखांकित किया गया है।

बाबा बटेसरनाथ : यह नागार्जुन का चतुर्थ उपन्यास है, इसमें मिथिला के रूपहली गाँव को आधार बनाकर गाँव के उत्थान-पतन की कहानी और विभिन्न परिस्थितियों का वर्णन एक पुराने वटवृक्ष के माध्यम से किया गया है। यह प्रवृत्ति नए शिल्प को जन्म देती है। बाबा बटेसरनाथ उपन्यास में वीरभद्र शिक्षित युवक पात्र है, जो ग्राम की नई पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करता है। वह राजनैतिक आंदोलन में भाग लेकर कई बार जेल भी गया। लेकिन इसके बावजूद इसका कथानायक कोई मानव शरीरधारी नहीं, बल्कि एक बूढ़ा बरगद है जिसके प्रति गाँव के लोगों की भावना वैसी ही है जैसी अपने किसी बड़े-बूढे के प्रति होती है और इसीलिए वे लोग उस पेड़ को साधारण 'बरबद' नाम से नहीं बल्कि आदरसूचक 'बाबा बटेसरनाथ' कहकर पुकारते हैं। यही बाबा बटेसरनाथ अपनी कहानी सुनाते-सुनाते पुरे गाँव की कहानी सुना जाते हैं, जिसकी कई पीढ़ियों के इतिहास के वे साक्षी रहे हैं। इस उपन्यास में उपन्यासकार का मूल लक्ष्य समाज को स्वाधीन, शांतिप्रिय और प्रगतिशील बनाना है।

नई पौध : यह उपन्यास व्यंग्यात्मक शैली में लिखा गया सामाजिक उपन्यास है। 'नई पौध' उपन्यास मिथिला अंचल की बस्ती के नए-पुराने संघर्षों को आचंलिक वातावरण में प्रस्तुत करता है। उपन्यास में अनमेल विवाह की समस्याओं, परंपरागत रूढ़ियाँ प्रगतीशील विचारों से टकराकर टूट जाती है और प्रगतिशील विचारों को सफलता प्रदान करने में 'नई पौध' विजयी होता है। प्रस्तुत उपन्यासों में दिगम्बर तथा वाचस्पति मध्य वर्ग के शिक्षित युवक है। सामाजिक और राजनैतिक चेतना फैलाने का श्रेय इन्हीं दो पात्रों को जाता है। नवयुवकों को नवीन चेतना का वाहक बनकर अन्याय, जर्जन रूढ़ियों तथा पुरानी सामाजिक, धार्मिक मान्यताओं का विरोध करना चाहिए। यही संदेश देना 'नई पौध' उपन्यास का उद्देश्य रहा।

वरुण के बेटे : इस उपन्यास में मिथिला की मल्लाही गौडियारी बस्ती के मछुओं के जीवन संघर्ष की कहानी तथा उनकी सामाजिक, आर्थिक परिस्थितियों का स्वाभाविकता एवं सहजता से चित्रण किया गया है। इस कृति में किसी प्रवाहयुक्त कथा का निर्माण नहीं होता है। यहाँ कथानक में बिखराव दिखाई पड़ता है। 'वरुण के बेटे' में खुरखुर मोल, मोहन मांझी, मधुरी आदि

सभी पात्रों ने अपनी क्रिया व्यवहारों के द्वारा मछुआ जीवन के विभिन्न रूपों को पाठकों तक पहुँचाया है। 'वरुण के बेटे' उपन्यासों में लेखक ने अनेक पात्रों को चुना तो ताकि मछुआरा जीवन हम तक पहुँच सके लेकिन फिर भी यथार्थ का चित्रण पूर्ण रूप से नहीं हो सका।

कुंभीपाक : इस उपन्यास में मिथिला अंचल में रहनेवाली उन विवश महिलाओं के जीवन को दिखाया गया है जिन्हें जबरन अपराध की दुनिया में ढकेल दिया गया। प्रस्तुत उपन्यास की पंक्ति-पंक्ति में सामाजिक अत्याचार, शोषण तथा 'बिकौआ प्रथा' का चित्रण किया गया है। इंदिरा, भुवनेश्वरी और चंपा जैसी बालिकाओं का जीवन आदर्शहीन अधेड़ पुरुष वर्ग किस प्रकार से नरक जैसा बना देते हैं। इसका सजीव चित्र प्रस्तुत उपन्यास में दर्शाया गया है। 'कुंभीपाक' उपन्यास के प्रथम संस्करण में ही परिचय में यह लिखा गया है- ".......नरक हैं इक्कीस.......उन्हीं में से एक का नाम 'कुंभीपाक' है। नीचे आँच, जलभर आँच सब और एक मुख, बंद हड्डियाँ....... अंदर चुस्त रहेंगे प्राण।"

इमरतिया : प्रस्तुत उपन्यास में इमरतिया नामक युवा अवधूतिन के माध्यम से उपन्यासकार ने भारतीय समाज में फैली धार्मिक जड़वाद और पाखंडवाद को गहराई से उघाड़ा है। प्रस्तुत उपन्यास का केंद्र है गाँव का एक मठ। उस मठ के द्वारा ही अनपढ़, धर्मभीरू ग्रामीण जनता का शोषण लगातार होता है। वह मठ धनपतियों, स्मगलरों, प्रशासकों, राजनेताओं, औरतों के शौकिनों के लिए स्वर्ग समाज है लेकिन जब इस मठ का असली रूप सामने आता है तब असल में भारतीय समाज में धर्म की आड़ में किस प्रकार से अधार्मिक कामकाज होते हैं उसी का रूप नग्न हो जाता हैं इमरतिया, इसी नरक की देवी है जो दानवों के बीच रहने के बाद भी अपनी तमाम मानवीय संवेदनाओं को बचाए रखने में सफल हुई है। प्रस्तुत उपन्यास का उद्देश्य दुराचारी साधुओं के जाल में फँसी जनता को जागरूक करना है।

पारो : 'पारो' नागार्जुन के मैथिली उपन्यास का हिंदी रूपांतर है। यह हिंदी अनुवाद कुलानंद मिश्र द्वारा किया गया है। इसमें मैथिली समाज की रूढ़िवादी व्यवस्था से पीड़ित पारों के जीवन की कारूणिक कहानी को हम देख सकते हैं। पारो नारी जीवन के उत्पीड़न का मुख्य प्रतीक है। उसकी वेदना फुफेरे भाई बिरजू के माध्यम से व्यक्त हुई है। पारो में पात्रों की संख्या नियमित तथा सीमित है।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि नागार्जुन के उपन्यास साहित्य में उनकी विचारधारा के विभिन्न रूपों को देखा जा सकता है। वे किसानों, मजदूरों और निम्नवर्ग के अन्य लोगों का

समर्थन करते नज़र आते हैं। उसके साथ ही इन वर्गों को अन्याय के प्रतिकार के लिए उकसाते भी रहे हैं।

बोध प्रश्न

- नागार्जुन का पहला उपन्यास कौन सा है?
- बलचनामा उपन्यास में किस प्रांत का उल्लेख है?
- बरगद का वृक्ष नागार्जुन के किस उपन्यास का प्रमुख पात्र है?
- वरुण के बेटे उपन्यास में किनके जीवन को दर्शाया गया है?
- कुलानंद मिश्र ने नागार्जुन के किस उपन्यास का हिंदी अनुवाद किया?

नागार्जुन की कहानियाँ : जनवादी संदर्भ

जिस समय नागार्जुन ने अपनी पहली कहानी 'असमर्थदाता' लिखी। उसी समय प्रेमचंद हिंदी कहानी साहित्य को नई दिशा दे रहे थे। ऐसे समय में नागार्जुन अपनी हिंदी कहानी लेखन यात्रा को बहुत आगे तक नहीं बढ़ा सके। फिर भी उन्होंने पूरी तरह से कहानी लिखने को नहीं छोड़ा। 'नागार्जुन : चुनी हुई रचनाएँ खंड-3' में केवल 6 कहानियाँ मिलती हैं, जो इस प्रकार से है- असमर्थदाता, ताप-हारिणी, विशाखा मृगारमाता, ममता, आसमान में चंदा तेरे, भूख मर गई थी आदि। इसके अलावा उनकी कुछ कहानियों की कथावस्तु को डॉ. तेज सिंह द्वारा लिखित पुस्तक 'नागार्जुन का कथा साहित्य' में देख सकते हैं। ये कहानियाँ हैं- विषमज्वर, जेठा, मनोरंजन टैक्स, कायापलट आदि। नागार्जुन की कहानियों के संबंध में डॉ. तेज सिंह का कहना है कि, 'जनवादी चेतना' संपन्न कथाकार होने के बावजूद वे उपन्यासों की भाँति अपनी कहानियों में सामाजिक विषमताओं और विसंगतियों को अभिव्यक्त देने में पूरी तरफ असफल रहे हैं। विषयवस्तु की दृष्टि से सभी कहानियाँ कमजोर और साधारण स्तर की है। कुछ कहानियाँ सामाजिक समस्याओं का स्पर्श मात्र करके रह जाती है, तो कुछ कोरी भावुकता और आदर्शवादिता से ग्रस्त है। उनमें उन्होंने यथार्थवादी दृष्टिकोण अपनाकर आदर्शवादी दृष्टिकोण अपनाया है। परंतु उनकी भाषा और शैली सरल और बोधगम्य है। व्यंग्य की धार पैनी है। यही उनकी सबसे बड़ी मारक शक्ति है।"

नागार्जुन की कहानियों को पढ़ने के बाद कहा जा सकता है कि अपने जीवन के अनुभवों में से कुछ घटनाएँ और स्थितियाँ चुनकर ही उन्हें कहानी का रूप दे दिया। नागार्जुन की कहानियों में वर्णित जनवादी चेतना का विश्लेषण आप विद्यार्थियों के लिए मैं नीचे प्रस्तुत कर

रही हूँ।

सामाजिक विसंगतियों का चित्रण

कोई भी समाज तब तक स्वच्छ और सुगठित नहीं बन सकता जब तक कि उसमें मानवीय मूल्यों को नहीं अपनाया जाता है। नागार्जुन ने अपनी कहानियों के द्वारा बार-बार इस सत्य को स्थापित किया है। उनके द्वारा लिखित 'तापहारिणी' ऐसी ही कहानी है। जब इस कहानी की नायिका अपराजिता अपने पति के साथ मर्दाना घाट पर नहाने जाती है तब वहाँ मौजूद दूसरे पुरुष बस उसके शरीर को ही देखते रहते हैं। इसका वर्णन करते हुए कथाकार लिखते हैं, "लेकिन उस दिन जब तक अपरा ने घाट नहीं छोड़ा, तब तक वहाँ से कोई विदा नहीं हुआ। मुझे उस समय मैक्सिम गोर्की का वह उपाख्यान याद आया जिसमें सत्ताईस पात्र थे छब्बीस मर्द और एक औरत।"

मानवीय मूल्यों की स्थापना तभी हो सकती है जब मनुष्य, मनुष्य के बीच में मानवता का संबंध होती है। परंतु प्रायः देखा यही जाता है कि एक व्यक्ति, दूसरे व्यक्ति का शोषण करने के लिए हमेशा तैयार रहता है और सामने अगर स्त्री मिल जाए तो सामाजिक विसंगतियाँ अपनी सारी हदें तोड़ देती है। नागार्जुन ने 'भूख मर गई थी' इस कहानी में बूढ़े ससुर ने किस प्रकार से परिवार के भोजन की व्यवस्था के बदले अपनी बहू का अनैतिक मार्ग पर चलना स्वीकार कर लिया। इसका चित्रण इन शब्दों में किया है। स्वयं बूढ़ा उसके बारे में कहता है, "पड़ोसी युवक जमशेदपुर से पंद्रह दिनों की छुट्टी में गाँव आया था। ओवर्सियर है, बीस-पच्चीस हजार तो पीट ही चुका है। हमारी पुत्रवधू और उसमें भाभी-देवर का रिश्ता तो था ही। मगर इस मँहगाई और अकाल ने रिश्ते में गाढ़ा रंग घोल दिया। मैं गूँगा और अपंग बनकर जमाने का करिश्मा देखता रहा और वह बेचारी अपनी इज्जत का सौदा करती रही, चार-चार मुँहों के हवन-कुंड में जैसे-तैसे अनाज की समिधा डालती रही।"

तो इस प्रकार से स्पष्ट हो ही गया कि बिना मानवता के न तो समाज में मानवीय मूल्यों की स्थापना हो सकती है और न समाज स्वच्छ हो सकता है।

आम आदमी का चित्रण

नागार्जुन की कहानियों में वर्णित आम आदमी वह है, जो हर प्रकार के शोषण, दमन और अत्याचार का शिकार है, जो हर प्रकार से उपेक्षित और तिरस्कृत है। इसकी जिंदगी अभावों का पर्याय बन चुकी है। आम आदमी के रूप में वर्णित 'विषमज्वर' कहानी का पात्र दीनानाथ ऐसा

ही व्यक्ति है।

वह किसी भी प्रकार का व्यसन नहीं करता, चाय भी नहीं पीता, बीड़ी नहीं फूँकता। दफ्तर पैदल ही जाता है और उसके दोस्त भी नहीं है। वह पूँजीपतियों के शोषण के जाल में फँसा ऐसा आदमी है जो तीन दिन तक एक-एक घंटा रोज ज्यादा काम करने के बावजूद भी 9 रुपए से अधिक कमा नहीं पाता था।

'आसमान में चंदा तेरे' कहानी का नायक पद्मानंद भी ऐसा ही जीवन जी रहा है। उसे भी कथाकार ने आम आदमी के रूप में वर्णित किया है। वह पढ़ाई के दौरान कवि लीलाधर के संपर्क में आकर कविताएँ लिखने ही नहीं लगा था बल्कि कवि सम्मेलनों में कविता पढ़कर आर्थिक लाभ भी प्राप्त कर चुका था। बी.ए. में जब वह फेल हुआ उसी समय उसका विवाह भी हुआ। लीलाधर उसकी कविताओं का संकलन निकलवाने का प्रयास कर ही रहे थे। कविता संकलन पर कुल खर्च ढाई सौ रुपए होना था। पत्नी के कुछ गहने गिरवी रखकर और नकद रुपए आदि कुल मिलाकर 145 रुपए एकत्रित हुए तो पद्मानंद सौ रुपए प्रेसवाले को देकर 300 प्रतियाँ ले आया था। उसने बहुत सारी प्रतियाँ दोस्तों, आलोचकों को भेज दी। पर उन्होंने इसके बदले उसे पैसा नहीं दिया। फलस्वरूप, प्रेसवालों ने उसकी किताबों को रद्दी में बेच दिया। पद्मानंद अब ऐसी समस्या में फँस जाता है कि जहाँ न तो वह पत्नी के गहनों को वापस ला पाता है और नही अपने सपनों को पूरा कर पाता है। इसी का वर्णन करते हुए कथाकार कहते हैं, "पद्मानंद की नींद उड़ गई। चिंता प्रेसवालों की उतनी नहीं थी, जितनी कांता के गहनों की अब क्या हो?"

पद्मानंद को लगता है कि जैसे वह आदमी नहीं है, कूड़ा करकट का चलता-फिरता ढेर है।

संघर्षमूलक क्रांतिप्रवण चेतना

जनवादी रचनाकार यह बखूबी जानता है कि आज तक किसी को अपना अधिकार न तो हाथ पसारने पर मिला है और न मिलेगा। वह यह भी जानता है कि अधिकार पाने के लिए उसे छीनना पड़ता है। विशाखा मृगारमाता कहानी की नायिका अपने अधिकार की रक्षा के लिए ही ससुर से कहती है, "तात, इतने भर से तो मैं निकलती नहीं। पनघट से पकड़कर लाई गई लौंडी होती, तो डर भी जाती। जीते माता-पिता की कन्याएँ इतनी आसानी से नहीं निकला करती। इसके लिए तुम्हें हमारे मायके के उन पंचों को बुलाना पड़ेगा। वे अगर मुझे अपराधी करार दे तो मैं चली जाऊँगी।"

हमने पहले ही इस बात को पढ़ा है कि नागार्जुन कहानी लेखन के क्षेत्र में बहुत अलग

कुछ नहीं कर सके थे लेकिन जितना उन्होंने किया वह काबिलेतारीफ है।

बोध प्रश्न

- 'नागार्जुन : चुनी हुई रचनाएँ खंड 3' इस पुस्तक में कितनी कहानियाँ मिलती है?
- 'अपराजिता' नागार्जुन द्वारा लिखित किस कहानी की नायिका है?
- 'विषमज्वर' कहानी का प्रमुख पात्र कौन है?
- नागार्जुन द्वारा लिखित विशाखा मृगारमाता में कौन-सी चेतना है?

नागार्जुन के काव्य में संवेदना रूप

नागार्जुन का काव्य संसार विविधता से पूर्ण होने के साथ ही साथ विशाल भी है। इसमें प्रकृति, मनुष्य, पशु, राजनैतिक-सामाजिक जीवन, जीवन के मधुर एवं कोमल पक्ष व्यंग्य की तीखी धार, दैनंदिन जीवन की गतिविधियाँ सब शामिल है। आगे आप विद्यार्थियों के लिए मैं इसका विश्लेषणात्मक रूप प्रस्तुत कर रही हूँ-

प्रकृति संसार

कहा जाता है कि कोई भी व्यक्ति एक बच्चे के रूप में सबसे पहला चित्र प्रकृति का ही बनाता है। दूसरों का तो पता नहीं पर नागार्जुन के संबंध में तो यह बात बिल्कुल ठीक बैठती है। इस संदर्भ में, नागार्जुन की पहली कविता संग्रह 'युगधारा' में संकलित 'रजनीगंधा' की पंक्तियों को देखना उचित होगा-

> "तुम खिलो रात की रानी
> हो म्लान भले यह जीवन और जवानी
> तुम खिलो रात की रानी
> प्रहरी- परिवेष्टित इस बंदीशाला में
> मैं सड़ूँ सही, पर ताजी रहे कहानी
> तुम खिलो रात की रानी"

इन पंक्तियों में केवल रात की रानी का वर्णन करना एकमात्र लक्ष्य नहीं रहा। इसके विपरीत इसमें कवि ने बंदीशाला में बंदी उन व्यक्तियों की भावनाओं को अभिव्यक्त किया है जो अच्छे दिनों की आशा को रात रानी की खुशबू के सहारे ही जीवित रखते हैं।

प्रकृति, मनुष्य और पशु का आपस में बहुत गहरा संबध है। अक्सर प्रकृति वर्णन के अंतर्गत पेड़, पौधों, पहाड़ समुद्र आदि का वर्णन तो मिलता है लेकिन पशु सौंदर्य का वर्णन बहुत

कम देखने को मिलता है। परंतु नागार्जुन की कविता में जानवर भी संवेदना जगाते है और नागार्जुन ने बहुत मार्मिकता से पशु जीवन को अपनी कविताओं में अंकित किया है। 'अकाल और उसके बाद', 'नेवला' ये कविताएँ तो है ही लेकिन 'पैने दाँतों वाली' कविता को मैं प्रमुख रूप से आप विद्यार्थियों के सामने रखना चाहूँगी।

'धूप में पसरकर लेटी है
मोटी-तगड़ी, अधेड़, मादा सुअर......
जमना-किनारे
मखमली दूबों पर
पूस की गुनगुनी धूप में
पसरकर लेटी है
यह भी तो मादरे हिंद की बेटी है'

नागार्जुन ने प्रकृति के निम्न से निम्नतर श्रेणी को भी कविता के साथ जोड़ा है। मादा सुअर को 'मादरे हिंद की बेटी' कहकर उन्होंने देश, पशु और प्रकृति को एक साथ जोड़कर यही समझाना चाहा है कि किसी भी देश में पशु संपदा को भी संरक्षण पाने का पूरा अधिकार है।

व्यंग्य की धार

नागार्जुन के साथ एक विशेष बात यह है कि वह व्यंग्य के भी बेजोड़ कवि है। संभवतः कबीर के बाद व्यंग्य का इतना बड़ा कवि कोई दूसरा नहीं हुआ है। नागार्जुन जनता के कवि हैं। जनता के प्रति उनकी संवेदना का स्वर सदा मुखरित हुआ है। वे केवल जनता के बीच नहीं गए बल्कि उन्होंने जनता के कष्ट को अपना ही कष्ट समझकर सन् 1974 में 'अन्न पच्चीसी के दोहे' नामक कविता में लिखा-

'कबिरा खड़ा बाजार में, लिए लुकाठी हाथ
बंदा क्या घबराएगा, जनता देगी साथ
छीन सके तो छीन ले, लूट सके तो लूट
मिल सकती कैसे भला, अन्न चोर को छूट'

भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान जनता को रामराज्य का सपना दिखाया गया था। आजादी तो मिल गई परंतु रामराज्य का सपना, सपना ही रह गया। नागार्जुन ने नेहरू पर जिस चुटीले अंदाज में कविता लिखी वैसा चुटीला व्यंग्य बहुत कम दिखाई पड़ता है। ब्रिटेन की

महारानी के भारत आगमन को नागार्जुन ने देश का अपमान समझा और लिखा-

“आओ रानी हम ढोएँगे पालकी
यही हुई है राय जवाहरलाल की
रफू करेंगे फटे-पुराने जाल की
यही हुई है राय जवाहरलाल की”

सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक विषमताओं पर प्रहार

पश्चिम बंगाल की राजनीति में 70 के दशक में हो रही सरकारी तांडव लीला का वर्णन करते हुए सन् 1966 में ‘शासन की बंदूक’ कविता को लिखा। तत्कालीन राजनीति का मुखौटा उघाड़ते हुए कवि ने लिखा-

‘सत्य स्वयं घायल हुआ, गई अहिंसा चूक
जहाँ-तहाँ दगने लगी, शासन की बंदूक
जली ठूँठ पर बैठकर गई कोकिला कूक
बाल न बाँका कर सकी शासन की बंदूक।’

राष्ट्रीय इमरजेंसी के दौर में इंदिरा गांधी ने आपातकाल की घोषणा की तब नागार्जुन इसका घोर विरोध करते हुए लिखा-

‘इंदु जी, इंदु जी
क्या हुआ आपको?
बेटे को तार दिया
बोर दिय बाप को।’

और फिर व्यंग्य की धार चलाते हुए कहा-

‘देवी, अब तो कटें बंधन पाप के
लाइए, मैं चरण चूमूँ आपके।’

प्रगतिशील कवि नागार्जुन ने धार्मिक पाखंड, पुरानी मान्यताओं, दकियानूसी विचारों पर ‘प्यासी पथराई आँखें’ काव्य संकलन की कविता ‘काली माई’ की इन पंक्तियों के द्वारा प्रहार किया है-

‘कितना खून पिया है, जाती नहीं खुमारी
सुर्ख और लंबी है मइया जीभ तुम्हारी।’

सन् 1975 में रचित कविता 'थकित-चकित-भ्रमित भग्न मन' कविता में बाबा नागार्जुन ने सदियों से चली आ रही मठाधीशों की जड़ता का मज़ाक उड़ाते हुए कहा है-

'धर्म भीरु पारंपरिक जन-समुदायों की
बूँद-बूँद संचित श्रद्धा के सौ-सौ भाँड़
जमा है, जमा होते रहेंगे
मठों के अंदर.......
तो क्या मुझे भी बुढ़ापे में पुष्टई के लिए
वापस नहीं जाना है किसी मठ के अंदर।'

नागार्जुन आर्थिक समानता पर आधारित समाज को देखना चाहते थे लेकिन उन्होंने भ्रष्टाचार में डूबे नेताओं को जनता के सपनों को जब कुचलते देखा तब उन्होंने यही लिखा-

'नया तरीका अपनाया है राधे ने इस साल
बैलों वाले पोस्टर साटे, चमक उठी दीवाल
नीचे से ऊपर तक समझ गया सब हाल
सरकारी गल्ला चुपके से भेज रहा नेपाल
अंदर टँगे पड़े गांधी तिलक- जवाहरलाल'

स्पष्ट है कि नागार्जुन की कविताओं में संघर्ष और विद्रोह है। परंतु जनता की विजय भावना के प्रति कवि की दृढ़ आस्था भी है। जनशक्ति के प्रति उनका अगाध विश्वास है। स्वयं कवि नागार्जुन ने सन् 1965 में अपनी कवि कर्तव्य के बारे में लिखा है-

'जनता मुझसे पूछ रही है क्या बतलाऊँ
जनकवि हूँ, मैं साफ कहूँगा, क्यो हकलाऊँ'

बोध प्रश्न

- 'रजनीगंधा' किस कविता संग्रह में संकलित है?
- 'मादरे हिंद की बेटी' कवि ने किसे कहा है?
- सन् 1966 में कवि नागार्जुन ने किस कविता को लिखा?
- काली माई कविता किस कविता संकलन में संकलित है?

17.4 पाठ सार

नागार्जुन के व्यक्तित्व एवं कृतित्व के अध्ययन से स्पष्ट है की नागार्जुन जनवादी साहित्यकार रहे और उनका स्वयं का जीवन भी बहुत साधारण रहा। उन्होंने लोक कल्याण एवं साहित्य सेवा में अपने जीवन को समर्पित किया। मझोले कद के श्यामवर्ण, फक्कड़ प्रवृत्ति के इस साहित्यकार ने वेशभूषा, जीवनशैली, खानपान से अधिक महत्व देश, देशवासी और ज्ञान को दिया। वे कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य भी रहे, लेकिन उनका यह संबंध कभी अंधभक्ति नहीं बन सका। चीनी आक्रमण के बाद उन्होंने इस पार्टी के साथ संबंध नहीं रखा और मूल रूप में मजदूर, किसान, पतित, दलित वर्ग के साहित्यकार बनकर उभरे। उन्होंने अपने उपन्यासों के द्वारा बिकौआ प्रथा, धार्मिक अंधविश्वास, राजनैतिक भ्रष्टाचार आदि पर कठोर व्यंग्य किया है। अपनी कहानियों के द्वारा भी उन्होंने आम आदमी का चित्रण, सामाजिक विसंगतियों का चित्रण, संघर्षमूलक क्रांतिप्रवण चेतना का चित्रण किया।

नागार्जुन का काव्य संसार विविधता से पूर्ण होने के साथ ही साथ विशाल भी है। नागार्जुन की कविताओं में राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक असमानता के विरोध में व्यंग्य तो दिखाई देता ही है, लेकिन इसके साथ ही साथ नागार्जुन ने अपनी कविताओं के माध्यम से जिस प्रकार से प्रकृति और पशु के सौंदर्य को चित्रित किया है। वह नागार्जुन की अपनी अलग विशेषता है। अकाल और उसके बाद, नेवला, रजनीगंधा ऐसी ही कविताएँ हैं। इन सब में उत्कृष्ट कविता है 'पैने दाँतोंवाली' जिसमें एक मादा सुअर के सौंदर्य को चित्रित किया गया है। कवि ने उसे 'मादरे हिंद की बेटी' कहकर बुलाया है। ऐसा करके उन्होंने एक देश में मनुष्यों के साथ-साथ प्रकृति और पशुओं को भी सुरक्षा मिलनी चाहिए, इसे सुनिश्चित करने का ही प्रयास किया है।

17.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. नागार्जुन का जीवन एक साधारण व्यक्ति की असाधारण उपलब्धियों की कहानी है।
2. नागार्जुन के व्यक्तित्व के निर्माण में घुमक्कड़ी और फक्कड़पन की बड़ी भूमिका रही।
3. नागार्जुन ने गद्य और पद्य के विविध विधाओं में आम जन-जीवन के संघर्ष को व्यक्त किया है।
4. नागार्जुन ने अपने समस्त साहित्य में जन संघर्ष को मुखर अभिव्यक्ति प्रदान की है।

17.6 शब्द संपदा

1. अंधभक्ति = बिना सोचे-समझे किसी का अनुकरण करना
2. अन्योन्याश्रित = एक दूसरे पर निर्भर
3. अभिन्न = हमेशा साथ रहनेवाला
4. अभिव्यक्ति = अपनी बात को व्यक्त करना
5. अवलोकन = देखना
6. जनशक्ति = जनता की शक्ति
7. जीवनपर्यंत = संपूर्ण जीवन
8. दकियानूसी विचार = पुराने विचार
9. प्रेमचंदोत्तर = प्रेमचंद के बाद
10. बिकौआ प्रथा = मिथिला की प्रथा जिसमें विवाह् के नाम पर स्त्रियों को बेचा और खरीदा जाता था।
11. भ्रष्टाचार = बेईमानी
12. मादा = स्त्री
13. लिपिबद्ध = लिखना
14. संकलित = चुनकर या छाँटकर इकट्ठा किया हुआ
15. सर्वहारा = निर्धन
16. सामयिक विसंगतियों = समय की बुराइयों

17.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. नागार्जुन के जन्म, शिक्षा, साहित्य यात्रा तथा गृहस्थ यात्रा पर प्रकाश डालिए।
2. नागार्जुन पर उनके समकालीन परिवेश का क्या प्रभाव पड़ा। समझाइए।
3. नागार्जुन के उपन्यासों का संक्षेप में परिचय दीजिए।
4. नागार्जुन की कहानियों का संक्षेप में परिचय दीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. रतिनाथ की चाची उपन्यास की जानकारी संक्षेप में दीजिए।
2. नागार्जुन के बाह्य व्यक्तित्व पर प्रकाश डालिए।
3. नागार्जुन के आंतरिक व्यक्तित्व पर प्रकाश डालिए।
4. नागार्जुन के जीवन दर्शन पर प्रकाश डालिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. नागार्जुन का जन्म कहाँ हुआ था? ( )

    (अ) दिल्ली (आ) बिहार (इ) मध्य प्रदेश

2. नागार्जुन मैथिली भाषा में किस नाम से लिखा करते थे? ( )

    (अ) यात्री (आ) शास्त्री (इ) विद्यार्थी

3. मधुबनी शैली कहाँ की छपाई है। ( )

    (अ) दक्षिणी बिहार (आ) उत्तरी बिहार (इ) पूर्वी बिहार

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. नागार्जुन का असली नाम .... है।
2. नागार्जुन का विवाह .... के साथ हुआ।
3. नागार्जुन की माता का नाम.......... था।
4. नागार्जुन के .... धर्म को अपनाया।

III. सुमेल कीजिए -

1. बलचनमा	(अ) मैथिली की प्रथम रचना
2. मादरे हिंद की बेटी	(आ) कहानी
3. विषमज्वर	(इ) सुअर
4. लहरिया सराय	(ई) उपन्यास

17.8 पठनीय पुस्तकें

1. नागार्जुन के उपन्यासों में व्यंग्य सृष्टि : सुभाष शर्मा

2. आधुनिक हिंदी कविता - युगीन संदर्भ : अरुण होता

3. हिंदी साहित्य का इतिहास : रामचंद्र शुक्ल

4. हिंदी साहित्य का इतिहास : सं. नगेंद्र

इकाई 18 : 'गुलाबी चूड़ियाँ' और 'शासन की बंदूक' : नागार्जुन

रूपरेखा

18.1 प्रस्तावना
18.2 उद्देश्य
18.3 मूल पाठ : 'गुलाबी चूड़ियाँ' और 'शासन की बंदूक' : नागार्जुन
18.3.1 अध्येय कविता का सामान्य परिचय
18.3.2 अध्येय कविता
18.3.3 कविता की विस्तृत व्याख्या
18.3.4 समीक्षात्मक अध्ययन
18.4 पाठ सार
18.5 पाठ की उपलब्धियाँ
18.6 शब्द संपदा
18.7 परीक्षार्थ प्रश्न
18.9 पठनीय पुस्तकें

18.1 प्रस्तावना

साहित्यकार सदैव समाज से जुड़कर साहित्य का सृजन करता है। कविवर नागार्जुन जन चेतना के कवि हैं। प्रगतिशील चिंतन के कवि और कथाकार बाबा नागार्जुन के साहित्य में उनके यथार्थवादी चिंतन को देखा जा सकता है। आवश्यकता के अनुसार उनकी कविताओं में कई बार व्यंग्य का कटु रूप दिखाई पड़ता है। बड़ी ही सरल और सहज भाषा में कवि अपनी बात कह देते हैं। 'गुलाबी चूड़ियाँ' कविता में नागार्जुन ने संवेदनशील भाषा का प्रयोग करते हुए एक पिता और पुत्री के बीच स्नेहिल संबंधों का चित्रण किया है। ड्राइवर मेहनत और लगन से कार्य करते हुए अपनी जीविका चलाता है। वह अपने परिवार से दूर है। उसकी एक सात साल की पुत्री है जिसकी चूड़ियाँ उसने बस में आगे की ओर लटका रखी हैं। एक पिता की संवेदना इस कविता में स्पष्ट दिखाई देती है। इसी प्रकार दूसरी कविता 'शासन की बंदूक' एक ऐसी कविता है जिसमें राजनैतिक व्यंग्य दिखाई देता है। जब शासन तंत्र से जनता दुखी होती है तब कई बार वह अपनी आवाज बुलंद करती है किंतु शासन व्यवस्था को साधारण जनता की भावनाओं तथा

उनके दर्द से कोई मतलब नहीं होता। मानव मन का मनोविश्लेषण इन कविताओं का प्राण है।

18.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप -

- नागार्जुन की कविता 'गुलाबी चूड़ियाँ' की व्याख्या कर सकेंगे।
- नागार्जुन की कविता 'शासन की बंदूक' की व्याख्या कर सकेंगे।
- नागार्जुन के काव्य की अंतर्वस्तु से परिचित हो सकेंगे।
- नागार्जुन के भाषिक सौंदर्य को समझ सकेंगे।
- नागार्जुन की कविताओं में निहित जनवादी एवं प्रगतिशील तत्वों को जान और समझ सकेंगे।

18.3 मूल पाठ : 'गुलाबी चूड़ियाँ' और 'शासन की बंदूक' : नागार्जुन

18.3.1 अध्येय कविता का सामान्य परिचय

जनकवि बाबा नागार्जुन की कविताओं की विशेषता यह है कि उनकी कविताएँ स्थान विशेष की ना होकर पूरे हिंदी प्रांत और देश की कविताएँ हैं। मूलतः मैथिली भाषी कवि बाबा नागार्जुन को कविताओं पर साहित्य अकादमी पुरस्कार मिल चुका है। उनके द्वारा लिखी गई अतिसंवेदनशील कविता 'गुलाबी चूड़ियाँ' एक ऐसे पिता की कविता है जो अपनी रोजी-रोटी कमाने के लिए प्राइवेट बस चलाता है और अपने परिवार से दूर रहता है। वह अपनी सात वर्ष की बेटी को कभी भूलता नहीं और बेटी ने भी अपने पिता को अपनी चार गुलाबी चूड़ियाँ स्मृति के फलस्वरुप दे दी हैं जिन्हें वह बस में टांगे रहता है। दूसरी कविता 'शासन की बंदूक' में शासन की दुरव्यवस्थाओं का चित्रण किया गया है। शासन व्यवस्था को जनता की भावनाओं से कभी कोई मतलब नहीं रहता। वह संवेदनहीन होती जाती है और अपनी मनमानी करने में हिटलर को भी पीछे छोड़ देती है। धीरे-धीरे ऐसी स्थिति आती है कि जनता गूंगी और बहरी होती जाती है और शासन की बंदूक मानो धन्य हो जाती है। समय बदलने के साथ-साथ सत्य और अहिंसा जो गांधीजी के एकादश व्रतों में महत्वपूर्ण स्थान रखते थे, अब धीरे-धीरे समय के साथ इनकी परिभाषा बदल रही है। अब लोगों को मुंह खोलने की इजाजत नहीं है किंतु सत्य कहने वाले अपनी बात निडर होकर कह देते हैं तथा शासन की बंदूक उनका कुछ भी नहीं बिगाड़ पाती क्योंकि चारों ओर जो दुरव्यवस्था फैली होती है तथा डर का माहौल बन गया होता है उसे निडरतापूर्वक कह देना बड़ी बात होती है। शासन कितना भी अराजक हो जाए किंतु जनता का

कभी कोई कुछ नहीं बिगाड़ पाता यही लोकतंत्र की सच्चाई है। ‘शासन की बंदूक’ कविता ऐसी ही राजनैतिक सच्चाई को पाठकों के समक्ष लाती है और विषम परिस्थितियों से उनका बोध कराती है।

18.3.2 अध्येय कविता : ‘गुलाबी चूड़ियाँ’ और ‘शासन की बँदूक’

गुलाबी चूड़ियाँ

प्राइवेट बस का ड्राइवर है तो क्या हुआ,
सात साल की बच्ची का पिता तो है!
सामने गियर से उपर
हुक से लटका रक्खी हैं
काँच की चार चूड़ियाँ गुलाबी
बस की रफ़्तार के मुताबिक
हिलती रहती हैं…
झुककर मैंने पूछ लिया
खा गया मानो झटका
अधेड़ उम्र का मुच्छड़ रोबीला चेहरा
आहिस्ते से बोला: हाँ सा’ब
लाख कहता हूँ नहीं मानती मुनिया
टाँगे हुए है कई दिनों से
अपनी अमानत
यहाँ अब्बा की नज़रों के सामने
मैं भी सोचता हूँ
क्या बिगाड़ती हैं चूड़ियाँ
किस ज़ुर्म पे हटा दूँ इनको यहाँ से?
और ड्राइवर ने एक नज़र मुझे देखा
और मैंने एक नज़र उसे देखा
छलक रहा था दूधिया वात्सल्य बड़ी-बड़ी आँखों में
तरलता हावी थी सीधे-साधे प्रश्न पर

और अब वे निगाहें फिर से हो गईं सड़क की ओर
और मैंने झुककर कहा -
हाँ भाई, मैं भी पिता हूँ
वो तो बस यूँ ही पूछ लिया आपसे
वरना किसे नहीं भाँएगी?
नन्हीं कलाइयों की गुलाबी चूड़ियाँ!

शासन की बँदूक

खड़ी हो गई चाँपकर कंकालों की हूक
नभ में विपुल विराट-सी शासन की बंदूक
उस हिटलरी गुमान पर सभी रहें है थूक
जिसमें कानी हो गई शासन की बंदूक
बढ़ी बधिरता दस गुनी, बने विनोबा मूक
धन्य-धन्य वह, धन्य वह, शासन की बंदूक
सत्य स्वयं घायल हुआ, गई अहिंसा चूक
जहाँ-तहाँ दगने लगी शासन की बंदूक
जली ठूँठ पर बैठकर गई कोकिला कूक
बाल न बाँका कर सकी शासन की बंदूक

> **निर्देश** : 1. इन कविताओं का सस्वर वाचन कीजिए।
> 2. इन कविताओं का मौन वाचन कीजिए।

18.3.3 कविता की विस्तृत व्याख्या

गुलाबी चूड़ियाँ

प्राइवेट बस का ड्राइवर है तो क्या हुआ,
सात साल की बच्ची का पिता तो है!
सामने गियर से उपर
हुक से लटका रक्खी हैं
काँच की चार चूड़ियाँ गुलाबी
बस की रफ़्तार के मुताबिक

हिलती रहती हैं...
झुककर मैंने पूछ लिया
खा गया मानो झटका
अधेड़ उम्र का मुच्छड़ रोबीला चेहरा
आहिस्ते से बोला: हाँ सा'ब
लाख कहता हूँ नहीं मानती मुनिया
टाँगे हुए है कई दिनों से
अपनी अमानत
यहाँ अब्बा की नज़रों के सामने
मैं भी सोचता हूँ
क्या बिगाड़ती हैं चूड़ियाँ
किस ज़ुर्म पे हटा दूँ इनको यहाँ से?
और ड्राइवर ने एक नज़र मुझे देखा
और मैंने एक नज़र उसे देखा
छलक रहा था दूधिया वात्सल्य बड़ी-बड़ी आँखों में
तरलता हावी थी सीधे-साधे प्रश्न पर
और अब वे निगाहें फिर से हो गईं सड़क की ओर
और मैंने झुककर कहा -
हाँ भाई, मैं भी पिता हूँ
वो तो बस यूँ ही पूछ लिया आपसे
वरना किसे नहीं भाँएगी?
नन्हीं कलाइयों की गुलाबी चूड़ियाँ!

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियाँ प्रगतिशील कवि एवं कथाकार बाबा नागार्जुन द्वारा रचित कविता 'गुलाबी चूड़ियाँ' से उद्धृत हैं। यह कविता सन 1961 में लिखी गई। बाबा अपनी कविताओं में यथार्थ का चित्रण खुले रूप में करते हैं और हमेशा साधारण मनुष्य की बात करते हैं। बड़ी ही सरल और सहज भाषा में बाबा अपनी बात अपनी बात कह देते हैं।

प्रसंग : वास्तव में यह कविता दो चरित्रों के बीच भावनात्मक संवाद के रूप में हमारे सामने

आती है। इस कविता में कवि ने बच्ची के प्रति स्नेह के माध्यम से एक साधारण मनुष्य के जीवन में स्नेह के महत्व को दर्शाया है। बस में लटकी हुई गुलाबी चूड़ियाँ उस बस के ड्राइवर का अपनी बच्ची के प्रति स्नेह और प्रेम की सूचक हैं।

व्याख्या : कविता का आरंभ सात साल की बालिका के पिता से होता है जो एक बस के ड्राइवर हैं। कवि कहते हैं कि वह यदि प्राइवेट बस का ड्राइवर है तो इसमें क्या खेद की बात है? वह अपनी लगन, मेहनत और ईमानदारी से अपनी जीविका चला रहा है। ड्राइवर होने के साथ-साथ वह एक 7 साल की बच्ची का पिता भी है। कवि यहाँ पर यह कहना चाहते हैं कि बस ड्राइवर भी आखिर इंसान ही होते हैं। कवि आम जन की मानवीय संवेदना को अपनी इस कविता में स्थान देते हैं। ड्राइवर ने बस में आगे शीशे के पास गियर के ठीक ऊपर कांच की चार गुलाबी चूड़ियाँ लगा रखी हैं और जब बस चलती है तो उसकी गति से वह चूड़ियाँ हिलती रहती है और ड्राइवर को अपनी बच्ची की याद दिलाती रहती हैं। कवि कहते हैं कि जब उन्होंने थोड़ा झुक कर उससे उन चूड़ियों के बारे में पूछा तो वह ड्राइवर जो शायद किसी की याद में खोया हुआ था अचानक ही चौक जाता है। उसके चेहरे पर एक तेज झलक रहा था। वह बड़े ही धीमे स्वरों में कहता है कि हाँ साहब यह नन्ही कलाइयों की चूड़ियाँ मेरी बेटी की हैं। मैं बार-बार अपनी बेटी से इन्हें उतारने को कहता हूँ किंतु बेटी इन चूड़ियों को अपनी अमानत कहते हुए यहीं लटकाए हुए है।

कवि बड़ी ही संवेदनशील भाषा में यह व्यक्त करते हैं कि संतान का स्नेह व्यक्ति के कठोर मन पर भी विजय पा लेता है। कवि नन्ही बच्ची की जिद के आगे पिता की बेबसी को भी दर्शाते हैं हालाँकि यह बेबसी सकारात्मक है क्योंकि वह ड्राइवर उन चूड़ियों को नहीं हटाना चाहता। वह अपनी बच्ची के मन को किसी प्रकार की ठेस नहीं पहुंचाना चाहता। वह व्यक्ति आगे कहता है कि मैं भी सोचता हूँ कि बच्ची की जिद है तो चूड़ियों को टंगा रहने दो क्योंकि वह चूड़ियाँ कुछ बिगाड़ती तो है नहीं और न ही उनसे किसी प्रकार की परेशानी होती है, तब उन चूड़ियों का क्या गुनाह है कि उन्हें वहाँ से उन्हें वहाँ से हटा दिया जाए। वह कवि को देखता है और कवि भी ड्राइवर को देखते हैं तो ऐसा लगता है कि यह संवाद विशेष बन जाता है। ड्राइवर की आँखों में उसकी सात साल की बच्ची की यादें हैं और उसके प्रति स्नेह भाव है जो कवि को स्पष्ट दिखाई दे जाता है। ड्राइवर सीधे ढंग से कवि के प्रश्नों का उत्तर देता है और उसके पश्चात उसकी आंखें दोबारा सड़क की ओर जाती हैं। कवि का हृदय भी पिघल जाता है और वह कहते हैं कि हाँ भाई मैं भी एक पिता हूं। मैंने तो बस ऐसे ही चूड़ियों के बारे में तुमसे पूछ लिया था, वरना नन्ही

कलाइयों की छोटी-छोटी चूड़ियों को कौन पसंद नहीं करता? यह सबके मन को भाती हैं।

विशेष

- सहज खड़ी बोली एवं प्रवाह युक्त भाषा का प्रयोग।
- वात्सल्य प्रेम की रसधार का स्पष्ट चित्रण।
- सामान्य और साधारण मनुष्य के जीवन में प्रेम और स्नेह के महत्व को कवि ने दर्शाया है।
- अनुप्रास अलंकार।
- अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग।

बोध प्रश्न

- सात साल की बच्ची का पिता कौन है?
- हुक से क्या लटका हुआ है?
- छोटी मुनिया कौन है?
- छोटी मुनिया की अमानत क्या है?
- ड्राइवर की आंखों से क्या छलक रहा था?
- नागार्जुन कैसे कवि हैं?
- नागार्जुन मैथिली में किस नाम से लिखते थे?

शासन की बँदूक

खड़ी हो गई चाँपकर कंकालों की हूक
नभ में विपुल विराट-सी शासन की बंदूक
उस हिटलरी गुमान पर सभी रहें है थूक
जिसमें कानी हो गई शासन की बंदूक
बढ़ी बधिरता दस गुनी, बने विनोबा मूक
धन्य-धन्य वह, धन्य वह, शासन की बंदूक
सत्य स्वयं घायल हुआ, गई अहिंसा चूक
जहाँ-तहाँ दगने लगी शासन की बंदूक
जली ठूँठ पर बैठकर गई कोकिला कूक
बाल न बाँका कर सकी शासन की बंदूक

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियाँ कविवर नागार्जुन की प्रसिद्ध कविता 'शासन की बंदूक' से ली गई है।

नागार्जुन मूलतः मैथिली भाषी कवि रहे हैं और बाद में उन्होंने हिंदी में गद्य और पद्य साहित्य का सृजन किया। उनकी अनेक रचनाएँ हैं जिनमें मूलतः प्रगतिशील विचारों को देखा जा सकता है।

प्रसंग : नागार्जुन ने इस कविता में सामान्य जनता के दुख-दर्द और तकलीफों को प्रतीकात्मक एवं लाक्षणिक भाषा के सहारे व्यक्त करने का प्रयास किया है। जब शासन अंधा हो जाता है तो उसे जनता के दुख-दर्द समझ नहीं आते हैं। हर तरफ अत्याचार और राजनैतिक पार्टियों की मनमानी होती रहती है। जनता उसे पसंद नहीं करती, उसकी भर्त्सना भी करती है किंतु उस व्यवस्था को बदल नहीं पाती। कई बार ऐसा होता है कि जिस राजनीति में सत्य और अहिंसा को विशेष स्थान मिलना चाहिए वह नहीं मिल पाता और शासन का अत्याचार बढ़ता जाता है; पर कभी न कभी ऐसा अवश्य होता है कि सच कहने वाले अपनी बात कह देते हैं और शासन की बंदूक ऐसे लोगों का कुछ भी नहीं बिगाड़ पाती।

व्याख्या : कवि कहते हैं कि नभ में बहुत ही अधिक मात्रा में विराट रूप में शासन की बंदूक ऐसी जनता की हूक को दबाकर खड़ी हो गई है जो कंकाल की तरह दिखाई देती है। जब शासन तंत्र हिटलरी हो जाता है तब उसकी बंदूक कानी हो जाती है अर्थात वह अच्छाई और बुराई में अंतर नहीं कर पाती और ऐसी स्थिति में आमजन ऐसे शासन को हिकारत भरी दृष्टि से देखते हैं और ऐसे शासन से घृणा करते हैं।

वास्तव में कवि ने इंदिरा गांधी की शासन व्यवस्था पर कटाक्ष किया है और इस शासन व्यवस्था को संवेदनहीन बताते हुए उन्हें हिटलर की उपमा दी है। शासन तंत्र के कुचक्र के कारण आम जनता मानो अंधी और बहरी हो गई है। कवि उपमा देते हैं कि यह जनता इतनी त्रस्त है कि विनोबा भावे भी मूक हो गए हैं। सत्य घायल हो गया है और अहिंसा चूक गई है, यही कारण है कि शासन की बंदूक हर जगह दगने लगी है। अब तो शासन व्यवस्था बहरे और अंधे की तरह कार्य कर रही है। उसे गरीब जनता की आवाज तथा पीड़ा नहीं दिखाई और सुनाई देती। अच्छे और बड़े लोग गूँगे हो गए हैं। कवि ऐसी शासन व्यवस्था पर तंज कसते हैं और कहते हैं ऐसी शासन व्यवस्था धन्य है जहाँ सच बोलने वालों को मारा जाता है, उनकी आवाज को जबरदस्ती दबा दिया जाता है। हर तरफ दुर व्यवस्था फैली हुई है, डर का माहौल बना हुआ है, गोलियाँ चल रही है। कवि कविता की अंतिम पंक्तियों में सकारात्मक पहलू जोड़ देते हैं और कहते हैं कि भले ही पूरे देश में अराजकता है और त्रासदी फैली हुई है फिर भी देश की स्वतंत्रता और जनता

का कोई कुछ भी नहीं बिगाड़ सकता, भले ही शासन की बंदूक जितना भी प्रयत्न करे, वह यहाँ के लोगों का बाल भी बाँका नहीं कर सकती। ऐसी परिस्थितियों को व्यक्त करने के लिए कवि ने जले हुए ठूँठ और उस पर बैठकर कूकने वाली कोकिला अर्थात कोयल का उद्धरण लिया है।

विशेष

- मुहावरों का प्रयोग।
- मानव मन का मनोविश्लेषणात्मक चित्रण।
- व्यंग्यात्मक एवं लाक्षणिक भाषा का प्रयोग।
- उपमा अलंकार।
- प्रतीक शब्दों का प्रयोग।

बोध प्रश्न

- शासन की बंदूक कैसी है?
- कोकिला कहाँ बैठ कर कूकती है?
- घायल कौन हुआ?
- मूक कौन हो गया?
- धन्य कौन है?

18.3.4 समीक्षात्मक अध्ययन

जब अनुभव को कविता के रूप में लिखा जाता है तब ऐसी कविताएँ जीवन से जुड़कर एक अलग सौंदर्य की दृष्टि करती हैं। बाबा नागार्जुन ऐसे ही रचनाकार हैं। कवि बचपन में अपने विद्यालय में ट्रक ड्राइवर के बारे में सुना करते थे और बड़े होकर जब उन्होंने लेखन का कार्य शुरू किया तब उन्होंने अपनी पुरानी बातों को याद किया और उन्हीं यादों में लौटते हुए उन्होंने ट्रक ड्राइवर की संवेदना को 'गुलाबी चूड़ियाँ' कविता में व्यक्त किया। यह ट्रक ड्राइवर अपने परिवार से दूर कहीं प्राइवेट ट्रक चलाता है और अपने ट्रक में अपनी बेटी की गुलाबी चूड़ियाँ टांगे रहता है जो हरदम उसे यह अहसास कराती हैं कि उसका परिवार उसके साथ है। डॉ.त्रिवेणी झा ने अपनी पुस्तक 'नागार्जुन के काव्य में जीवन मूल्य' में इस कविता की चर्चा करते हुए लिखा है कि -

> "विषय सामग्री को कविता के हित के लिए उपयोग करना और कविता को जीना- किस प्रकार दो अलग-अलग बातें हैं, इसका पता 'गुलाबी चूड़ियाँ' नामक कविता

से भी लगता है। नागार्जुन किस प्रकार अपने पारिवारिक संबंधों के सौंदर्य संसार को विराटतर करते जाते हैं, इसे समझने को यह कविता माध्यम हो सकती है।” (पृ. 134)

इसी प्रकार ‘शासन की बंदूक’ कविता में राजनैतिक यथार्थ को शब्द मिले हैं। कटु से कटु बात को सरल शब्दों में कह देना कवि की विशेषता रही है। बाबा नागार्जुन ने इस कविता में इंदिरा गांधी जैसी नेता की खबर लेते हुए आम जनजीवन के दुख और दर्द को व्यक्त किया है। कवि समकालीन सत्ता को लताड़ लगाते हैं और आवश्यकता पड़ने पर जनता के साथ खड़े होकर सत्ता से सवाल भी पूछते हैं।

18.4 पाठ सार

एक पिता जो परदेश में रहता है और प्राइवेट ट्रक का ड्राइवर है। उस पर भी कविता लिखी जा सकती है, इसका उत्कृष्ट उदाहरण ‘गुलाबी चूड़ियाँ’ कविता है, जिसमें कवि नागार्जुन ने पिता के वात्सल्य का आँखों देखा चित्रण किया है। घर से दूर सड़कों पर महीनों-महीनों ट्रक चलाने वाले पिता के हृदय से अपनी बेटी के प्रति स्नेह खत्म नहीं होता, उसने अपनी बेटी की गुलाबी चूड़ियाँ ट्रक ने सामने टाँग रखी हैं जो उसे उसको गुड़िया जैसी बेटी की याद दिलाती हैं और वह उन्हीं में खो जाता है। वास्तव में नागार्जुन को पढ़ना एक जननायक से भेंट करने जैसा होता है। वह अपने व्यक्तित्व के अनुरूप अपनी रचनाओं में भी दिखाई देते हैं। कवि की यह कविता जहाँ एक ओर पाठकों को अखिल भारतीय परंपराओं से जोड़ती है, वहीं दूसरी ओर राजनीति की सैर भी कराती है।

‘शासन की बंदूक’ शीर्षक कविता में आम जनता के जीवन का वास्तविक संघर्ष इस कविता में दिखाई देता है। अपने समय में सक्रिय अनेक शक्तियों को पहचान कर व्यवस्था और तंत्र के बजाय जन-मन के पक्ष में खुलकर खड़े होने का साहस उनको एक कुशल राजनैतिक कवि बनाता है। नागार्जुन की कई कविताएँ कालजयीं कविताएँ हैं, जिनमें से एक ‘शासन की बंदूक’ कविता है। जनकवि होना इतना आसान नहीं होता किंतु अपनी अनेकानेक विशेषताओं के कारण वह जनकवि ही माने जाते हैं क्योंकि जनता के प्रति जवाबदेही इसकी मूल कसौटी है जिसे नागार्जुन जीवन भर निभाते हैं। वह साफ ढंग से सच बात कहते हैं। उनके सोचने समझने और बोलने में कोई दुविधा नहीं दिखाई देती। वह सदैव एक खतरनाक सच दो टूक शब्दों में कह देते

हैं। वह सदैव सच बात कहते हैं और जुझारूपन उनके व्यक्तित्व की विशेषता बनकर उभरती है। लाक्षणिक और व्यंग्य भाषा के सहारे समसामयिक राजनीति पर कवि अपनी बात कहते हैं।

18.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. बाबा नागार्जुन आधुनिक भाव बोध के प्रमुख कवि हैं।
2. 'गुलाबी चूड़ियाँ' में कवि के हृदय की संवेदना और भावुकता को व्यक्त किया गया है।
3. 'शासन की बंदूक' नागार्जुन की प्रखर राजनीतिक चेतना का प्रतीक है।
4. नागार्जुन के काव्य में वस्तु और शिल्प का नवीन प्रयोग दिखाई देता है।

18.6 शब्द संपदा

1. अधेड़ = आधी उम्र का
2. अब्बा = पिता
3. अमानत = धरोहर
4. अहिंसा = जो हिंसा ना करें
5. आहिस्ते से = धीरे से
6. कानी = जिसे एक आँख से दिखाई न दे
7. कूक = कूकना
8. गुमान = घमंड
9. चांपकर = दबा कर
10. जुर्म = अपराध
11. झटका खाना = हिल जाना
12. ठूँठ = वृक्ष का सूखा हिस्सा
13. ड्राइवर = चालक
14. दगने लगना = छूटना
15. दूधिया वात्सल्य = स्नेहिल प्रेम
16. प्राइवेट = व्यक्तिगत
17. बधिरता = बहरापन

18. मूक = जो बोल ना सके/ गूँगा

19. बाल न बाँका = कुछ भी नुकसान न पहुँचा पाना

20. भाएँगी = अच्छी लगेंगी

21. मुछ्ड़ = मूछ वाला

22. मुताबिक = अनुसार

23. रफ्तार = गति

24. रोबीला = प्रभावशाली

25. लाख बार = कई बार

26. स्वयं = अपने आप

27. हावी होना = प्रभाव जमाना

28. हिटलरी = हिटलर की तरह

29. हुक = काँटा

30. हूक = गहरी साँस

18.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. नागार्जुन के काव्य साहित्य का परिचय दीजिए।
2. जनवादी कवि के रूप में नागार्जुन की क्या विशेषताएँ हैं?
3. 'गुलाबी चूड़ियाँ' कविता का भाव सौंदर्य निरूपित कीजिए।
4. नागार्जुन की काव्य भाषा का परिचय दें।
5. शासन की बंदूक' कविता में अभिव्यक्त व्यंग्य की चर्चा कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. नागार्जुन की कविता में कौन सा भावबोध है?

2. ‘शासन की बंदूक’ कविता का प्रमुख उपजीव्य क्या है?

3. जनचेतना के प्रति नागार्जुन का दृष्टिकोण दें।

4. नागार्जुन के काव्य संग्रहों के नाम लिखिए।

5. कवि के व्यक्तित्व का रूपायन कीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. ‘युगधारा’ रचना है ( )

(अ) महादेवी (आ) नागार्जुन (इ) अज्ञेय

2. नागार्जुन का वास्तविक नाम है ( )

(अ) अज्ञेय (आ) जयशंकर प्रसाद (इ) वैद्यनाथ मिश्र

3. प्रेत का बयान कविता है - ( )

(अ) नागार्जुन (आ) निराला (इ) धूमिल

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. नागार्जुन .... रचनाकार हैं।

2. नागार्जुन मैथिल भाषा में .... के नाम से लिखते थे।

3. छलक रहा था .... बड़ी-बड़ी आंखों में।

4. सन 1965 में नागार्जुन को…………पुरस्कार मिला।

5. शासन की बंदूक .... कविता है।

III. सुमेल कीजिए -

1. प्रेत का बयान	(अ) जले ठूँठ पर
2. नागार्जुन की मातृभाषा	(ब) प्राइवेट बस के ड्राइवर की बेटी
3. कोकिला कूकती है	(स) वैद्यनाथ मिश्र
4. छोटी मुनिया है	(द) नागार्जुन
5. नागार्जुन का वास्तविक नाम	(य) मैथिली भाषा

18.8 पठनीय पुस्तकें

1. नागार्जुन: अनभिजात का क्लासिक : विजय बहादुर सिंह

2. हिंदी साहित्य का इतिहास : सं. नगेंद्र

3. हिंदी साहित्य का अद्यतन इतिहास : सं. मोहन अवस्थी

4. नागार्जुन की काव्य यात्रा : रतन कुमार पांडेय

इकाई 19 : कालिदास : नागार्जुन

रूपरेखा

19.1 प्रस्तावना

19.2 उद्देश्य

19.3 मूल पाठ : कालिदास : नागार्जुन

19.3.1 अध्येय कविता का सामान्य परिचय

19.3.2 अध्येय कविता

19.3.3 विस्तृत व्याख्या

19.4 पाठ सार

19.5 पाठ की उपलब्धियाँ

19.6 शब्द संपदा

19.7 परीक्षार्थ प्रश्न

19.8 पठनीय पुस्तकें

19.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! आप जान चुके हैं कि हिंदी साहित्य में 'छायावाद' मूलतः व्यक्तिवादी कविता का युग है। इसमें प्रकृति प्रेम को महत्व दिया गया तथा कवि 'स्वान्तःसुखाय' अर्थात स्वयं की ख़ुशी के लिए काव्य रचने लगे किंतु प्रगतिवादी काव्य धारा का मुख्य उदेश्य 'बहुजन हिताय बहुजन सुखाय' रहा है। प्रगतिवाद छायावादोत्तर युग के नई काव्यधारा के रूप में उदय हुआ । प्रगति का अर्थ है आगे बढ़ना अर्थात उन्नति करना। यहाँ व्यक्ति की भावनाओं की अपेक्षा सामाजिक भावना पर बल दिया गया।

प्रगतिवादी कविता का केंद्र शोषित वर्ग रहा और शोषक वर्ग के प्रति विद्रोह। इसके साथ राष्ट्रप्रेम, प्रकृति के प्रति लगाव, रूढ़ियों का खंडन तथा मानवतावाद पर बल दिया गया। इसके प्रमुख कवियों में केदारनाथ अग्रवाल, त्रिलोचन, शिवपूजन सहाय तथा नागार्जुन का नाम आता है। वैद्यनाथ मिश्र ही हिंदी साहित्य जगत में नागार्जुन के नाम से विख्यात हुए। इनकी कविताओं में गरीबी, भुखमरी, बीमारी, अकाल, बाढ़ जैसे सामाजिक यथार्थ का चित्रण किया गया है। नागार्जुन की रचनाओं और वास्तविक जीवन में गहरा सामंजस्य है तथा पौराणिक आख्यानों का

संदर्भ भी मिलता है। बाबा की कविताओं में प्रगतिवादी चेतना का सहज सौंदर्य प्रतिफलित होता है।

19.2 उद्देश्य

इस इकाई के अंतर्गत आप नागार्जुन द्वारा रचित प्रसिद्ध कविता 'कालिदास' के बारे में अध्ययन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन से आप -

- नागार्जुन की कविता 'कालिदास' की व्याख्या कर सकेंगे।
- इस कविता में निहित पौराणिक संदर्भों को जान सकेंगे।
- इस कविता के काव्यगत सौंदर्य को समझ सकेंगे।
- नागार्जुन की प्रासंगिकता को समझ सकेंगे।
- प्रकृति चित्रण के बारे में जान सकेंगे।

19.3 मूल पाठ : कालिदास : नागार्जुन

19.3.1 अध्येय कविता का सामान्य परिचय

'कालिदास सच सच बतलाना' नागर्जुन की बहुचर्चित एवं भावनाप्रधान कविता है जो उनके काव्य संग्रह 'सतरंगें पखों' वाली में संकलित है। इस कविता में नागार्जुन ने संस्कृत के महाकवि द्वारा रचित महाकाव्यों के रघुवंशम्, कुमारसंभव तथा मेघदूतम् से अज-इंदुमती, रति का विलाप तथा यक्ष की विरह वेदना के चित्रण से इतने व्यथित हुए कि स्वयं कवि कालिदास से ही पूछ बैठे कि कालिदास सच-सच बतलाना कि "यह तुम्हारी पीड़ा ही है न?" क्योंकि पर पीड़ा की अनुभूति से ही ऐसी करुण कथा लिखी जा सकती है। सुमित्रानंदन पंत ने सही ही कहा है - "वियोगी होगा पहला कवि आह से उपजा होगा गान, उमड़कर आँखों से चुपचाप, बही होगी कविता अनजान।" यह कविता शिल्प की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण है।

19.3.2 अध्येय कविता : कालिदास

कालिदास सच-सच बतलाना!
इंदुमती के मृत्युशोक से
अज रोया या तुम रोये थे?
कालिदास सच-सच बतलाना!
शिवजी की तीसरी आँख से

निकली हुई महाज्वाला में
घृत- मिश्रित सूखी समिधा-सम
कामदेव जब भस्म हो गया
रति का क्रंदन सुन आँसू से
तुमने ही तो दृग धोए थे
कालिदास! सच-सच बतलाना
रति रोयी थी या तुम रोये थे?
वर्षा ऋतु की स्निग्ध भूमिका
प्रथम दिवस आषाढ़ मास का
देख गगन में श्याम घन-घटा
विधुर यक्ष का जब मन उचटा था
खड़े-खड़े तब हाथ जोड़कर
चित्रकूट के सुभग शिखर पर
उस बेचारे ने भेजा था
जिनके ही द्वारा संदेशा
उन पुष्करावर्त मेघों का
साथी बनकर उड़ने वाले
कालिदास! सच-सच बतलाना
पर पीड़ा से पूर-पूर हो
थक-थककर औ' चूर चूर हो
अमल-धवल गिरि के शिखरों पर
प्रियवर! तुम कब सोये थे ?
रोया यक्ष या तुम रोये थे !
कालिदास सच-सच बतलाना !!

निर्देश : 1. इस कविता का सस्वर वाचन कीजिए।
2. इस कविता का मौन वाचन कीजिए।

19.3.3 विस्तृत व्याख्या

रघुवंश का प्रसंग

1

कालिदास सच-सच बतलाना
इंदुमती के मृत्युशोक से
अज रोया या तुम रोये थे?
कालिदास सच-सच बतलाना!

शब्दार्थ : शोक = दुःख। इंदुमती = पूर्णिमा अज की पत्नी। अज = अजन्मा, ईश्वर एवं राजा दशरथ के पिता।

संदर्भ : यह काव्यांश बाबा नागार्जुन की कविता 'कालिदास सच-सच बतलाना' से ली गई हैं।

प्रसंग : इस काव्यांश में कवि ने अज और इंदुमती के प्रेम और विरह का वर्णन किया है।

व्याख्या : कालिदास कविता का प्रथम अनुच्छेद 'रघुवंश' महाकाव्य के प्रसंग पर आधारित है। इस महाकाव्य में कालिदास ने महाराज अज की पत्नी के निधन पर अज द्वारा किए गए विलाप को मार्मिक अभिव्यक्ति दी है। नागार्जुन महाकवि कालिदास से पूछते हैं कि रघुकुल के महाराज अज का अपनी पत्नी की मृत्यु पर जिस तरह से विलाप का चित्रण आपने किया है, वास्तव में वह अज का शोक था या फिर तुम्हारा? ऐसा लगता है कि उसका दुख तुमने अपने भीतर धारण कर लिया था। तुम्हारा यह विरह वर्णन देखकर तो यही महसूस होता है कि यह महाराज अज के आँसू न होकर उसकी पीड़ा को आत्मसात कर उसकी जगह तुमने ही आँसू बहाए हों।

काव्यगत विशेषताएँ

1. भाषा सरल मधुर एवं प्रवाहमान है।
2. पौराणिक आख्यानों का संदर्भ है।
3. नागार्जुन पर पीड़ा को अपनी पीड़ा मानने वाले कवि हैं।

बोध-प्रश्न

- कालिदास के किस महाकाव्य में अज और इंदुमती का प्रसंग आता है?
- अज के दुःख का कारण लिखिए।
- नागार्जुन ने कालिदास से क्या पूछा?

कुमारसंभव का प्रसंग

2

शिवजी की तीसरी आँख से
निकली हुई महाज्वाला में
घृत- मिश्रित सूखी समिधा-सम
कामदेव जब भस्म हो गया
रति का क्रंदन सुन आँसू से
तुमने ही तो दृग धोए थे
कालिदास! सच-सच बतलाना
रति रोयी थी या तुम रोये थे?

शब्दार्थ : धृत = घी। समिधा = हवन की लकड़ी। क्रन्दन = विलाप करना। दृग = आँख। रति = कामदेव की पत्नी, प्रीति। ज्वाला = आग की लापत, दुःख के कारण होने वाली पीड़ा। भस्म = राख।

संदर्भ : यह काव्यांश बाबा नागार्जुन की कविता 'कालिदास सच-सच बतलाना' से ली गई हैं।

प्रसंग : इस काव्यांश में कवि ने कामदेव की मृत्यु पर उसकी पत्नी रति विरह वेदना का मार्मिक चित्रण किया है।

व्याख्या: 'कालिदास सच-सच बतलाना' कविता का दूसरा अनुच्छेद कालिदास द्वारा रचित महाकाव्य 'कुमारसंभव' से लिया गया है। इसमें उस घटना का वर्णन आता है जब तारकासुर के कष्टों से पीड़ित देवताओं को यह पता चलता है कि भगवान शंकर का पुत्र ही देव सेनापति के रूप में असुरों का विनाश कर सकता है अत: सभी शिव के पास पहुँचते हैं किंतु भगवान शिव समाधि में लीन थे। अत: देवता कामदेव को अग्रणी कर ले जाते हैं। कामदेव अपने मित्र वसंत की सहायता से शिव के पास पहुँचता है। वहाँ उसने अपने धनुष पर मोहनास्त्र चढ़ाया और शिव की समाधी भंग करने में सफल हुआ किंतु शिव के क्रोध से नहीं बच पाता है। शिव के तृतीय नेत्र की ज्वाला से प्रेम का देवता कामदेव भस्म हो जाता है। अपने पति की मृत्यु से रति विलाप करने लगती है। कालिदास ने रति की विरह वेदना का मार्मिक चित्रण किया है। नागार्जुन के अनुसार जो पर पीड़ा की अनुभूति कर सके वही कवि हो सकता है। इससे प्रभावित होकर ही बाबा नागार्जुन ने कालिदास से पूछा कि 'कालिदास सच-सच बतलाना' कि यह रति का क्रंदन

था या फिर तुम्हारी पीड़ा?

काव्यगत विशेषताएँ

1. नागार्जुन ने रति की पीड़ा को अभिव्यक्त किया है।
2. पौराणिक संदर्भ शिव समाधि भंग फलस्वरूप कामदेव दहन का वर्णन हुआ है।
3. तत्सम शब्दावली का प्रयोग किया गया है।

बोध प्रश्न

- कुमारसंभव में किस असुर के वध का वर्णन आता है?
- शिव की समाधी किसने भंग की और क्यों?
- रति कौन थी, उसके विलाप का क्या कारण था?

मेघदूत का प्रसंग

वर्षा ऋतु की स्निग्ध भूमिका
प्रथम दिवस आषाढ़ मास का
देख गगन में श्याम घन-घटा
विधुर यक्ष का जब मन उचटा था
खड़े-खड़े तब हाथ जोड़कर
चित्रकूट के सुभग शिखर पर
उस बेचारे ने भेजा था
जिनके ही द्वारा संदेशा
उन पुष्करावर्त मेघों का
साथी बनकर उड़ने वाले
कालिदास ! सच-सच बतलाना
पर पीड़ा से पूर-पूर हो
थक-थककर औ' चूर चूर हो
अमल-धवल गिरि के शिखरों पर
प्रियवर! तुम कब सोये थे ?
रोया यक्ष या तुम रोये थे !
कालिदास सच-सच बतलाना !!

शब्दार्थ : घन = बादल। शिखर = पर्वत। पुष्करावर्त = जलाशय। अमल-धवल = स्वच्छ, उज्जवल। गिरि = पर्वत।

संदर्भ : यह काव्यांश बाबा नागार्जुन की कविता 'कालिदास सच-सच बतलाना' से ली गई हैं।

प्रसंग : इस काव्यांश में कवि ने यक्ष की मानसिक वेदना का चित्रण किया है।

व्याख्या : 'कालिदास सच-सच बतलाना' का तीसरा अनुच्छेद 'मेघदूत' महाकाव्य के प्रसंग पर आधारित है। यह महाकवि कालिदास द्वारा रचित है। इसमें यक्ष की विरह वेदना का वर्णन है। इस परिच्छेद में यह कथा है कि एक यक्ष अपनी प्रियतमा से बहुत प्रेम करता है। वह उसके प्रेम में इतना डूब जाता है कि अपने स्वामी धन के देवता कुबेर की सेवा में गलती कर बैठता है।

इससे कुबेर क्रोधित होकर उसे अलकापुरी से निष्कासित कर देते हैं। अभिशप्त यक्ष को एक वर्ष तक पृथ्वी पर रहना पड़ता है। यक्ष पृथ्वी पर एकांत वास करने को विवश होता है। वर्षा ऋतु प्रारंभ होते ही आकाश में काली घटाओं को घुमड़ते हुए देख कर यक्ष का मन विरह से व्याकुल हो उठता है। वह अपनी पत्नी की जीवन रक्षा के लिए संदेश भेजने का निर्णय करता है किंतु प्रियतमा के पास सन्देश ले जाने वाला भी कोई नहीं होता अत: वह उमड़ते बादलों को ही अपना दूत बनाकर प्रियतमा तक अपना संदेश पहुँचाता है। इसी से प्रभावित होकर नागार्जुन कालिदास से पूछते हैं कि क्या जल से भरे दूत मेघों के साथ उड़ने वाले तुम ही थे? सच-सच बतलाना। इस प्रकार नागार्जुन पर-पीड़ा को अपनी पीड़ा मानने वाले महाकवि की संवेदनशीलता से बहुत प्रभावित हैं।

काव्यगत विशेषताएँ

1. वर्षा ऋतु के आरंभ होते ही प्रकृति आंदोलित होने लगती है।
2. विरह वेदना तीव्र हो जाती है।
3. भाषा सरल, सहज एवं प्रवाहमान है।
4. तत्सम और सामान्य शब्दों का एक साथ प्रयोग कवि के शिल्प सौंदर्य का उत्कृष्ट उदाहरण है।

बोध-प्रश्न

- मेघदूत किसकी रचना है?
- यक्ष को किसने शाप दिया और क्यों?
- यक्ष किसके द्वारा संदेश भेजना चाहता है?

विवेचनात्मक टिप्पणी

प्रिय छात्रो! अब तक के अध्ययन से आप जान ही चुके हैं कि नागार्जुन जनकवि के रूप में प्रसिद्ध हैं। नागार्जुन की कविता में उस समय की युगीन चेतना को देखा जा सकता है। वे स्वयं इस बात को स्पष्ट करते हैं कि -

> "संघर्षशील जनता का विपन्न बहुलांश ही शक्ति प्रदान करता है। कोटि-कोटि भारतीयों के वे निरीह, पिछड़े हुए, अकिंचन दुर्बल समुदाय जो चाहने पर भी अपना मतपत्र नहीं डाल पाए, मेरे चेतना उनकी विशेषताओं से ऊर्जा हासिल करेगी।" (नागार्जुन और उनका रचना संसार, पृ. 16)

नागार्जुन आम जनता के पक्षधर हैं। व उन्हें प्रणाम करते हैं जो जीवन में असफलता का शिकार हुए, संघर्षों से जुझते हुए दुखों को झेल रहे हैं। इसीलिए वे कहते हैं -

जो नहीं हो सके पूर्ण काम
मैं उनको करता हूँ प्रणाम।

नागार्जुन की जड़ें ज़मीन से जुड़ी हुई हैं। उनके संबंध में विजय बहादुर सिंह का यह कथन उल्लेखनीय है -

> "उनकी (नागार्जुन की) चिंताएँ भारत की लोक-बिरादरी की स्वाभाविक और गहरी चिंताएँ हैं। .... उनकी कल्पनाओं का चेहरा ज़मीनी है और भाषा का संगीत बहुरंगी और बहुआयामी। संवेदना तो ऐसी व्यापक और करुण, यत्र-तत्र क्षोभकारी और आक्रामक कि कविता ज़िंदगी की भाषा बन गई है।" (नागार्जुन का रचना संसार, पृ.8)

प्रिय छात्रो! ध्यान देने की बात है कि नागार्जुन आलीशान बंगले में बैठकर पीड़ितों की कविता नहीं लिखते। वे उस आदमी के पास पहुँच जाते हैं, उसके साथ रहकर उसके सुख-दुख बाँटकर उसे नजदीक समझने की कोशिश करते हैं। उसके बाद कविता के रूप में अपनी निजी अनुभूति को अभिव्यक्त करते हैं। इस संबंध में विजय बहादुर सिंह को बाबा नागार्जुन द्वारा लिखे गए पत्र का अंश देखें -

> "कब कभी मैं ग्रामांचालों के किनारे-किनारे बसी हुई दलित बस्तियों के अंदर अथवा महानगरों के पिछवाड़े गंधे नालों के इर्द-गिर्द बसी हुई झुग्गियों की दुनिया में जाता हूँ तो सुविधा प्राप्त वर्गों द्वारा परिचालित राजनीति के प्रति मेरा रोम-रोम नफरत से

सुलग उठता है।" (नागार्जुन का रचना संसार, पृ. 16)

इसका यह अर्थ भी नहीं कि नागार्जुन संपन्न वर्ग से हमेशा नफरत ही करते थे। पर इतना जरूर है कि पीड़ित, वंचित और शोषित वर्ग की पीड़ा उनसे देखी नहीं जाती। वे यह भी कहते हैं कि "सनातन काल से सुविधा प्राप्त एवं उच्च वर्गों के भी सहृदय और ईमानदार व्यक्तियों ने जन साधारण के दुख-सुख को निश्छल तौर पर अपनी प्रतिभा का आलंबन बनाया है। वाल्मीकि, कालिदास, तुलसीदास, रवींद्र, प्रेमचंद उन्हीं में से रहे हैं।" (नागार्जुन का रचना संसार, पृ. 16)

नागार्जुन आशावादी थे। वे कभी भी ढिंढोरा नहीं पीटते। वे उन तमाम समयस्याओं को सामने लाते हैं जिनसे ग्रामीण समाज ही नहीं बल्कि मध्य और निम्न वर्ग भी त्रस्त है। नागार्जुन उस समाज के प्रतिनिधि कवि के रूप में हमारे समक्ष आते हैं जिसके पास न कोई सपना है, न कोई अपना। उन्हें भावी-भारत में अंधकार नहीं दीखता। शायद इसीलिए वे कह गए -

> "मैं स्पष्ट देख रहा हूँ, आगामी पच्चीस वर्षों के अंदर बहुत से चमत्कार अपने देश में होने वाले हैं .... हमारी जनता से ही एक-एक चमत्कारों की जननी होगी।" (नागार्जुन का रचना संसार, पृ. 17)

नागार्जुन की कविता किसी एक काल या एक प्रांत तक सीमित नहीं है। उसका फलक विस्तृत है। वह आज भी उतना प्रासंगिक है। वे सचेत रूप से भी और अचेत रूप से भी जनता के साथ ही जुड़े रहे। रामविलास शर्मा कहते हैं कि "नागार्जुन जितने क्रांतिकारी सचेत रूप से हैं, उतने ही अचेत रूप से भी हैं।" (नई कविता और अस्तित्ववाद, पृ. 141)। उनकी कथनी और करनी में कहीं भी किसी भी तरह का अंतर दिखाई नहीं देता। यदि यह कहें कि उन्होंने किताबी ज्ञान के साथ-साथ व्यावहारिक ज्ञान को आत्मसात जिसके कारण वे दीन दलितों के बाबा नागार्जुन बने तो गलत नहीं होगा।

नागार्जुन की कविता में एक ओर सामाजिक, राजनैतिक विसंगतियों पर प्रहार देखा जा सकता है तो दूसरी ओर पीड़ित और शोषितों के प्रति प्रतिबद्धता। वे अपनी प्रतिबद्धता को इस प्रकार व्यक्त करते हैं -

प्रतिबद्ध हूँ, जी हाँ प्रतिबद्ध हूँ
बहुजन समाज की अनुपल प्रगति के निमित्त

****

आबद्ध हूँ, जी हाँ आबद्ध हूँ -

स्वजन-परिजन के प्यार की डोर में

प्रियजन के पलकों की कोर में

नागार्जुन की कविताओं में रिक्शे वाले के खुरदरे पैर हैं। एक अनोखी बेचैनी है। हरिजनों को आग में झोंक देने का विराट दुष्कांड है। लोकतंत्र का खोटा सिक्का है। शासन का बंदूक है। अग्निबीज है। स्वाधीन भारतीय प्राइमरी स्कूल के भुखमरे स्वाभिमानी सुशिक्षक का प्रेत है। थकित-चकित-भ्रमित-भग्न मन है। आकाल और उसके बाद का चित्रण है। घर घर को आलोकित करने का मशाल है। कटहल के छिलके जैसी जीभ है। पैने दांतों वाली मादा सूअर है, बादल है। विभिन्न प्राकृतिक छटाएँ हैं। गुलाबी चूड़ियाँ हैं। दंतुरित मुस्कान है। सिदूर तिलकित भाल है। दूधिया निगाहें हैं। हरिचंदन सा पंक है। कहने का आशय है कि जिस वस्तु पर औरों की दृष्टि नहीं जाती उसे नागार्जुन की कविता में देखा जा सकता है। वह वस्तु उनके कवित्व की रचना-भूमि बन जाती है। इस संबंध नामवर सिंह का यह कथन उल्लेखनीय है-

> “उनकी कविता का संसार वस्तुतः वह लोक सामान्य जीवन ही है, जिसे अति सामान्य समझकर अन्य कवि आँख मूँद लेते हैं। यदि आज की कविता में ‘दंतुरित मुस्कान’, ‘सिंदूर तिलकित भाल’ और एक बस के ड्राइवर के सामने उसकी बच्ची द्वारा टाँगी गई ‘गुलाबी चूड़ियाँ’ देखनी हो तो नागार्जुन की कविता की दुनिया में ही जाना होगा।” (नागार्जुन की प्रतिनिधि कविताएँ, पृ. 7)

नागार्जुन की कविताएँ जनवादी कविताएँ हैं। इसमें कोई संदेह नहीं। नागार्जुन कभी भी झूठ का सहारा नहीं लिया। सच कहने के लिए डरते भी नहीं थे और पीछे भी नहीं हटते। इसीलिए वे कह गए -

जी हाँ सत्य को लकवा मार गया है,

इसे इमर्जेंसी का शॉक लगा है

लगता है, कि अब वह किसी का न रहा

जी हाँ, सत्य सब पड़ा रहेगा

लोथ की तरह, स्पंदन शून्य मांसल देह की तरह।

‘कालिदास’ सत्य संबंधी व्यंजना प्रधान उनकी एक और कविता है। इसमें कविता में कविता कालिदास से सच बोलने का आग्रह करते हैं।

कालिदास सच-सच बतलाना!

इंदुमती के मृत्युशोक से

अज रोया या तुम रोये थे?

इन पंक्तियों में कवि यह कहते हुए नजर आ रहे हैं कि इंदुमति की मृत्यु पर अज नहीं रोया बल्कि कालिदास स्वयं रोया है। 'सच सच बतलाना' में यह ध्वनित होता है कि तुम सच को स्वीकार क्यों नहीं करते?

कहना न होगा कि नागार्जुन कालिदास से अत्यंत प्रभावित थे। इस संदर्भ में उनका यह कथन द्रष्टव्य है -

> "हिंदी में तो किसीने अधिक प्रभावित नहीं किया। संस्कृत में कालिदास की सूझ (मेघदूत) लाजवाब है। भारतीयता के प्रतीक के रूप में यदि एक ही व्यक्ति का नाम लेने को कहा जाए तो मैं कालिदास का ही नाम लूँगा। कालिदास में प्राकृति की गहराई और व्यापकता अनूठी है। शैली और प्रयोग दोनों ही दृष्टि से कालिदास बेजोड़ है।" (मेरे साक्षात्कार, पृ. 47)

नागार्जुन अपनी बात को कहने के लिए प्रतीक और बिंबों का प्रयोग करते हैं। सृजनात्मक क्षमता और कल्पनाशीलता के आधार पर प्रतीकों और बिंबों का प्रयोग किया जाता है। प्रतीक और बिंब तो वस्तुतः कवि के अनुभव संसार के ही उपज होते हैं। शोषक और तानाशाह व्यक्तियों पर कुठाराघात करते समय नागार्जुन मिथकों का भी प्रयोग करते हैं -

> "मैं शोषक और तानाशाह व्यक्तियों के खिलाफ जनमत तैयार करना अपना दायित्व मानता हूँ, इसलिए जो प्रतीक अधिक मुखरित होते हैं - दृगया, काली, त्रिमूर्ति जैसे प्रतीक हैं। इन्हें अधिक उभारता हूँ ताकि जगह-जगह वह माहौल बने। कविता मिथक से चेतना और प्राण ही नहीं, रूप और वस्तु भी ग्रहण करती है।" (मेरे साक्षात्कार, पृ. 43)

किसी भी रचना के विचारों का होना महत्वपूर्ण है। मानवीय संवेदना का सहज रूप जब रचना में आता है तो वह रचना स्वतः ही श्रेष्ठ बन जाते है। और नागार्जुन इसी बात पर विश्वास करते थे कि "दमन के खिलाफ भूख और बेकारी का बिगुल ही महा जनक्रांति का रूप लेगा।" (मेरे साक्षात्कार, पृ. 47)।

बोध प्रश्न

- नागार्जुन की कविताओं की रचना-भूमि क्या है?

- नागार्जुन किस बात पर विश्वास करते थे?
- शोषक और तानाशाह व्यक्तियों के खिलाफ जनमत तैयार करने के संबंध में नागार्जुन का क्या मत है?

19.4 पाठ-सार

बाबा नागार्जुन प्रगतिवादी कवियों में प्रमुख कवि हैं। इनकी कविताओं में पूरी भारतीय काव्य परंपरा को जीवंत रूप में देखा जा सकता है। नागार्जुन जनता के कवि रहे हैं अत: उनके काव्य में अपने परिवेश की समस्याओं, चिंताओं एवं संघर्ष को प्रत्यक्ष देखा जा सकता है साथ ही इनकी रचनाओं में लोक संस्कृति के महत्व को भी बल मिला है। नागार्जुन ने 'कालिदास सच-सच बतलाना' शीर्षक कविता मे कविता की रचना प्रक्रिया पर प्रकाश डाला है। नागार्जुन का मानना है कि जब भी कोई कवि कविता सृजन करता है तो उसके पात्र रचनाकार को गहराई से प्रभावित करते हैं। आम आदमी की पीड़ा को समझने वाला सहृदय होने के कारण कवि पात्रों की पीड़ा के माध्यम से अपनी पीड़ा को अभिव्यक्त करता है। नागार्जुन ने 'कालिदास' द्वारा रचित महाकाव्यों की पीड़ा को अपने हृदय में अनुभव किया है। यह बाबा नागार्जुन के सूक्ष्म चिंतन का परिणाम है।

'रघुवंश' जिसमें अज और इंदुमती की कथा है। 'कुमारसंभव' में कामदेव तथा रति विलाप का प्रसंग आता है तो मेघदूत में यक्ष और उसके विरह का वर्णन है। नागार्जुन की इस छोटी सी कविता का शिल्प विधान बहुत बढ़िया बन पड़ा है। भाषा सरल और प्रवाह युक्त है। सच सच बतलाना, थककर चूर चूर होना जैसे सामान्य शब्दों का प्रयोग हुआ है वहीं अमल-धवलगिरि, घृत मिश्रित्त, मृत्युशोक, क्रंदन महाज्वाला आदि शब्दों के प्रयोग से वे स्वयं को कालिदास से जोड़ लेते हैं। प्रगतिशील चेतना के वाहक कवि के द्वारा भाषा शैली का सुंदर प्रयोग हुआ है।

19.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. नागार्जुन की रचनाओं और वास्तविक जीवन में गहरा सामंजस्य है।
2. 'कालिदास' कविता छोटी होते हुए भी शिल्प की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है। इसकी भाषा सरल, प्रवाह युक्त एवं मधुर है।

3. नागार्जुन ने भारतीय संस्कृति एवं लोक जीवन को बहुत महत्व दिया है।

4. नागार्जुन का मानना है कि कवि की सार्थकता तब है जब उसके पात्रों की पीड़ा और सुख-दुःख को पाठक आत्मसात कर सके।

19.6 शब्द संपदा

1. अभिशप्त	= शाप से ग्रस्त
2. आत्मसात	= अपने में समाहित करना
3. चिन्तन	= मन में किया जाने वाला विवेचन
4. चेतना	= समझ
5. निष्काषित	= बहिष्कृत
6. प्रत्यक्ष	= जो आँखों के सामने हो
7. यक्ष	= कुबेर के सेवक
8. सम्वेदनशील	= भावुक, सहृदय
9. सामंजस्य	= मेल
10. सूक्ष्म	= बहुत छोटा

19.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. 'नागार्जुन जनकवि हैं।' इस कथन के आलोक में अपने विचार व्यक्त कीजिए।
2. 'कालिदास' कविता में किन पौराणिक आख्यानों का उल्लेख किया गया है? उदाहरण सहित लिखिए।
3. नागार्जुन के अनुसार कवि पात्रों की पीड़ा के माध्यम से अपनी ही पीड़ा को अभिव्यक्त करता है। कैसे? स्पष्ट कीजिए।
4. 'कालिदास' कविता का भावार्थ अपने शब्दों में लिखिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उतर 200 शब्दों में दीजिए।

1. प्रगतिवादी काव्यधारा का मुख्य उद्देश्य क्या था?
2. 'कालिदास' कविता की विशेषता लिखिए।
3. यक्ष को किसने शाप दिया तथा क्यों?
4. नागार्जुन की काव्यगत विशेषता लिखिए।
5. कालिदास सच-सच बतलाना
   इंदुमती के मृत्युशोक से
   अज रोया या तुम रोये थे?
   - इन काव्य पंक्तियों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए।
6. अमल-धवल गिरि के शिखरों पर
   प्रियवर! तुम कब सोये थे ?
   रोया यक्ष या तुम रोये थे !
   कालिदास सच-सच बतलाना !!
   - इन पंक्तियों का भाव स्पष्ट कीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. नागार्जुन किस काव्यधारा के कवि हैं? ( )
   (अ) छायावाद (आ) प्रयोगवाद (इ) प्रगतिवाद
2. छायावाद के केंद्र में क्या है? ( )
   (अ) प्रकृति (आ) परमात्मा (इ) मनुष्य
3. कामदेव ने किसकी समाधी भंग की थी? ( )
   (अ) शिव की (आ) तारकासुर की (इ) इंद्र की
4. कुबेर किसके स्वामी हैं? ( )
   (अ) धन (आ) जल (इ) वायु
5. नागार्जुन की कविता का आधार होता है? ( )

(अ) यथार्थ　　(आ) कल्पना　　(इ) प्रेम

6. 'कालिदास' कविता का मुख्य विषय क्या है?　　(　　)

(अ) संवेदना　　(आ) दु:ख　　(इ) सुख

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. नागार्जुन .... के प्रति प्रतिबद्ध कवि हैं।
2. कालिदास सच सच बतलाना के आरंभ में ....का प्रसंग आता है।
3. 'कालिदास' कविता नागार्जुन के .... संग्रह में संकलित है ।
4. अभिशप्त यक्ष को एक वर्ष तक .... पर रहना पड़ता है।

III. सुमेल कीजिए -

1. प्रथम दिवस	(अ) तीसरी आँख
2. शिवजी की	(आ) मेघों का
3. पुष्करावर्त	(इ) शिखरों पर
4. अमल-धवल गिरि के	(ई) आषाढ़ मास का

19.8 पठनीय पुस्तकें

1. नागार्जुन : सतरंगे पंखों वाली
2. नागार्जुन रचनावली (भाग 1 और 2) : सं. शोभाकांत
3. नागार्जुन और प्रगतिशील साहित्य : सं. सोनटक्के, भारती गोरे
4. नागार्जुन का रचना संसार : विजय बहदुर सिंह
5. मेरे साक्षात्कार : नागार्जुन

इकाई 20 : 'मेघ बजे' और 'खुरदरे पैर' : नागार्जुन

रूपरेखा

20.1 प्रस्तावना

20.2 उद्देश्य

20.3 मूल पाठ : 'मेघ बजे' और 'खुरदरे पैर' : नागार्जुन

20.3.1 अध्येय कविता का सामान्य परिचय

20.3.2 अध्येय कविता

20.3.3 विस्तृत व्याख्या

20.4 पाठ सार

20.5 पाठ की उपलब्धियाँ

20.6 शब्द संपदा

20.7 परीक्षार्थ प्रश्न

20.8 पठनीय पुस्तकें

20.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! आप जान चुके हैं कि हिंदी साहित्य में प्रगतिवाद छायावादोत्तर युग के नई काव्यधारा के रूप में उदय हुआ। प्रगतिवाद असामाजिक तत्वों के विरुद्ध क्रांति की गूँज बनकर आया है। यहाँ व्यक्ति की भावनाओं की अपेक्षा सामाजिक भावना पर बल दिया गया। प्रगतिवादी कविता का केंद्र शोषित वर्ग रहा और शोषक वर्ग के प्रति विद्रोह। इसके साथ ही आम जनता का हितैषी बन कर आया। राष्ट्रप्रेम, प्रकृति के प्रति लगाव, रूढ़ियों का खंडन तथा मानवतावाद पर बल दिया गया।

इसके प्रमुख कवि हैं केदारनाथ अग्रवाल, त्रिलोचन, शिवपूजन सहाय तथा नागार्जुन। वैद्यनाथ मिश्र ही हिंदी साहित्य जगत में नागार्जुन के नाम से विख्यात हुए। इनकी कविताओं में गरीबी, भुखमरी, बीमारी, अकाल, बाढ़ जैसे सामाजिक यथार्थ का चित्रण किया गया है। नागार्जुन की रचनाओं और वास्तविक जीवन में गहरा सामंजस्य है तथा पौराणिक आख्यानों का संदर्भ भी मिलता है। बाबा की कविताओं में प्रगतिवादी चेतना का सहज सौंदर्य प्रतिफलित होता है।

20.2 उद्देश्य

इस इकाई के अंतर्गत आप कवि नागार्जुन द्वारा रचित प्रसिद्ध कविताओं 'मेघ बजे' और 'खुरदरे पैर' का अध्ययन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन से आप -

- नागार्जुन की प्रासंगिकता को समझ सकेंगे।
- किसान और मेघ के संबंध को स्पष्ट कर सकेंगे।
- समाज में किसानों और मजदूरों की स्थिति के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- दोनों कविताओं के काव्यगत सौंदर्य को समझ सकेंगे।
- इन कविताओं की व्याख्या कर सकेंगे।

20.3 मूल पाठ : 'मेघ बजे' और 'खुरदरे पैर' : नागार्जुन

20.3.1 अध्येय कविता का सामान्य परिचय

'मेघ बजे' नागर्जुन की बहुचर्चित कविता है जो उनके काव्य संग्रह 'सतरंगें पखों वाली' में संकलित है। छायावाद के बाद साहित्यांदोलन प्रगतिवाद रहा है। प्रगतिवाद का मूल आधार सामाजिक यथार्थवाद है। नागार्जुन की कविता में अमीर-गरीब, मालिक-मजदूर, जमींदार-कृषक तथा उच्चवर्ग एवं निम्नवर्ग की बीच द्वंद्व दिखाई देता है। इनका जीवन दर्शन बहुत व्यापक है जिसमें वसुधैव कुटुम्बकम की भावना सर्वोपरि है। नागार्जुन का संपूर्ण कृतित्व प्रगतिशील चेतना का वाहक है।

इस कविता में कवि ने बादलों की उमड़ने-घुमड़ने की और उसकी ध्वनि का मार्मिक चित्रण किया है। इसमें किसान की धरती के प्रति आदर दिखाई देती है। वर्षाऋतु के आने से पूरा वातावरण आनंदित हो जाता है, क्योंकि जल और हल किसान के हमजोली हैं ।

20.3.2 अध्येय कविता : 'मेघ बजे' और 'खुरदरे पैर'

मेघ बजे

धिन-धिन-धा धमक-धमक

मेघ बजे

दामिनि यह गयी दमक

मेघ बजे

दादुर का कण्ठ खुला

मेघ बजे
धरती का हृदय धुला
मेघ बजे
पंक बना हरिचंदन
मेघ बजे
हल्का है अभिनन्दन
मेघ बजे
धिन-धिन-धा...

खुरदरे पैर

खुब गए
दूधिया निगाहों में
फटी बिवाइयोंवाले खुरदरे पैर
धँस गए
कुसुम-कोमल मन में
गुट्ठल घट्ठोंवाले कुलिश-कठोर पैर
दे रहे थे गति
रबड़-विहीन ठूँठ पैडलों को
चला रहे थे
एक नहीं, दो नहीं, तीन-तीन चक्र
कर रहे थे मात त्रिविक्रम वामन के पुराने पैरों को
नाप रहे थे धरती का अनहद फासला
घण्टों के हिसाब से ढोये जा रहे थे !
देर तक टकराए
उस दिन इन आँखों से वे पैर
भूल नहीं पाऊँगा फटी बिवाइयाँ
खुब गईं दूधिया निगाहों में
धँस गईं कुसुम-कोमल मन में

> निर्देश : 1. इन कविताओं का सस्वर वाचन कीजिए।
>
> 2. इन कविताओं का मौन वाचन कीजिए।

20.3.3 विस्तृत व्याख्या

1

धिन-धिन-धा धमक-धमक
मेघ बजे
दामिनि यह गयी दमक
मेघ बजे
दादुर का कण्ठ खुला
मेघ बजे
धरती का हृदय धुला
मेघ बजे
पंक बना हरिचंदन
मेघ बजे
हल्का है अभिनन्दन
मेघ बजे
धिन-धिन-धा...

शब्दार्थ : धमक = भारी वस्तु के चलने से आस-पास होने वाली कंपन। मेघ = बादल। दामिनी = बिजली। दादुर= मेंढक। कंठ =गला। दमक = चमक। पंक = कीचड़। अभिनंदन =सम्मान। कंठ = गला।

संदर्भ : प्रस्तुत काव्यांश नागार्जुन की कविता 'मेघ बजे' से उद्धृत है ।

प्रसंग : बाबा नागार्जुन जनता के कवि रहे हैं। उनकी कविताओं में सामान्य वर्ग मुखरित होता है। इस काव्यांश में कृषक और वर्षा दोनों का गहरा रिश्ता होता है, बताया गया है। वर्षा की संभावना होने पर प्रकृति के हर्ष का ठिकाना नहीं रहता। कवि कहते हैं -

व्याख्या : 'मेघ बजे' कविता में बाबा नागार्जुन ने वर्षा के आगमन का संकेत किया है। इस कविता में कवि ने बादलों के घिर आने तथा वर्षाकाल का मनोहारी चित्रण किया है। नागार्जुन किसानों और मजदूरों का स्वर थे। वे किसानी-खेती के बहुत निकट थे।

कृषक जीवन और उसकी समस्याओं में बाबा नागार्जुन की गहरी रुचि थी। जेठ की भीषण गर्मी व लू के कारण बेहाल प्राणियों की आँखें आसमान की ओर मेह की टोह में रहती है। जब वे देखते हैं कि जल का अथाह भण्डार लिए बादल घुमड़-घुमड़कर घिरने लगे हैं, तो बादलों की गड़गड़ाहट से पृथ्वी का प्रत्येक जीव-जन्तु और वनस्पति सब रोमांचित हो जाते हैं। ऐसा लगता है मानो बादलों के झरोखों में से रह-रहकर बिजली चमक रही है। काले-काले मेघों को उमड़-घुमड़ कर घिरते देख बहुत खुश हैं। वर्षा के आगमन की प्रतीक्षा में तालाबों में मेंढक टर्र-टर्र करने लगे हैं।

बरसात होने से गर्मी से व्याकुल और गदली धरती का हृदय धुल कर स्वच्छ हो गया है। धरा वर्षा जल पाकर संतुष्ट और साफ हो गई है तथा वर्षा के कारण धरती पर पानी भर गया है, माटी अर्थात कीचड़ भी 'हरिचंदन' के समान हो गया है जिससे किसानों ने श्रद्धा और सम्मान से अपने हल के स्वागत में तिलक लगाया है। अर्थात खेती के लिए तैयार हो गए हैं।

बादलों की गर्जना धिन-धिन-धा की विशेष संगीत-ध्वनि उत्पन्न कर रही है। बादलों के यूँ गरजने-बरसने से प्रकृति और भी अधिक मनोहारी हो गई है। नागार्जुन की रचनाएँ मानवीय जीवन तथा प्रकृति संबंधी विषयों का सूक्ष्मांकन करती है। अत: नागार्जुन के बारे में नामवर सिंह ने कहा है कि "जो वस्तु औरों की संवेदना को अछूती छोड़ जाती है, वही नागार्जुन के कवित्व की रचना-भूमि है।"

काव्यगत विशेषताएँ

1. वर्षा ऋतु का सुंदर और मोहक वर्णन है।
2. किसानों के प्रति प्रेम्मौर आत्मीयता की भावना की अभिव्यक्ति हुई है।
3. मेघों की धमक और दामिनी की चमक के बिंब से वर्षा का वातावरण साकार हो उठा है।
4. तत्सम शब्दों का प्रयोग हुआ है।
5. धिन धिन पुनरुक्त शब्दों का प्रयोग हुआ है।

बोध-प्रश्न

- 'मेघ बजे' कविता किसके बारे में है?
- मेघ बजने से कवि का क्या संकेत है?
- पंक को हरिचंदन क्यों कहा गया है?
- वर्षा के आवागमन धरती पर क्या-क्या परिवर्तन होने लगते हैं?

2

खुब गए
दूधिया निगाहों में
फटी बिवाइयोंवाले खुरदरे पैधँस गए
कुसुम-कोमल मन में
गुट्ठल घट्ठोंवाले कुलिश-कठोर पैर
दे रहे थे गति
रबड़-विहीन ठूँठ पैडलों को
चला रहे थे
एक नहीं, दो नहीं, तीन-तीन चक्र
कर रहे थे मात त्रिविक्रम वामन के पुराने पैरों को
नाप रहे थे धरती का अनहद फासला
घण्टों के हिसाब से ढोये जा रहे थे !
देर तक टकराए
उस दिन इन आँखों से वे पैर
भूल नहीं पाऊँगा फटी बिवाइयाँ
खुब गईं दूधिया निगाहों में
धँस गईं कुसुम-कोमल मन में

शब्दार्थ : दूधिया=दूध मिला हुआ/दूध जैसा। कुसुम=पुष्प। कुलिश=वज्र। गुठ्ठल=गुठलीवाला। ठूँठ= वृक्ष का बचा हुआ धड़। चक्र=पहिया। त्रिविक्रम= वामन अवतार /विष्णु। कोमल= मुलायम/ नाज़ुक। बिवाइयाँ = एड़ी में दराएं पड़ने से घाव बन जाता है। निगाह=दृष्टि।

संदर्भ : प्रस्तुत काव्यांश नागार्जुन की कविता 'खुरदरे पैर' से उद्धृत है।

प्रसंग : नागार्जुन सामाजिक संवेदना के कवि हैं। गरीब और दुखियों के दुःख से पीड़ित कवि ने इस कविता में एक रिक्शाचालक कि विवशता और उसकी पीड़ा को अभिव्यक्त किया है। मजदूर की बिवाइयों और खुरदरे पैरों का वर्णन किया है।

व्याख्या : प्रस्तुत कवितांश बाबा नागार्जुन की कविता 'खुरदरे पैर' से ली गई है। नागार्जुन का दृष्टिकोण समाज के वंचित वर्ग तथा गहन सामजिक चेतना और शोषित-उत्पीड़ित जनता के

प्रति गहरी सहानुभूति लिए हुए था। यही कारण ही नागार्जुन का झुकाव मार्क्सवादी चिंतन की ओर गया। नागार्जुन ने अपनी प्रगतिशील लेखनी से समाज़ की विषमताओं पर कुठाराघात किया है।

नागार्जुन की कविताओं में सामाजिक संघर्ष मुखरित हुआ है। यह कविता एक रिक्शे वाले की है जो अपनी रोजी रोटी के लिए चला जा रहा है। इस कविता में कवि ने रिक्शा चालक के पैरों की बिवाइयों का वर्णन किया है जो निरंतर परिश्रम करके जीवन यापन करने के लिए बोझा उठा रहा है। उसकी फटी बिवाइयों से कवि का हृदय बहुत ही प्रभावित हुआ है।

नागार्जुन श्रमिक की कठोर जीवन शैली से ही द्रवित हो जाते हैं। फटी बिवाइयों वाले 'खुरदरे पैर' में कवि के संवेदनशील मन के बारे में पता चलता है। बाबा की नजर मर्मस्पर्शी दृश्यों में भी सौंदर्य ढूँढ लेती है। यहाँ रिक्शे के तीन पहिए से धरती के फासले नापते उसके 'पैर' वामन के मिथक के रूप में है।

इस कविता में एक ही बिंब से व्यंग्य की पराकाष्ठा देखी जा सकती है। कवि कहता है कि मैं वे पैर कभी भूल नहीं पाऊँगा। अर्थात नागार्जुन पर पीड़ा को अपनी पीड़ा मानने वाले हैं कवि को समाज के निम्न वर्ग से भी अत्यंत लगाव था। यह वह यथार्थ है जिससे आम आदमी रोज जूझता है। बाबा नागार्जुन शोषित, गरीब एवं पीड़ितों की वाणी थे।

काव्यगत विशेषताएँ

1. आम आदमी के कष्टों का मार्मिक चित्रण हुआ है।
2. वामन अवतार का विशेष संदर्भ लिया गया है।
3. तत्सम शब्दावली, विशेषण तथा सामासिक शब्दावली का अच्छा प्रयोग हुआ है।

बोध-प्रश्न

- 'खुरदरे पैर' कविता किसके बारे में है?
- 'खुरदरे पैर' कविता में किस वर्ग की पीड़ा को दर्शाया गया है?
- इस कविता में किस यथार्थ को रेखांकित किया गया है?

विवेचनात्मक टिप्पणी

प्रिय छात्रो! नागार्जुन बीसवीं शताब्दी के प्रगतिवादी हिंदी कवियों में अत्यंत विलक्षण कवि हैं। वे प्रगतिवादी युग से लेकर जनवादी युग तक निरंतर सक्रिय और रचनाशील रहें। उन्हें लोक जीवन के साथ सीधे और गहरे जुड़ाव के लिए भी विशेष रूप से जाना जाता है। संस्कृत

और प्राकृत भाषा और साहित्य का उनका अध्ययन बहुत गहन था। साथ ही निरंतर अनेक स्थानों पर घूमते रहकर उन्होंने जनता के सुख-दुख को भी बहुत नजदीक से देखा और समझा था। वे राजनीतिक आंदोलन में भी सक्रिय रहे थे।

इन सब अनुभवों से उनकी सामाजिक चेतना के साथ-साथ सौंदर्य चेतना भी अत्यंत प्रखर हो उठी थी। इसीलिए उनके काव्य में जहाँ एक ओर सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक विषयों पर बेलाग और अक्कड़ अभिव्यक्तियाँ प्राप्त होती हैं, वहीं दूसरी ओर जीवन के सुंदर और मधुर पक्ष को भी उन्होंने प्रकृति, लोक एवं संस्कृति पर केंद्रित कविताओं में मार्मिक अभिव्यक्ति प्रदान की है। इसी कारण वे भारतीय जनमानस के सबसे निकट विद्यमान कवियों में गिने जाते हैं।

नागार्जुन का रचना काल काफी फैला हुआ है। उन्होंने भारत के स्वतंत्रता संग्राम के दिनों में राष्ट्रगान, प्रभाती और उद्बोधन के गीत उसी प्रकार लिखे जैसे निराला और प्रसाद आदि ने लिखे थे। भारत के आजाद होने पर भी उनके भीतर की यह संघर्ष चेतना लगातार प्रखर रही। उन्होंने स्वतंत्र भारत के विविध आंदोलनों के लिए भी गीतों और कविताओं की रचना की। आजादी से पहले की उनकी रचनाओं में देशभक्ति और निष्ठा दिखाई देती है। लेकिन आजादी के बाद की उनकी रचनाओं में क्रमशः व्यंग्य का स्वर प्रखर होता गया। व्यंग्य प्रधान काव्य के बीच जब पाठक उनकी प्रकृति, सौंदर्य, रिश्ते-नाते और लोक जीवन पर केंद्रित कविताओं को पढ़ते हैं तो तपते रेगिस्तान में ठंडी बारिश की फुहार का सा आनंद महसूस होता है।

'मेघ बजे' और 'खुरदरे पैर' नागार्जुन की इन्हीं लोकधर्मी कविताओं का प्रतिनिधित्व करने वाली रचनाएँ हैं। अनेक स्थलों पर नागार्जुन अपने पाठक को निराला की याद दिलाते हैं। इस विषय में डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी का यह कथन द्रष्टव्य है कि -

> "आंदोलनमूलक कविताओं के अतिरिक्त सामन्य जन जीवन को अंकित करने वाली कुछ कोमल और कुछ तीखी रचनाएँ भी नागार्जुन ने लिखी हैं जो एक प्रकार से आधुनिक हिंदी कविता में प्रगतिवाद का रेखांकन माना जा सकता है।"
> (हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास, पृ. 190)

लोक के साथ-सीधे जुड़ाव और अक्कड़पन के साथ-साथ प्रेम और करुणा से भरे हुए साहित्य की रचना करने वाले नागार्जुन सही अर्थ में आधुनिक काल के कबीर कहे जा सकते हैं। हिमांशु जोशी ने हैदराबाद में 8-9 जुलाई, 2009 को आयोजित 'बाबा नागार्जुन' पर केंद्रित

राष्ट्रीय संगोष्ठी में विषय प्रवर्तन करते हुए ज़ोर देकर यह कहा था कि आज के भारत को नागार्जुन की जरूरत है, कबीर की जरूरत है। वे एक ऐसे कवि थे जिनकी चिंता का एक मात्र विषय 'मनुष्य' था। इसीलिए उन्हें किसी 'वाद' में नहीं बाँधा जा सकता। हिमांशु जोशी के शब्दों में -

> "कबीर के वंश के आखिरी व्यक्ति थे नागार्जुन। नागार्जुन कोई बहुत बड़ी हस्ती नहीं थे अपने में। ऐसा गरीब आदमी आपने देखा नहीं होगा। नागार्जुन के पिता ने जो मिट्टी का घर अपने बेटे को उत्तराधिकार में दिया था वही मिट्टी का आघार मरते समय नागार्जुन अपने पुत्रों को दे गए।... नागार्जुन जीवन भर लिखते रहे। जीवन भर भटकते रहे। ऐसा साहित्यकार हिंदी ही नहीं, भारतीय भाषाओं में दूसरा नहीं होगा। उनके लिए मनुष्य मनुष्य रह गया था। जीतने भी वाद के बंधन थे नागार्जुन एक-एक करके उन्हें फेंकते चले गए। तो जो उन्हें युग सत्य मिला, चीर सत्य मिला वह मनुष्य का था। नागार्जुन का दर्शन मनुष्य का ही दर्शन है।"
> (संस्मारिका : बाबा नागार्जुन, पृ. 9-10)

कहना न होगा कि अभी आपने नागार्जुन की जिन रचनाओं का अध्ययन किया है वे किसी भी वाद के खाँचे में नहीं समा सकतीं, बल्कि मनुष्य और उसकी अनुभूतियों को मर्मस्पर्शी अभिव्यक्ति प्रदान करते हुए उनके इसी जीवन दर्शन को प्रकट करती हैं। नागार्जुन को कबीर और निराला की पंक्ति का कवि घोषित करते हुए डॉ. शंभुनाथ ने भी लिखा है कि -

> "निराला के बाद नागार्जुन से बड़ा आधुनिक कवि कौन हैं? नागार्जुन का आधुनिकता बोध विद्यापति की लोकभूमि के संस्कारों की पृष्ठभूमि में एक बृहत्तर राष्ट्रीय ढाँचा वाला आधुनिकता बोध है। वह जड़ों वाला आधुनिकता बोध है, जड़हीन आधुनिकता बोध नहीं, उन्होंने मैथिली और संस्कृत में भी लिखा। मैथिली और हिंदी के बीच तो वे एक सेतु बना गए हैं, ऐसे सेतुओं को हमेशा मजबूत बनाना चाहिए। दरअसल वैद्यनाथ मिश्र, यात्री, नागार्जुन और बाबा - ये सभी मिलकर ही एक पूर्ण व्यक्तित्व बनते हैं। इनको परस्पर अलगाया नहीं जा सकता। नागार्जुन अपनी लघु काय में भी एक विराट व्यक्तित्व थे, विविधता से भरे पूरे। मिथिला उनकी भावभूमि, कलकत्ता विचारभूमि और पूरा देश सौंदर्य-भूमि है। उन्होंने साहित्य के जरिए लगातार यह कहना चाहा कि अस्मिता और

अखंडता में वस्तुतः कोई अंतर्विरोध नहीं है।" (वही, पृ. 43)

इसी प्रकार बाबा नागार्जुन की सौंदर्य चेतना पर टिप्पणी करते हुए डॉ. विजय बहादुर सिंह ने बड़े मार्के की बात कही है। यथा-

> "नागार्जुन जिद की हद तक जाकर कह उठते हैं - जब तक मेरे पड़ोस की बच्ची खिलखिला रही है, बादल उमड़-घुमड़ रहे हैं, कोकिल कूक रही है और ठूँठ पैडलों पर पसीना गारने और फटी बिवाइयों वाला वामनावतार रिक्शे वाला जिंदा है, कविता और संवेदना की मृत्यु नहीं हो सकती। वे कालबोध के मामले में साहित्य की उस सनातन धारा के साथ हैं जो काल की विभिन्न गतियों और मुद्राओं के परिवर्तमान रूपों और रंगों को स्वीकार करती हुई यह भी मानती है कि पृथ्वी की दोनों गतियाँ सत्य हैं। काल का वह चेहरा भी सच है जो विष्णु के चक्र की तरह निरंतर घूम रहा है। और वह भी सच है जो दिन भर की कठिन धूप और गहरी छाँव से गुजरता हुआ कुछ ऐसे भी अनुभवों से होकर गुजरता है जिन्हें अंगीकार किए बगैर काल भी अप्रासंगिक हो उठेगा।" (वही, पृ.18)

अंततः यह दोहराना आवश्यक है कि नागार्जुन बहुआयामी और विशाल रचना संसार के रचनाकार हैं। डॉ. नामवर सिंह ने तो यहाँ तक कहा है कि तुलसीदास के बाद नागार्जुन ही हिंदी के ऐसे अकेले कवि हैं जिन्हें विद्वानों से लेकर किसान-मजदूरों तक एक जैसी लोकप्रियता प्राप्त है। इसी प्रकार केदारनाथ सिंह लिखते हैं -

> "नागार्जुन जितना देखते हैं, सुनते हैं, सूँघते हैं या महसूस करते हैं, उसे पूरा का पूरा और कई बार उसके संपूर्ण अनगढ़पन के साथ कविता में कहने की अद्भुत कला उनके पास है। उनके लिए कविता से बाहर कुछ भी नहीं है, न इतिहास का सत्य और न भूगोल का ऊबड़-खाबड़पन। (मेरे समय के शब्द, पृ.59)

बोध प्रश्न

- नागार्जुन के आजादी के पहले की कविताओं में क्या दिखी देती है?

20.4 पाठ सार

'मेघ बजे' तथा 'खुरदरे पैर' कविताओं में कवि नागार्जुन ने किसान तथा मजदूर वर्ग की पीड़ा तथा विवशता को दर्शाया है। किसान वर्षा पर निर्भर रहता है अत: भीषण गर्मी के बाद

जब बादल बरसात का संदेशा लाते हैं तो किसानों का जीवन सार्थक हो जाता है। नागार्जुन किसानों और मजदूरों का स्वर थे। वे किसानी-खेती के बहुत निकट थे। कृषक जीवन और उसकी समस्याओं में बाबा नागार्जुन की गहरी रुचि थी। जेठ की भीषण गर्मी व लू के कारण बेहाल प्राणियों की आँखें आसमान की ओर मेह की टोह में रहती है। जब वे देखते हैं कि जल का अथाह भण्डार लिए बादल घुमड़-घुमड़कर घिरने लगे हैं, तो बादलों की गड़गड़ाहट से पृथ्वी का प्रत्येक जीव-जंतु और वनस्पति सब रोमांचित हो जाते हैं। ऐसा लगता है मानो बादलों के झरोखों में से रह-रहकर बिजली चमक रही है। वह माटी से बहुत लगाव रखता है। यही कारण है कि कीचड़ भी उसे हरिचंदन सा लगता है। यह किसान का अपनी धरती के प्रति आदर भाव है।

'खुरदरे पैर' कविता में एक गरीब की पीड़ा से कवि का मन व्यथित हो जाता है। वह रिक्शाचालक की पीड़ा की अनुभूति करता है। खुदरे गाँठ पड़े पैरों पर कवि की संवेदनशील दृष्टि जाती है। उसे वामन के तीन पैर का स्मरण हो आता है। नागार्जुन श्रमिक की कठोर जीवन शैली से ही द्रवित हो जाते हैं। उनकी कविताओं में शोषित समाज की पीड़ा मुखरित हुई है। पुराणों से संदर्भ लेकर पात्रों को मजबूती प्रदान करते है। बाबा नागार्जुन प्रगतिवादी कवियों में प्रमुख कवि हैं। नागार्जुन की कविताओं में सामाजिक संघर्ष मुखरित हुआ है।

20.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

5. नागार्जुन बहुआयामी और विशाल रचना संसार के रचनाकार हैं।
6. तुलसीदास के बाद नागार्जुन ही हिंदी के ऐसे अकेले कवि हैं जिन्हें विद्वानों से लेकर किसान-मजदूरों तक एक जैसी लोकप्रियता प्राप्त है।
7. नागार्जुन की रचनाओं में आम जनता के संघर्षमय जीवन का मर्मस्पर्शी अंकन है।
8. 'मेघ बजे' और 'खुरदरे पैर' नागार्जुन की लोकधर्मी कविताओं का प्रतिनिधित्व करने वाली रचनाएँ हैं।

20.6 शब्द संपदा

1. आगमन = पहुँचना /आना
2. उत्पीड़ित = सताया हुआ
3. कुठाराघात = घातक चोट

4. दृष्टिकोण = नज़रिया

5. पराकाष्ठा = चरम सीमा

6. मनोहारी = सुंदर

7. मर्म स्पर्शी = हृदय को छूने वाला

8. यथार्थ = वास्तविक

9. व्याकुल = बेचैन

10. हर्ष = प्रसन्नता /ख़ुशी

20.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

5. नागार्जुन ने 'मेघ बजे' कविता में किस ऋतु का वर्णन किया है तथा उससे कौन-कौन प्रभावित होते हैं? स्पष्ट कीजिए।
6. कवि को क्यों लगता है कि वह रिक्शा चालक के पैरों को वह कभी नहीं भूल पाएगा? पठित कविता के आधार पर सार लिखिए।
7. नागार्जुन को आधुनिक काल के कबीर कहना कहाँ तक तर्कसंगत है?

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

6. प्रगतिवादी काव्यधारा का मुख्य उद्देश्य क्या था?
7. 'मेघ बजे' कविता की विशेषता लिखिए।
8. 'खुरदरे पैर' कविता में किस कटु सत्य को उजागर किया गया है? चर्चा कीजिए।
9. नागार्जुन की काव्यगत विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
10. नागर्जुन भारतीय जनमानस के सबसे निकट विद्यमान कवियों में क्यों गिने जाते हैं?
11. "खुब गए

दूधिया निगाहों में

फटी बिवाइयोंवाले खुरदरे पैर”

- इन पंक्तियों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए।

12. मेघ बजे

धरती का हृदय धुला

मेघ बजे

पंक बना हरिचंदन”

– इन पंक्तियों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. नागार्जुन कवि थे? ( )

(अ) छायावादी (आ) प्रयोगवादी (इ) प्रगतिवादी

2. प्रगतिवाद के केंद्र में क्या है? ( )

(अ) प्रकृति (आ) परमात्मा (इ) मनुष्य

3. ‘मेघ बजे’ कविता संदेश देती है? ( )

(अ) गर्मी का (आ) वर्षा का (इ) ठंड का

4. किसान अभिनंदन करते हैं? ( )

(अ) धन का (आ) हल का (इ) धरा का

5. नागार्जुन की कविता का आधार होता है? ( )

(अ) यथार्थ (आ) कल्पना (इ) प्रेम

6. ‘खुरदरे पैर’ कविता का मुख्य विषय क्या है? ( )

(अ) संवेदना (आ) परोपकार (इ) आनंद

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. ……………………. का कण्ठ खुला।

2. धरती का ……………… धुला।

3. ………………………. मेघ बजे।

4. किसान .... पर निर्भर रहते हैं ।

5. खुरदरे पैर .... के थे।

6. फटी बिवाइयाँ ....का संकेत करती है।

III. सुमेल कीजिए -

1. पंक बना	(अ) मन
2. कुसुम-कोमल	(आ) निगाहें
3. दूधिया	(इ) नाप रहे थे धरती
4. त्रिविक्रम वामन	(ई) हरिचंदन

20.8 पठनीय पुस्तकें

1. नागार्जुन : सतरंगे पंखों वाली

2. नागार्जुन रचनावली (भाग 1 और 2) : सं. शोभाकांत

3. नागार्जुन और प्रगतिशील साहित्य : सं. सोनटक्के, भारती गोरे

4. नागार्जुन का रचना संसार : विजय बहदुर सिंह

इकाई 21 : नरेश मेहता : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

रूपरेखा

21.1 प्रस्तावना

21.2 उद्देश्य

21.3 मूल पाठ : नरेश मेहता : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

21.3.1 जीवन परिचय

21.3.2 रचना परिचय

21.4 पाठ सार

21.5 पाठ की उपलब्धियाँ

21.6 शब्द संपदा

21.7 परीक्षार्थ प्रश्न

21.8 पठनीय पुस्तकें

21.1 प्रस्तावना

विद्यार्थियों के लिए जरूरी है कि किसी रचना या कृति या उस से जुड़ी हुई पाठ्य सामग्री का अध्ययन करने से पूर्व उस रचनाकार के बारे में जान लें, परिचय प्राप्त कर लें। रचनाकार के संबंध में जानकारी होने से यह पाठ के लिए एक पृष्टभूमि के बतौर होता है जो आगामी अध्ययन के लिए सहायक हो जाता है। विद्यार्थी इस इकाई में साहित्यकार नरेश मेहता के व्यक्तित्व और कृतित्व के बारे में जानेंगे जिनके संबंध में इस पाठ में संपूर्ण जानकारी प्रस्तुत की गई है।

21.2 उद्देश्य

इस पाठ के अध्ययन से आप -

- साहित्यकार नरेश मेहता का परिचय प्राप्त करेंगे।
- नरेश मेहता के व्यक्तित्व के साथ साथ रचनाओं से भी परिचित होंगे।
- कवि के रूप में नरेश मेहता के मुख्य सरोकारों को जान सकेंगे।
- आधुनिक हिंदी काव्य में नरेश मेहता का स्थान निर्धारण कर सकेंगे।

21.3 मूल पाठ : नरेश मेहता : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

21.3.1 नरेश मेहता का जीवन परिचय

नरेश मेहता आधुनिक हिंदी साहित्य के एक मूर्धन्य कवि, कथाकार एवं साहित्य विचारक के तौर पर परिचित हैं। नरेश मेहता का का जन्म 15 फरवरी, 1922 ई. को मालवा के राजापुर कस्बे में हुआ था। नरेश मेहता का मूल नाम पुर्णशंकर शुक्ल था बाद में नरसिंहगढ़ राजघराने की राजमाता ने इनका नाम नरेश रखा। मेहता इनका उपनाम था। आगे चलकर यह नरेश मेहता के नाम से प्रसिद्ध हुए। इनके पिता का नाम पंडित बिहारीलाल शुक्ल था। नरेश मेहता के माताजी की मृत्यु इनके बचपन में ही हो गई थी। इनके पिताजी ने तीन विवाह की थीं। इनके पिताजी की पहली पत्नी के निःसंतान रहने पर पिताजी की दूसरी शादी हुई जो नरेश मेहता की बहन शांति जोशी की माताजी थी और नरेश मेहता बिहारीलाल शुक्ल के तीसरी पत्नी से पैदा हुए पुत्र थे। तीन पत्नियों और बेटी की मृत्यु के बाद इनके पिताजी भी गोलोकवासी ही गए। इनके पिताजी के स्वर्गवासी होने के उपरांत इनके चाचा पंडित शंकरलाल शुक्ल ने इन्हें अपने पुत्र की तरह रखा और जीवन में आगे बढ़ने के लिए प्रेरित किया।

बचपन में परिवार में आए उतार चढ़ाव का असर नरेश मेहता के अंतर्मन पर हुआ जिसका असर उनकी रचनाओं में भी दिखलाई पड़ता है। बचपन में मां की मृत्यु और किशोरवय से पहले पिताजी की मृत्यु ने उन्हें अंदर तक वेदना में डूबो दिया था जिसकी वजह से बालक नरेश मेहता बचपन में ही दो बातों से घृणा करने लगे थे जिसमे एक परिवार भी था।

शिक्षा

नरेश मेहता ने अपनी प्रारंभिक शिक्षा अपने चाचा के साथ रहकर प्राप्त किया। कक्षा 8, 9 और 10 की पढ़ाई उन्होंने नरसिंहगढ़ से की उसके उपरांत इंटरमीडिएट के अध्ययन के लिए वह उज्जैन गए। नरेश मेहता ने उच्च शिक्षा के लिए अपने घर में आग्रह किया की वह बनारस हिन्दू विश्विद्यालय से आगे की पढ़ाई पूरी करना चाहते है जिसकी अनुमति उन्हें मिली भी और आगे की पढ़ाई उन्होंने बीएचयू से की। अध्ययन के लिए उज्जैन से काशी जाने के दौरान नरेश मेहता ने प्रयाग को अपने अध्ययन का केंद्र बनाना चाहा लेकिन रास न आने पर वह पूर्व निर्धारित स्थान काशी की ओर चले गए। बीएचयू में प्रवेश के बाद वह दो महीने था मुगलसराय में डॉ.

योगेंद्रनाथ मिश्र के यहाँ रहे। हालाँकि दो मास के बाद विश्विद्यालय के बिरला छात्रावास में प्रवेश मिल गया। काशी में अध्ययन के दौरान ही नरेश मेहता जी ने देहरादून स्थित केंद्रीय प्रशिक्षण संस्थान से सेकेंड लेफ्टिनेंट का प्रशिक्षण प्राप्त कर लिया। अपने अध्ययन के माध्यम से उन्होंने राजनीतिशास्त्र, प्राचीन इतिहास और हिंदी साहित्य जैसे विषय के साथ स्नातक की उपाधि प्राप्त कर लिया। सन् 1946 में उन्होंने एम ए किया। इसके बाद उन्होंने डॉ. नंददुलारे वाजपेयी के निर्देशन में शोधकार्य भी प्रारंभ कर दिये थे लेकिन काशी छोड़ने के कारण वह शोधकार्य पूरा नहीं कर सकें।

बोध प्रश्न

- नरेश मेहता का जन्म किस तिथि को हुआ था?
- नरेश मेहता का जन्म कहाँ हुआ था?

जीवन यापन

नरेश मेहता आवश्यकतावश काव्य पाठ किया करते थे। आधिकारिक रूप से सन् 1948 से 1956 तक उन्होंने आकाशवाणी में सेवा प्रदान की। इस दौरान उन्होंने लखनऊ, नागपुर तथा प्रयाग के केंद्रों में अपनी सेवा देते हुए सन् 1953 में उन्होंने आकाशवाणी की नौकरी से त्यागपत्र दे दिया।

प्रेरणा

अल्पायु में ही मां की मृत्यु और कुछ समय के बाद पिता के असमय निधन से नरेश मेहता के बाल मन पर विशेष प्रभाव पड़ा था। पारिवारिक अभाव की वजह से वह व्यक्तित्व के स्तर पर अंतर्मुखी हो गए थे। बालपन से किशोर आयु की ओर बढ़ने के दौरान जीवन में आए परिवर्तनों ने उन्हें ऐसी जगह पर ला खड़ा किया था जहाँ वाह खुद को भीड़ में भी अकेला महसूस करते थे।

नरेश मेहता का जीवन माता-पिता का अभाव में बेहद संघर्षपूर्ण परिस्थितियों में बीता। अभाव और यातना का कष्टकारी दौर व्यक्ति को भौतिकता के प्रति आग्रही बना देता है और प्रतिशोध का भी गहरा भाव भर देता है। परंतु नरेश मेहता इन दोनों परिस्थितियों से बच निकलते हैं। अपने अनुभव संसार से वह कुछ बेहतर रचने की कोशिश करते हैं। दूसरे सप्तक के अपने व्यक्तव्य में वह लिखते हैं की नया तो मेरा युग है, 'मेरी प्रकृति है तथा सबसे बड़ा मै हूं'।

राजनीति और साहित्य को पर्यायवाची के रूप में स्वीकार करने वाले नरेश मेहता जी ने

जीविकोपार्जन के लिए आकाशवाणी में नौकरी प्रारम्भ की थी। उनकी पहली नियुक्ति लखनऊ आकाशवाणी केन्द्र में हुई थी। इसके बाद नागपुर तथा प्रयाग के आकाशवाणी केंद्रों में अपनी सेवा देते हुए उन्होंने अपनी प्रतिभा से परिचय करवाया था। लेखकीय स्वतंत्रता के समर्थक और उनकी घुमक्कड़ी प्रवृति ने उन्हें आकाशवाणी की सेवा से निकलने में बड़ी भूमिका निभाई। सन् 1953 में आकाशवाणी से त्यागपत्र देने के बाद वह लेखकीय दायित्व को पूरा करने दिल्ली आ गए। दिल्ली आने के बाद कुछ मित्रों की सलाह और उत्साह से साहित्यकार पत्रिका का संपादन किया। इसी बीच उन्हें अखिल भारतीय मजदूर संघ के मुखपत्र भारतीय श्रमिक का संपादन का दायित्व भी मिला। पत्र संपादन की दृष्टि से नरेश मेहता द्वारा साहित्यिक पत्रिका कृति का संपादन भी उल्लेखनीय है। इस साहित्यिक पत्रिका में उनके सहयोगी संपादक कवि श्रीकांत वर्मा थे। इसके अतिरिक्त उन्होंने इंदौर से प्रकाशित हिन्दी दैनिक चौथा संसार का संपादन भी किया।

नरेश मेहता के लेखक या साहित्यकार बनने के क्रम में उनकी प्रमुख कोशिश कवि बनने की थी। परंतु डूबते मस्तुल लिखने के पश्चात उन्हें अपनी पकड़ गद्य विधा पर भी ठीक मालूम हुई। जिसके बाद से वह गद्य लिखने की ओर मुड़े और कई सारे उल्लेखनीय गद्य साहित्य की रचना उन्होंने अपने जीवन में की। यही कारण है कि वह कवि के रूप में जितने चर्चित है उतने ही वह उपन्यासकार के रूप में याद किए जाते हैं। गद्य और पद्य दोनों का सृजन उनके साहित्यकार व्यक्तित्व का उल्लेखनीय पहलू है। सन् 1985 में वह प्रेमचंद सृजनपीठ विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन ने वह निर्देशक के मानद पद पर कार्यरत रहें। नरेश मेहता को साहित्य के क्षेत्र में उल्लेखनीय सेवा की वजह से सन् 1988 में साहित्य अकादमी पुरस्कार मिला वहीं सन् 1992 में वह ज्ञानपीठ पुरस्कार से भी सम्मानित हुए। उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान द्वारा इन्हे भारत भारती सम्मान से भी नवाजा गया।

अपने साहित्य सृजन में कार्यरत नरेश मेहता का देहावसान 78 वर्ष की आयु में 22 नवंबर 2000 को भोपाल में हो गया। उनके जाने से हिंदी साहित्य संसार में एक गहरा सन्नाटा व्याप्त है। नरेश मेहता किसी भी मतवाद से इत्तर अपनी साहित्यिक रचनाओं और व्यक्तित्व सम्पन्नता की वजह से हिंदी साहित्य को निरंतर प्रकाशमान कर रहें हैं।

जिस समय में लेखक, रचनाकार सृजन करता है वह उस समय, युग से भी निरंतर प्रभावित होता रहता है। इसलिए यह जरूरी है कि साहित्य अनुशीलन करने के लिए तत्कालीन परिवेश का अध्ययन भी अत्यंत आवश्यक होता है।

बोध प्रश्न

- नरेश मेहता की प्रारम्भिक शिक्षा दीक्षा कहाँ हुई?
- नरेश मेहता अपनी उच्च शिक्षा की पढ़ाई किस शहर कौन से विश्विद्यालय से की?
- नरेश मेहता ने सेकंड लेफ्टिनेंट का प्रशिक्षण कहाँ से प्राप्त किया था?

21.3.2 युग परिचय

दूसरा सप्तक में उपस्थित होकर नरेश मेहता ने एक कवि के रूप में हिंदी साहित्य समाज का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया था। वे अपने युग की समसामायिकी परिस्थिति और प्रवृत्तियों से गुजरते हुए युगीन पीड़ा को अपनी रचनाओं में अभिव्यक्त करते हुए दिखाई पड़ते हैं। उनका साहित्य उनके युग और समाज की कहानी को कहता है जिसके केन्द्र में साहित्य से इतर वह परिस्थितियाँ है जो व्यष्ठी से लेकर समष्ठी तक को प्रभावित करते रही हैं। आधुनिक युग की बदलते हुए गतिविधियों के बीच भारतीय संस्कृति और मानवीय चिंतन को शब्दबद्ध कर सामने लाने का श्रेय कवि नरेश मेहता को हैं।

21.3.3 साहित्यिक परिस्थितियाँ

प्रत्येक साहित्य को राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा उस दौर में मौजूद साहित्यिक परिवेश प्रभावित करता है। आज राष्ट्रों की भौगोलिक सीमाएँ आधुनिकता के विस्तार के साथ टूट रही हैं। अपनी समकालीनता के साथ दुनिया एक विश्वग्राम के रूप में तब्दील होती जा रही है। विविधता के बीच मानव संबंधों में एकता का भाव निर्मित हो रहा है। यही कारण है कि साहित्य अब मानव हित और मानव सभ्यता के विकास की कथा के रूप में विकसित होती जा रही है। जो रचना किसी एक समय में चर्चित होती है वह दूसरे समय में प्रश्न के बदलने के साथ ही अप्रसंगिक होती चली जाती है। हालांकि कालजयी रचनाओं के साथ यह बात लागू नहीं होती। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद बदलते हुए विश्व में मानव को लेकर कई तरह की बहसे चल रही थी जिसका भारतीय चिंतन मनन पर भी हुआ।

नए युग के अनुकूलता के साथ आधुनिक चेतना की रौशनाई में मनुष्य की प्रगति हो रही है और कुछ अभी बाकी भी हैं। प्रत्येक कवि की अनुभूति उसकी निजी संपदा होती है जिसमें वह मानव मूल्यों की निरंतर खोज करता रहता है, उसको लेकर चिंतन मनन करता रहता है। नरेश मेहता जी ने अपनी शिक्षा के प्रारम्भिक दौर में ही भारतीय ग्रंथों का अध्ययन मनन कर लिया था। हिंदी साहित्य में वह अपनी सोच और अभिव्यक्ति को किसी खास सांचे में नहीं रखें।

कालजयी साहित्य में उन्हें मुंशी प्रेमचंद द्वारा रचित गोदान की जगह जैनेन्द्र कुमार का उपन्यास त्यागपत्र अधिक प्रभावकारी रचना प्रतीत होती है।

आधुनिक हिंदी साहित्य और खासकर कविता के क्षेत्र में भारतेंदु युग से लेकर नयी कविता तक विकास की एक श्रृंखला नजर आती है। हालांकि इस विकास यात्रा में कई पड़ाव, मोड़ भी आए लेकिन काव्य यात्रा का सतत विकास जारी रहा। काव्य यात्रा को संपूर्णता में देखा जाए तो उनके मानव चिंता की एक अंतः सलिल धारा सतत प्रवाहमान है। इस दृष्टि से हिंदी कविता को देखना एक ऐसे ऐतिहासिक आयाम की ओर ले जाता है जो कविता को कभी अप्रासांगिक नहीं होने देती।

भारतेंदु युग हिंदी साहित्य में आधुनिक चेतना का प्रवेश द्वार है। यह युग मध्युगीन चेतना और आधुनिक चेतना का संक्रमण या कहें वह संधि स्थल है जहाँ से चेतना की एक कई किरणें निकलती है। साहित्य में जहाँ कई विधाओं का विकास होता है वहीं राष्ट्रीय स्तर पर स्वाधीनता की चेतना का लावा भी प्रस्फुटित होता है। यहीं से साहित्य का प्रवाह राजा के चारण वंदना से निकलकर जनता के प्रश्नों के साथ प्रवाहित होने लगता है। परम्परा के प्रति मोह की जड़ता टूटती है जागरण के स्वर साहित्य से लेकर समाज तक व्याप्त होता चला जाता है। भारतेंदु युग के बाद द्विवेदी युग और सरस्वती पत्रिका के प्रकाशन साहित्य उन्नयन की दिशा में गई आई।

द्विवेदी युगीन कवि अपने चारों ओर अंग्रेजी राज का एक व्यापक षड्यंत्र अनुभव करता रहा और अपने सामाजिक उत्तरदायित्व को निभाते हुए जनता को स्वाधीनता के प्रश्न पर जागृत और सावधान करता रहा। यह युग विभिन्न सामाजिक सुधारों का भी युग है। समाज में व्याप्त कुरुतियों के खिलाफ लड़ाई भी निरन्तर जारी रही। यही कारण है कि मैथिलीशरण गुप्त के काव्य में गांधी युग की समस्त मूल प्रवृत्तियाँ, राष्ट्रीय, सामाजिक और राजनीतिक आंदोलन पूर्णता से प्रतिफलित हुआ है। द्विवेदी युग की प्रमुख समस्या में गरीब, अशिक्षित, कृषक और मजदूर वर्ग को आलंबन बनाकर राजनीतिक और आर्थिक शोषण को अभिव्यक्ति प्रदान की गई है।

द्विवेदी युगीन कविता अपने विषय प्रधान कविताओं के चित्रण में इतना अधिक व्यस्त रहा कि उसे अपनी वैयक्तिक चेतना के अभिव्यक्ति का अवसर भी मिल पाया। जिसकी अभिव्यक्ति आगे चलकर छायावादी कविताओं में देखने को मिलती हैं। छायावाद ऐसी काव्य प्रवृति है जिसमें नवीन अंतः सौंदर्य के साथ नवीन जीवन सौंदर्य की संकल्पना मौजूद है। भाव

और विचार की नए शिल्प में प्रस्तुत करने का सफल प्रयास एक नए युग चेतना की मांग थी जो छायावादी कविता से सामने आई। सुमित्रानंदन पंत, जयशंकर प्रसाद, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला और महादेवी इस काव्य धारा के हस्ताक्षर हैं।

छायावाद के बाद प्रगतिवाद सामाजिक चेतना का प्रतिनिधि काव्य है। इसका जन्म छायावाद की वैयक्तिकता के खिलाफ मुखर और तीव्र सामाजिक अभिव्यक्ति के रूप में होता है। हालांकि छायावाद के लोकहित और स्वाधीनता की चेतना की मौजूद अवधारणा का विकास प्रगतिवादी कविता में सामाजिकता के साथ होता है। प्रगतिवाद तक आते आते साहित्य वैयक्तिक पूंजी की जगह सामाजिक पूंजी के रूप में सामने आता है। प्रगतिवाद में व्यवस्था के प्रति तीखा विद्रोह है यही कारण है कविता प्रगतिवाद में आमजन के और नजदीक हुई जो कविता के सौंदर्य को एक नवीन रूप देता है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के कुछ वर्ष पहले हिंदी काव्यधारा के विकास में एक परिवर्तन हुआ। इस परिवर्तन की शुरुवात सन् 1943 में अज्ञेय द्वारा संपादित तार सप्तक से हुआ जिसे काव्यधारा के तौर पर प्रयोगवाद के रूप में चिह्नित किया गया। इसमें कविता को प्रयोग का विषय माना गया तथा शिल्प और विषय में नए परिवर्तन किए गए।

नयी कविता प्रयोगवाद की विकसित और परिवर्तित स्थिति है। दूसरा सप्तक के उपरांत की कविता को नयी कविता नाम दिया गया। नयी कविता के परिचय के पहले नकेनवाद काव्य धारा महत्व रखती है। तीसरा सप्तक में प्रयोगवादी काव्यधरा को नई कविता नाम दिया है। नयी कविता के समानांतर साठोत्तरी कविता या अ-कविता, प्रतिबद्ध, सहज कविता, वीर कविता, विचार कविता तथा नवगीत आदि कई काव्य धारा प्रचलित हुई।

बोध प्रश्न

- द्विवेदी युग के बाद कौन से काव्यधारा की शुरुवात हुई थी?
- प्रगतिवाद में किसके प्रति तीखा विद्रोह था?

21.3.4 रचना परिचय

नरेश मेहता की कविताएँ संकलित रूप में दूसरा सप्तक सन् 1959 के प्रकाशन से प्राप्त होती है। उसके बाद से जो भी उनके काव्य संग्रह प्रकाशित हुए हैं उनका संक्षिप्त विवरण -

1. बनपाखी सुनो (1957)

यह नरेश मेहता का स्वतंत्र रूप से प्रकाशित काव्य संग्रह है। इस काव्य संग्रह में 27

कविताएँ हैं। इसमें अधिकांश प्रकृति चित्रण से संबधित है।

2. बोलने दो चीड़ को (1962)

इस संकलन में भी कवि की मूल भूमि प्रकृति प्रेमी की ही है। इस संग्रह में प्रकृति के साथ साथ सामाजिक धरातल पर लिखी कविताएँ इस संग्रह की एक उपलब्धि है। इस संग्रह में भी 27 कविताएँ हैं।

3. मेरा समर्पित एकांत (1962)

मेरा समर्पित एकांत कवि नरेश मेहता के काव्य विकास का तीसरा आयाम है जो खंडो में विभाजित है। प्रथम खंड में 19 कविताएँ और दूसरे खंड में समय देवता नामक लंबी कविता है।

4. उत्सवा (1971)

उत्सवा पूर्णतः प्रकृतिपरक काव्य संग्रह है। इस संग्रह में 35 कविताएँ हैं। कवि की काव्यभूमि वैष्णव है, उन पर उपनिषद् चिंतन का भाव है। उत्सवा में उनका प्रकृति से अद्वैत से जुड़ा दिखाई देता है।

5. तुम मेरा कौन हो (1982)

प्रस्तुत संकलन में कवि की 52 कविताएँ संकलित हैं। जिन्हें कवि ने वैयक्तिक वैष्णवता की कविताएँ की संज्ञा से अभिहित किया है। अपने इस नवीन भाव कविताओं से वह काव्य चेतना को संपूर्ण करता है।

6. **अरण्या (1985)**

इस काव्य संग्रह में 33 रचनाएँ हैं। अरण्या सन् 1989 में साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित काव्य संग्रह है। कवि ने इसमें कवि को समस्त जैविकता का संस्कार करने वाला वैचारिक माध्यम है।

7. आखिर समुद्र से तात्पर्य (1988)

यह संग्रह नरेश मेहता के रचनात्मक विकास को रेखांकित यह काव्य संग्रह 51 कविताओं का संकलन है। इस संकलन की सभी कविताओं में कविताओं में कविता चिंतन, सौंदर्य चेतना और शिल्पगत विशेषताएँ इस काव्य संग्रह की पूंजी हैं।

8. **पिछले दिनों नंगे पैरों (1989)**

प्रस्तुत काव्य संग्रह राग में ले, खून टपकाते, इतिहास से निरपेक्ष तथा काव्य की चार खंडों में विभाजित है।

9. देखना एक दिन (1990)

यह काव्य संकलन नरेश मेहता की काव्य चेतना को विस्तार प्रदान करने वाला काव्य संग्रह है।

10. चैत्या (1993)

नरेश मेहता के दस काव्य संग्रहों से चयन की गई उनकी प्रतिनिधि कविताओं का संकलन हैं। इसका प्रकाशन भारतीय ज्ञानपीठ के द्वारा किया गया है जिसमें 99 सर्वश्रेष्ठ कविताओं का संकलन है।

11. समिधा (दो खंडों) (2000)

यह नरेश मेहता की संपूर्ण कविताओं का संकलन है जो लोकभारती से दो खंडों में प्रकाशित हुआ है।

खंड काव्य

1. संशय की एक रात (1967)

संशय की एक रात मुक्त छंद शैली में लिखा गया एक खंड काव्य है। जिसका कथानक अत्यंत संक्षिप्त है। इस खंड काव्य का आधार रामकथा है।

2. महाप्रस्थान (1975)

संशय की एक रात के बाद नरेश मेहता महाभारत के महाप्रस्थानिक पर्व पर आधारित खंड काव्य महाप्रस्थान आता है। यह खंड काव्य यात्रा पर्व, स्वाहा पर्व और स्वड़ग पर्व तीन खंडों में विभाजित है।

3. प्रवाद पर्व (1977)

प्रवाद पर्व के नरेश मेहता ने शक्ति और प्रशासन की समस्या पर प्रश्नचिन्ह लगाया है। यह पांच सर्गों में विभाजित है जिसमे लोकतंत्र बनाम राजतंत्र के सवाल के साथ आधुनिक चिंतन को संभव बनाया गया है।

4. शबरी (1979)

प्रस्तुत खंड काव्य अत्याधुनिक खंड काव्य है। इसमें वर्ण व्यवस्था के प्रश्न पर विचार किया गया है। वर्ण व्यवस्था जैसे ज्वलंत प्रश्न पर विचार करते हुए कवि ने इसका समाधान नवीन संदर्भों में किया है। शबरी खंड काव्य पांच खंडों में विभाजित है। शबरी रामकथा से जुड़ी हुई एक चरित्र हैं।

5. प्रार्थना पुरुष (1985)

इस खंड काव्य में गांधी गाथा वस्तुतः एक इतिवृत्तात्मक लघुकृति है तथा आधुनिक हिंदी काव्य के नए रूप को रेखांकित करती है। इसके साथ ही इसमें इसकी सृजनात्मकता भी छांदिक सरलता भी है।

उपन्यास

1. डूबते मस्तूल (1954)

इस उपन्यास की समय अवधि 17 से 18 घंटों तक सीमित है। इस उपन्यास का आरंभ दिन के 12.30 से शुरू होता है तथा दूसरे दिन सुबह के समय ख़त्म हो जाता है।

2. यह पथ बंधु था (1962)

यह स्वतंत्रता के पूर्व की राजनीतिक, सामाजिक घटनाओं की पृष्ठभूमि में लिखा गया है तथा सामान्य व्यक्ति की स्वप्न चेतना के खंडित होने की मार्मिक गाथा प्रस्तुत करता है।

3. धूमकेतु एक श्रुति (1963)

यह उपन्यास नरेश मेहता के जीवन अनुभव पर आधारित है। बालक उदयन की स्मृतियों को खंड खंडकर इस उपन्यास में प्रस्तुत किया गया है।

4. दो एकांत (1964)

इस उपन्यास में लेखक ने विवेक और बानीरा के माध्यम से आज के तनावपूर्ण दांपत्य का चित्रण किया है।

5. नदी यशस्वी है (1967)

यह उपन्यास धूमकेतु एक श्रुति का दूसरा खण्ड है जिसमें किशोर उदयन को चित्रित किया गया है।

6. उत्तर कथा (प्रथम खंड) (1979)

यह उपन्यास नौ उपशीर्षकों में विभाजित कर प्रस्तुत किया गया है।

7. उत्तर कथा (द्वितीय खण्ड) (1982)

इस उपन्यास में वहीं पात्र हैं जो उत्तरकथा खंड एक में था। यहाँ परिवर्तन की प्रक्रिया की प्रक्रिया काफी तेज़ है। इस उपन्यास में जीवन की गतिमयता के नए संबंधों की भी चर्चा हैं।

नाट्य साहित्य

1. सुबह के घंटे (1955)

इस नाटक में पराधीन भारत और स्वाधीन भारत की राजनीति का मूर्त रूप चित्रित किया गया है।

2. खण्डित यात्राएँ (1962)

इस नाटक में कथा सामंत वर्ग की है जो नाटक में तीन अंकों तक विभाजित हैं।

3. पिछली रात की बरफ (1962) (एकांकी)

या नरेश मेहता के रेडियों नाटकों का संग्रह है।

4. सनोवर के फूल (1962) (एकांकी संकलन)

प्रस्तुत एकांकी संग्रह में छः एकांकी संकलित है। विषय के स्तर पर संकलित एकांकी संग्रह में मोह - मोक्ष - गोपा गौतम बुद्ध के निर्वाण पर आधारित है।

कहानी साहित्य

1. तथापि (1962)

इस कहानी संग्रह में कुल आठ कहानियाँ संकलित है। चांदनी, किसका बेटा, दुर्गा, वह मर्द थी, तिष्यरक्षिता की डायरी, दूसरे की पत्नी के पत्र एवं संग्रह शीर्षक कहानी तथापि।

2. एक समर्पित महिला (1968)

इस कहानी संग्रह में एक समर्पित महिला, श्रीमती मास्टर, एक शीर्षकहीन स्थिति, अनबीता व्यतीत आदि शीर्षकों से छः कहानियों को स्थान प्राप्त हुआ।

निबंध

काव्य का वैष्णव व्यक्तित्व (1972)

काव्य का वैष्णव व्यक्तित्व में काव्य की उत्पति, काव्य तथा धर्म का संबंध, भाषा में शब्द शक्ति का महत्व तथा भाषा के संस्कार की आवश्यकता, पुराणों का प्रयोजन, वैष्णवत्ता आदि पर प्रकाश डाला गया है।

काव्यात्मकता का दिक काल (1991)

इस निबंध में नरेश मेहता जी ने काव्य संबंधी विभिन्न प्रश्नों पर विचार किया है। जो काव्य के सिद्धांत से जुड़े हुए हैं।

यात्रा वृतांत

1. राम पलाश के फूल सिया कचनार कली (1991)

यह यात्रा वृतांत साप्ताहिक हिंदुस्तान में दो अंकों में प्रकाशित हुआ था।

2. साधु न चले जमात (1991)

सामान्य यात्रा संस्मरणों से सर्वथा अलग यह यात्रावृत्तांत कवि लेखक के चिंतन, अध्ययन और जीवन दृष्टि को सामने लाने का कार्य करता है।

संपादन

1. वाग्देवी प्रतिनिधि काव्य संकलन (1972)

प्रस्तुत संकलन को नरेश मेहता ने चार विभागों में विभाजित किया है। परा, पश्यन्ती, मध्यमा और वैखरी इन चार नामों इस काव्य संकलन को विभाजित कर इसका संपादन किया गया है।

2. विचारात्मक लेख

नरेश मेहता ने मुक्तिबोध : एक अवधूत कविता, शब्द पुरुष अज्ञेय और हिंदी कविता का वैयक्तिक परिप्रेक्ष्य जैसे चिंतन मनन करने वाले लेख भी लिखे हैं। इस लेखों के माध्यम से उन्होंने अपने काव्य संबंधी चिंतन को और विस्तार दिया है

21.4 पाठ सार

आधुनिक हिन्दी साहित्य जगत् में नरेश मेहताजी कवि, कथाकार, नाटककार, चिन्तक, विचारक आदि रूपों में अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। वे नयी कविता के प्रयोगधर्मी अन्वेषक के रुप में हम सबके सामने अपनी रचनाओं के साथ उपस्थित होते हैं। सांस्कृतिक गौरव, परम्पराओं एवं मिथकीय सन्दर्भों के बीच सम्बन्धों को दर्शाती उनकी रचनाएँ अपनी सृजनधर्मिता के महत्व से ओतप्रोत हैं। वे सही अर्थों में मानवीय उत्कर्ष के रचनाकार हैं।

21.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. नरेश मेहता नई कविता आंदोलन के प्रमुख स्तंभों में से एक हैं।
2. नरेश मेहता की कविताओं में राग-विराग की वैयक्तिक और सामाजिक दोनों प्रकार की अनुभूतियाँ प्रकट हुई हैं।

3. नरेश मेहता अपनी रचनाओं में जीवन की प्रत्येक परिस्थिति में मानवीय जीवन-बोध को तलाशने वाले कवि हैं।
4. नरेश मेहता की रचनाएँ आधुनिक युगबोध के साथ साथ साहित्य में नवीन प्रयोगों के लिए भी जानी जाती हैं।

21.6 शब्द संपदा

1. अंतर्मन = मन की भीतरी परतें
2. अभाव = कमी
3. उपरांत = बाद में
4. कृति = रचना
5. दायित्व = जिम्मेदारी
6. देहावसान = मृत्यु को प्राप्त
7. मतवाद = मत के प्रति आग्रही नहीं
8. यातना = कष्टकारी
9. रौशानाई = प्रकाश

21.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. कवि नरेश मेहता के रचनाओं का संक्षिप्त परिचय दें।
2. नरेश मेहता के युगीन परिस्थितियों का जिक्र करें।
3. नरेश मेहता को किस दौर के कवि के रूप में याद किया जाता है।
4. रामकथा को आधार बनाकर नरेश मेहता ने कौन कौन सी रचनाएँ की हैं।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. नरेश मेहता के उपन्यासों का संक्षिप्त परिचय दीजिए?

2. नरेश मेहता के खंड काव्यों का उल्लेख करते हुए उनका संक्षिप्त परिचय दीजिए?

3. नरेश मेहता की युगीन परिस्थितियों का उल्लेख कीजिए?

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. संशय की एक रात किस तरह की रचना है? ( )

(क) खंड काव्य (ख) नाटक (ग) उपन्यास (घ) काव्यग्रंथ

2. चैत्या काव्य संग्रह का प्रकाशन किसके द्वारा किया गया था? ( )

(क) लोकभारती (ख) आकाशवाणी (ग) भारतीय ज्ञानपीठ (घ) हिंदुस्तान

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. नरेश मेहता को साहित्य अकादमी पुरस्कार सन् .... में मिला था।

2. उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान के द्वारा इन्हे ....पुरस्कार मिला था।

3. नरेश मेहता आकाशवाणी से सन् .... में नौकरी छोड़ दी।

III. सुमेल कीजिए -

1. तथापि	(अ) नाटक
2. साधु न चले जमात	(आ) कहानी
3. सुबह के घंटे	(इ) यात्रा वृतांत
4. शबरी	(ई) खंड काव्य
5. बनपाखी सुनो	(उ) काव्य संग्रह

21.8 पठनीय पुस्तकें

1. नरेश मेहता - कविता की ऊर्ध्व यात्रा : रामकमल राय

2. उत्सव पुरुष नरेश मेहता : महिमा मेहता

3. नरेश मेहता - काव्य का समग्र मूल्यांकन : गिरिजाशंकर दूबे

4. नयी कविता में श्रीनरेश मेहता - एक अनुशीलन : अंकिता कुमारी

इकाई 22 : ‘माँ’ और ‘पुरुष’ : नरेश मेहता

रूपरेखा

22.1 प्रस्तावना

22.2 उद्देश्य

22.3 मलू पाठ : ‘माँ’ और ‘पुरुष’ : नरेश मेहता

22.3.1 अध्येय कविता का सामान्य परिचय

22.3.2 अध्येय कविता

22.3.3 विस्तृत व्याख्या

22.3.4 समीक्षात्मक अध्ययन

22.4 पाठ सार

22.5 पाठ की उपलब्धियाँ

22.6 शब्द सपंदा

22.7 परीक्षार्थ प्रश्न

22.8 पठनीय पुस्तकें

22.1 उद्देश्य

नरेश मेहता एक ऐसे कवि है जिन्होंने आधुनिक कविता को नई व्यंजना के साथ नया आयाम दिया है। रागात्मकता, संवेदना और उदात्तता उनकी सर्जना के मूल तत्त्व हैं। नरेश जी ने भारत छोड़ो आंदोलन में भी भाग लिया था। इन्होंने आल इण्डिया रेडियो इलाहाबाद में नौकरी की पर नौकरी का बंधन ज्यादा दिनों तक उन्हें बांध न सका। वे एक स्वतंत्र लेखन की आशा में इलाहाबाद आ गए और कुछ समय पश्चात् उज्जैन के ‘प्रेमचन्द सृजन पीठ’ के निर्देशक बनकर वहीं बस गये। नरेश मेहता संस्कृतनिष्ठ खड़ी भाषा का प्रयोग करते थे।

इस इकाई में नरेश मेहता की दो कविताओं को पढ़कर उनके बारे में जानने की कोशिश की जाएगी। दोनों कविताओं के माध्यम से उनके काव्य बोध से परिचित हो उनके काव्य मन और उनके काव्य चिंता को टटोला जाएगा। उनकी कविताओं में प्रयोग और प्रगति को लेकर नए बोध है उसे जाना जाएगा और उस पर विचार किया जाएगा।

22.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप :

- नरेश मेहता के काव्य बोध के बारे में जान सकेंगे।
- 'माँ' और 'पुरुष' इन दोनों कविताओं के माध्यम से उनके काव्य संसार से परिचित हो सकेंगे।
- 'माँ' कविता के कथ्य से परिचित होंगे।
- 'पुरुष' कविता के भाव को समझ पाएँगे।

22.3 मलू पाठ : 'माँ' और 'पुरुष' : नरेश मेहता

22.3.1 आध्येय कविता का समान्य परिचय

आध्येय कविता 'माँ' नरेश मेहता द्वारा रचित है। जिसमें वह अपनी माँ की असमय मृत्यु की वजह से अपने जीवन में माँ की स्मृति से जुड़ नहीं पाए। इसलिए कविता में उस स्मृति को पकड़ने की कोशिश करते हैं।

'पुरुष' शीर्षक कविता नरेश मेहता द्वारा रचित एक ऐसी कविता है जिसमें मानव चिंता को प्रकट किया गया है। यद्यपि इस कविता का शीर्षक पुरुष है लेकिन यह कविता अपने कलेवर में। संपूर्ण मानव समाज के प्रश्न से जुड़ती नजर आती हैं। मानव समाज जिसमें अलग लिंग, अलग धर्म, अलग समुदाय, वर्ग से जुड़े हुए लोग रहते हैं और यह कविता उन सभी के जीवन के प्रश्न को टटोलती हुई दिखलाई पड़ती है। कविता में परंपरा और नवीन का द्वंद भी है।

22.3.2 आध्येय कविता : 'माँ' और 'पुरुष'

माँ

मैं नहीं जानता
क्योंकि नहीं देखा है कभी -
पर, जो भी
जहाँ भी लीपता होता है
गोबर के घर-आँगन,
जो भी
जहाँ भी प्रतिदिन दुआरे बनाता होता है
आटे-कुंकुम से अल्पना,

जो भी
जहाँ भी लोहे की कड़ाही में छौंकता होता है
मैथी की भाजी,
जो भी
जहाँ भी चिंता भरी आँखें लिये निहारता होता है
दूर तक का पथ -
वही,
हाँ, वही है माँ!!

पुरुष

हमें जन्म देकर
ओ पिता सूर्य !
ओ माता सविता !
क्या इसलिए तुम मार्तण्ड हो कि
अब तुम प्रकाश के अतिरिक्त
और कुछ भी नहीं जन्म दे सकते?
मैं जानता हूँ तुम वामन हो
पर हिरण्यगर्भ तो हो
और हिरण्यगर्भ होने का तात्पर्य है
युगनद्ध शिव होना
पर लगता है उषा के सोम अभिषेक ने
तुम्हें सदा के लिए शम्भु बना दिया
तुम शक्ति हो चुके हो।
पर शायद सृष्टि को जन्म देने के उपरान्त
उसके पालन के लिए तुम प्रकाशरूप
विष्णु हो।

निर्देश : 1. इन कविताओं का सस्वर वाचन कीजिए।
2. इन कविताओं का मौन वाचन कीजिए।

22.3.3 विस्तृत व्याख्या

मैं नहीं जानता
क्योंकि नहीं देखा है कभी -
पर, जो भी
जहाँ भी लीपता होता है
गोबर के घर-आँगन,
जो भी
जहाँ भी प्रतिदिन दुआरे बनाता होता है
आटे-कुंकुम से अल्पना,
जो भी
जहाँ भी लोहे की कड़ाही में छौंकता होता है
मैथी की भाजी,
जो भी
जहाँ भी चिंता भरी आँखें लिये निहारता होता है
दूर तक का पथ -
वही,
हाँ, वही है माँ!!

शब्दार्थ : लीपता = रंग करना। कुंकुम = रोली। अल्पना = शुभ कार्यों में बनाई जाने वाली आकृति। कड़ाही = बर्तन। छौंकता : बघारना, सोंधा करना। भाजी = सब्जी। निहारता = राह ताकना। पथ = रास्ता

संदर्भ : कवि कविता में अपनी माँ को याद करता है और घर में होनेवाले दृश्यों के माध्यम से यह बतलाता है कि 'हाँ, वहीं माँ है'। नरेश मेहता की यह कविता भावुकता प्रधान हृदय की सहज अभिव्यक्ति है।

प्रसंग : प्रस्तुत कविता कवि नरेश मेहता की एक महत्वपूर्ण कविता है जो उनके जीवन से जुड़ी हुई हैं। यह कविता कवि के जीवन के अनुभव संसार से निकली हुई कविता है। इस कविता में वह अपनी माँ की स्मृति को याद करने की कोशिश करते हैं जिसे उन्होंने देखा नहीं है। घर के अंदर होनेवाले कार्यों से वह बताने को कोशिश करते है और कार्यों, क्रियाओं के माध्यम से वह बताते

है कि वही माँ है।

व्याख्या : इस कविता में नरेश मेहता ने अपनी माँ को याद कर उस स्मृति को शब्दबद्ध करने की कोशिश है। कविता में उन्होंने स्मृतियों को एक ऐसे रूप में सामने लाया है कि लगती है वह सबके माँ की स्मृतियां है जो मनो मस्तिष्क में दर्ज है। घर के काम काज में उलझी हुई माँ की तस्वीर यहाँ सामने है जो सभी कामों के बीच अपनी चिंता युक्त आंखों से अपने परिजन का राह देखा करती हैं।

इसी क्रम में कवि ने अपनी माँ को पहचान करते हुए उन सभी भावुक करने वाली स्मृतियों को भी प्रस्तुत करता है जो साधारणतया घरों में देखने को आता है। चौके, द्वार आदि को रंग करना, मिट्टी के घरों में यह काम अभी भी होता है। घर में जब एक माँ होती है तो वह घर को अपने उपस्थिति मात्र से सुंदर बनाने की कोशिश करती रहती है।

विशेष :

- इस कविता में बिंब का प्रयोग किया गया है।
- प्रतीक और बिंब के संयोजन से कविता में माँ के चित्र को उकेरने का प्रयास किया गया है।
- प्रकृति चित्रों के माध्यमों के साथ कविता में मानवीकरण अलंकार प्रयोग है साथ ही अर्थ के संयोजन की दृष्टि से श्लेष अलंकार भी है।
- भाषा प्रयोग की दृष्टि से छायावाद के बाद की खड़ी बोली युक्त काव्य भाषा का प्रयोग है।

बोध प्रश्न

- 'मैं नहीं जानता/ क्योंकि नहीं देखा है कभी' - इन पंक्तियों में कवि किसके बारे में कह रहा है कि वह नहीं जानता नहीं देखा?
- नरेश मेहता के व्यक्तिगत जीवन में उनकी माँ को लेकर कोई स्मृति है तो उसे बताएं।
- कविता में चिंता भारी आंखें किसकी है?
- नरेश मेहता किस दौर के कवि है?

हमें जन्म देकर
ओ पिता सूर्य !
ओ माता सविता !
क्या इसलिए तुम मार्तण्ड हो कि
अब तुम प्रकाश के अतिरिक्त

और कुछ भी नहीं जन्म दे सकते?
मैं जानता हूँ तुम वामन हो
पर हिरण्यगर्भ तो हो
और हिरण्यगर्भ होने का तात्पर्य है
युगनद्ध शिव होना
पर लगता है उषा के सोम अभिषेक ने
तुम्हें सदा के लिए शम्भु बना दिया
तुम शक्ति हो चुके हो।
पर शायद सृष्टि को जन्म देने के उपरान्त
उसके पालन के लिए तुम प्रकाशरूप
विष्णु हो।

शब्दार्थ : सविता = सूर्य, तेज़। मार्तण्ड = सूर्य। वामन = भगवान विष्णु का अवतार। हिरण्यगर्भ= एक देवता जो सृष्टि के सृजक माने जाते हैं। युगनद्ध = एक दूसरे से जुड़ा होना। सोम = लता का रस। अभिषेक = जल छिड़कना। सृष्टि = संसार। पालन = भरण पोषण की क्रिया।

संदर्भ : प्रस्तुत कविता का अंश नरेश मेहता की लंबी कविता 'पुरुष' से लिया गया है। पुरुष कविता नरेश मेहता द्वारा रचित एक ऐसी कविता है जिसमे मिथकीय और पौराणिक उदाहरणों के जरिए नए दौर के प्रश्न को सामने लाने की कोशिश की गई है। भारतीय संस्कृति और उसके महत्व की इस कविता में प्रस्तुत किया गया है। प्रश्नों के साथ ही आधुनिक मानव मन के जो संशय और संदेह है उसे भी कविता में जगह देने की कोशिश हुई है। आधुनिक मानव मन की विडंबना है वह क्या है और कैसे है इस प्रश्न पर कवि ने कविता में विचार किया गया है।

प्रसंग : इस बहुस्तरीय कविता में बीसवीं शताब्दी की हिंदी कविता की नैतिक चेतना को प्रस्तुत किया गया है। इस कविता में कवि मनुष्यता के पक्ष में खड़े होने की बात करता है। नरेश मेहता की प्रस्तुत कविता में जीवन की ध्वनि के साथ विचार की संवेदनात्मक, लयात्मकता और तरलता, काल का लंबा वितान और स्थान का सुचिंतित भू-दृश्य, अपने समय की राजनीति के रूप-अरूप और समाज के भीतरी सतह और उसके तलछट को इतिहास और उससे कहीं दूर मिथकों तक जाकर देख लेने की दृष्टि मिलती है। मानव जीवन अनंत संभावनाओं वाला जीवन है

जिसमें जिम्मेदारी की जिजीविषा मौजूद हुआ करती है। इस कविता के माध्यम से नरेश मेहता स्वयं को जानने की कोशिश भी करते है। कविता मानव जीवन के संभावना से भरी होती है और यह कविता उसी अर्थों में मनुष्य के यथार्थ को प्रस्तुत करती हैं।

व्याख्या : इस लौकिक धरातल पर अगर कुछ सत्य है तो वह सूर्य है। संपूर्ण सृष्टि को तुम रौशनी प्रदान करते हो, इसीलिए तुम्हे इस सृष्टि के पालनकर्ता के रूप में देखा जाता है याद किया जाता है। इन्हीं संदर्भों में तुम विष्णु भी हो। संपूर्ण सृष्टि को जन्म देने के उपरांत तुम शिव भी हो, अपने कल्याणकर्ता भाव की वजह से ही तुम शंभू हो चुके हैं। जो इस पृथ्वी पर रौशनी का प्रकाश को संभव बनता है। अगर इस धरा पर प्रकाश न हो तो सब व्यर्थ हो जाएगा। इसीलिए वेदों में सूर्य को जगत की आत्मा कहा गया है।

सूर्य ऊर्जा का पुंज भी है। भारतीय चिंतन धारा में सूर्य मानव समाज में ऊर्जा के संवाहक भी है, जो शक्ति प्रदान करते हैं। सूर्य का अर्थ भी है सर्व प्रेरक, सर्व प्रकाशक, सर्व प्रवर्तक होने से सूर्य सर्व कल्याणकारी भी है।

सूर्य को भारतीय चिंतन धारा में जगत की आत्मा कहा गया है। समस्त चराचर जगत की आत्मा सूर्य ही है। सूर्य से ही इस पृथ्वी पर जीवन है, यह आज एक सर्वमान्य लौकिक सत्य है। वैदिक काल में आर्य सूर्य को ही सारे जगत का कर्ता धर्ता मानते थे। सूर्य का शब्दार्थ है सर्व प्रेरक। यह सर्व प्रकाशक, सर्व प्रवर्तक होने से सर्व कल्याणकारी है। ऋग्वेद के देवताओं कें सूर्य का महत्वपूर्ण स्थान है। यजुर्वेद ने 'चक्षो सूर्यो जायत' कह कर सूर्य को भगवान का नेत्र माना है। छान्दोग्यपनिषद में सूर्य को प्रणव निरूपित कर उनकी ध्यान साधना से पुत्र प्राप्ति का लाभ बताया गया है। ब्रह्मवैर्वत पुराण तो सूर्य को परमात्मा स्वरूप स्वीकार किए गए हैं।

इस कविता में कवि नरेश मेहता ने जीवन के अस्तित्व और परमपिता से उसके सम्बंध पर बात की है। उत्पत्ति का जो रहस्य है वह इस कविता में है। ब्रह्मांड से जीवन का एक सूत्र जोड़ा गया है। इसको आप ब्रह्मांड की उत्पत्ति और जीवन के आधार पर व्याख्यायित कीजिए। साथ में कवि यह भी कहना चाहता है की आखिर सब कुछ कैसे अनिश्वर होते हुए भी सबसे जुड़ता है, यह भारतीय चिंतन की जो समझ है उसको नरेश मेहता ने अपनी इस कविता के माध्यम से प्रस्तुत किया है।

विशेष :

'पुरुष' कविता भारतीय मनीषा से संबंधित है। कविता में रहस्य का पुट है। पौराणिक

कथा और प्रतीकों, बिंबों के संयोजन के माध्यम से कविता को उसके प्रस्थान बिंदु तक ले जाया गया है। भाषा की दृष्टि से कविता थोड़ी संस्कृत निष्ठ है, जिसका कारण विषय और कवि का चिंतन है।

बोध प्रश्न

- पुरुष कविता में किन पौराणिक चरित्र की चर्चा है, सोदहरण बताएँ।
- नरेश मेहता की कविताओं में भारतीय संस्कृति किन अर्थों में मौजूद है?
- जैसे ही सोने के लिए बत्ती बुझाई
  और अँधेरा हुआ तो
  सहसा पूरा दिन भी लौट आया
  जैसे उसे घर लौटने में थोड़ी देर हो गयी थी।
  - प्रस्तुत काव्य पंक्तियों का अर्थ बताइए।

22.3.4 समीक्षात्मक अध्ययन

इस कविता के माध्यम से नरेश मेहता ने माँ की स्मृति को याद किया है। नरेश मेहता के व्यक्तिगत जीवन में अपनी माँ से अधिक साक्षात्कार नहीं हुआ। इनके जन्म लेने के कुछ दिनों के बाद ही इनकी माँ की मृत्यु हो गई थीं। अपने जीवन में माँ से न मिल पाने का दुख और उसकी भाव स्थितियों को कविता में नरेश मेहता ने व्यक्त किया है। मातृत्व बोध इस संसार में सबके हिस्से में है। माँ से जुड़ी स्मृतियाँ भी सबके पास है। आमतौर पर माँ पारिवारिक संसार में एक धुरी की तरह होती है। जिससे पूरे घर की डोर बंधी होती है। परंतु नरेश मेहता माँ की विभिन्न स्मृतियों से अनजान रहा जाते है और उस भावुक पीड़ा को अपनी उपरोक्त कविता में स्थान देते है। वह कविता के शुरूआत में ही कहते है कि -

मैं नहीं जानता
क्योंकि नहीं देखा है कभी-
और कविता के अंत में कहते है कि
वहीं
हाँ, वहीं है माँ

लेकिन कविता के अंत तक आते आते वह माँ से परिचय करने और कराने की कोशिश करते हुए नजर आते हैं। इस पूरी कविता में नरेश मेहता किसी भावुकता के प्रति आग्रही हुए

बगैर उन बिंबों के साथ कविता को रचते हैं जिसके जरिए कोई भी सर्व साधारण अपनी माँ को इस कविता के मध्यम से परिचय कर सकता है। कविता में जिस प्रकृति को चित्रित किया गया है वह एक आमजन या यों कहें कि एक भारतीय आमजन के घर का चित्रण है जहाँ उस आमजन की माँ अपनी चिंताओं के साथ पूरे घर की रचना को एक सृजनकार की भांति रचने की कोशिश करती हुई नजर आती हैं।

जहाँ भी चिंता भरी आँखें लिये निहारता होता है
दूर तक का पथ-

माँ एक सृष्टिकर्ता के रूप में हमारे बीच में है, जो जन्म देती है, पालती है पोशती है और अपना सर्वस्व न्यौछावर कर अपने संतान और घर परिवार को आगे बढ़ाने की चिंता में खुद को गलाती जाती है। भारतीय मन में एक माँ की जो छवि बनी है, निर्मित उस छवि को नरेश मेहता अपनी माँ को याद करते हुए कविता में प्रस्तुत करते हैं। नरेश मेहता इस कविता के जरिए उस वर्ग की रचना को लाते है जो समाज के यथार्थ को प्रतिपादित करता है। इस कविता के सहारे वह मनुष्य के उन प्राचीन परंपरा एवं जीवन को आधुनिक संदर्भों में जोड़ते हैं और उसे व्याख्यायित करने की कोशिश भी करते हैं।

नरेश मेहता के काव्य में एक विशेषता उनकी कविताओं में अभिव्यक्त प्रकृति चित्रण भी है। उपरोक्त कविता में प्रकृति की मौजूदा चित्रण से वह अपनी कविताओं प्रकृति के महत्व को बतलाने की कोशिश करते हैं। यहाँ कवि विनम्र भाव से उस प्रकृति को सामने लाता है जो एक घर की प्रकृति को उकर पाएँ। घर में सुबह के समय घर को गोबर की लेप से रंग कर सुबह की किरणों का स्वागत किया जाता है।

जहाँ भी लीपता होता है
गोबर के घर-आँगन,
जो भी
जहाँ भी प्रतिदिन दुआरे बनाता होता है
आटे-कुंकुम से अल्पना

इस कविता में नरेश मेहता जी महसूस किया जा सकता है, जिसे एक जीवन में जिया जा सकता है उसका वर्णन वह प्रस्तुत कविता में करते हैं। जो वास्तविक है उसे वह कविता में सम्भव बनाते है। अनुभव से उपजा हुआ जो संसार बाँटा है वहीं उनकी कविता का धरातल भी

है। इसीलिए प्रगति और प्रयोग के बीच संभावनाओं की तलाश करते हुए वह जिस काव्य संसार को सामने लाते हैं उसमें सृष्टि के पार किसी रहस्यलोक में जाने को जरूरत नहीं है बल्कि सृष्टि के राग में ही अपनी वैयक्तिकता को लय प्रदान करते हैं और उसी स्वरलिपी को अपनी कविता में पिरोने की कोशिश करते हैं।

हिंदी साहित्य में प्रयोगधर्मी कवि के रूप में जानने वाले नरेश मेहता उन शीर्ष रचनाकारों में हैं जो भारतीयता की अपनी गहरी दृष्टि के लिए जाने जाते हैं। नरेश मेहता ने आधुनिक कविता को नयी व्यंजना के साथ नया आयाम प्रदान करते है। रागात्मकता, संवेदना और उदात्तता उनकी सर्जना के मूल तत्त्व है, जो उन्हें प्रकृति और समूची सृष्टि के प्रति उत्सुक बनाते हैं। नरेश मेहता के काव्य में भारतीय चिंतन बोध को एक नयी दृष्टि मिली। साथ ही, प्रचलित साहित्यिक रुझानों से एक तरह की दूरी ने उनकी काव्य-शैली और संरचना को विशिष्टता प्रदान की।

नरेश मेहता समकालीन हिंदी काव्य के शीर्षस्थ कवि हैं जिन्होंने अपने काव्य-संसार में शिप्रा-नर्मदा से लेकर गंगा तक फैले जीवन के विस्तृत फलक को अभिव्यक्ति दी है। मूल्यबोध की दृष्टि से देखे तो इस कविता और अन्य दूसरी कविताओं के मध्यम से उन्होंने भारतीय संस्कृति की मिथकीय, जातीय और सारस्वत स्मृतियों के पुनराविष्कार और उसकी रचनात्मक परिणतियों से समृद्ध उनका काव्य-संसार अपनी अद्वितीय आभा से समकालीन परिदृश्य में एक अनिवार्य और अपरिहार्य उपस्थिति है। आर्ष-चिंतन और वैष्णव संस्कारों के साथ आधुनिक युग के बैचेन करने वाले सवालों और ज्वलंत समस्याओं के प्रति नरेश मेहता की गहन मानवीय चिंता में एक दुर्लभ समावेशी रचनाशीलता के साक्ष्य हैं। उदात्त मानवीय मूल्यों के प्रति नरेश मेहता की आस्था और समग्र मानवता की मंगल आकांक्षा में उनका सृजन-संकल्प उन्हें सहज ही आधुनिक कवि-ऋषि की गरिमा प्रदान करता है।

क्या इसलिए तुम मार्तण्ड हो कि
अब तुम प्रकाश के अतिरिक्त
और कुछ भी नहीं जन्म दे सकते ?
मैं जानता हूँ तुम वामन हो
पर हिरण्यगर्भ तो हो
और हिरण्यगर्भ होने का तात्पर्य है

युगनद्ध शिव होना
पर लगता है उषा के सोम अभिषेक ने
तुम्हें सदा के लिए शम्भु बना दिया
तुम शक्ति हो चुके हो।

नरेश मेहता भारतीय अस्मिता और सांस्कृतिक संपन्नता के कवि हैं। हमारे दर्शन, धर्म, संस्कृति आदि ने आत्मबोध और चेतना की उर्ध्वता के शिखरों को सदैव स्पर्श किया है। उनके काव्य की जमीन समसामयिक स्थितियों को गहरा स्पर्श करती हुई शाश्वत जीवनमूल्यों को तलाशने में प्रज्ञा-शिखर की सदियों का प्रत्यय बन गई हैं, उसमें युग संदर्भों के अनुकूल जीवन सत्य की पकड़, उर्ध्वगामी चेतना और अमानवीय हालातों से टकराने की ताकत है। इसी कारण उनके काव्य में भारतीय सांस्कृतिक चेतना के विविध घटक यथारूप अभिव्यक्ति पाते हैं।

नरेश मेहता कर्म को सर्वाधिक महत्व देते हैं क्योंकि कर्म मनुष्य के जीवन से बंधा है। अगर मनुष्य अपने कर्म और वचनों पर स्थिर रहता है तो उसे कोई भी ताकत विचलित नहीं कर सकती अंततः व्यक्ति अपने लक्ष्य को अवश्य ही प्राप्त कर सकता है।

अपनी लेखनी के माध्यम से एक ऐसे सांस्कृतिक महाभाव की सर्जना की है जिसमें आर्ष सांस्कृतिक सम्पन्नता, औपनिषदिक मेधा एवं वैष्णवता पर आधारित भारतीय अस्मिता प्रवाहमान है। रागात्मकता, संवेदना तथा उदात्तता उनकी सर्जना के केंद्रक तत्त्व रहे हैं। मानवीय स्वतंत्रता एवं मानवीय उदात्तता की ओर उनकी रचनाधर्मिता निरंतर गतिशील रही है। यही कारण है कि इनका काव्य समय का सहगामी होते हुए भी मानवता के भविष्य का दिशा-बोध कराता है और उन्हें एक कालजयी कृतिकार बनाता है।

नरेश मेहता अपने कविताओं में मिथकीय प्रसंगों को नए अर्थ संदर्भ में अभिव्यकत करते हैं। उन्होने स्वयं कहा है कि “किसी भी देश की या जाति की जातीयता उसकी मिथकता है”। इस तरह की कविताओं, रचनाओं में नरेश मेहता समकालीन समाज के व्यापक आधुनिक बोध को पाठकों के समक्ष रखने की कोशिश करते हैं।

नरेश मेहता की रचनधर्मिता का प्राणतत्व उनकी मानवतावादी दृष्टि है जो जड़ परम्पराओं और विभिन्न तरह की गुटबंदियों को तिरस्कृत कर मानव हित की तलाश में रहती हैं। उनकी दृष्टि में काव्य का उद्देश्य बंधनों से मानव की मुक्ति की लगातार कोशिश है। मिट्टी जब धरती का प्रतिनिधित्व करती है तो प्रतिमा बनती है, सूर्य सृष्टि में प्रकाश का प्रतिनिधित्व है,

उसी तरह मनुष्य जब व्यक्ति का नहीं विराट का प्रतिनिधित्व करता है तो देवता बन जाता है, कवि नरेश मेहता के अनुसार मनुष्य का अस्तित्व देवत्व से परिपूर्ण हैं।

साहित्यकार को समाज का सर्वाधिक संवेदनशील प्राणी माना गया है; वह अपने देखे-सुने-भोगे अनुभवों को ही साहित्य में चित्रित करता है और यदि इस दृष्टि से देखा जाये तो नरेश मेहता त्रिकालदर्शी हैं। वर्तमान को अतीत और भविष्य के मध्य रखकर उसकी महत्ता का ऐसा भव्य और उदात्त चित्र प्रस्तुत करते हैं कि जिसके समकक्ष दूसरा कोई कर ही नही सकता।

नरेश मेहता के काव्य की एक विशेषता प्रकृति-चित्रण का वैविद्य भी है। विभिन्न प्राकृतिक स्वरूपों की रंगों की अलौकिक छटाओं से मंडित उनकी कविताएँ एक अपूर्व आनंदानुभूति देती हैं। जहाँ एक ओर कवि में अपना सब कुछ विनम्र भाव से सौंपा सबके दुख को अपना समझने का समर्पण भाव है वहीं दूसरी ओर उसमें इश्वर अथवा 'परात्पर बोध' के प्रति सजगता भी है। प्राकृतिक दृश्यों में नरेश मेहता को महाभाव की प्रतीती होती है वह उसे सभी में अनुभूत होते देखने का अभिलाषी है, तभी तो उन्हें कभी यह सृष्टि 'परम पुरुष के लीला भाव सी' लगती है।

नरेश मेहता 'दूसरा सप्तक' के कवियों में समसामयिक काव्य की प्रवृत्तियों का प्रतिनिधित्व किए और उनका प्रभाव अपने समय के काव्य पर पड़ा। आज भी अनेक काव्यप्रेमियों में इस संग्रह की कविताएँ आधुनिक हिंदी कविता के उस रचनाशील दौर की स्मृतियाँ जगाएँगी जब भाषा और अनुभव दोनों में नये प्रयोग एक साथ कर सकना ही कवि-कर्म को सार्थक बनाता था। निस्संदेह ये कविताएँ अपने में तृप्तिकर हैं।

नरेश मेहता ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित, हिंदी के यशस्वी में शीर्षस्थ लेखकों में से एक हैं। उन्होंने काव्य तथा गद्य में भावबोधों का उद्घाटन किया है। साहित्य- सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, दार्शनिक मूल्यों को आधुनिक देकर कविता के जगत को एक नया आयाम दिया है। उनकी कविताओं में सामाजिक विचारों का आधुनिकीकरण भी मिलता है। संवेदना और उदारता उनकी सृजन के मूल तत्व दिखाई पड़ते है, जो उन्हें प्रकृति और सृष्टि के प्रति उत्सुक और सूक्ष्मदर्शी बनाते हैं। उस समय के प्रचलित साहित्यिक रुझानों से उनकी दूरी ने उनको काव्यशैली और संरचना को एक अलग तरह प्रसिद्धि दिलाई।

22.4 पाठ सार

प्रस्तुत इकाई में नरेश मेहता के काव्य संसार से दो कविताओं को उनके मूल पाठ के साथ पढ़ा और समझा गया। इस दौरान उनकी कविताओं में विद्यमान मानव जीवन की छवियां देखने को मिली। प्रथम कविता माँ में जहाँ उनके भावुक मानवीय स्पर्श की छुअन महसूस हुई वहीं दूसरी कविता पुरुष में उनके मानव जीवन से जुड़े रहस्य, चिंता और मानव जीवन की विडम्बना भी दिखलाई पड़ती है। वहीं इन कविताओं के माध्यम से यह कहा जा सकता है की नरेश मेहता भारतीय जीवन संस्कृति के चिंतन पक्ष को भी सामने लाने का प्रयास करते हैं।

दोनों कविताओं के अध्ययन के बाद यह स्पष्ट नजर आता है कि नरेश मेहता के काव्य का केंद्रीय कथ्य मानव और मानव की समस्याएँ हैं। उनका काव्य इतिहास और दर्शन की भूमि पर मानव जीवन को केंद्र में रखता हैं। मनुष्य में विराजे देवता को उजागर करने की कोशिश है। वे काव्य-सृजन को मनुष्य और भाषा की 'उदात्ततम' अवस्था मानते थे। यह उदात्तता और ऊर्ध्वोन्मुखता नरेश मेहता की पूरी रचना-यात्रा में देखी जा सकती है।

नरेश जी की कविताओं की भाषा विषयानुकूल, भावपूर्ण तथा प्रवाहमयी है। उनके काव्य में रूपक, मानवीकरण, उपमा, उत्प्रेक्षा, अनुप्रास आदि अलंकारों का प्रयोग किया हुआ है और साथ ही परम्परागत नविन छन्दो का भी प्रयोग किया गया है। श्री नरेश मेहता उन शीर्षस्थ लेखको में से हैं जो भारतीयता की गहरी दृष्टि के लिए जाने जाते हैं।

22.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. नरेश मेहता छायावाद के बाद के दौर में मानवीय चिंता के प्रमुख कवि हैं।
2. अपनी मानवीय चिंता के साथ नरेश मेहता भारतीय संस्कृति के विभिन्न पहलुओं को अपनी कविताओं में उकेरने में सफल रहे हैं।
3. भारतीय पौराणिक कथा और चरित्र के जरिये नरेश मेहता आधुनिक मानव मन को टटोलने की कोशिश करते हैं।
4. आधुनिक प्रश्नों और मानव विडम्बनाओं को 'पुरुष' कविता में जीवन और अस्तित्व के प्रश्नों के साथ विवेचित किया गया है।
5. 'माँ' कविता में ममता और वात्सल्य को उभारना कवि का लक्ष्य रहा है।

22.6 शब्दार्थ

1. अपूर्व	= अद्भुत
2. उदात्ततम	= ऊँचा
3. ऊर्ध्वोन्मुखता	= ऊपर की ओर गया हुआ
4. घटक	= हिस्सा
5. परात्पर	= एक दूसरे के साथ
6. प्रज्ञा	= ज्ञान
7. शब्दबद्ध	= भावों की शाब्दिक अभिव्यक्ति
8. शाश्वत	= सदा रहने वाला

22.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. नरेश मेहता ने 'माँ' कविता में माँ के किस रूप को प्रस्तुत किया है? सोदाहरण स्पष्ट कीजिए।
2. 'पुरुष' कविता में कौन कौन से मिथकीय चरित्र चित्रित हैं और क्यों? संदर्भ सहित चर्चा कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. 'माँ' कविता में बिंब और प्रतीक संयोजन पर प्रकाश डालिए।
2. 'पुरुष' कविता में प्रकाश और अंधेरे को लेकर कवि क्या कहना चाहता है, संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
3. मैं जानता हूँ तुम वामन हो/ पर हिरण्यगर्भ तो हो/ और हिरण्यगर्भ होने का तात्पर्य है/ युगनद्ध शिव होना/ पर लगता है उषा के सोम अभिषेक ने/ तुम्हें सदा के लिए शम्भु बना दिया – इन पंक्तियों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए।
4. जहाँ भी चिंता भरी आँखें लिये निहारता होता है/ दूर तक का पथ -/ वही/ हाँ, वही है माँ!! –

इन पंक्तियों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. कड़ाही शब्द किस कविता में प्रयुक्त हुआ है? ( )

(अ) माँ (आ) पुरुष (इ) किरन धेनुएँ

2. हिरणकश्यप शब्द का प्रयोग किस कविता में हुआ है? ( )

(अ) पुरुष (आ) माँ (इ) किरन धेनुएँ

3. सूर्य क्या प्रदान करता है? ( )

(अ) प्रकाश (आ) अंधेरा (इ) भय (ई) आक्रोश

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. नरेश मेहता ....सप्तक के कवि है।

2. पुरुष कविता परंपरा और .... के प्रश्न है।

3. माँ में कवि अपनी ....स्मृति को उकेरने की कोशिश करता है।

III. सुमेल कीजिए -

1. चैत्या	(अ) उपन्यास
2. डूबते मस्तुल	(आ) काव्य संग्रह
3. संशय की एक रात	(इ) उपन्यास
4. यह पथ बंधु था	(ई) खण्ड काव्य

22.8 पठनीय पुस्तकें

1. नरेश मेहता कविता की ऊर्ध्व यात्रा : रामकमल राय
2. उत्सव पुरुष नरेश मेहता : महिमा मेहता
3. नरेश मेहता काव्य का समग्र मूल्यांकन : गिरिजाशंकर दूबे
4. नयी कविता में श्रीनरेश मेहता - एक अनुशीलन : अंकिता कुमारी

इकाई 23 : किरन धेनुएँ : नरेश मेहता

रूपरेखा

23.1 प्रस्तावना

23.2 उद्देश्य

23.3 मूल पाठ : किरन धेनुएँ : नरेश मेहता

23.3.1 अध्येय कविता का सामान्य परिचय

23.3.2 अध्येय कविता

23.3.3 विस्तृत व्याख्या

23.3.4 समीक्षात्मक अध्ययन

23.4 पाठ सार

23.5 पाठ की उपलब्धियाँ

23.6 शब्द संपदा

23.7 परीक्षार्थ प्रश्न

23.8 पठनीय पुस्तकें

23.1 प्रस्तावना

आधुनिक हिंदी कविता का अनुशीलन करने से यह ज्ञात होता है कि यह कविता कई विचारधाराओं और वादों से गुजरकर निरंतर परिष्कृत होती रही है। कवियों की भावभूमि और जीवन दृष्टि ने कविता के स्वरूप को संवारा है। विचारों में निहित सर्व के प्रति आस्था और प्रतिबद्धता से जहाँ साहित्य का स्वरूप व्यापक होता है वहीं समाज पर साहित्य का सकारात्मक प्रभाव भी पड़ता है। उच्चकोटि का साहित्य व्यक्ति को जीवन के अंधकार से निकालने की क्षमता रखता है। ऐसे रचनाकारों का अपनी जड़ों से गहरा जुड़ाव होता है। ऐसे ही रचनाकारों की पंक्ति में नरेश मेहता (1922-2000) का नाम आता है। अध्येय कविता 'किरन धेनुएँ' इनकी ही रचना है। इनकी "रूचि भारतीय जीवन के परंपरागत प्रतिमानों में अधिक है। ...प्रारंभ में वे प्राकृतिक दृश्यों और उनके सूक्ष्म प्रभावों के अंकन में रूचि लेते हुए दिखाई देते हैं किंतु अंततः उनकी उन्मुखता मानव जीवन के पक्षों की ओर गई है, जिनमें एक संयत और प्रशांत मनोदशा तथा अनुराग-विराग का योग पाया जाता है।" (राममूर्ति त्रिपाठी)। प्राकृतिक सौंदर्य के प्रति रुझान

को निर्दिष्ट करती हुई इनकी कई कविताएँ हैं जो अलग-अलग काव्य संग्रहों के रूप में उपलब्ध हैं, उदाहरण- बनपाखी सुनो, बोलने दो चीड़ को इत्यादि। अज्ञेय द्वारा संपादित 'दूसरा तार सप्तक' में भी इनकी कविताएँ संकलित हैं।

23.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई में आप नरेश मेहता की कविता 'किरन धेनुएँ' का अध्ययन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप-

- 'किरन धेनुएँ' कविता का सामान्य परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- अध्येय कविता के मूल पाठ से परिचित हो सकेंगे।
- अध्येय कविता की काव्यगत विशेषताओं को जान सकेंगे।
- अध्येय कविता का समीक्षात्मक विश्लेषण कर सकेंगें।

23.3 मूल पाठ : किरन धेनुएँ : नरेश मेहता

23.3.1 अध्येय कविता का सामान्य परिचय

'किरन धेनुएँ' कविता के रचयिता नरेश मेहता हैं। यह कविता उनके मुक्तक काव्य संग्रह 'चैत्या'(1993) में संकलित है। इस काव्य संग्रह का प्रकाशन उन्हें 'भारतीय ज्ञानपीठ' पुरस्कार से सम्मानित करने के अवसर पर भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा ही किया गया था। "चैत्या अत्यंत सरल-सरस और सारगर्भित नाम है। किसी दैवी आराधना या आध्यात्मिक साधना के लिए अभिकल्पित आवास को प्रायः चैत्य कहा जाता है।" इस कविता में मानव जीवन के कार्य-व्यापर का प्रकृति पर आरोपण कर कवि ने प्रकृति की नैसर्गिक सुषमा का शब्द चित्र मुग्ध भाव से खींचा हैं। किरन, सूर्य और धरती को क्रमशः गाय, ग्वाला और ग्वालिन का रूप मानकर प्रकृति की मनोहारी छटा का यह शब्द दर्शन भावक के मन में इस दृश्य को सहज ही उकेर देता है।

बोध प्रश्न

- 'किरन धेनुएँ' से कवि का क्या आशय है?
- किरन धेनुएँ कविता के रचयिता कौन हैं? इनकी रूचि किन प्रतिमानों में अधिक है?

23.3.2 अध्येय कविता : 'किरन धेनुएँ'

उदयाचल से किरन-धेनुएँ
हाँक ला रहा वह प्रभात का ग्वाला।

पूँछ उठाए चली आ रही
क्षितिज जंगलों से टोली
दिखा रहे पथ इस भूमा का
सारस, सुना-सुना बोली
गिरता जाता फेन मुखों से
नभ में बादल बन तिरता
किरन-धेनुओं का समूह यह
आया अंधकार चरता,
नभ की आम्रछाँह में बैठा बजा रहा वंशी रखवाला।
ग्वालिन-सी ले दूब मधुर
वसुधा हँस-हँस कर गले मिली
चमका अपने स्वर्ण सींग वे
अब शैलों से उतर चलीं।
बरस रहा आलोक-दूध है
खेतों खलिहानों में
जीवन की नव किरन फूटती
मकई औ' धानों में
सरिताओं में सोम दुह रहा वह अहीर मतवाला।

निर्देश : 1. इस कविता का सस्वर वाचन कीजिए।
2. इस कविता का मौन वाचन कीजिए।

23.3.3 विस्तृत व्याख्या

उदयाचल से किरन-धेनुएँ
हाँक ला रहा वह प्रभात का ग्वाला।
पूँछ उठाए चली आ रही
क्षितिज जंगलों से टोली
दिखा रहे पथ इस भूमा का
सारस, सुना-सुना बोली

गिरता जाता फेन मुखों से
नभ में बादल बन तिरता
किरन-धेनुओं का समूह यह
आया अंधकार चरता,
नभ की आम्रछाँह में बैठा बजा रहा वंशी रखवाला।
ग्वालिन-सी ले दूब मधुर
वसुधा हँस-हँस कर गले मिली
चमका अपने स्वर्ण सींग वे
अब शैलों से उतर चलीं।
बरस रहा आलोक-दूध है
खेतों खलिहानों में
जीवन की नव किरन फूटती
मकई औ' धानों में
सरिताओं में सोम दुह रहा वह अहीर मतवाला।

शब्दार्थ : उदयाचल- पूर्व दिशा में एक काल्पनिक पर्वत जिसे सूर्योदय का नियत स्थान माना जाता है, धेनु- गाय, प्रभात- सुबह, क्षितिज- एक काल्पनिक स्थान जहाँ धरती और आकाश का मिलन होता है, पथ- रास्ता, भू- धरती, सारस- लंबे पैरों वाला बड़ा और सफ़ेद पक्षी, नभ-आकाश, आम्र- आम, स्वर्ण- सोना (धातु), शैल- पर्वत, आलोक- प्रकाश, धान- खाद्यान्न, सरिता-नदी, सोम- मादक पेय पदार्थ, अहीर- एक जाति जिसका मुख्य व्यवसाय पशुपालन और खेती है।

संदर्भ : प्रस्तुत कविता 'किरन-धेनुएँ' नरेश मेहता द्वारा रचित काव्य संग्रह 'चैत्या' में संकलित है।

प्रसंग : प्रस्तुत कविता में कवि ने सूर्योदय को वर्ण्य विषय बनाया है। भोर में उगते हुए सूरज के साथ प्रकृति की निखरती हुई सुंदरता का वर्णन करते हुए कवि विराट सत्ता के असीम विस्तार का परिचय देते हैं।

व्याख्या : सूर्योदय की प्रथम किरन जब धरती पर पड़ती है तब नीले आसमान में धीरे-धीरे उगते हुए लाल सूर्य को देखकर ऐसा लगता है मानो वह पर्वतों के बीच से उदित हो रहा हो। यही कल्पित पर्वत उदयाचल है। कवि कह रहे हैं कि इस पर्वत से किरन रूपी गायों को हाँकते हुए

सूर्य रूपी ग्वाला उन्हें पृथ्वी पर ला रहा है। यानी सूर्योदय हो रहा है। सूर्य को कवि ने 'प्रभात का ग्वाला' कहा है। इस ग्वाले की गाएँ इसकी किरनें हैं। सूर्य और उसकी किरनों के मध्य जो संबंध है वही संबंध ग्वाला का अपनी गाय के साथ रहता है- अटूट और अविच्छिन्न!

ये किरन रूपी सभी गाएँ अपना पूँछ उठाकर चल रही हैं। सूर्य की किरनें जब धरती पर आती हैं तब सब एक साथ आती हैं। धरती पर उनका आगमन उन्नत स्वरूप में ही होता है। किरण रूपी इन गायों का समूह क्षितिज रूपी जंगल से होते हुए इस पृथ्वी की ओर आ रही हैं। क्षितिज उस कल्पित स्थान को कहा जाता है जहाँ धरती और आकाश का मिलन होता है। उस क्षितिज से पृथ्वी पर आने का रास्ता उन किरन रूपी गायों को 'सारस' पक्षी दिखा रहे हैं। किरन रूपी गायों के पथ पर आगे-आगे सारस चहचहाते हुए जा रहे हैं। भोर में सूर्योदय की लालिमा के साथ आसमान पक्षियों की चहचहाहट से भी भरा होता है।

गाय जब जुगाली करती है तब उनके मुँह से फेन गिरता है। कवि की कल्पना में यहाँ उन गायों के मुँह से जो फेन गिर रहा है वही आसमान में बादल बनकर तैर रहा है। इन किरन रूपी गायों का चारा यहाँ 'अंधकार' है। किरनों ने अंधकार को अपना ग्रास बनाया है तभी सारी सृष्टि में भोर का उजियाला छाया है। आसमान रूपी आम के वृक्ष की छाया में वह सूर्य रूपी ग्वाला (उन गायों का रखवाला) चैन से बैठकर बाँसुरी बजा रहा है।

धरती मुस्कुराते हुए किरनों का स्वागत कर रही है। ठीक वैसे ही जैसे अपनी गायों को नरम और मुलायम घास देकर ग्वालिनें दुलराती हैं। उदयाचल पर्वत से उतरकर वे किरनें अपने सुनहले रूप से धरती की हरीतिमा को आच्छादित कर रही हैं। धरती पर छाए उस शुभ्र प्रकाश को यहाँ कवि उन किरन रूपी गायों के स्वर्ण सींग के चमक की उपमा दे रहे हैं। यह चमक वस्तुतः उन किरनों की आभा है।

यह आभा धरती की गोद में लहलहाते हुए खेतों को अपनी ऊष्मा और प्रकाश से पुष्ट कर रही है। इस आभा को कवि 'आलोक-दूध' की संज्ञा दे रहे हैं। प्रकाश में जीवन का बीज निहित है। सूर्योदय के साथ ही सारी सृष्टि में नवजीवन का संचार होता है। मकई और धान के खेतों में पड़ती सूर्य की किरनों से उनमें नवजीवन का संचार होता है। नदियों में पड़ती इन किरनों की झिलमिल छाया को देखकर ऐसा प्रतीत होता है मानो वह ग्वाला जो गायों के थन से दूध दुहता था अब सोम दुह रहा है। सूर्य के प्रतिबिंब युक्त नदियों के जल की दिव्यता से अभिभूत कवि ने उसमें दिव्य पेय पदार्थ 'सोम' की परिकल्पना की है। तपती दुपहरी में गाय चराते हुए ग्वाले के

लिए जल का कोई भी स्रोत सुधा सदृश है। यहाँ वह ग्वाला जिसे कवि 'मतवाला अहीर' कह रहे हैं, वह सूर्य है जो नदियों के जल में देवताओं का पेय पदार्थ 'सोम' दुह रहा है। यह उस ग्वाले की असीम शक्ति का परिचायक भी है कि वह एक जगह स्थित होकर भी सभी नदियों के जल में एक साथ प्रतिबिंबित हो रहा है। प्रकृति के सौंदर्य के साथ उसकी असीम व्याप्ति और विराटता को दर्शाने का सफल प्रयास यहाँ किया गया है।

काव्यगत विशेषता: 'किरन धेनुएँ' कविता की भाषा सरल और प्रवाहयुक्त है। कविता में खड़ी बोली हिंदी के साथ कुछ तत्सम शब्द भी प्रयुक्त हुए हैं। लक्षणा शब्द शक्ति, प्रतीक और बिंब के प्रयोग से भाव व्यंजना सहज और प्रभावी हुई है। कवि ने इन बिंब और प्रतीकों को जनजीवन के आस-पास से उठाया है। सामान्य से प्रीति या सामान्य के प्रति रूचि अपनेआप में एक उत्तम विशिष्टता है। काव्यनायक के लिए सूर्य रूपी ग्वाले के चरित्र का चयन कवि का नया प्रयोग है। छायावाद तक की परंपरा में कविता के नायकत्व के अधिकारी वाही होते थे जो किसी न किसी रूप में विशिष्ट हों। पर यहाँ कवि ने सामान्य को नायकत्व प्रदान किया है और पूरी कविता में इस चयन का निर्वाह किया है। कल्पना को यथार्थ की जमीन पर रूपायित करने का अनोखा प्रयास कवि ने किया है। अनुप्रास, रूपक, उपमा, पुनरुक्तिप्रकाश और मानवीकरण अलंकारों का प्रयोग कवि ने किया है। प्रकृति की सुंदरता को निरुपित करने के लिए कविता में प्रयुक्त इन अलंकारों से काव्य सौंदर्य की वृद्धि हुई है। प्रकृति की अलौकिक सुंदरता में खोकर जीवन की सच्चाई से आँख मूंद लेना कवि का अभीष्ट नहीं रहा। उसने प्रकृति में किसी अलौकिक प्रियतम को भी नहीं ढूंढा। पर उसने प्रेम ढूंढा है- प्रेम प्रकृति से, जीवन से और कर्म से। उनकी भाषिक अभिव्यक्ति में प्राकृतिक व्यापार और मानवीय चेष्टा दोनों का समन्वित स्वरूप संतुलित रूप में दृष्टिगोचर हुआ है।

काव्यभाषा के गठन में शब्द संयोजन और शब्दशक्ति के साथ प्रतीक और बिंब का प्रयोग महत्वपूर्ण होता है। 'किरन-धेनुएँ' छंदमुक्त कविता है पर यह लयबद्ध कविता है। इसलिए इसमें गेयतत्व की प्रधानता है। पूरी कविता बिंबात्मक है। बिंबात्मक का अर्थ है चित्रमय। कवि के द्वारा प्रयुक्त भाषा से काव्य में उपस्थित बिंब पाठक या भावक के मन में कविता द्वारा संप्रेषित भाव और अर्थ का प्रतिबिंब निर्मित कर देते हैं। भाषा की बिंबात्मकता या चित्रमयता से यही अर्थ द्योतित होता है।

उदाहरण स्वरूप:

दृश्य बिंब: इसका संबंध ज्ञानेंद्रिय 'आँख' से है। कविता की पंक्तियों को पढ़ते ही उसमें वर्णित शब्द चित्र रूप में मस्तिष्क में उपस्थित हो जाते हैं।

'उदयाचल से किरन-धेनुएँ/ हाँक ला रहा वह प्रभात का ग्वाला।/ पूंछ उठाए चली आ रही/ क्षितिज जंगलों से टोली।'

श्रव्य बिंब: इसका संबंध ज्ञानेंद्रिय 'कान' से है। किसी भी तरह के आवाज की प्रतीति के संदर्भ से यह जुड़ा हुआ है।

'दिखा रहे पथ इस भूमा का/ सारस, सुना-सुना बोली।' यहाँ सारस की आवाज श्रव्य बिंब का उदाहरण है।

स्पर्श बिंब: इसका संबंध ज्ञानेंद्रिय त्वचा से है। 'वसुधा हँस-हँस कर गले मिली'- इन पंक्तियों में किरन रूपी गायों का स्पर्श धरती रूपी ग्वालिन कर रही है।

आस्वाद्य बिंब: 'गिरता जाता फेन मुखों से' इस पंक्ति में गाय के मुँह से फेन का गिरना आस्वाद्य बिंब का उदाहरण है। इस फेन का संबंध स्वाद से है।

'आया अंधकार चरता'- यहाँ 'अंधकार चरना' में भी आस्वाद्य बिंब है।

बिंबों का वर्गीकरण कई आधारों पर किया गया है। यहाँ इंद्रिय आधारित वर्गीकरण के आधार पर ही बिंबों को बताने की कोशिश की गई है। रचना के प्रेरक तत्व के आधार पर दो प्रकार के बिंब माने जाते हैं- स्मृति बिंब और कल्पित बिंब। 'किरन-धेनुएँ' कविता इन दोनों बिंबों का संश्लिष्ट उदाहरण है। इंद्रिय चेतना पर आधारित बिंब में प्रभाव के उत्पादन के लिए स्मृति और कल्पना का संयोजन किया जाता है। कवि का स्मृति स्तर और उसकी कल्पना शक्ति उसके कवित्व की उत्कृष्टता के प्रमाण होते हैं।

पूर्व वर्णित ऐंद्रिय बिंबों के उदाहरण में भी स्मृति तत्व और कल्पना तत्व का संयोग दिखाई देता है। मानव जीवन की स्मृतियों को कवि प्रकृति पर आरोपित करते हैं। दूसरे शब्दों में प्रकृति की सुंदरता में खोया कवि हृदय सृष्टि के हर कण और समय के हर क्षण में उसकी सुंदरता को महसूस करना चाहता है। मानव जीवन की कर्मठता के चित्रण में उसके दुःख और त्रास पर एक प्रफुल्लता का आवरण चढ़ाना चाहता है। यह आवरण सच्चा है, खोखला नहीं। पीड़ा के क्षणों में अपने सुखद पलों को सामान्यतया मनुष्य खो देते हैं। उस अनायास खो जानेवाले सुखद पलों में खोना पीड़ाजन्य दर्द को जीने से कहीं बेहतर है। सुंदरता के प्रति कवि की निमग्नता का आशय यही है कि दुनिया में सब है पर आपका सामर्थ्य कितना है और किस हद तक है। प्रकृति से कवि

का सानिध्य बचपन से रहा है। जीवन जिस गति से आगे बढ़ा उन्होंने स्वीकार किया। हताशा, निराशा और कुंठा को उन्होंने अपना जीवन नहीं सौंपा। जीवन के चरमोत्कर्ष पर उनका ध्यान टिका रहा। यह प्रकृति से जुड़ा हुआ उनका स्नेह सूत्र भी अवश्य उन्हें भीतरी संबल निरंतर देता रहा। जब सहारा भीतर का हो तो बाहर के थपेड़ों की क्या बिसात। जीवन की दुर्गमता माने नई हरी दूब जिसे छोटे बच्चे माटी उड़ाते हुए ही निकाल दे। प्रकृति की सुंदरता में रमण जीवन में आस्था के प्रति प्रतिबद्धता का पहला चरण है। कवि का बिंब प्रयोग यथार्थ और भाव में तादात्म्य बिठाता है और मानव मन में भाव का सफल संचरण करता है। बिंबों की योजना को और सार्थक करने में प्रतीकों और अलंकारों का योगदान भी महत्वपूर्ण है।

कविता में 'धरती' को ग्वालिन, सूर्य की 'किरनों' को गाय और 'सूर्य' को ग्वाला का प्रतीक माना गया है। यहाँ प्रकृति पर जीव का आरोपण होने से मानवीकरण अलंकार है। 'वसुधा' को 'ग्वालिन-सी' कहकर, उसे ग्वालिन की उपमा दी गई है अतः यहाँ उपमा अलंकर है। 'किरन-धेनुएँ' यानी किरन रूपी गाएँ- यहाँ रूपक अलंकार है। 'हँस-हँस' में पुनरुक्तिप्रकाश अलंकार है। 'सारस, सुना-सुना बोली'- इस पंक्ति में 'स' वर्ण की आवृत्ति होने से अनुप्रास अलंकार है। कविता की भाषा खड़ी बोली हिंदी है। कुछ तत्सम शब्दों का प्रयोग भी कवि ने किया है। कविता की भाषा सरल और बोधगम्य है। यह लयात्मक और गेय है।

बोध प्रश्न

- **निम्नलिखित पद्यांश की संदर्भसहित व्याख्या करें।**

(क) गिरता जाता फेन मुखों से ....बजा रहा वंशी रखवाला।

(ख) ग्वालिन-सी ले दूब मधुर .... अब शैलों से उतर चली।

- किरन धेनुएँ कविता की काव्यगत विशेषताओं पर प्रकाश डालें।
- 'सरिताओं में सोम दुह रहा वह अहीर मतवाला' पंक्ति में 'अहीर' की संज्ञा किसके लिए प्रयुक्त हुई है? उसे मतवाला क्यों कहा गया है?
- 'किरन-धेनुएँ' कविता की अलंकार योजना पर प्रकाश डालें।

23.3.4 समीक्षात्मक अध्ययन

हिंदी साहित्य को काल विभाजन की दृष्टि से मोटे तौर पर चार कालों में विभाजित किया गया है। साहित्य का वह काल विभाजन इस प्रकार हैं - आदिकाल, भक्तिकाल, रीतिकाल और आधुनिक काल। आधुनिक काल पुनः कई भागों में विभाजित है। इस विभाजन का क्रम इस

प्रकार है - भारतेंदु युग, द्विवेदी युग, छायावाद युग और छायावादोत्तर युग। छायावादोत्तर युग में साहित्य की प्रवृत्ति के आधार पर कई साहित्यिक आंदोलन और विचारधाराओं ने जन्म लिया। इनमें जिन साहित्यिक विचारधाराओं ने अपना स्थान सुनिश्चित किया उनमें मुख्य रहे विचारधाराओं का क्रम इस प्रकार है - प्रगतिवाद (1936-1943), प्रयोगवाद (1943-1960), नई कविता (1951-1960), समकालीन या साठोत्तरी कविता (नवगीत, जनवादी कविता) इत्यादि। छायावादी रहस्यवाद के प्रतिक्रिया स्वरूप में छायावादोत्तर कविताओं का जन्म हुआ। आगे की कविताओं में भी प्रकृति मानवीकृत रूप में है पर उसका जिस रूप में मानवीकरण किया गया है वह स्पष्ट दिखाई देता है, उसके स्वरूप पर किसी अलौकिक किस्म का आवरण नहीं है जैसा कि प्रायः छायावाद की कविताओं में देखने को मिलता है।

नरेश मेहता का आरंभिक काव्य लेखन प्रगतिवाद के आरंभिक समय से प्राप्त होता है। कवि के रूप में प्रतिष्ठा उन्हें नई कविता के आरंभ के साथ मिली। प्रयोगवाद और नई कविता काव्य की समानांतर धारा के समान साथ-साथ बढ़ते रहे। नरेश मेहता ने कविता को अतिबौद्धिकता के आसमान से उतारकर मानवीयता की सहज भाव भूमि पर प्रतिष्ठित किया। भारतीय संस्कृति के प्रति इनके अनुराग ने इन्हें जितना भारत क्षेत्र के देवत्व से जोड़ा उतना ही वहां की काली-भूरी माटी से भी। रामकथा के संदर्भों को लेकर लिखा गया इनका अपार काव्य संसार केवल वहीं तक अपार नहीं है। इस अपारता का सघन विस्तार उनकी प्रकृति विषयक रचनाओं में देखने को मिलता है। इनके विचार में “प्रकृति न तो कृपण होती है और न ही पक्षपात करती है। ...वह सबके लिए है। यह आप पर निर्भर करता है कि आप उसे कितना ग्रहण करते हैं। वस्तुतः प्रकृति कविता है और मनुष्य गद्य या कथा।” (नरेश मेहता)। पुनः वे कविता को प्रकृति से जोड़कर उसे व्याख्यायित करते हुए कहते हैं, “जब हम अपने भीतर के फूल को बाहर के फूल के साथ भाषा की टहनी लगाकर रख देते हैं तब प्रकृति द्वारा सृजित फूल भाषा में लिखित फूल हो जाता है। इसे ही शायद कविता या साहित्य कहते हैं।” 1940 में उन्हें ‘नरेश’ नाम की साहित्यिक उपाधि उन्हें नरसिंहगढ़ की राजमाता ने उनके काव्य-पाठ को सुनकर दिया। उनका असली नाम ‘पूर्णशंकर’ था। उक्त उपाधि को पाने के बाद उन्होंने इसी नाम को अपना लिया। अपने बाल मित्रों के साथ मिलकर इन्होंने हस्तलिखित पत्रिका भी निकाली।

अज्ञेय द्वारा संपादित काव्य संग्रह ‘दूसरा सप्तक’ (1951) के एक महत्वपूर्ण कवि नरेश मेहता ‘नई कविता’ के विशिष्ट हस्ताक्षर हैं। दूसरा सप्तक में संकलित कविताओं के प्रकाशन के

बाद इनके कई मुक्तक काव्य संग्रह प्रकाशित हुए जो इस प्रकार हैं- बनपाखी सुनो (1956), बोलने दो चीड़ को (1961), मेरा समर्पित एकांत (1962), उत्सवा (1979), तुम मेरा मौन हो (1982), अरण्या (1985), आखिर समुद्र से तात्पर्य (1988), पिछले दिनों नंगे पैरों (1989), देखना एक दिन (1992), चैत्या (1993)।

'चैत्य' उस आवास को कहा जाता है जहाँ किसी पवित्र उद्देश्य की पूर्ति हेतु कोई जीव निवास करता है। यह पवित्र उद्देश्य जप-तप के रूप में देव पूजन हो सकता है या सामूहिक हित के भाव से किया जानेवाला कोई अन्य आध्यात्मिक साधना। काव्य संग्रह 'चैत्या' कवि की शब्द साधना का आवास है। ब्रह्मांड में स्थित प्रकृति को उसके अंतस तक छूकर कवि ने देखा है, सोचा है, मानव जीवन से उसका तादात्म्य बिठाया है और तब भावों का सृजन किया है। कवि के ये भाव ही संगठित शब्द रूप में कविता हैं। 'किरन-धेनुएँ' कविता जो काव्य संग्रह चैत्य में ही संकलित है इसमें कवि ने सूर्योदय का रूपक गढ़ा है और उस रूपक को प्रस्तुत करने के लिए प्रकृति का मानवीकरण किया है। यहाँ 'सूर्य' नायक है। नायिका 'धरती' है। लालिमा भरी भोर में इनका मिलन होता है। या इसे यों कहें कि सूर्य और पृथ्वी के मिलन से ही भोर होता है। जग और जीवन का अँधियारा छंटता है। नायक अकारण कोई कार्य नहीं करता। धरती पर उसके आने का कारण है। कविता में सूर्य को ग्वाला का प्रतीक माना गया है। वह अपनी गायों को चराने के लिए धरती पर आता है। उसकी गाएँ उसकी अपनी किरनें हैं जो एक अदृश्य सूत्र से सूर्य रूपी ग्वाले से बंधी हुई हैं। ये किरनें उससे ही निकलती हैं और उसी में पुनः विलीन हो जाती हैं। ठीक उसी तरह जिस तरह ग्वाले की एक आवाज पर दूर-दूर चर रहे सारे पशु उसकी ओर दौड़ जाते हैं। या साँझ पड़ते ही घर लौटने का समय जानकर पशु चरना छोड़कर लौटने लगते हैं। कविता में किरनों के जाने का चित्रण नहीं है। धरती पर उनका आना, आकर पूरे जगत में छा जाना, धरती से सूर्य के मिलन का प्रतीक है। इनके मिलन से पूरी सृष्टि में उल्लास छा जाता है। खेतों में फसलों का लहलहाना धरती के हृदय का मुस्कुराना ही है।

भारतीय संस्कृति की ग्रामीण पृष्ठभूमि का आधार है 'भोर, आदमी और गाय' का संबंध। भोर का संबंध सूरज से है। सूरज का संबंध आकाश और उसकी लालिमा से है। आकाश पक्षियों के कलरव के बिना सूना है। पक्षी कभी घास पर फुदकते हैं तो कभी सघन जंगल के पेड़ों पर अपना बसेरा बना लेते हैं। उन जंगलों के बीच ग्वाले अपनी गायों के साथ भोर से साँझ तक विचरण करते हैं। सघन जंगलों को चीरकर किरनें धरती पर फैले घासों पर फ़ैल जाती हैं। सूर्य

की किरनों और घास के मिलन को कवि इस रूप में देखते हैं मानो धरती ग्वालिन के रूप में अपनी किरन रूपी गायों को चारा खिला रही है। किरनों का धरती की गोद में फ़ैल जाना स्वयं धरती को आत्मिक संतोष देता है और किरनों को प्रफुल्लता। ठीक वैसे ही जैसे ग्वालिन के हाथों से मधुर घास खाकर गाएँ प्रफुल्लित होती हैं और ग्वालिनें अपनी ख़ुशी उन गायों को दुलार करके जाहिर करती हैं। ग्रामीण जीवन और प्रकृति के इन क्षणों का कुशल चित्रण कवि ने अपनी कविता 'किरन-धेनुएँ' में किया है। यह सामीप्य के अभाव में संभव नहीं है। भारतीयता और प्राकृतिक चेतना से कवि का गहरा नाता रहा है।

इस कविता में यथार्थ का वर्णन करने के लिए कवि ने यथार्थ को ही कल्पित किया है। सूर्योदय के समय प्रकृति में होने वाले परिवर्तन का वर्णन करने के लिए कवि ने गोपालक की जीवन शैली को प्राकृतिक कार्य व्यापार पर आरोपित किया। कवि की बिंब योजना सुबह का साक्षात करा जाती हैं। सुबह का ग्वाला 'सूर्य' पूर्व दिशा से अपनी किरन रूपी गायों के समूह को हाँक कर ला रहा है। वे गाएँ क्षितिज रूपी जंगलों को पार करते हुए आ रही हैं। 'गायों का क्षितिज रूपी जंगलों को पार करना' इसका अर्थ सूर्य के उगने से है। पूर्व दिशा में सूर्योदय के साथ ही सारी सृष्टि में प्रकाश व्याप जाता है। यह उजियारा धरती पर उन किरनों के आगमन का सूचक है। इन किरनों का मार्गदर्शक सारस पक्षी बना है। वह सारस अपनी बोली से, उन्हें धरती का मार्ग सुझा रहे हैं। उन गायों को धरती तक आने का रास्ता नहीं मालूम है। अब किरनें पर्वतों से उतरकर धरती पर आ चुकी हैं। धरती पर छायी उनकी स्वर्णिम आभा को कवि 'स्वर्ण सींग' की उपमा दे रहे हैं। धरती पर छाया वह सुनहला प्रकाश इन किरन रूपी गायों के सोने जैसे सींगों से निकलती हुई रौशनी है। आकाश में बादल तैर रहे हैं। ये बादल उन गायों के मुंह से गिरने वाले फेन हैं। गाएँ जिन्होंने अंधकार रूपी चारा ग्रहण किया है। अब वे अपने चरे हुए भोजन को धीरे-धीरे चबा रही हैं। इस क्रिया में उनके मुंह से सफेद झाग गिर रहा है। ये सफ़ेद झाग ही आकाश में बादल बन कर छाए हैं। आसमान में उगा हुआ सूर्य ऐसा प्रतीत हो रहा है मानो आम के पेड़ के नीचे बैठकर कोई ग्वाला बांसुरी बजा रहा है। ऐसा एक ही ग्वाला हुआ मानवीय संस्कृति में जो गायों को चरने के लिए छोड़कर खुद वृक्ष के नीचे बैठ बांसुरी बजाने में तल्लीन रहा हो। वह ग्वाला है गोकुल का कृष्ण। 'नभ की आम्रछांह में बैठा बजा रहा वंशी रखवाला' कविता की इस पंक्ति को इस पौराणिक संदर्भ से भी जोड़कर देखा जा सकता है।

सूर्य की ऊष्मा और प्रकाश से सभी वनस्पतियाँ पुष्ट हो रही हैं। खेत-खलिहान लहलहा

रहे हैं। मकई और धान के पौधों को नया जीवन मिल रहा है। जिस प्रकार सामान्य गाय से प्राप्त दूध से मनुष्य पोषण प्राप्त करते हैं उसी प्रकार किरन रूपी गायों से निकलने वाले आलोक दूध से सारी वनस्पतियों को पोषण मिल रहा है। 'सोम' देवताओं का पेय पदार्थ है। मादकता इसका एक गुण है। नदियों के जल में पड़ती हुई सूर्य की किरनों के साथ सूर्य का प्रतिबिंब देखकर ऐसा लग रहा है मानो वह मतवाला अहीर सूर्य 'सोम' दुह रहा है। सूर्य एक है। नदियाँ अनेक हैं। उन अनेक नदियों में सूर्य एक साथ उपस्थित है। उस विराट सूर्य की किरनों का स्पर्श उन नदियों को भी मिल रहा है। सूर्य की विराटता कि उसने अपनी ऊर्जा से जल, थल और गगन सबको उर्जस्वित कर रखा है। यह सूर्य ग्वाला का प्रतीक है। यह कविता सृष्टि की विराटता और उसकी सुंदरता के साथ कृषक संस्कृति की महत्ता को भी रेखांकित करती है। सभी जीवों का पोषण कृषिकर्म और गोपालन पर निर्भर है।

इस प्रकार आपने देखा कि यह कविता 20 पंक्तियों की है। पूरी कविता में सूर्योदय का रूपक ही प्रसारित हुआ है। कविता के अंत में सूर्य को संपूर्ण ब्रह्मांड को संचालित करने वाली शक्ति के रूप में कवि ने दिखाया है। वह एक जगह आकाश में स्थित होकर समस्त भू, जल और वायु मंडल को व्याप रहा है। उसकी यह सर्वव्याप्ति अचानक अंत में नहीं दिखाई गई है। इसका क्रमशः विकास कविता के आरंभ से ही दिखाई देता है। सूर्य की किरनों के धरती पर आने से अंधियारा छंटता है। 'अँधियारा का छँटना' इसका एक अर्थ निराशा और अवसाद का विसर्जन माना जा सकता है। अब जीवन पथ पर आगे बढ़ने का मार्ग प्रशस्त है। कर्म का मार्ग प्रशस्त है। यह अँधियारा छंटा है किरन रूपी गायों के आगमन से। ये गाएँ जो सभी अवरोधों को पार करती हुई धरती पर आ सकीं, यह कैसे संभव हुआ? यह सारस पक्षी के सहयोग से संभव हुआ। सारस किसका मित्र है? सूर्य का या धरती का? 'सारस' इन दोनों के साथ क्षितिज से भी सुपरिचित है। यहाँ 'सारस' प्रतीक है उन सहृदयों का जो लोकमंगल की इच्छा रखते हैं और उसके निमित्त आवश्यक एवं उपयोगी कार्यों को बिना किसी लालच के करते हैं। सूर्य रूपी ग्वाला सर्वज्ञ है। वह किरनों को धरती पर बिना किसी की सहायता के पहुंचाने की शक्ति रखता है। संसार न्याय, शांति और सद्भाव से चले इसके लिए परस्पर सहयोग लेने और देने की भावना निःस्वार्थ रूप में सबमें होनी चाहिए। इसीलिए धरती के अंधकार को दूर करने में 'सारस' को कवि ने सहयोगी बनाया। कविता का बीज शब्द सौंदर्य ही रहा। चाहे स्थूल आँखों से प्रकृति की ऊपरी सुंदरता का आस्वादन करें या मन की भीतरी शक्ति से उसकी आंतरिक ऊर्जा को अनुभूत

करें या प्रकृति पर आरोपित मानव जीवन के कर्म सौंदर्य की महत्ता को समझने की चेष्टा करें। हर रूप में 'सौंदर्य' कविता का बीज शब्द है जिसका चरमोत्कर्ष जीवन में आशा के संचार में दिखाई देता है। नरेश मेहता की काव्यानुभूति और उनके कवि कर्म के संदर्भ में रामकमल राय लिखते हैं, "नरेश मेहता उन थोड़े से लोगों में हैं जिनके लिए रचनाकर्म ही एक मात्र प्रधान कर्म है। शेष सारे कार्य-व्यापार आनुषंगिक है, गौण है और उन्हें लगातार स्थगित किया जा सकता है। कवि निरंतर जैसे अपने सृजनलोक में खोया रहता है। उसी धरातल पर ही उसकी चेतना घुमड़ती रहती है। वहीँ वह बराबर मिथकों से, प्रतीकों से, प्रकृति से उलझता रहता है और उसकी वाणी रूपाकार ग्रहण करती रहती है। इसीलिए नरेश मेहता की भाषस एक विशाल सर्जनात्मक फलक जैसी लगती है। जैसे रात का आकाश अपने ग्रहों, उपग्रहों, नक्षत्रों और स्वर्गगंगाओं के साथ देदिप्यमान होता रहता है, नरेशजी का काव्याकाश भी वैसा ही है। उनकी भाषा एक विशिष्ट लोक का सृजन करती है। उस लोक में यदि पाठक पहुँच सके तो एक विशिष्ट स्वाद और आनंद की दशा तक वह पाठक को पहुँचा पाती है। यदि पाठक वहां नहीं पहुँच पाता है तो वह दूर-दूर की चीज बनी रहती है, जिसे दूर से देखकर चाहे हम उसे इंद्रजाल की संज्ञा दें या मायालोक की।"

किसी भी कविता के मर्म तक पहुँचने के लिए उसे मन की गहराई तक समझना आवश्यक है। ऊपर के परिचित और सामान्य शब्द तथा उनके प्रचलित प्रयोग जब कविता में प्रविष्ट होते हैं तब उनका अर्थ विशिष्ट हो जाता है। बहुत बार वे किसी भाव, परंपरा या सांस्कृतिक संदर्भ का बोध करानेवाले होते हैं। समीक्ष्य कविता में सूर्योदय के सुरम्य वातावरण का चित्रण करते हुए कवि सामाजिक यथार्थ की भूमि पर टिके रहे। उन्होंने काव्य सौंदर्य की अभिवृद्धि के लिए जिन काव्य प्रतीकों को चुना वे भी सामान्य जीवन से जुड़े हुए हैं। कवि ने अपनी इस कविता में प्रकृति की सुंदरता के साथ गोपालक एवं कृषक मनुष्य के कर्म सौंदर्य में तादात्म्य बिठाने की कोशिश की है।

बोध प्रश्न

- 'किरन-धेनुएँ' कविता का समीक्षात्मक विश्लेषण करें।
- 'किरन-धेनुएँ' कविता से उन बिंबों को चुनें जिनसे सूर्योदय का भाव प्रकट हो रहा है तथा उन पंक्तियों की व्याख्या करें।

23.4 पाठ सार

आधुनिक हिंदी साहित्य का आरंभ भारतेंदु युग से माना जाता है। इसके बाद क्रमशः द्विवेदी युग और छायावाद युग से गुजरते हुए हिंदी कविता ने प्रगतिवाद, प्रयोगवाद और नयी कविता का दौर देखा। नयी कविता के एक प्रमुख कवि नरेश मेहता हैं। अपनी कविता 'किरन-धेनुएँ' में इन्होंने सूर्योदय का जस-का-तस वर्णन किया है। उस समय की प्राकृतिक सुंदरता को शब्दबद्ध करते हुए कवि ने तनिक गाँव में भी झाँक लिया। हरी घास, वृक्ष, सूर्य, सारस और नदियों के संग ग्वाला-ग्वालिन की थोड़ी-सी दिनचर्या के समावेश से कविता की शोभा बढ़ी है। किसी गूढ़ रहस्य का उद्घाटन करना कवि का उद्देश्य नहीं रहा है। प्रकृति की शोभा में रमे हुए मन ने बस उस शोभा को शब्दों में रचा है। भारत की माटी और प्रकृति के अनुरागी इस कवि हृदय ने माटी के सपूत 'किसान और गोपालक मनुष्य' को उस प्राकृतिक शोभा का अनन्य अंग माना है। कविता की भाषा मधुर है। किरन धेनुओं का आना जीवन में हर्ष और उल्लास की अभिव्यक्ति का सूचक है।

23.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. नरेश मेहता नई कविता आंदोलन के उन रचनाकारों में प्रमुख हैं जो आधुनिक बोध के साथ-साथ सांस्कृतिक चेतना से अनुप्राणित है।
2. नरेश मेहता के काव्य में प्रकृति के विराट स्वरूप और अनुपम सौंदर्य का चित्रण किया है।
3. कवि की दृष्टि में गोपालन और कृषि जैसे मानवीय कर्म प्रकृति की असीम सुंदरता को बनाए रखने के लिए महत्वपूर्ण हैं।
4. नरेश मेहता के काव्य में प्रकृतिक बिंबों का सौंदर्य देखते ही बनता है।

23.6 शब्द संपदा

1. नैसर्गिक = स्वाभाविक, प्राकृतिक
2. अविच्छिन्न = अटूट, जिसे अलग न किया जा सके
3. आच्छादित = छाया हुआ
4. कृषक = किसान
5. अभिव्यक्ति = प्रकट करना

6. अभीष्ट = मनोरथ, मनचाहा

7. भोर = सुबह

8. साँझ = शाम

9. आभा = चमक, शोभा

10. झाँकना = देखना

11. अनन्य = अभिन्न

23.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. 'किरन-धेनुएँ' कविता का मूल स्वर क्या है? सोदाहरण विश्लेषित करें।
2. 'किरन-धेनुएँ' कविता के परिप्रेक्ष्य में कवि की साहित्य-दृष्टि को विवेचित करें।
3. 'किरन-धेनुएँ' कविता की काव्यगत विशिष्टता को रेखांकित करें।
4. 'किरन-धेनुएँ' कविता का भावार्थ लिखें।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. 'किरन-धेनुओं का समूह यह आया अंधकार चरता', इस पंक्ति में अंधकार से कवि का क्या आशय है? उसे कौन चर रहा है और क्यों?
2. आकाश में तैरते बादलों को देखकर कवि ने कौन-सी कल्पना की? कवि की इस कल्पना के पक्ष या विपक्ष में अपना तर्क दें।
3. क्या 'प्रभात का ग्वाला' और 'आकाश रूपी आम के वृक्ष के नीचे बैठकर बाँसुरी बजानेवाला रखवाला'- ये दोनों एक ही हैं? स्पष्ट कीजिए।
4. कवि ने इस कविता से क्या संदेश दिया है?

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. किरन-धेनुओं को हाँक कर कौन ला रहा है? ( )

(अ) धरती (आ) सूर्य (इ) नदी (ई) ग्वाला

2. फेन किसके मुँह से गिर रहा है? ( )

(अ) गाय (आ) बादल (इ) किरन-धेनुओं (ई) पर्वत

3. किरन रूपी गायों की टोली किस जंगल से आ रही है? ( )

(अ) खेत खलिहान (आ) क्षितिज (इ) उदयाचल (ई) कोई नहीं

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. दिखा रहे पथ इस ....का।

2. ....हँस-हँस कर गले मिली।

3. ....में ....सोम दुह रहा वह ....मतवाला।

4. ....की ....फूटती।

III. सुमेल कीजिए -

1. सारस	(अ) पुनरुक्तिप्रकाश अलंकार
2. अहीर	(आ) बोली
3. सुना-सुना	(इ) चैत्या
4. किरन-धेनुएँ	(ई) मतवाला

23.8 पठनीय पुस्तकें

1. काव्यतत्व विमर्श : राममूर्ति त्रिपाठी

2. हिंदी कविता - आधुनिक आयाम : रामदरश मिश्र

3. नरेश मेहता का काव्य - संवेदना और शिल्प : अमिशचंद्र पटेल

4. नरेश मेहता कविता की ऊर्ध्वयात्रा : रामकमल राय

5. कविता के नये प्रतिमान : नामवर सिंह

इकाई 24 : 'इतिहास और प्रतिइतिहास' : नरेश मेहता

रूपरेखा

24.1 प्रस्तावना

24.2 उद्देश्य

24.3 मूल पाठ : 'इतिहास और प्रतिइतिहास' : नरेश मेहता

24.3.1 अध्येय कविता का सामान्य परिचय

24.3.2 अध्येय कविता

24.3.3 विस्तृत व्याख्या

24.3.4 समीक्षात्मक अध्ययन

24.4 पाठ सार

24.5 पाठ की उपलब्धियाँ

24.6 शब्द संपदा

24.7 परीक्षार्थ प्रश्न

24.8 पठनीय पुस्तकें

24.1 प्रस्तावना

कविता के साथ साहित्य की विविध विधाओं को अपनी लेखनी से समरूप समृद्ध करने वाले साहित्यकार नरेश मेहता अपनी भारतीय दृष्टि, प्रकृति के प्रति रुझान एवं पौराणिक और मिथकीय चेतना के लिए विशेष रूप से जाने जाते हैं। जमीनी मनुष्यता और समाज के प्रति संवेदना का स्वर इनके साहित्य में प्रबल है। 1942 के 'अंग्रेजों भारत छोड़ो आंदोलन' में भी इनका योगदान रहा। इन्होंने महाभारत के कथानक को आधार बनाकर महाप्रस्थान (1964) खंडकाव्य रचा। इनके खंडकाव्य 'प्रार्थना पुरुष' (1985) का आधार गांधी हैं। इन्होंने रामकथा के प्रसंगों के आधार पर भी कुछ खंडकाव्य रचे हैं, जैसे- 'संशय की एक रात' (1962), 'प्रवाद पर्व' (1977) और शबरी (1977)। इनका एक खंडकाव्य 'पुरुष' इनके देहावसान के पश्चात 2005 में प्रकाशित हुआ। इस इकाई में आप खंडकाव्य 'प्रवाद पर्व' के प्रथम सर्ग का अध्ययन करेंगे।

24.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई में आप खण्डकाव्य "प्रवाद पर्व" के "'इतिहास और प्रतिइतिहास' "

सर्ग का अध्ययन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप-

- “‘इतिहास और प्रतिइतिहास’ ’ कविता का सामान्य परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- अध्येय कविता के मूल पाठ से परिचित हो सकेंगे।
- अध्येय कविता की काव्यगत विशेषताओं को जान सकेंगे।
- अध्येय कविता का समीक्षात्मक विश्लेषण कर सकेंगें।

24.3 मूल पाठ : ‘इतिहास और प्रतिइतिहास’ : नरेश मेहता

24.3.1 अध्येय कविता का सामान्य परिचय

‘इतिहास और प्रतिइतिहास’ कविता कवि नरेश मेहता के खंडकाव्य ‘प्रवाद पर्व’ का प्रथम सर्ग है। इस खंडकाव्य में पाँच सर्ग हैं- ‘इतिहास और प्रतिइतिहास’, प्रतिइतिहास और तंत्र, शक्ति: एक संबंध, एक साक्षात्, प्रतिइतिहास और निर्णय, निर्वेद-विदा। ‘प्रवाद’ का अर्थ है झूठी बदनामी या जनश्रुति। ‘पर्व’ जो सामान्यतः उत्सव और त्योहार के लिए प्रयुक्त होता है, उसका एक अर्थ ‘विशिष्ट अंश’ भी होता है। रामकथा में ‘धोबी द्वारा सीता पर मिथ्या आरोप लगाने वाले अंश’ को आधार बनाकर यह खंडकाव्य रचा गया। उस एक केंद्र के इर्द-गिर्द समकालीन मनुष्य के जीवन में निहित मानसिक द्वंद्व की स्पष्ट छवि देखी जा सकती है। कवि ने जनश्रुति, जनसरोकार और राजतंत्र के मध्य ‘जन’ की वास्तविक मानसिक स्थिति को विचार का विषय बनाया है। राजतंत्र के समक्ष जनतंत्र खड़ा होता है। उसके सिर पर आरोप मढ़ता है। इसके बावजूद वह अपनी अभिव्यक्ति की आजादी नहीं खोता। राजतंत्र से किसी प्रकार का भय उसे नहीं सताता। वह स्वतंत्र, सुरक्षित और शांत मन से अयोध्या के अपने घर में निवास कर रहा है। शासन ने जनमत की अवहेलना नहीं की। उसका मान रखा। शासन की निरंकुशता पर अंकुश लगाकर इतिहास रचने वाले राजा राम के भीतर के साधारण मनुष्य ने स्वयं की जिस उद्विग्नता को अपने समय में जाहिर नहीं किया, कवि उसे ‘इतिहास और प्रतिइतिहास’ के माध्यम से उजागर कर रहे हैं।

बोध प्रश्न

- ‘इतिहास और प्रतिइतिहास’ शीर्षक कविता ‘प्रवाद पर्व’ से किस प्रकार संबंधित है?
- क्या राजतंत्र को निरंकुश होना चाहिए?

24.3.2 अध्येय कविता : ‘इतिहास और प्रतिइतिहास’

राम :
क्या यही है मनुष्य का प्रारब्ध? कि
कर्म
निर्मम कर्म
केवल असंग कर्म करता ही चला जाए?
भले ही वह कर्म
धारदार अस्त्र की भांति
न केवल देह
बल्कि
उसके व्यक्तित्व को
रागात्मिकताओं को भी काट कर रख दे।
क्या यही है मनुष्य का प्रारब्ध??
क्या इसीलिए मनुष्य
देश और काल की विपरीत चुम्बताओं में
जीवन भर
एक प्रत्यंचा सा तना हुआ
कर्म के बाणों को वहन करने के लिए
पात्र या अपात्र
दिशा या अदिशा में सन्धान करने के लिए
केवल साधन है?
मनुष्य
क्या केवल साधन है?
क्या केवल माध्यम है??
लेकिन किसका?
कौन है वह
अपौरुषेय
जो समस्त पुरुषार्थता के अश्वों को

अपने रथ में सन्नद्ध किये हैं?
कौन है?
वह कौन है??
मनुष्य की इस आदिम जिज्ञासा का उत्तर-
किसी भी दिशा पर
कभी भी दस्तक देकर देखो,
किसी भी प्रहर के
क्षितिज अवरोध को हटाकर देखो
कोई उत्तर नहीं मिलता राम!
दस्तकों की कोई प्रतिध्वनि तक नहीं आती
शून्य से किसी का देखना नहीं लौटता।

निर्देश : 1. इस कविता का सस्वर वाचन कीजिए।
2. इस कविता का मौन वाचन कीजिए।

24.3.3 विस्तृत व्याख्या

क्या यही है मनुष्य का प्रारब्ध? कि
कर्म
निर्मम कर्म
केवल असंग कर्म करता ही चला जाए?
भले ही वह कर्म
धारदार अस्त्र की भांति
न केवल देह
बल्कि
उसके व्यक्तित्व को
रागात्मिकताओं को भी काट कर रख दे।
क्या यही है मनुष्य का प्रारब्ध??
क्या इसीलिए मनुष्य
देश और काल की विपरीत चुम्बताओं में

जीवन भर
एक प्रत्यंचा सा तना हुआ
कर्म के बाणों को वहन करने के लिए
पात्र या अपात्र
दिशा या अदिशा में सन्धान करने के लिए
केवल साधन है?
मनुष्य
क्या केवल साधन है?
क्या केवल माध्यम है??
लेकिन किसका?
कौन है वह
अपौरुषेय
जो समस्त पुरुषार्थता के अश्वों को
अपने रथ में सन्नद्ध किये हैं?
कौन है?
वह कौन है??
मनुष्य की इस आदिम जिज्ञासा का उत्तर-
किसी भी दिशा पर
कभी भी दस्तक देकर देखो,
किसी भी प्रहर के
क्षितिज अवरोध को हटाकर देखो
कोई उत्तर नहीं मिलता राम!
दस्तकों की कोई प्रतिध्वनि तक नहीं आती
शून्य से किसी का देखना नहीं लौटता।

शब्दार्थ : प्रारब्ध = भाग्य। निर्मम = निष्ठुर। असंग = अनुराग रहित। अस्त्र = एक तरह का हथियार जिसे फेंककर चलाया जाता है जैसे बाण। रागात्मिकता = प्रेम और संवेदना से जुड़ी अनुभूति। चुम्बता = देश-काल के संयोग से उत्पन्न विविध परिस्थिति। प्रत्यंचा = धनुष की डोरी

जिससे धनुष के दोनों छोर बंधे होते हैं। सन्धान = लक्ष्य को पाने के लिए कोशिश करना। अपौरुषेय = दैवी या पुरुषार्थ से परे। पुरुषार्थ = पुरुष के जीवन का लक्ष्य एवं उद्देश्य। सन्नद्ध = कसकर बंधा हुआ। आदिम = आरंभिक या मूल। जिज्ञासा = जानने की इच्छा। दस्तक = दरवाजे पर हाथ का हल्का आघात। प्रहर = पहर। अवरोध = बाधा। प्रतिध्वनि = बोले गए शब्द की गूंज जो लौटकर सुनाई दे। शून्य = आकाश, खाली।

संदर्भ : नरेश मेहता द्वारा रचित खंडकाव्य है 'प्रवाद पर्व'। "इतिहास और प्रतिइतिहास' ' शीर्षक कविता इसी खंडकाव्य का प्रथम सर्ग है।

प्रसंग: अयोध्या के राजभवन में राम अपने कक्ष में अकेले चिंतन-मुद्रा में टहल रहे हैं। राम संसार में मनुष्य की स्थिति पर विचार कर रहे हैं। मनुष्य संपादित कर्म और मनुष्य के सामर्थ्य से परे दैव शक्ति के मध्य समीकरण सुलझाने की चेष्टा करते हुए राम सामान्य मनुष्य के कर्म का औचित्य ढूँढ़ रहे हैं।

व्याख्या : चिंतन और मनन करते हुए राम अयोध्या के राजभवन के अपने कक्ष में टहल रहे हैं। रात का समय है। रात के सन्नाटे में राम मन के सन्नाटों को सुन रहे हैं। वे स्वयं से पूछ रहे हैं कि मनुष्य का भाग्य क्या है? क्या मनुष्य केवल काम करता जाए? क्या हृदयहीन और प्रेमरहित काम को बस कर्तव्य की भावना से करते चले जाना ही मनुष्य का भाग्य है? भले ही उसके द्वारा संपन्न ये काम उसके स्थूल देह के साथ-ही-साथ उसकी प्रेम और संवेदना से जुड़ी अनुभूतियों पर भी किसी तेज धार वाले अस्त्र की भाँति प्रहार करे। उसके व्यक्तित्व, उसकी अस्मिता और उसकी पहचान को भी टुकड़े-टुकड़े कर दे। क्या इस संसार में कर्म की प्रधानता के सम्मुख मनुष्य का अस्तित्व बिल्कुल बौना है? क्या यही मनुष्य का भाग्य है?

मनुष्य का जीवन किसलिए है? क्या केवल भाग्य के इशारे पर डोलना ही मनुष्य का जीवन है? क्या जीवन भर समय और समाज की प्रतिकूल परिस्थितियों को झेलते रहना ही उसकी नियति है? क्या मनुष्य का जीवन कर्म रूपी बाण का भार सहन करनेवाले धनुष की उस डोरी के समान ही महज एक साधन है जिसे लक्ष्य को साधना है। पात्र और अपात्र का विचार करना भी उसके वश में नहीं है। लक्ष्य को सुनिश्चित भी वह नहीं कर सकता। वह सिर्फ लक्ष्य पाने का एक साधन है। क्या मनुष्य और उसका विवेक सिर्फ पूर्व नियत उद्देश्यपूर्ण या निरुद्देश्य लक्ष्यों को पूर्ण करने का केवल एक साधन भर है? क्या मनुष्य सिर्फ एक माध्यम है? कैसा है मनुष्य का परवश जीवन? प्रतिकूल परिस्थितियों के अनुकूल बहना मानव का स्वाभाविक गुण

कैसे बन गया?

लेकिन मनुष्य से यह सब कौन करवाता है? वह किसका माध्यम है? वह कौन-सी शक्ति है जिसने मनुष्य को केवल लक्ष्य पूर्ति का साधन बना रखा है? वह कौन है? वह कौन दैवी शक्ति है जिसने मनुष्य के सामर्थ्य और क्षमता रूपी घोड़ों को अपने रथ में कस कर बाँध रखा है? इस संसार को चलानेवाले नियंता की आवश्यकताओं को पूर्ण करते चले जाना ही क्या मनुष्य के जीवन का उद्देश्य है? क्या नियंता के उद्देश्य की पूर्णता का मूक साक्षी होना ही मनुष्य की नियति है? पर वह नियंता, वह परमशक्ति, वह अपौरुषेय है कौन जिसके हाथों की कठपुतली मात्र मनुष्य है?

राम का यह प्रश्न केवल राम का नहीं बल्कि जनसाधारण का है। संपूर्ण मनुष्य समाज की यह चिंता है। बौद्धिक मनुष्य अपनी इस मानसिक चिंता का निवारण नहीं खोज पाया है। यह जानने की इच्छा मनुष्य के मन में जीवन के आरंभ से रही है पर इसका उत्तर वह आज भी नहीं खोज पाया है। उत्तर पाने की लालसा से भरा मनुष्य का मन चारों दिशाओं में खोजता है पर दिशाएँ निरुत्तर और मनुष्य निरुपाय-सा। चारों पहर में वह क्षितिज रूपी अवरोध को हटाकर देखता है पर कोई उत्तर नहीं पाता। पूरब दिशा में क्षितिज रूपी अवरोध के हटने से सूर्य दिखाई देता है पर अन्य दिशाएँ तो उससे भी खाली हैं। कहीं से कोई आवाज नहीं! कोई उत्तर नहीं। प्रश्नाकुल राम से उसका मन कहता है कि उस अपौरुषेय को खोजने के लिए हर पहर में हर दिशा पर दस्तक देने से भी कुछ हाथ नहीं लगा। कोई उत्तर नही मिला राम। वह अपौरुषेय अब भी प्रश्न है। घाटियों से आवाज की गूँज वापस लौटकर सुनाई देती है पर इन दिशाओं पर दी गई दस्तक की कोई प्रतिध्वनि नहीं आती। क्या इन दिशाओं में कोई है? क्या ये दिशाएँ भी महज कल्पना हैं? क्या ये खाली हैं? क्या इनमें कुछ भी नहीं है? तभी तो कुछ भी नहीं लौटता। न प्रश्न का उत्तर और ना ही दस्तक की प्रतिध्वनि। खाली जगह से टकराकर नजर कभी नहीं लौटती। शून्य की अपरिमित गहराई का आभास जरूर होता है पर जहाँ कुछ है ही नहीं वहाँ से लौटेगा क्या? क्या वह नियंता नहीं होते हुए भी है और होते हुए भी नहीं है? वह कौन है जिसके वश में मनुष्य का हर क्षण है? यह आदिम प्रश्न है।

काव्यगत विशेषता : 'इतिहास और प्रतिइतिहास' कविता में कवि ने गूढ़ विषय का चयन किया है। कविता की कलात्मक योजना द्वारा विषय की इस गंभीरता को पूर्ण विस्तार देते हुए उसका निर्वाह अंत तक किया गया है। कवि का शब्द चयन कविता के विषय वस्तु के अनुरूप ही गहन

चिंतन युक्त है। काव्य गीतिनाट्य शैली में रचित है। 'प्रतिइतिहास' शब्द कवि की मौलिक निर्मिति है। मुहावरा-सूक्तियों एवं संस्कृतनिष्ठ शब्दों के साथ उर्दू शब्द भी कविता में प्रयोग किए गए हैं। ये भाषा की जीवंतता बढ़ाने या बनाए रखने में सहयोगी बने हैं। 'शून्य से किसी का देखना नहीं लौटता'- यह सूक्ति है। सूक्तियाँ व्यावहारिक जीवन के कठिनतम क्षणों में सहयोगी बन जाती हैं। 'कभी भी दस्तक देकर देखो'- इस पंक्ति में 'दस्तक देना' मुहावरा है।

राम का बाह्य स्वरूप शांत और स्थिर है पर मन के भीतर भारी उथल-पुथल मचा हुआ है। इस प्रकार एक धीरोदात्त नायक की सामान्यता का दर्शन कराते हुए कवि की शब्द योजना प्रभावी रही है। राम के विचारों के जिस बिंब की सृष्टि कवि ने की है उससे प्रखर दार्शनिकता झलकती है। राम के मन में उठते हुए भावों से उद्वेलित होते उनके मन को अभिव्यक्त करने के लिए कवि ने भाव बिंब की सृष्टि की है।

उदाहरण : "क्या यही है मनुष्य का प्रारब्ध?/ कि/ कर्म/ निर्मम कर्म/ केवल असंग कर्म करता ही चला जाए?/ भले ही वह कर्म/ धारदार अस्त्र की भाँति/ न केवल देह/ बल्कि/ उसके व्यक्तित्व को/ रागात्मिक्ताओं को भी काटकर रख दे।/ क्या यही है मनुष्य का प्रारब्ध??" मानव जीवन के भाग्य पर मनुष्य की क्षुब्धता भरी संवेदना यहाँ प्रकट हो रही है। मानव जीवन में श्रेष्ठ धर्म निभाने के लिए मनुष्य अपने सभी राग और प्रेम की संवेदनाओं को नष्ट कर डाले। श्रेष्ठ धर्म निभाने के बदले जीवन को होम करना ही मनुष्य का भाग्य है। यह कैसा भाग्य लेकर मनुष्य आया है!

इस कविता के अध्ययन से पाठक के मन में करुण रस का संचार होता है। संसार में नियति के अधीन मनुष्य की करुण दशा इस रस का संचार भावक के मन में करती है। जब मनुष्य अपनी स्थति पर खीझ-खीझकर शांत हो जाता है। जब सारी सृष्टि उसके प्रश्न के उत्तर में मौन हो जाती है तब वह अपनी स्थिति को स्वीकार लेता है। उसका यह स्वीकार उसके मानसिक उद्वेलन को शांत करता है। इससे कविता में शांत रस का संचार होता है।

उदाहरण : मनुष्य की इस आदिम जिज्ञासा का उत्तर-/ किसी भी दिशा पर/ कभी भी दस्तक देकर देखो/ किसी भी प्रहर के/ क्षितिज अवरोध को हटाकर देखो/ कोई उत्तर नहीं मिलता रा!/ दस्तकों की कोई प्रतिध्वनि तक नहीं आती/ शून्य से किसी का लौटना नहीं देखता।"

यह कविता सांसारिक जीवन की सत्यता का मर्मबोध करानेवाली है। साधारण मनुष्य परिस्थिति के अनुसार किस प्रकार कठिन-से-कठिन और कठोर कर्मों का संपादन करता है उसके

प्रतीक के रूप में कवि ने 'राम' को चुना। मूल रूप में राम राजतंत्र के अधिष्ठाता हैं। पर अपने कर्तव्यपालन के धर्म पर वे सामान्य के पक्ष में खड़े रहते हैं। अतः राम केवल राजतंत्र के नहीं, वे सुशासन के प्रतीक हैं। वे मनुष्य के अस्तित्व रक्षण के प्रतीक हैं। इसी से वे नई कविता में काव्य नायक के रूप में अधिष्ठित हैं। राम असंग और निर्मम कर्म हर्ष के साथ करनेवाले हैं। मनुष्य के जीवन के तनाव की अभिव्यक्ति के लिए 'प्रत्यंचा' को प्रतीक रूप में लिया गया है। मनुष्य कर्मफल का भोक्ता है। यहाँ कर्म की तुलना बाणों से की गई है। 'क्षितिज' का प्रयोग 'अवरोध' के प्रतीक के लिए किया गया है। प्रतीकों के साथ विविध अलंकारों का प्रयोग भी भाषिक अभिव्यंजना की वृद्धि में सहायक बना है।

उदाहरण:

अनुप्रास अलंकार : 'निर्मम कर्म'

रूपक : 'कर्म के बाणों को वहन करने के लिए'

उपमा: 'जीवन भर/ एक प्रत्यंचा सा तना हुआ'

राम ऐतिहासिक सत्य हैं पर साहित्य में रामकथा का प्रयोग मिथक की परिधि के भीतर किया जाता है। इस कविता का आधार रामकथा का एक अंश है। 'राम' मिथकीय प्रतीक हैं जिसके सहारे कवि ने युगीन संवेदना एवं समकालीन मानव की मनोवृत्ति को भलीभांति दिखाया है। 'अपौरुषेय' भी मिथकीय प्रतीक है। 'अपौरुषेय' वह है जो मनुष्य के सामर्थ्य से परे है। 'अपौरुषेय' वह है जिसे वेद नेति-नेति कहते हैं। अपौरुषेय वह है जो सारी सृष्टि का सर्जक, पालक और संहारक है। इस अपौरुषेय तक किसी की दृष्टि यों ही नहीं पहुँचती है। वेद, पुराण, उपनिषद, रामायण, महाभारत एवं अन्य धार्मिक, सांस्कृतिक व आध्यात्मिक ग्रंथों के लगातार साहचर्य से वह दृष्टि प्राप्त होती है जो सृष्टि का अनंत विस्तार देख सके। नरेश मेहता की काव्य दृष्टि को यह अनंत विस्तार प्राप्त था तभी उन्होंने काव्यभाषा को 'द्विजभाषा' कहा। उनकी कविता की भाषा प्रवाहपूर्ण और लयबद्ध है। कविता का भाषिक सह प्रयोग भी ध्यान खींचता है, जैसे- निर्मम कर्म, असंग कर्म, धारदार अस्त्र, आदिम जिज्ञासा इत्यादि। 'आदिम जिज्ञासा' का प्रयोग भी कवि ने जिज्ञासा के मिथक के रूप में किया है। प्रकृति की शाश्वतता और मनुष्य की नश्वरता वस्तुतः सृष्टि के आरंभ से मनुष्य के मन में कुलबुला रही है पर इसका उत्तर आज भी अनुपलब्ध है। यह एक सत्य जो आदिकाल से अनुत्तरित है, उससे समकालीन मनुष्य भी जूझ रहा है। कविता का भाषिक वैशिष्ट्य इसे भारतीय संस्कृति के प्रतिबिंब के रूप में दिखाता है।

बोध प्रश्न

- निम्नलिखित पद्यांश की विस्तृत व्याख्या करें।

(क) लेकिन किसका? ....वह कौन है??

(ख) मनुष्य की इस आदिम जिज्ञासा का उत्तर-............शून्य से किसी का देखना नहीं लौटता।

- 'इतिहास और प्रतिइतिहास' कविता में मूलतः कवि क्या कहना चाहते हैं?
- 'इतिहास और प्रतिइतिहास' कविता की काव्यगत विशेषताओं को स्पष्ट करें।

24.3.4 समीक्षात्मक अध्ययन

नरेश मेहता की साहित्यिक पृष्ठभूमि से आपका संक्षिप्त परिचय इकाई 23 में हो गया है। वहाँ हमने काल के आधार पर जाना कि नरेश मेहता का नाम साहित्य जगत में प्रयोगवाद के आरंभ के साथ उभरकर आया। यहाँ हम उनके साहित्य की चेतना को उस युग की चेतना के पृष्ठभूमि से जोड़ने की कोशिश करेंगे। परतंत्र भारत और स्वतंत्र भारत की विभिन्न परिस्थितियों में मनुष्य की आंतरिक और बाह्य मनोदशा को, उस युग में जी रहे हर मनुष्य ने नजदीक से देखा और भोगा होगा। सामान्य मनुष्य की पीड़ा आँसू, क्रोध, बेबसी या विद्रोह का रूप धर कर अपना चरम पा लेती है पर कवि के हृदय की पीड़ा, उसके सभी भाव शब्द का रूप धर कर ही बाहर आते हैं। ये शब्द 'वस्तु और मन' की स्थिति को उसकी पूर्णता में रूपायित करने की क्षमता वाले होते हैं। इनसे ही कविता बनती है। इनका कलेवर संक्षिप्त होता है और कथ्य सारगर्भित। अर्थ संप्रेषण की दृष्टि से पूर्ण कविताओं के अर्थ की गंभीरता तक भी वही पाठक पहुँच सकते हैं जिनमें उसके भावों को समझने की उत्कट इच्छा हो। यह कविता की प्राथमिक शर्त है। अपने सृजनकाल की युगीन संवेदना को नरेश मेहता ने सृजन के अत्यंत अनुकूल बताया है। उनके शब्दों में, "मुझे तो आज का युग सृजनात्मकता की दृष्टि से सबसे उर्वर लगता है। इतने विरोधाभास, इतनी ज्वलंत समस्याएँ, कहा जा सकता है कि मनुष्यता पर ऐसा संकट महाभारत के बाद आज ही दिखाई दे रहा है कि लेखक का इनमें से गुजरना अग्नि-परीक्षा में से गुजरना है। जैसे महाभारत का कोई राजनीतिक समाधान संभव नहीं हो सका, आज की समस्यायों का समाधान भी सांस्कृतिक समन्वय में ही खोजा जाना चाहिए, क्योंकि मनुष्य मात्र एक-दूसरे से इसी सांस्कृतिकता के कारण जुड़े हुए हैं।"

कवि की सांस्कृतिक दृष्टि और वैष्णववादी विचारधारा का विस्तार उनकी कविताओं में सहजता से मिल जाता है। कवि की सांस्कृतिक दृष्टि भारतीयता के सानिध्य से उत्पन्न हुई और

उनके वैष्णववादी विचारधारा में भी इसी का योग रहा। यह उनकी विचारधारा से स्पष्ट होता है। वैष्णव इस अर्थ में 'जो दूसरों की पीड़ा को महसूस कर उसे दूर करने का उद्दयम कर सके। जो सात्विक क्षमा की महत्ता से परिचित हो और सात्विक क्रोध को निः संकोच धारण कर सके। जो जनहित हेतु स्वहित का परित्याग कर सके।' जहाँ ये विचार पल्लवित होते हैं वहाँ वैष्णव भावना समाविष्ट है, जैसे- 'राम का चरित्र'। यहाँ काव्यनायक राम वैष्णव भक्तों के इष्ट राम नहीं हैं। ये वैष्णव विचारधारा के मूर्त स्वरूप राम हैं।

''इतिहास और प्रतिइतिहास' ' शीर्षक कविता का आधार रामकथा का सीता पर धोबी द्वारा मिथ्या दोषारोपण करनेवाला अंश है। इस प्रसंग से धीर-वीर राम का मन भी व्याकुल हुआ। उस व्याकुल मन की सटीक अभिव्यक्ति इस कविता में हुई है। गीतिनाट्य शैली में रचित 'प्रवाद पर्व' के प्रथम सर्ग का यह आरंभिक अंश है जिसमें राम मनुष्य के अस्तित्व और उसके भाग्य के प्रश्न पर मन-ही-मन चिंतन करते हैं। राम का यह चिंतन कहीं न कहीं कवि के व्यक्तिवादी विचारधारा का ही प्रतिफलन है। मनुष्य के अस्तित्व से ही समाज और संस्कृति है। समाज और संस्कृति से ही मनुष्य का अस्तित्व है। दोनों पारस्परिक संबद्ध हैं। कवि के विचार में, "मनुष्य को नाम देने की आवश्यकता है, न कि उसे वर्ग या संख्या में खड़ा करने की। सामाजिक गरिमा में सबका यथाभाग आवश्यक है। छीनाझपटी वाली राजक्रांति या सामाजिक क्रांति हमेशा छीनाझपटी वाली स्थिति को ही जन्म देती है। क्रांति को संस्कार के ही स्तर पर ग्रहण किया जाना चाहिए। ऐसा केवल धर्म के मूलाधार पर ही संभव है। धर्म की यह पहचान ही मनुष्यत्व है। मेरे निकट तो जो सब श्रेष्ठ है, वही धर्म है।" राम के चरित्र ने भी इसी श्रेष्ठता का निर्वाह किया। उन्हें मिथ्यादोषारोपण करनेवालों और उनका विरोध करनेवालों के संख्या को गिनने में रुचि नहीं थी। शासन के लिए एक व्यक्ति का मुँह बंद करना कोई बड़ी बात नहीं थी पर इस निरंकुशता के लिए भी उनके हृदय में स्थान न था। वे इस दोषारोपण वाली कहानी को निर्मूल करना चाहते थे। वे अपनी सामान्य प्रजा के शंका का समाधान करना चाहते थे। इसके लिए उन्होंने अपनी अर्धांगिनी सहित पुनः ताप झेला। दंपति ने मिलकर धर्म की श्रेष्ठता का निर्वाह किया। राम के शासन में निर्दोष सीता को पुनः वनवास। इस ताप से तापित राम की मनःस्थिति का आंकलन करने की एक चेष्टा नरेश मेहता अपनी कविता ''इतिहास और प्रतिइतिहास' ' में करते हैं। राम के मन का यह ताप एक विरही हृदय के ताप तक सीमित नहीं रहता है। वे इसका विस्तार समकालीन मानव के अंतर्द्वंद्व भरे मन तक करते हैं। युगीन

परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में मनुष्य की स्थिति को जाँचने-परखने का प्रयास कवि ने किया है। इस प्रयास में उनकी सांस्कृतिक दृष्टि प्रधान रही है।

अयोध्या जिसके सत्ताधीश राम हैं। उनकी अर्धांगिनी देवी सीता पर एक अयोध्यावासी झूठा लांछन लगाता है। उसे सत्ता का डर नहीं सताता। सत्ता अपने खिलाफ बोलनेवाले उस नागरिक को पकड़कर न जेल में डालती है ना ही उसे किसी अन्य प्रकार से त्रास देकर अपना मुँह सीने को कहती है। राज्य का वह सामान्य नागरिक स्वतंत्र है और उसके अधिकार सुरक्षित। इससे पता चलता है कि सुशासन में मनुष्य के स्वतंत्र व्यक्तित्व और उसकी अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता निर्भय होती है। मनुष्य के अधिकारों का हनन कभी नहीं होता है। सामान्य मनुष्य का मत भी शासक के लिए महत्वपूर्ण होता है। सामान्य के प्रति न्याय का निर्वाह करने के लिए राज्य का विशिष्ट व्यक्ति भी बलिदान करता है। सत्य जानते हुए भी बस अपनी प्रजा की सोच का मन रखने के लिए वह असह्य पीड़ा को सहने के लिए भी तैयार रहता है। प्रिया को पुनः वनवास जो सर्वथा अनुचित है पर प्रजा राजा की संतान है। उस संतान के मन में अपने पालक के प्रति कुभाव को पलने देना निश्चित ही राज्य में अशांति का बीज बोना है। राज्य की सुख शांति के निमित्त संभवतः सियाराम ने साथ ही निर्णय लिया हो। सारी प्रजा को उस एक सामान्य जन के मत से विरोध था। बहुत आसानी से उसे झुकाया जा सकता था पर राम के शासन में ऐसा नहीं हुआ। प्रजा से अपने विशेष स्नेह में राम ने एक अनुचित तर्क और अनुपयुक्त दोषारोपण पर एक हृदय विदारक निर्णय लिया। देवी सीता को पुनः वनवास वह भी एकल। सत्ता की सहधर्मिणी देवी सीता ने पुनः वनवास को स्वीकार किया। उन दोनों के मन के भावों को व्यक्त करने की कोशिश स्वयंभू कवि ही कर सकते हैं।

कवि नरेश मेहता ने अध्येय कविता में राम के आकुल मन को शब्दबद्ध किया है। राम की इस व्याकुलता का संबंध पूर्व वर्णित घटना से है। जब अयोध्या के सिंहासन की जगह वन का सिंहासन राम को दिया गया तब उनका धीरज नहीं टूटा था। वे प्रसन्न थे। धीरज तो अब भी शेष है नहीं तो निर्णय कैसे लेते! सोच-विचार कैसे करते! पर प्रसन्नता की जगह दुःखजन्य व्याकुलता ने ले ली है। राम सोच रहे हैं कि मनुष्य के भाग्य में क्या लिखा है? बस कर्मों का संपादन करते चले जाना ही उसका भाग्य है। ये कर्म भी कैसे हैं? न इनके प्रति प्रेम है ना ही इन्हें करने की इच्छा ही बलवती है। पर यह मनुष्य का भाग्य है कि उसे इन निष्ठुर कर्मों को करना ही है क्योंकि यह समाज की जरूरत है और न्याय की माँग है। अनचाहे जनपक्षीय कर्मों को पूरे मन से

पूरा करना, अपने दाह भरे हृदय से किसी के मन की ज्वाला को शांत करना- बस यही मनुष्य का कर्तव्य है। क्या 'उच्चासीन मनुष्य का अपना व्यक्तित्व और उसकी अपनी प्रेम भावना' जनसाधारण के अभिमत के समक्ष बिल्कुल नगण्य है। मनुष्य की कर्तव्य भावना की पूर्ति के समक्ष मनुष्य के सगे-संबंधी कुछ भी महत्व नहीं रखते। कर्तव्य सर्वोपरि है। मनुष्य का ईमानदारी से किया गया कर्तव्यपालन वस्तुतः एक तेज धार वाले अस्त्र के जैसा ही है जो उसके स्थूल और सूक्ष्म दोनों ही अवस्था पर प्रहार कर सकता है। क्या अपने कर्तव्यपालन से स्वयं को और स्वयं से जुड़े व्यक्तियों को आघात पहुँचाना ही मनुष्य का भाग्य है?

क्या स्वयं इस आघात को सहने और अपने प्रियजनों को निरंतर आघात पहुँचाने के लिए ही मनुष्य आजीवन संघर्ष करता है? आजीवन वह धनुष की डोर की भांति तना हुआ रहता है। धनुष की दोनों सिराओं से जिस तरह धागा कसकर बंधा होता है उसी तरह समय और समाज की विभिन्न परिस्थितियों से मनुष्य बंधा हुआ है। जीवन भर वह लक्ष्य को पाने की कोशिश करता रहता है। पर वास्तव में लक्ष्य क्या उसका ही है या वह किसी और का साधन है? कोई और सत्ता है जिसके वश में उच्चासीन मनुष्य भी हैं। कोई और है जो मनुष्य को कर्म करने के लिए प्रेरित करता है। क्या मनुष्य सिर्फ कर्म का भार ढोने के लिए है? राम के मन का अंतर्द्वंद्व यही है कि क्या मनुष्य केवल एक साधन या माध्यम भर है? परिस्थितियों और पात्रों की योग्यता और उद्देश्य को वह जाँच सकता है फिर भी वह केवल एक साधन या माध्यम ही है।

इससे अधिक जो प्रश्न उद्वेलित करता है वह यह कि वह कौन है जिसने मनुष्य को केवल माध्यम बना रखा है? सृष्टि की सर्वोत्कृष्ट रचना मनुष्य है। वह बौद्धिक है। पर उसके अपने जीवन पर भी उसका वश नहीं है। वह जो करता है वह उसकी नहीं, किसी और की इच्छा से होता है। वह दैवी शक्ति कौन है जिसके वश में मनुष्यों की सारी शक्ति है? सृष्टि संचालन, कर्म और भाग्य से जुड़े प्रश्न मनुष्य के मन में पृथ्वी पर मानव संस्कृति के आरंभ के साथ से हैं। मानव जीवन का यह मूल प्रश्न आज भी अनुत्तरित है पर सबके मन में जीवित है जो घोर संकट के क्षण में अवश्य प्रकट होता है पर कोई उत्तर न पाकर पुनः अदृश्य भी हो जाता है या अपनी मौन उपस्थिति मनुष्य के मन के भीतर बनाए रखता है। राम ने अपने मन के कहने पर चारों पहर में इस प्रश्न का उत्तर ढूंढने की कोशिश की। उन्होंने चारों दिशाओं से भी पूछा पर सब ओर एक चुप्पी है। कहीं से कोई उत्तर नहीं मिलता है। किसी ने यह प्रश्न उठाया है इसका निशान तक नहीं है। कहीं कोई आवाज नहीं, मौन और शांति बस! आसमान की गहराई में जितनी दूर तक चाहें

हम देख लें पर वहाँ से दृष्टि हटाते ही कुछ शेष नहीं रहता। केवल वह जमीन बचता है जिसपर हमारे पैर टिके हैं। मनुष्य को परिस्थिति का सामना करना ही है। नियंता जो है अपनी जगह है। मनुष्य का जन्म कर्म करने और कर्मफल भुगतने के लिए ही हुआ है। वैयक्तिक रूप से घोर दुखप्रद प्रतीत होनेवाले कर्म का भी निर्वहन आवश्यक है यदि उसमें लोक का हित निहित है। वर्तमान समय मनुष्य के अस्तित्व के लिए संकट का समय है। मनुष्य पर या तो पशुता हावी है या वह उन्नति पाने के तनाव से ग्रस्त है या वह सर्वोच्च होने की होड़ में शामिल है, इनके अलावा भी कई संभव परिस्थितियाँ हो सकती हैं जो मनुष्य के पूरे अस्तित्व को निगलने में सक्षम है। मनुष्य की अस्मिता और उसके अस्तित्व रक्षण के प्रति राम की प्रतिबद्धता जो इस कविता में देखी गई और जो यहाँ नहीं भी है पर इस काव्यनायक के चरित्र में है उसका मनन-चिंतन और धारण स्वयमेव सब उपलब्ध करा देगा जो सच में होना चाहिए। यह कविता सांस्कृतिक दृष्टि का विस्तार पाठक के मन में भी करती है। लोकहित हेतु स्वेच्छा से अपना उपयोग देना ही संस्कृति है और यही जीवन का सूत्र भी। इसकी गाँठ बाँध ली तो किसी बाधा में इतना डीएम नहीं जो मानव-मन में अंतर्द्वंद्व मचा सके।

बोध प्रश्न

- 'इतिहास और प्रतिइतिहास' से कवि का क्या तात्पर्य है?
- मनुष्य किसका साधन है?
- असंग कर्म से कवि का क्या तात्पर्य है?
- राम के चिंतन में मनुष्य के प्रारब्ध का कौन-सा स्वरूप उभरा है?

24.4 पाठ सार

'इतिहास और प्रतिइतिहास' कविता का आधार एक पौराणिक संदर्भ है। राम एक इतिहास पुरुष हैं। वे लोकधर्म का निर्वाह करने वाले लोकनायक के रूप में जाने जाते हैं। सत्ताधारी राम का चरित्र कवि ने चुना और उसकी व्यंजना उन्होंने इस प्रकार की कि समकालीनता में इस रचना की प्रासंगिकता बनी रहे। आपातकाल के दौर की यह रचना है। जब देश में आपातकाल लगा था तब शासन का निर्णय ही सर्वोच्च था। सामान्य जन के सामान्य अधिकार से शासन को कोई सरोकार नहीं था। सामान्य व्यक्ति की अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता भी खतरे में थी। सही और गलत का निर्णय केवल शासन की दृष्टि से ही किया जा सकता था।

जनपक्ष का अर्थ था शून्य। वह भी किसलिए? क्या वास्तव में कोई संकट छाया था देश पर कि आपातकाल लागू करना अनिवार्य हो गया था? शासन की इस निरंकुशता के समक्ष जन की मानसिक स्थिति कैसी थी यह हम आसानी से ''इतिहास और प्रतिइतिहास' ' कविता को पढने के बाद समझ सकते हैं। यहाँ दो बातें हैं। एक राम सामान्य नहीं हैं वे सत्ताधीश हैं। उनके मन में अंतर्द्वंद्व उठा है, अपने राज्य के एक साधारण नागरिक द्वारा महारानी सीता पर लगाए जाने वाले लांछन से। राम ने शासक होने का फायदा नहीं उठाया। उन्होंने जन साधारण के पक्ष को भी सुना और उसके मन की भ्रांति को हटाने के लिए अपने प्रति एक कड़ा निर्णय लिया। सत्ता ने साधारणता की स्वतंत्रता को गुलाम नहीं बनाया। इसमें राम ने स्वयं को भी किसी के अधीन पाया। वह कौन-सी शक्ति है जो सभी मनुष्यों के कर्मों का नियंत्रक है? न्याय के पक्ष में लिए गए अपने निर्णय से मनुष्य अपने प्रियजनों को ही चोट पहुँचाता है। जिन निष्ठुर कर्मों को वह नहीं करना चाहता वह भी दैव वश उसे करना ही पड़ता है। क्या यही मनुष्य का भाग्य है? राम का मन व्याकुल हो इन प्रश्नों का उत्तर खोज रहा है। सामान्य मनुष्य के अस्तित्व के पक्षधर नरेश मेहता भी रहे। वे मनुष्य को नैतिक क्रांति का आधार मानते हैं। राम के माध्यम से इसी पक्ष को उन्होंने सामने रखा है।

24.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. नरेश मेहता ने यह प्रतिपादित किया है कि कर्म करना मनुष्य के हाथ में है, पर उसका फल नहीं। कर्मफल के भय से कर्तव्य का त्याग उचित नहीं है।
2. जीवन में प्रतिकूल परिस्थितियाँ आती हैं। उनसे किनारा करना जीवन से किनारा करना है। उनसे जूझना जीतने की राह पर आगे बढ़ना है। कीर्तिमान अपनी खोह में दुबककर नहीं स्थापित किए जाते। दुःख और संघर्ष की धार ही जीवन को तराशती है।
3. जनसाधारण को भी अपना पक्ष रखने का पूरा अधिकार है। सुशासन उसे सावधानीपूर्वक सुनता है और उसपर अमल करता है।
4. सर्वोच्च आसन पर बैठे व्यक्ति का मन भी साधारण जन की तरह ही कोमल और संवेदनशील हो सकता है। उसे भी दुःख की अनुभूति होती है। नियति के आगे वह भी विवश है। जनहित के लिए वह अपने प्रिय-से-प्रिय का भी त्याग करने को उद्यत रहता है।

5. भारतीय संस्कृति में मानव की सभी समस्यायों का हल है।

24.6 शब्द संपदा

1. एकल	= अकेला
2. त्रास	= डर
3. नियंत्रण	= नियम में बाँधकर रखना
4. निरंकुश	= नियंत्रणहीन, स्वेच्छाचारी
5. परवश	= दूसरे के अधीन
6. मुँह सीना	= चुप रहना
7. हृदय विदारक	= हृदय को खंड-खंड करनेवाला

24.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. ''इतिहास और प्रतिइतिहास'' शीर्षक कविता का भावार्थ अपने शब्दों में लिखें।
2. ''इतिहास और प्रतिइतिहास'' शीर्षक कविता का समीक्षात्मक विश्लेषण करें।
3. ''इतिहास और प्रतिइतिहास'' शीर्षक कविता की भाषा और शैली पर प्रकाश डालें।
4. 'मनुष्य' क्या केवल साधन है?
   क्या केवल माध्यम है??' इन पंक्तियों का निहितार्थ क्या है?

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. 'न केवल देह/ बल्कि/ उसके व्यक्तित्व को रागात्मिकताओं को भी काट कर रख दे।' इस पंक्ति की विस्तृत व्याख्या करें।
2. 'इतिहास और प्रतिइतिहास' कविता में मुख्य पात्र कौन है? वह अपौरुषेय है या सामान्य मनुष्य?
3. राम किस विषय पर चिंतन कर रहे हैं?

4. मनुष्य की आदिम जिज्ञासा क्या है?

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. 'इतिहास और प्रतिइतिहास' कविता में अवरोध का प्रतीक कौन है? ( )

(अ) शून्य (आ) दिशा (इ) अश्व (ई) क्षितिज

2. कर्म के बाणों को कौन वहन करता है? ( )

(अ) देह (आ) देश (इ) मनुष्य (ई) दैव

3. 'कोई उत्तर नहीं मिलता राम!' यह कथन किसका है? ( )

(अ) भाग्य (आ) राम का अंतर्मन (इ) पात्र (ई) अपात्र

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. .... से किसी का ....नहीं लौटता।

2. देश और .... की विपरीत ....में।

3. क्या यही है ....का ....?

4. ....या ....में सन्धान करने के लिए।

III. सुमेल कीजिए -

1. धारदार	(अ) दस्तक
2. प्रत्यंचा सा	(आ) अस्त्र
3. दस्तकों	(इ) मनुष्य
4. दिशा	(ई) प्रतिध्वनि

24.8 पठनीय पुस्तकें

---

1. नरेश मेहता भारतीय साहित्य के निर्माता : प्रभाकर श्रोत्रिय

2. नरेश मेहता का काव्य-विमर्श और मूल्यांकन : प्रभाकर शर्मा

3. नरेश मेहता के खंड काव्य एक अनुशीलन : कविता शर्मा

4. नरेश मेहता का काव्य संवेदना शिल्प : अमिशचंद्र पटेल

5. नरेश मेहता कविता की उर्ध्वयात्रा : रामकमल राय

6. काव्यात्मकता का दिक्-काल : श्रीनरेश मेहता

MAULANA AZAD NATIONAL URDU UNIVERSITY

PROGRAMME: B.A (HINDI)

III – SEMESTER EXAMINATION

TITLE & PAPER CODE : आधुनिक हिंदी कविता

MODERN HINDI POETRY - BAHN301CCT

TIME: 3 HOURS TOTAL MARKS: 70

सूचना :-

यह प्रश्न पत्र तीन भागों में विभाजित हैं- भाग -1, भाग - 2 और भाग - 3 प्रत्येक प्रश्न के उत्तर निर्धारित शब्दों में दीजिए।

भाग – 1

1. **निम्न लिखित सभी प्रश्नों के उत्तर एक शब्द या वाक्य में देना अनिवार्य हैं। 10X1=10**

i. गोपिकाएँ किसके विरह में डूबी हैं?

ii. भारतेंदु के द्वारा रचित 'मातृभाषा प्रेम' के दोहों की भाषा क्या है?

iii. किस रचना पर हरिऔध को मंगलाप्रसाद पारितोषक प्राप्त हुआ?

iv. मैथिलीशरण गुप्त किस युग के कवि हैं।

v. 'आंसू' काव्य संग्रह का रचना काल क्या है?

vi. निराला की साहित्यिक यात्रा कब से शुरू हुई?

vii. 'सरोज स्मृति' में कवि ने किस शैली को अपनाया है?

viii. प्रयोगवाद के प्रवर्तक कौन है?

ix. 'युगधारा' रचना किस कवि की है ?

x. किरन-धेनुओं को हाँक कर कौन ला रहा है?

भाग – 2

निम्न लिखित आठ प्रश्नों में से किन्ही पाँच प्रश्नों के उत्तर दीजिये। प्रत्येक प्रश्न का उत्तर दो सौ शब्दों में देना अनिवार्य है। 5X6 =30

2. 'सरोज समृति' कविता का सारांश अपने शब्दों में लिखिए।

3. नागार्जुन के जीवन दर्शन पर प्रकाश डालिए।

4. संस्कृत और हिंदी भाषा में क्या अंतर है?

5. दिवस का अवसान समीप था/ गगन था कुछ लोहित हो चला/ तरु-शिखा पर थी अब राजती/ कमलिनी-कुलवल्लभ की प्रभा। इस छंद की सप्रसंग व्याख्या कीजिए।

6. 'भारत-भारती' के मूल चेतना पर प्रकाश डालिए।

7. गुप्तजी की राष्ट्रीय भावना पर प्रकाश डालिए ।

8. 'आँसू एक विरह काव्य है।' इस उक्ति को स्पष्ट करें।

9. 'शेखर : एक जीवनी' के बारे में संक्षेप में बताइए।

भाग- 3

निम्न लिखित पाँच प्रश्नों में से किन्ही तीन प्रश्नों के उत्तर दीजिये । प्रत्येक प्रश्न का उत्तर पाँच सौ शब्दों में देना अनिवार्य है । 3X10=30

10. कृष्ण भक्त परंपरा में भारतेंदु के योगदान का विवेचन कीजिए।

11. अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' के जीवन पर प्रकाश डालिए।

12. मैथिलीशरण गुप्त की रचना यात्रा का वर्णन कीजिए।

13. हिंदी साहित्य में निराला का क्या स्थान है?

14. अज्ञेय के व्यक्तित्व एवं जीवन दर्शन पर प्रकाश डालिए।